



# हिंदी के कवि और काव्य -

(भाग ३)

श्री गणेशप्रसाद द्विवेदी

हिंदुस्तानी एकेडेमी

संयुक्त प्रांत, इलाहाबाद

१९४१



हिंदी के कवि और काव्य  
( भाग ३ )

प्रकाशक—  
हिंदुस्तानी एकेडेमी, संयुक्त प्रांत,  
इलाहाबाद

---

मूल्य { कपड़े की जिल्द ३॥)  
सादी जिल्द ३)

---

मुद्रक—  
ओंकार प्रसाद गौड़, मैनेजर,  
कायस्थ पाठशाला प्रेस व प्रिंटिंग स्कूल, प्रयाग

## भूमिका

हिंदी के कवि और काव्य' के प्रथम और द्वितीय भाग प्रकाशित हो चुके हैं। यह संतोष का विषय है कि विद्वन्मंडली तथा विशेष कर हिंदी साहित्य के विद्यार्थियों के लिये यह उपयोगी सिद्ध हो सके हैं। इसी बीच प्रथम भाग को प्रयाग विश्व-विद्यालय ने हिंदी की एम्. ए. परीक्षा के लिये पाठ्य-पुस्तक बनाने का निश्चय कर लिया है। यह प्रथम भाग वीरगाथा काल से संबंध रखता है।

द्वितीय भाग में कवीर आदि प्रमुख संतों की श्रेष्ठ रचनाएँ तथा मंत साहित्य का समालोचनात्मक अनुशीलन है। यह भाग हाल ही में प्रकाशित हुआ है, अतः हिंदी जगत् का यथोचित ध्यान अभी तक नहीं आकृष्ट कर सका है।

अब यह तृतीय भाग हिंदी संसार के सामने उपस्थित किया जा रहा है। इस का संबंध हिंदी के प्रेमगाथा या दूसरे शब्दों में आख्यानक काव्य से है। इस में जायसी, नूरसुहम्मद, उसमान, निसार तथा आलम की रचनाएँ संगृहीत हैं।

इन में से निसार कृत 'यूसुफ-जुलेखा' तथा आलम कृत 'माधवानल-काम-कंदला' अप्रकाशित ग्रंथ हैं। इस संग्रह में पहले-पहल उक्त दोनों की रचनाएँ प्रकाशित हो रही हैं। स्मरण रहे कि यह आलम 'आलमकेलि' नामक ग्रंथ के रचयिता आलम से भिन्न हैं। खेद है कि अभी तक भ्रमवश सर्वां हिंदी साहित्य के इतिहास लेखक इन दोनों को अभिन्न मानते आये हैं। समालोचना खंड (पृ० १४) में इस संबंध में विशेष कहा गया है।

इस संग्रह में सुविधा के लिये समालोचना खंड तथा संग्रह खंड अलग-अलग रक्खे गये हैं। पहले पाँचों कवियों की जीवनी तथा गवेषणा आदि फिर संग्रह—ऐसा क्रम रक्खा गया है।

संग्रह का क्रम ऐसा रक्खा गया है कि सब पढ़ने पर मूल कथा का सारांश स्पष्ट हो जाता है।

'माधवानल-कामकंदला' अद्यावधि अप्रकाशित तथा छोटा होने के कारण पूरा ले लिया गया है।



## विषय-सूची

---

### १. समालोचना खंड—

नूर सुहम्मद कृत इंद्रावती . . . . .	१—५
उसमान कृत चित्रावली . . . . .	६—१३
आलम कृत माधवानल-कामकंदला . . . . .	१४—१९
शेख निसार कृत यूसुफ-जुलेखा . . . . .	२०—३२

### २. संग्रह खंड—

मलिक सुहम्मद जायसी कृत पद्मावत . . . . .	१—७२
(समालोचना तथा संग्रह)	
इंद्रावती . . . . .	७५—१३३
चित्रावली . . . . .	१३७—१८४
माधवानल-कामकंदला . . . . .	१८७—२२६
यूसुफ-जुलेखा . . . . .	२३०—२९९



विनयशीलता में यह कवि उसमान से भी बाजी मार ले जाता है। पर जो भी हो, एक नवयुवक कवि की कविता में यौवन की स्फूर्ति और उमंग का होना स्वाभाविक है, जिसका परिचय हमें बराबर इस काव्य में मिलता है।

कवि ने अपनी वंशावली या गुरु परंपरा का वर्णन नहीं किया है। स्तुति के रूप में इन्होंने 'सिरजनहार' ईश्वर का स्मरण किया है और उस के वाद अपने 'अरवी' नबी मुहम्मद साहब का स्मरण किया है। 'अपने कुल की रीति' का पालन करने के ये कायल थे। ये कहते हैं—

है मगु बहुत जगत मँहँ, तिन मगु की नहिँ चाव ।  
 आपन पंथ देखावहु, राखौँ तापर पाँव ॥  
 सुमिरौँ चेत धरौँ मन ढाऊँ । अरबी नबी मुहम्मद नाऊँ ॥  
 जा कहँ करता दरस देखाएउ । कै किरपा सब भेद बताएउ ॥

### रचना काल

ये अंतिम मुगल सम्राट मुहम्मद शाह के सम-कालीन थे और पैगम्बर की स्तुति के बाद ही इन्होंने शाह की प्रशंसा की है—

करौँ मुहम्मद साह बखानूँ । है सूरज दिल्ली सुलतानूँ ॥  
 धरम पंथ जग बीच चलावा । निवरन सवरै सौ दुख पावा ॥  
 पहिरै सजातीन जग करे । आये सुहँस बने हैं चरे ॥  
 इहै साह नित धरम बढ़ावे । जेहि पहराँ मानुस सुख पावै ॥  
 सब काहु पर दाया करई । धरम सहित सुलतानी करई ॥

कला प्रेमी, कवि, तथा निपुण संगीतज्ञ मुहम्मद शाह अपना नाम "रंगीले" का नाम अब भी प्राचीन परिपाटी के गायकों तथा शायरों की जवान पर रहता है। इन का जीवन ही संगीत-साहित्यमय था। इन के रचे हुए सैकड़ों ख्याल अस्थायी अब भी गवैयों को याद हैं। ऐसी अवस्था में कोई आश्चर्य नहीं कि सुदूर पूर्व सबरहद निवासी नूरमोहम्मद तक इन से प्रभावित हुए हों। अस्तु

अपने ग्रंथ का रचना काल नूर मोहम्मद ने सन् ११५७ हिजरी (संवत् १८०१) दिया है—

सन इग्यारह सौ रहेउ, सत्तावन उपनाह ।  
 कहै लगेउ पोथी तवै, पाय तपी कर बाँह ॥

इस हिसाब से इनकी रचना उसमान १००२ हिजरी से १३५ वर्ष और जायसी ९४७ हि० से २१० वर्ष बाद की ठहरती है। पंडित रामचंद्र शुक्ल के हिंदी साहित्य के इतिहास में कहा गया है कि 'इस ग्रंथ' (इंद्रावती) को सूफ़ीपद्धति का अंतिम ग्रंथ मानना चाहिये। पर तब तक शायद शेख निसार का पता नहीं लग सका था। यह इन के वाद के हैं और अभी तक इन की रचना अप्रकाशित रही है। हो सकता है कि इन के 'सूफ़ी पद्धति' के कवि होने में मतभेद हो। पर इतना निश्चय

है कि यूसुफ-जुलेखा सेलहो आने प्रेम-गाथा काव्य हैं और इन का सभी ढंग 'पद्मावत' आदि के समान है। सुफी ढंग के रहस्यवाद का दृष्टिकोण कुछ कवियों के सामने कम रहा है और कुछ के सामने अधिक। आलम और निसार (मुख्यतः आलम) अपेक्षाकृत यदार्थ-वादी कवि हुए हैं। और निसार का कथानक अपना आदर्श ईरानी संस्कृति से अधिक लेता है, वजाय भारतीय के। जो हो, उक्त तिथि से नूर मोहम्मद की जन्म तथा निधन तिथि का अटकल लगाना असंभव है। सिवाय इन्द्रावती के इन के रचे हुए अन्य किसी ग्रंथ का पता नहीं चल सका है, अभी तक।

### कथा का रूप

उसमान की भाँति इन की कथा भी पूर्णतः काल्पनिक प्रतीत होती है<sup>१</sup>। उधर उसमान कहते हैं 'कथा एक मैं हिए उपाई, और इधर नूरमुहम्मद को स्वप्न में इस की प्रेरणा मिली !

एक रात सपना मैं देखा । सिंधु तीर वह तपिय सरेखा ॥  
 अहै ठाढ़ मोहि लीन्ह बुलाई । कहेसि कि सिंधु में वृद्धु भाई ॥  
 ब्रसा छोड़ पोढ़ा कै हीया । मोती काढ़हु होइ मरजीया ॥  
 ससि मोती को हार सँवारहु । इन्द्रावति की गोद महुँ डारहु ॥  
 लै मोती दोउ हाथन माहौँ । मारू रतन। सीर उपराहौँ ॥  
 तेहि पल तपसी दरस देखाएउ । मोहि संग एहिबात सुनाएउ ॥  
 राज कुँवर रानी इन्द्रावती । हैं रवि कमल औ भँवर मालती ॥  
 जुनि परसुन दुइ हार सँवारहु । तिनके ग्रीव धीच लै डारहु ॥  
 अज्ञा मान तपी कर, चलेउ जहाँ फुलवार ।  
 खुला न पायउँ द्वार को, मालिहि दिपुँ पुकार ॥  
 माली कहा जपत सन होई । कोहु फूल नहिँ बरजित कोई ।  
 तन पल्लवा बारी की नाँई । मन भा फुलवारी तेहि ठाई ॥  
 किरपा सौँ बारी मँह, माली दीना साथ ।  
 आटे कीउ न आपुउ, मै फुलवारी हाथ ॥

स्पष्ट है कि नूर मोहम्मद को स्वप्न में किसी तपस्वी द्वारा इस कथा की अंतः-प्रेरणा मिली और माली गुरु ने राम्ता दिखाया। कवि का हृदय ही एक फुलवारी है। और वही माला गूँथने की सामग्री मिल जाती है। यदि माली द्वार खोल देता है तो दर-दर भटकने की जरूरत नहीं है।

फिर कहते हैं मन ही ससुद्र है और उस में गहरा गोता लगाने से ही मुक्तावत्

<sup>१</sup>चूँकि कथा अशुद्धी है और कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है अतः इसका संश्लेष देना न्यर्थ समझा गया। हाँ संग्रहित अंश इस ढङ्ग से रखे गये हैं कि कथा का संवंध जगता चला जायगा।

कवि-वचन-सुधा की प्राप्त हो सकती है और वन्हीं मोतियों से दोहा चौपाई की शकल में हार गूँथे जा सकते हैं ।

फिर इनके हृदय ने कहा कि दो हार बना कर एक राजकुँवर के और एक इन्द्रावती के गले में पहिनावो ।

कथा की उपज के संबंध में कवि के इन प्रवचनों से उसका रहस्यवादी दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता है । कालिंजर नाम अवश्य ऐतिहासिक है ( यहाँ का किला देश-प्रसिद्ध है ) पर पात्र कल्पित हैं, जैसा कि नाम ही से प्रगट है । राजा का नाम 'भूपति', राजकुमार का नाम 'राजकुँवर'; और यह नाम व्यंतिषियों ने बहुत विचार तथा गणना के बाद तय किया !

राजें पंडित वेगि हँकारेउ । पंडित आइ सुजनम विचारेउ ॥

कहा पुत्र के हीयरे, चाढ़ै प्रेम वियोग ।

रूप एक पर रीमै, वेहि नित साधै योग ॥

'राजकुँवर' तेहि राखा नाऊँ । जनम नछत्र घढ़ी के भाऊँ ।'

खैर, कालिंजर के इन्ही राजकुवर का प्रेम आगमपुर<sup>१</sup> की राजकुमारी से होता है; स्वप्न दर्शन विधि के अनुसार । फिर नाना प्रकार की चौरासी भोगते हुए ( वही जोगी खंड, सुबा खंड युद्ध, खड आदि होते हुए ) अंत में इन का मिलन होता है ।

आगमपुर इंद्रावती कुवर कलिंजर राय ।

प्रेम दुतें दोउन्ह कहँ, दीन्हा अलख मिलाय ॥

यहाँ पर 'अलख' शब्द ध्यान देने योग्य है । 'अलख' 'निरंजन' माया आदि नाथपथियों और फिर कवीर दादू आदि सतों की बोली में ही ज्यादातर आते हैं; और सूफी कवि भी इनकी विचारधारा से काफी प्रभावित हैं । फिर इस संवध में कवि के निम्नलिखित प्रवचन भी ध्यान देने योग्य हैं—

आपुहु भोग रूप धरि, जग सो मानत भोग ।

आपुहि जोगी भेस होई, निस-दिन साधत जोग ॥

अलख प्रेम कारन जग कीन्हा । धन जो सीस प्रेम महँ दीन्हा ॥

जाना जेहिक प्रेम महँ हीया । मरे न कयहुँ सो मर जीया ॥

प्रेम खेत है यह हुनियाई, प्रेमी पुरुष करत बोवाई ।

जीवन जाग प्रेम को अहई । सोवन मोच वो प्रेमी कहई ॥

आग तपन जल चाल समूझो । पुनि टिका भँटी कहँ धूमो ॥

इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि कवि नाथ पथियों या सतों के एकेवर वाद को मानता हुआ भी दृष्टयोगी मार्ग का क्रायल नहीं था । उस की प्रणाली प्रेम की

<sup>१</sup>यह नाम भी काल्पनिक है, ऐतिहासिक नहीं ।

थी। और प्रेम ही उस का मार्ग तथा ध्येय दोनों एक साथ था। इस से यह स्पष्ट हो जाता है कि सूफी दृष्टिकोण के रहस्यवाद में एक साथ ही कबीर और खैयाम के रहस्यवाद का कितना मधुर सम्मिश्रण है।

### प्रबंधशैली

इन्होंने भी प्रबंधरचना जायसी और उसमान के ढंग पर ही किया है। खंड-विभाग और कथा का विकास प्रायः समान है। भाषा की प्रौढ़ता उसमान से घट कर है। नव-युवक कवि की रचना तो है ही। ढाँचे में एक खास फर्क है कि इन्होंने पाँच-पाँच चौपाई के बाद दोहा वैठाया है और जायसी आदि ने सात-सात के बाद। हाँ निसार ने नौ चौपाई का क्रम रक्खा है; और इन्होंने ( निसार ने ) दोहा चौपाई के सिवा सोरठा, कवित्त सवैया आदि अन्य छंदों का भी यथास्थान उपयोग किया है और उन स्थानों पर इन की भाषा में ब्रजभाषा की छटा आये बिना नहीं रह सकी है।

### भाषा

पर नूर मोहम्मद की भाषा शुद्ध अवधी है और उसमान की भाँति परिमार्जित नहीं है। ठेठ और ग्रामीण प्रयोग बहुत आये हैं। इन्होंने कहा भी तो है कि 'पोथी कहना' मेरा काम नहीं; मैं ने तो खेल खेल में यह कथा लिख डाली है।

## उसमान-कृत चित्रावली

अन्य प्रेमगाथाओं की भांति चित्रावली में भी कवि ने ग्रंथ का रचनाकाल और व्यक्तिगत परिचय तथा निवासस्थान आदि का पर्याप्त विवरण दे दिया है। इन्होंने अपनी कथा के आदर्शस्वरूप तीन कथाओं का स्मरण आरंभ में किया है। मृगावती (मिरगावति) मधुमालती और पद्मावत। इन में से जायसी कृत पद्मावत अभी तक इस कोटि का पहला काव्य माना जाता था (१४७ हिजरी या १५४० ईसवी) पर जायसी ने स्वयं अपने काव्य में कुछ कथाओं का उल्लेख किया है। जब तक ये ग्रंथ मिले नहीं थे तब तक जायसी की इन पंक्तियों पर यथोचित ध्यान आलोचकों ने नहीं दिया। जायसी ने कहा है—

विक्रम धँसा प्रेम के बारा, सपनावति लागि गयो पतारा।  
सिरी भोज खँडरावति लागी, गगनपूर होइया वैरागी ॥  
राजकुँवर कंचनपुर गैऊ, मिरगावति तजि जोगी भैऊ ॥  
साधा कुवर मनोहर जोगू, मधुमालति कहँ कीन्ह वियोगू ॥

इस में से मिरगावति का पता काशी नागरीप्रचारिणी सभा को सन् १९०० में लगा। इस के रचयिता कुतुबन के अनुसार इसकी रचना ९०९ हिजरी अर्थात् १५०२ ईसवी में हुई।

मधुमालती की भी एक खंडित प्रति चित्रावली के संपादक श्री जगमोहन वर्मा को मिली थी (सन् १९१२) इस के आदि अंत के पन्ने गायब होने के कारण रचना काल तथा कवि का परिचय आदि ठीक न प्राप्त हो सका। कवि का ठीक नाम भी नहीं मालूम हो सका। 'मफन' नाम मिलता है जो स्पष्टतः उपनाम सा जाँचता है। कवि अपना परिचय आमतौर से आदि या अंत के पन्नों में देता है और वही पन्ने गायब हैं। प्रतिलिपिकार ने एक जगह ११ रवी उस्सानि सन् १०६९ हिजरी की तारीख लिखी है। इस हिसाब से इसकी प्रतिलिपि सन् १६५३ ई० की ठहरती है तो फिर असल रचना काफी पहले की होगी। पर इस संबंध में ज्यादा से ज्यादा अटकल ही हो सकते हैं। जो हो, आशा यह की जा सकती है कि शायद किसी दिन सपनावति और खँडरावति का भी अनुसंधान मिल जाय।

पर उसमान ने सपनावति और खँडरावति का स्मरण नहीं किया। शायद इनके समय तक इन कथाओं को लोग भूल चुके हों या कवि ने इनको इतनी महत्वपूर्ण न समझा हो।

भृगावकी मुख रूप वसेरा । राज कुर्वर भयो प्रेम अहेरा ॥  
सिंघल पट्टुमावति भो रूपा । प्रेम कियो है चितउर भूपा ॥  
मधुमातति होइ रूप दिखावा । प्रेम मनोहर होइ तहँ आवा ॥

### कवि

उसमान अपना जन्म स्थान गाज़ीपुर बतलाते हैं । तत्कालीन नगर का बड़ा सुन्दर और सजीव वर्णन इन्होंने किया है ।

गाज़ीपुर उत्तम अस्थाना । देवस्थान आदि जग जाना ॥  
गंगा मिलि जमुना तहँ आई । दीच मिली गोमती सुहाई ॥  
तिरधारा उत्तम तट चीन्हा । द्वारपर तहँ देवतन्ह तप कीन्हा ॥ इत्यादि

### शेख

इनके पिता का नाम शेख हुसेन था और ये पाँच भाई थे । हुसेन के पाँचों पुत्र योग्य और किसी न किसी कला में पारंगत थे ।

कवि उसमान बसै तेहि गाऊँ । शेख हुसेन तनै जग नाऊँ ॥  
पाँच भाई पाँचो कवि हीये । एक-एक भाँति सो पाँचो लीये ॥  
शेख अजोज पढ़ै लिखि जाना । सागर सील ऊँच कर दाना ॥  
सानुरल्लह बिधि मारग गहा । जोग साधि जो मौन हीइ रहा ॥  
शेख फैजुल्लह वीर अपारा । गनै न काहु गहे हथियारा ॥  
शेख हसन गायन भल अहा । गुन विद्या कहँ गुनी सराहा ॥

अन्य मसनवी कवियों की भाँति उसमान ने अपनी या अपने पिता की वंश-परंपरा या गुरु परंपरा की तालिका नहीं दी है । निसार अपने को विख्यात मौलवी रूम का वंशज कहता है । जायसी प्रसिद्ध औलिया शेख निजामउद्दीन चिरती की शिष्य परंपरा में थे । पर इस तरह की कोई बात उसमान ने अपने संबंध में नहीं कही है । यहाँ, प्रथम भे, शाह निजामउद्दीन चिरती तथा एक बाबा हाजी की प्रशंसा इन्होंने की है । हाजी बाबा को इन्होंने अपना गुरु कहा है ।

बाबा हाजी सिद्ध अपारा । सिद्ध देत जेहि जाग न पारा ॥  
मोहि माया कै एक दिन , श्रवन जागि गहि माच ।  
गुरु मुख बचन सुनाय कै , कलिमहँ कीन्ह सनाथ ॥

निसार ने अपने को अरबी फारसी आदि अन्य भाषाओं का ज्ञाता तथा इन भाषाओं में ग्रंथ रचना करने की बात भी कही है, पर उसमान ( उपनाम "मान" ) ने इस तरह का कोई दावा नहीं किया । यह बहुत निरभिमानी और खाकसार तवियत के कवि थे । अपनी विद्याबुद्धि आदि के सबध में इन्होंने सिर्फ इतनाही कहना उचित समझा कि चार अच्छुर पढ़ना हमने मी सीख लिया था और सो भी साथे मे लिखा था इस बजह से हो गया ।

कहा इसे भी वहाँ ले चलो, सो तो रहा ही है, कहीं रख देंगे और लौटते वक्त फिर लेते आवेंगे। यही राय तय पाई और वे दोनों देव आकाशमार्ग से सुजान को ले उड़े और वहाँ जाकर चित्रावली की चित्रसारी में इसे सुला दिया और खुद उत्सव देखने बाहर चले गये।

इधर रात में सुजान की नींद जब टूटी तो वह अपने को इस अपूर्व चित्र-शाला में पड़ा देख बड़ा चकराया, पर सामने ही चित्रावली का मनमोहक चित्र देख कर मुग्ध हो गया और उसी के बराल में अपना चित्र खींच कर फिर सो गया। इधर सुबह देव लोग उसे फिर वहीं उड़ा ले गये। उठने पर सुजान को सब बातें याद आईं और उसे स्वप्न का भ्रम हुआ पर कपड़ों में रंग और तूलिका का दारा बगैरह लगा देख कर सबी घटना का निश्चय हो गया और उसे चित्रावली की याद सताने लगी।

इधर राज्य में कुमार के लापता होने के कारण सब लोग व्याकुल होकर ढूँढ़ने चले और कुल सेवक उस मढ़ी तक आ पहुँचे और उसे राज्य में ले आये पर वह प्रेम की पीर से बेसुध पड़ा रहा। सुजान का एक मित्र सुबुद्धि नाम का ब्राह्मण था, उसने युक्ति से सब बातें सुजान से पूँछ ली। और एक राय कर दोनों फिर उसी मढ़ी में पहुँचे। और वहाँ पहुँच कर उन दोनों ने अन्न-सत्र जारी किया।

इधर कुमार का चित्र देख कर चित्रावली का भी यही हाल हुआ। उसने अपने नपुसक भृत्यों को कुमार की खोज में रवाना किया जिनमे से एक इस मढ़ी तक पहुँच भी गया। इसी बीच एक कुटीचर ने चित्रावली की माता हीरा से शिकायत कर दी जिससे उसने कुमार का चित्र धुलवा डाला। पर इस अपराध में कुमारी ने उसका सिर सुडवा कर उसे राज्य से निकलवा दिया। इधर यह जोगी कुमार के पास पहुँचा और उसे रूपनगर में लाकर युक्ति से शिव के मंदिर में चित्रावली से<sup>१</sup> साक्षात्कार करवा दिया। पर इसी बीच उस कुटीचर ने उसे अपना शत्रु मान कर उसे अंधा बना एक पहाड की कदरा में डाल दिया जहाँ इसे एक अजगर निगल गया, पर इसमें विरह की आग इतनी भयंकर थी कि अजगर ने तुरंत उगल दिया। इस घटना को एक बनमानुस देखता था और उसने एक ऐसा अजन दिया जिससे उसकी दृष्टि फिर पूर्ववत् होगई। पर इसके बाद इसे एक हाथी ने पकड़ा और उस हाथी को एक पक्षिराज ले उड़ा। तब हाथी ने उसे छोड़ दिया और वह एक समुद्र तट पर गिरा और घूमता हुआ सागर गढ़ राज्य में पहुँचा जहा की राज-कुमारी अपनी फुलवाडी में इसे घूमता देख इस पर मोहित हो गई। कुमार उस समय योगी वेश में था। कौलावती ने योगियों की एक दावत की जिसमें इसको भी शरीक किया। पर इसके भोजन में अपना हार छिपा कर रख दिया था और इस प्रकार इसे चोरी में फँसा कर कैद करवा लिया। फिर कौलावती के रूप गुण से मुग्ध होकर सोहिल नाम का राजा सैन्य लेकर सागरगढ़ पर चढ़ आया, पर सुजान ने इसे अपने बाहुबल से मार गिराया। इस पर कौलावती के पिता ने प्रसन्न होकर

सुजान के साथ उसका विवाह कर दिया पर उसने कौलावती से प्रतिज्ञा कर ली थी कि वह चित्रावली के मिलन से विरोध न करेगी ।

कुमार कौलावती के साथ गिरनार पहुँचा और वहाँ चित्रावली के भेजे हुए दूत से उसकी भेंट हुई और उसने उसका समाचार चित्रावली के पास पहुँचाया । फिर किसी प्रकार वह योगी कुमार को लेकर रूपनगर की सीमा पर पहुँचाया और यह खबर चित्रावली को मिली । अब रूपनगर के राजा को चित्रावली के विवाह की खिन्ता सता रही थी । उसने चार चित्रकार राजकुमारों के चित्र लाने के लिये भेजे । इधर रानी हीरा कुमारी को खिन्न देख कर उसका हाल पूँछ रही थी पर वह अपने मन का भेद बताती नहीं थी । इसी समय सुजान को एक जगह बैठा कर वह दूत कुमारी को खबर देने आ रहा था । रानी ने उने मार्ग में ही पकड़वा कर कैद करा दिया । पर वह पागल हो चित्रावली नाम ले लेकर भागने लगा । राजा तक खबर पहुँची । उसने अपजस के डर से इसे मरवा डालने की ठानी और इस पर हाथी छोड़वा दिया, पर सुजान ने अपने बाहुबल से इसे मार गिराया । इस पर राजा स्वयं इसे मारने चला पर इसी बीच एक चितेरा सागरगढ़ से एक कुमार का चित्र लाया जिसने सोहिल को मारा था । देखने पर वह चित्र इसी का निकला । राजा ने उचित पात्र समझ कर चित्रावली का विवाह इसके साथ कर दिया ।

इसके कुछ दिन बाद चिरहाकुल कौलावती ने कुमार की खबर लाने को हंस-मित्र को दूत बना कर भेजा । कुमार ने अपने पिता और कौलावती का स्मरण कर रूपनगर से विदा ली और वहाँ से सागरगढ़ आ कौलावती को विदा करा लिया और अपने राज्य को रवाना हुआ । पर रास्ते में असख्य विघ्न बाधाएं उपस्थित हुईं । समुद्र में तूफान आया पर किसी प्रकार सब से बच कर वह जगन्नाथ पुरी में पहुँचे जहाँ पुरोहित काशी पाँडे से इनकी भेंट हुई । वहाँ से अपने राज्य में पहुँचे और शोक-संतप्त माता-पिता से मिले । दुख से रोते-रोते माता अंधी होगई थी पर इनके आने की खुशी में इसकी आँखें ठीक होगईं और सुजान अपनी रानियों सहित आनंदोपभोग करने लगा ।

इस कथा के सरांश से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि यह आद्योपान्त काल्पनिक है और इसमें अनेक अस्वाभाविक और बेतुकी बातें भरी पड़ी हैं पर यह सब होते हुए भी कथा बड़ी रोचक बन पड़ी है, और कही भी जी नहीं ऊबता । इनकी प्रबंध-शैली कुछ ऐसी हो पड़ी है कि बालक, युवा वृद्ध, योगी, भोगी सभी वर्ग के लोग इसका आनंद ले सकते हैं । कवि स्वयं कहता है—

बालक सुनत कान रस लावा । तरुन्ह के मन कास बढ़ावा ॥  
 विरिध सुनै मन होइ गियाना । यह संसार धंधा कै जाना ॥  
 जोगी सुनै जोग पथ पावा । भोगी कहँ सुख भोग बढ़ावा ॥  
 इच्छा तरु एक आह सोहावा । जेहि जस इच्छा तेस फल पावा ॥



## कथा का आध्यात्मिक दृष्टिकोण

न्यूनाधिक रूप से सभी सूफी कवियों की रचना में अध्यात्मवाद की कुञ्ज न कुञ्ज भूलक आ ही जाती है। शाह निजामुद्दीन चिरती की शिष्य परंपरा में होने के कारण हम इनको जायसी का गुरु भाई भी कह सकते हैं और इनका अध्यात्मिक दृष्टिकोण भी जायसी से बहुत कुञ्ज मिलता है। इनकी सारी कथा भी अन्योक्ति के रूप में समझी जा सकती है और कवि का अभिप्राय हर बात से ऐसा ही प्रतीत होता है कि श्रोतागण इसे इसी रूप में समझें बुरें। और यही मुख्य कारण जान पड़ता है कि इन्होंने किसी ऐतिहासिक घटना या इतिहास प्रसिद्ध नायक-नायिका का सदुपयोग या दुरुपयोग करना उचित नहीं समझा। जायसी ने बड़ी भूल की थी। इन्हें प्रतिपादन तो करना था एक विशेषवाद (सूफीवाद) जो वेदांत, रहस्य, अध्यात्म या एकेश्वरवाद आदि कई 'वादों' की पंचमेल खिचड़ी है और पात्र तथा घटनाएं इन्होंने इतिहास से लीं। आधी कथा लिखने के बाद इन्हे शायद अपनी भयानक भूल का पता चला और इन्होंने यथासंभव कल्पित नाम और घटनाओं का आश्रय लिया। जायसी की इस फजीहत से उसमान ने पूरा लाभ उठाया। ऐतिहासिक महाकाव्य और मसनवी ढंग की प्रेमा गाथा दो जुदा चीजे हैं; और इस पार्थक्य को उसमान ने भलीभाँति समझा था। दोनों को मिला कर चलाने या दोनों का सामजस्य किसी प्रकार स्थिर रखते हुए अंत में सूफी एकेश्वरवाद के सिद्धांत का निष्कर्ष निकालना एक असंभव बात है। यही जायसी से भूल हुई पर उसमान ने इस भूल को पहचाना और पहले से तैयार होकर खूब सोच समझ कर कहानी का प्लाट और पात्रों के नामकरण आदि को अपने आध्यात्मिक निष्कर्ष को दृष्टिपथ में रखते हुए किया। और वे सफल हुए।

चरितनायक 'सुजान' का नाम बहुत सोच समझ कर रक्खा गया है। वह शिव का 'अंश' अतः born जोगी या पैदाइशी साधक हैं। कौलावती और चित्रावली इन दोनों नायिकाओं को हम अविद्या और विद्या के रूप में देखते हैं। कौलावती से विवाह तो हुआ पर शर्त यह रही कि जब तक चित्रावली न मिलेगी तब तक सहवास नहीं होगा। 'सुजान' अर्थात् वास्तविक ज्ञानी बिना विद्या के प्राप्त किए अपनी साधना पूरी नहीं समझना। इसी प्रकार विचारने से सभी पात्र-पात्री तथा उनका सारा कार्य-कलाप हम आध्यात्मिक साधना, तर्जनि विघ्न-वाधाएँ और अंतिम निर्वाण के रूप में पढ़ सकते हैं। सरोवर-क्रीड़ा वाले खंड में इन्होंने बड़ी सुंदर रीति से ईश्वर की प्राप्त की ओर संकेत किया है।

इस कथा की कविता और भाषा आदि के सबंध में हमें कोई नई बात नहीं कहनी है। भाषा, व्याकरण, प्रबंध, शैली, खूब-विभाग आदि सब ढग जायसी का ही है; केवल अंतर यही है कि इनकी भाषा विशेष परिमार्जित और प्रौढ़ है। यह

तुलसी के समसामयिक थे और संस्कृत का ज्ञान यदि इन्हे होता तो इनकी भाषा प्राढ़ता में उनके आस-पास पहुँचनी ।

इनकी जानकारी बढ़ी-चढ़ी थी, समय-समय पर लोकोक्तियाँ ये 'बड़े मार्के से' बैठाते गये हैं । एक जंगह इन्होंने अग्नेजो का भी वर्णन किया है—

बुलंदीप देव अंगरेजा । तहाँ जाह जेहि कठिन करेजा ॥

ऊँच नीच धन संपति हेरा । मद बराह भोजन जेहि केरा ॥

सन् १६१२ मे ईष्ट इण्डिया कम्पनी ने सूरत में अपनी गुदाम खोली थी, और सन् १६१३ की यह रचना है । कहाँ सूरत और कहाँ राज्जीपुर; और इस समय न रेल, न पोस्ट, न तार न अस्त्रवार । इनका भौगोलिक ज्ञान भी असाधारण था, जैसा कि सप्रह से जान पड़ेगा । 'जोगी दूँदून खड' में इन्होंने काबुल, बदखशाँ, खुरासान, रूस, साम, मिस्र, इस्तंबोल, गुजरात, सिंहल आदि-आदि अनेक देशों का वर्णन किया है ।

यों तो सभी सूफी कवि विरह वर्णन में कलम तोड़ देते हैं, पर इस के सिवा इनके अन्य वर्णन भी मार्के के हुए हैं; यथा विदाई के समय रानी हीरा के उपदेश आदि । ये अंश हमे तुलसी की याद दिलाते हैं । इसके सिवा विरह वर्णन के अंतर्गत इनका यह ऋतु-वर्णन कुछ नवीन और बड़े सुंदर ढंग से हुआ है ।

## आलम कृत माधवानल-कामकंदला

इस कवि के संबंध में आरंभ से ही हिंदी समार में एक भ्रांत धारणा फैली हुई है, और वह यह कि 'माधवानल-कामकंदला' के आलम और 'आलमकेलि' के लेखक आलम दो अभिन्न व्यक्ति हैं। आलम केलि के रचयिता तथा शैव रंगरेजिन के प्रेम में पड़ कर मुसलमान हो जाने वाले आलम (जो पहले जाति के ब्राह्मण थे) का रचना काल संवत् १७४०-६० तक माना गया है। पर माधवानल-कामकंदला के रचयिता आलम का रचना काल स० १६४० या ई० १५८४ था। इनका शैव रंगरेजिन से कोई सगेकार नहीं था और न इनके जाति के ब्राह्मण होने का ही कोई प्रमाण है।

हिंदी साहित्य के सभी इतिहास लेखकों ने आलम के संबंध में यह भ्रम भूल भी है। स्पष्ट है कि यह भूल प्रथम इतिहास लेखक से आरंभ हुई और बाद के सभी इतिहास लेखक अखंड कर इस भूल का अनुकरण करते गये।<sup>१</sup>

अस्तु, आलम केलि के रचयिता विशुद्ध ब्रज भाषा में शृङ्गार सबधी फुट कर पदों की रचना करते थे, पर प्रस्तुत आलम अवधी के कवि थे और इनका रचनाकाल उनमें ठीक नौ वर्ष पहले का था।

सन नौ सै इक्यानुवै आइ। करौ कथा अथ बोलौं ताहि ॥

सन नौ सै इक्यानवै हिजरी और तदनुसार से १६४० में इन्होंने इस ग्रंथ की रचना की। उस समय दिल्ली क सिद्दासन पर सम्राट अकबर विराजमान थे और इनके अर्थसचिव राजा टोडर मल हमारे कवि के आश्रयदाता थे। ग्रंथारंभ में कवि ने दोनों की प्रशंसा की है।

दिल्लिय पति अकबर सुरताना। सस दीप मैं जाकी आना ॥

सिंहन पति जगन्नाथ सुहेला। आपनु गुरु जगत सब चेला।

जय घर भूमि पयानौं करई। वासुक इंद्र आसन थर थरई ॥

<sup>१</sup> यदि किसी भी साहित्य के इतिहास लेखक ने 'माधवानल-कामकंदला' को देखने का कष्ट उठाया होता तो इस भ्रांति का निराकरण कभी का हो गया होता। पर कहु सत्य यह है कि आज के हिंदी साहित्य के इतिहास ग्रंथों के अध्ययन के फलस्वरूप नहीं लिखे गये हैं, बल्कि पिछले लेखकों की नकल के आधार पर। वास्तव में साहित्य के इतिहास लेखन से बढ़ कर अमसापेक्ष और उत्तरदायित्व पूर्ण कोई दूसरा काम नहीं है, पर हिंदी में तो जितने साहित्य के खटा नहीं हैं उनमें अधिक इतिहास लेखक हो रहे हैं और नकल से बढ़ कर आसान कोई काम होता भी नहीं !

धर्म राज सब देस चलावा । हिंदू तुस्क पंच सवुलाया ॥  
आगरैबु महामति मइनु । नृप राजा टोडर मल डंडनु ॥

रचनाकाल, तत्कालीन दिल्लीसम्राट तथा आश्रय दाता राजा टोडर मल आदि का उल्लेख कवि ने अपने ग्रन्थ में इतनी स्पष्ट रीति से किया है कि इनके समय के बारे में संदेह करने की कोई गुंजाइश नहीं है। हाँ, इतना अवश्य है कि केवल इनके रचनाकाल को तिथि ही जानी जा सकती है, जन्म-मरण-तिथि नहीं। इन्होंने अपनी वंशावली या गुरु-परंपरा के संबंध में भी कुछ नहीं कहा है।

### कथा

आलम की यह रचना मौलिक नहीं है। इस नाम का एक नाटक संस्कृत में है और इसी की कथा के आधार पर इन्होंने इस काव्य की रचना की। पर इसका तद्वत अनुकरण नहीं किया है। अपनी आवश्यकतानुसार कुछ घटाया-बढ़ाया है। वह साफ कहते हैं कि कुछ अपनी और कुछ 'परकृत' मैंने 'चुराई' है।

कुछ अपनी कुछ परकृति चोरों। यथा सकति करि अचरु जोरों।  
सकल सिंगार विरह की रीति। माधौ काम कंदला प्रीति ॥

हो सकता है कि आलम संस्कृत के विद्वान रहे हों, क्योंकि इनकी रचना में संस्कृत के शब्द इस शाखा के अन्य कवियों से अधिक आते हैं पर यह कोई जरूरी नहीं है, क्योंकि यह साफ कहते हैं कि संस्कृत की कथा 'सुन' कर मैंने भाषा चौपाई में इसका रूपांतर किया—

कथा संस्कृत सुनि कहु थोरी। भापा बांधि चौपही जोरी ॥

### कथा का सारांश

पुष्पावती नामक नगर में गोपीचंद नामक एक राजा राज्य करता था। वह बड़ा न्यायपरायण और धर्मनिष्ठ था। उसी नगर में माधव नामक एक दैरागी ब्राह्मण रहता था। वह नित्य प्रातःकाल राजा के पास जाकर पूजा कराता था। माधव बड़ा विद्वान और संगीत कला में पारदर्शी था। वेद, पुराण, ज्योतिष, व्याकरण, सामुद्रिक आदि विविध शास्त्रों में भी वह निपुण था। विद्या में बृहस्पति और रूप में कामदेव के समान था। अभूत पूर्व वीणा वादक था। उसकी वीण सुन कर नगर की स्त्रियाँ अपना नाम छोड़ देती थी और सब वेदाल हो जाती थी। कोई मूर्खित होकर गिर पड़ती थी और उसके पीछे-पीछे घूमती थी। अंत में नौबत यहाँ तक पहुँची कि माधव का मोहक स्वरलाहरी शहर के लिये अभिशाप हो गई। लोगों के घर-गृहस्थी की शांति भंग होने लगी। किसी को घक्त पर खाना नहीं मिल रहा है, किसी के घर की वीथियाँ घर का काम धंधा छोड़ कर बेसुध पड़ी हुई हैं। सब हैरान थे। अंत में नगर निवासियों का डेपुटेशन राजा के यहाँ इस आशय का गया

कि या तो आप इस बला को (माधव को) यहाँ से हटाइए या तो हम लोग सब आपका राज्य छोड़ कर दूसरे देश को जाते हैं। राजा बड़े धर्म सकट में पड़ा, पर अंत में यह निणय किया कि अकेले माधव के लिये सारी प्रजा को देश निकाला दे देना ठीक न होगा पर इसके पहले उन्होंने माधव पर लगाए गए इलजाम की जाँच कर लेना मुनासिब समझा। इस दृष्टि से उन्होंने बीस नव-यौवना सेविकाओं को बुलवा कर एक कतार में कमल के पत्तों पर बिठलाया। इधर माधव को सामने बैठा कर वीणा का आलाप करने कहा। आलाप शुरू हुआ, कुछ ही देर बाद सभी स्त्रियाँ स्पष्ट रूप से कामाद्री हो गईं। अब राजा को निश्चय हो गया और उसने माधव से हाथ जोड़ लिया।

तब राजा गयो पीरि पगारैं । तुम को ठेर न विप्र हमारे' ॥

तोन पान को बीरा लयो । राइ हाथ माधौ के द्यौँ ॥

इस प्रकार विचारा माधव पुष्पावती से विदा हुआ, और अपनी वीणा सभाल कर एक आर को चल दिया। वह चलते-चलते कामावती नामक नगरी में पहुँचा और वहाँ विश्राम करने के लिये ठहर गया।

उस नगर मे कामकंदला नाम की नारांगना रहती थी जो रूप लावण्य और संगीत तथा नृत्यकला दोनों ही मे अद्वितीय थी। एक दिन राजा के दरवार में जलसा था जिसमे कामकंदला का नृत्य होने को था। शहर के अनेक लोग देखने जा रहे थे। माधव स्वयं सगीत कला का अन्यतम साधक था। उसे भी उत्सुकता हुई और अपनी वीन कंधे पर रख दरवार के दरवाजे पर पहुँचा पर अपरिचित होने के कारण दरवानों ने भीतर जाने से रोक दिया। खैर वह बाहर ही बैठ कर सुनने लगा। भीतर कामकंदला का नृत्य हो रहा था और संगत में बारह सृदंग एक साथ बज रहे थे। पर इनमें से एक पखावजी के जो चौथे के बाद बैठा हुआ था, चार ही षंगलियाँ थीं जिससे उसकी थाप घेसुरी और वेताली पड़ती थी। माधव के कान इतने अभ्यस्त थे कि इन सब बातों का पता उसने बाहर से ही लगा लिया। और सिर धुन कर कहने लगा कि सभा मे सब उल्लू के षट्टे बैठे हैं, किसी को पता नहीं, द्वारपाल से कहा कि राजा से जाकर कह दो कि एक ब्राह्मण बाहर बैठा हुआ ऐसा-ऐसा कह रहा है। राजा के पास जब यह अद्भुत समाचार पहुँचा तो पहले तो बहुत चकराया पर जाँच कराने पर माधव की बातें सच्ची साबित हुईं। वह फौरन भीतर बुलाया गया और राजा ने बड़े आदर से उसे अपनी गद्दी पर दाहिनी ओर बैठाया। राजा ने उसे सोने का मुकुट पहिनाया और दो करोड़ रुपये भेंट किये। राजा टाडर ने अपनी अँगूठी उतार कर माधव को पहिना दिया। इसके बाद माधव का गायन और वीणा वादन हुआ। सब लोग मुग्ध हुए, खास कर कामकंदला बहुत प्रभावित हुई। अंत में कामकंदला का नृत्य हुआ। उसने सिर पर पानी से भरा हुआ कटोरा रख कर एक कठिन नृत्य आरंभ किया। नाचते समय जब वह भावप्रदर्शन मे लीन थी

उसी समय एक शहद की मक्खी उसके वक्षस्थल पर बैठ कर काटने लगी। अब वह अगर हाथ से उसको हटाती है तो नृत्य बिगड़ता है। यह सोच कर वही से उसने नृत्य की गति चौगुन करके एक चक्करदार टुकड़ा लिया जिसके पवन के वेग से वह मक्खी उड़ गई। इस बात को सिवा माधव के और कोई लक्ष्य न कर सका। माधव ने खुले आम कामकंदला की प्रशंसा की और जो कुछ भेट उसे वहाँ मिली थी सब उतार कर कामकंदला को दे दिया। इसका कारण पूँछे जगने पर उसने राज से कहा—“तुम्हारी सारी सभा मुख मंडली है, कोई गुण का समझने वाला नहीं है, कामकंदला इतना चमत्कारपूर्ण काम कर गई और किसी के पहचान में वह न आया।” राजा को इस अपमान से क्रोध चढ़ आया और उसने कहा कि “यदि तुम ब्राह्मण न होते तो तुम्हारा सिर उड़ा देता, तुम फौरन हमारे राज्य से बाहर चले जाओ।” माधव इसके पहले ही उठ चुका था और यह कहता हुआ चल पड़ा कि “ऐसे मुख राजा के यहाँ रहने में ही मेरा अपमान है।”

पर उसके गुण को पहिचानने वाली कामकंदला से यह न देखा गया। वह आग्रह कर के माधव को अपने घर ले गई और उसे छिपा कर रक्खा। दोनों एक दूसरे के रूप-गुण पर मुग्ध थे। कामकंदला ने वहाँ माधव से प्रेम-कला सिखाने की प्रार्थना की। कई दिन तक दोनों आकंठ आनंदोपभोग में रत रहे। अन्त में माधव ने यह कह कर बिदा चाही कि यदि यहाँ हमारा रहना राजा को मालूम हो जायगा तो तुम विपद में पड़ेगी पर कामकंदला ने एक रात्रि और उसके यहाँ व्यतीत करने की प्रार्थना की और माधव रुक गया। मध्य रात्रि में कामकंदला ने प्रार्थना की कि कोई ऐसा उपाय करो कि इस रात का अंत न हो। माधव ने वीन सँभाली और अलाप शुरू किया। कहते हैं कि उस अपूर्व संगीत के प्रभाव से चन्द्रमा की गति रुक गई और ग्रह उपग्रह आदि अपनी-अपनी धुरी पर रुक गये।

सौर, आखिर उसका संगीत खतम हुआ, रात बीती और सबेरा हुआ और माधव चलने को तैयार हुआ। इस अवसर पर कामकंदला का दुख बड़ा हृदय-विदारक है। माधव के जाने पर वह एक प्रकार से मर ही गई। किसी प्रकार सखियों ने होरा दिखाया पर ‘माधव’ ‘माधव’ कहती हुई विचित्र की सी अवस्था में रहने लगी। वह सूख कर काँटा होगई और खाना-पीना सभी भूल कर जीवित ही मृत सी अवस्था में रहने लगी।

इधर माधव की अवस्था भी लगभग वैसी ही थी। सिवा रात-दिन रोने के और कोई काम न था। अन्त में उसने बहुत सोच-विचार कर राजा विक्रम की शरण लेने की ठानी। उसने सुन रक्खा था कि वह बड़ा परोपकारी राजा है। यह तै कर वह उज्जैन पहुँचा, पर राजा तक उसकी पहुँच न हो पाती थी। पर अपनी अजी राजा तक पहुँचाने का उसने एक उपाय निकाल ही लिया। वहाँ एक महादेव का मंदिर था जहाँ राजा नित्य आता था। उसी मंदिर में माधव ने अपनी वेदना-सूचक एक दोहा लिख दिया और राजा की निगाह में वह दोहा पड़ गया और

उसने उसे दासियों को भेज कर पता लगाया। 'ज्ञानवती' नाम की एक चेरी राजा का सदेस लेकर माधव के पास पहुँची और अपने साथ राजा के पास लिवा ले गई। माधव को देखते ही राजा को विश्वास हो गया कि यह विरह पीड़ित कोई सच्चा प्रेमी है और कहा कि मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ। माधव ने अपना और अपने गुण का परिचय देते हुए अपनी रामकहानी कह सुनाई। राजा ने आश्वासन देते हुए सहायता करने का वचन दिया। पर पहले उसको बहुत ऊँच-नीच समझाया कि गणिका से प्रीत करना ठीक नहीं। पर माधव ने कुछ इस ढंग से अपने सब्बे प्रेम का परिचय इतनी करुण रीति से किया कि सारी राजसभा रोने लगी और सब को यह निश्चय हो गया कि यह सच्चा प्रेमी है और अगर कामकंदला इसे न मिली तो यह घुल-घुल कर मर जायगा।

अंत में राजा विक्रम ने कामसेन राजा के नगर पर चढ़ाई कर दी। पर जब नगर थोड़ी दूर रह गया तो वहीं ठहर कर वह कामकंदला के प्रेम की परीक्षा करने का निश्चय कर के छद्म-वेश से उसके घर गया, और कामकंदला को बड़ी बुरी हालत में, विरह में अग्रिमण अवस्था में पाया। पर तो भी प्रेम की परीक्षा करने के इरादे से उसे यह स्तवरे दी कि माधव तो वियोग में घुलते-घुलते मर गया। यह सुनते ही पिगला की भाँति कामकंदला ने भी तत्काल माधव का नाम उच्चारण करते हुए प्राण त्याग दिया। राजा बड़ा चकराया और उदास होकर अपने खेमे में आया और यह दुःखद समाचार उसने सभा में कहा। राजब हो गया। इधर माधव ने भी अपनी प्रियतमा का निधन सुनकर वहीं दम तोड़ दिया। सारे कटक में हाहाकार मच गया। इधर राजा ने दो प्रेमियों का खून अपने सर लेकर जब कोई उपाय न सूझा तो आत्म-हत्या करने की ठानी और चंदन की चिता तैयार करवाई और बहुत सा दान पुण्य कर सूर्य नमस्कार कर चिता पर बैठ गया।

स्वर्गलोक तक यह बात पहुँची; देवी देवता सब अपने-अपने विमानों पर आरूढ़ होकर यह विचित्र दृश्य देखने पहुँचे। राजा के मित्र बैताल को भी यह स्तवरे मिली। राजा अग्निदान की आज्ञा ले रहा था कि इसी समय बैताल ने पहुँच कर हाथ थाम लिया और राजा की नियति का सब हाल जान तुरत अमृत ले आया और माधव को जिलाया। वह कामकंदला का नाम लेता हुआ उठ बैठा। तब राजा वैद्य के वेश में अमृतकलश लेकर कंदला के यहाँ पहुँचे और उसे भी जिलाया और बहुत कुछ आश्वासन देकर खेमे में आये। वहाँ से राजा के यहाँ दूत भेज कर यह कहलवाया कि जिस किसी मूल्य पर हो आप कामकंदला को हमारे हवाले कर दीजिये। पर उसने इसमें अपमान समझ कर युद्ध की ठानी।

दोनों में घमासान युद्ध हुआ चार प्रहर तक। अंत में कामसेन राजा पराजय स्वीकार कर, हथियार फेंक हाथ जोड़ विक्रम के सामने खड़ा हुआ और माफी माँगी। फिर उसने कामकंदला को लाकर राजा के खेमे में दाखिल कर दिया।

चिर विरही माधव और कामकंदल का मिलन हुआ और आतं दुखहारो राजा विक्रम दोनों को लेकर अपनी राजधानी उज्जैन चला गया ।

× × ×

इस काव्य की भाषा परिमार्जित अवधी है । वूं कि यह ग्रंथ छोटा और अभी तक अप्रकाशित है इसलिए इस संग्रह मे यह समूचा दे दिया गया है ।



## शेख़ निसार

हिंदी के मुसलमान कवियों में हम यह विशेषता देखते हैं कि वह अपनी रचनाओं में अपना संक्षिप्त व्यक्तिगत परिचय तथा रचना काल आदि का कुछ व्योरा दे देते हैं जिससे संपादक को बड़ी सुविधाएं हो जाती हैं। काश की यही प्रथा हिंदी के अन्य कवियों में भी होती तो आज गढ़े मुद्दे उखाड़ने में जो दिक्कतें हो रही हैं; विभिन्न कवियों के काल निर्णय के संबन्ध में विद्वानों में जो भीषण मतभेद की सृष्टि हुई है, और समालोचकों में आये दिन व्यर्थ का झगड़ा और विद्वेष हो रहा है वह न होता, और समय तथा विद्वत्ता का इतना दुरुपयोग न होता। तमाशा यह है कि तुलसी, भूषण आदि हमारे अधिकांश प्रमुख महाकवियों के ही संबन्ध में अभी तक सवे-सम्मति से सब बातें नहीं तय हो पाई हैं। अस्तु,

सौभाग्य से इन अख्यानक कवियों ने अपना परिचय तथा रचना काल का स्पष्ट उल्लेख कर बड़ी दूरदर्शिता से काम लिया है।

कवि निसार का रचनाकाल देहली के अंतिम मुग़लसम्राट शाह आलम के समय में हुआ था।

आलम शाह हिंद सुखताना। तेहि के राज यह कथा बखाना ॥

×

×

×

साथ ही यह भी लिखते हैं कि उस समय अवध में नवाब आसिफुद्दौला राज्य करते थे। और उनके हिंदू मंत्री बड़े न्याय निष्ठ तथा राजनीतिकुशल थे।

चहुँ दिसि अंध धुंध सब छावा। अवध देस कों दियो विहावा ॥

येहिया खां आसिफ़ उद्दौला। तासु सहाय अहर नित मौला ॥

हिंदू सचिव वह बली नरेसा। तेहि के धरम सुखी सब देसा ॥

तेहि के राजनीत जग छाए। धरम दान को सरवर पाए ॥

×

×

×

शेख़ निसार का जन्म अवध के अंतर्गत शेखपुर नामक एक कसबे में हुआ था। डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर से पता चलता है कि शेखपुरा नाम का एक कसबा जिला रायबरेली परगना बड़राबाँ और तहसील महाराजगंज में है। यहाँ शेखों की अच्छी बस्ती है। पिछली मनुमशुमारी में वहाँ शेखों की संख्या ८,७१९ थी।

कवि निसार ने कहा है कि शेखपुरा उनके पूर्वज शेख हबीबुल्ला द्वारा बसाया गया था।

शेखपुर इत गाँव सुहावा । शेख निसार जनम तहँ पावा ॥  
शेख हबीबुल्लाह सुहाये । शेखपुर जिन आन बसाये ॥

× × ×

फिर आगे चल कर कवि कहता है कि सम्राट अकबर के समय में वे ( शेख हबीबुल्लाह ) देहली से अवध आये और बीस वर्ष तक वहाँ रहे । इनके पुत्र शेख मुहम्मद हुए । इनके पुत्र का नाम गुलाम मुहम्मद था और यही शेख निसार के पिता थे । फिर निसार ने अपने पूर्वज शेख हबीबुल्लाह को प्रसिद्ध मौलाना रुम का वंशज माना है ।

पातशाह अकबर सुलताना । तेहि के राज कर जगत बखाना ॥  
अवध देस सूब होय आए । बीस बरस तहँ रहे सुहाए ॥  
तेहि के शेख मुहम्मद बारा । रूपवंत भू के अवतारा ॥  
ता सुत गुलाम मुहम्मद नाऊँ । सो हम पिता सो ताकर गाऊँ ॥  
वंस मौलवी रुम के , शेख हबीबुल्लाह ।  
जेहि के मसनवी जगत महँ . अगम निगम अवगाह ॥

× × ×

अपनी शिक्षा दीक्षा तथा ग्रंथ रचना आदि के संबंध में भी कवि स्वयं पर्याप्त सामग्री दे देता है । अरबी, फारसी, तुर्की, और संस्कृत आदि कई भाषाओं में कवि को गति थी और इन्होंने सात ग्रंथ रचे थे जिनमें तीन गद्य, एक दीवान, एक अलंकार ग्रंथ तथा एक भाखा काव्य ( युसुफ-जुलेखा ) मुख्य थे । कवि की पक्तियों से यह व्यक्त होता है कि इनके ग्रंथ फारसी, अरबी और संस्कृत में भा थे, पर इनका हमें अभी तक पता नहीं लग सका है ।

सात ग्रंथ अनूप सुहाए । हिंदी औ पारसी सोहाए ॥  
संस्कृत तुर्की मन भाए । अरबी और फारसी सुहाए ॥  
हीर निकार के गेहूँ खाने । रस मनोज रस गीत बखाने ॥  
औ दिवान मसनवी भाखा । कर दोह नसर पारसी भाखा ॥

### कवि का समय

निसार कवि कहते हैं कि बुढौती में उन्होंने युसुफ जुलेखा लिखी । सात दिन में वह ग्रंथ लिखा गया और उस समय उनकी अवस्था ५७ सत्तावन वर्ष की थी । ग्रंथरचना का समय १२०५ हिजरी दिया हुआ है । प्रतिलिपि में सवत् १८२७ पर हिसाब लगाने पर यह संबत् १८४७ होता है । स्पष्ट है कि यहाँ लिपिकार ने भूल की है । फारसी लिपि में 'सैतालीस' का 'सत्ताइस' पढ़ा जाना या लिखा जाना दोनों ही संभव है । जायसी के संबंध में भी ठीक इसी तरह की भूल हुई है जहाँ कि

१४७ हि० का १२७ पढ़ा गया था। अस्तु इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि का जन्म १८४७—५७=संवत् १७९० में मानना चाहिये और तदनुसार ई० सन् १७२२ इनकी जन्म तिथि हुई।

वार वैसे महँ कथा बंनार । हीर निकार अनूप सोहाप ॥  
 रस मनोज रस गीत सोहावा । समै बात का भेस बतवा ॥  
 सत्तावन धरस धीते आयू । तब उपज्यो यह कथा क चारू ॥  
 सात दिवस महँ कथा समापत । दुरमति नाम रहयो सो संमत ॥  
 हिनरी सन वारह सै पाँचा । धरनेउँ प्रेम कथा यह साँचा ॥  
 अछारह सै सत्ताईसा । संवत् विक्रम सेन नरेसा ॥

×

×

×

### काव्य रचना का निमित्त

'यूसुफ जुलेखा' काव्य की रचना का संबंध कवि के जीवन की एक दुःखद घटना से है। काव्य के अंत में कवि ने इस करुण घटना का उल्लेख किया है। इनके एक मात्र पुत्र लतीफ की मृत्यु २२ वर्ष की अवस्था में हो गई। कवि कहता है कि उसके निधन से मैं पागल सा हो गया था। मृत्यु शय्या पर पड़े हुए उसने मुझे रोते देव्य कर कहा था कि पिता तुम रोते क्यों हो, बड़े लोगों को सदा दुःख सहना पड़ता है। नवी यूसुफ को दुःख भोगना पडा था, राम को दुःख सहन करना पडा। दुःख मे ही मनुष्य की परीक्षा होती है। आगे पीछे एक दिन सब को जाना है। जब से उसकी मृत्यु हुई मैं नित्य याकूब की याद करता था। उसी की भौंति पुत्र-शोक में अकालवृद्धत्व को प्राप्त हुआ। उसी के विरह में रो रो कर मैंने यह गाथा लिखी। ससार के रहस्य का कुछ पता नहीं। अब तो ईश्वर मुझे जल्दी ही मौत दे और मेरे सांसारिक दुःखों का अंत हो। मैं तो रहूँगा नहीं पर यह कहानी सदा रहेगी। जो इस कथा को पढ़ें सुनें उनसे बिनती है कि मुझे आशीर्वाद दे कि मेरी सद्गति हो। कथा के अंत का यह भाग करुण रस की कविता का एक अपूर्व नमूना है। कुछ पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत की जाती हैं।

जब तें जनम लीन्ह जग माहीं । छुटि दुख अवर सो देख्यों नाहीं ॥  
 अवर दुःख मैं सब कुछ सहा । भयो एकं दुख बाउर महा ॥  
 पुत्र अनूप दई मोहि दीन्हा । रूप अनूप बुधि आगे कीन्हा ॥  
 बाइस बरिस रहा जग माहीं । छुट विद्या उन जान्यो नाहीं ॥  
 नाम लतीफ अनूप सोहाये । सब गुन ज्ञान दई अधिकाये ॥

बाइस बरिस के वैसे महँ, झाँचि दीन्ह उन देह ।  
 मुरत अनूप गुलाब सो, जाय मिले पुन खेह ॥

तब मैं भय जो वादर भेसा । करौ सदा अंतकाल अँदेसा ॥  
 जब तँ लतीफ कर मरम बिसेख्यौं । तप संपत अमिरया देख्यौं ॥  
 रोम रोम यह विरह बखानी । कोउ न रहा जग रहै कहानी ॥  
 देहु दया मोहै क्य मोख् । हरहु मोर अथ अवगुन दीख् ॥  
 पढ़ै प्रेम कै अचर कोई । दई असीस मोर गति होई ॥  
 हम न रहब आखर रहि जाई । सय हि जोग होइहि सुख दाई ॥  
 × × ×  
 सात दिवस मे कथा सोहाई । कीन्ह समापत दीन्ह बनाई ॥

हत्यादि ।

कवि निसार सैयद ईशाअल्ला ख़ाँ के सम सामयिक थे इसका पता भी आभ्यंतरिक प्रमाणों से मिल जाता है, साथ ही यह भी पता चलता है कि हंस-जवाहिर' नामक मसनवी काव्य भी इनके समय में प्रचलित था ।

हंस जवाहिर प्रेम कहानी । कहा मसनवी अँविरत वानी ॥  
 हंसा कहे जहाँ लह भेद् । औ सब कथा जहाँ लह वेद् ॥  
 झूठ ज्ञान सम तिन मन भापा । अथ यह सौच कथा चित्त लागा ॥  
 × × ×

### कथा का सारांश

यूसुफ जुलेखा की कथा का आधार है प्रासिद्ध फारसी काव्य 'यूसुफ-जुलेखा' । कवि निसार ने इसको भारतीय जामा पहिनाने की चेष्टा की है पर इस चेष्टा में यह अधिक सफल नहीं हो सके हैं । मूल कथा यो है ।

नबी याकूब किनअँ नगर मे रहते थे जो कि 'नूह' साहब का वसाया हुआ था । नबी 'लूत' की लड़की से इसहाक ने शादी की थी जिससे 'ईस' और 'याकूब' नाम के दो बेटे पैदा हुए थे । याकूब की सात बीबियाँ थीं और उनसे बारह बेटे हुए इनकी 'रोहेल' नाम की बीबी से 'यूसुफ' नामक पुत्र और 'दुनियाँ' नाम की कन्या हुई । याकूब यूसुफ को बहुत ज्यादा मानते थे और इससे अन्य सब लड़के इनसे भयानक ईर्ष्या करते थे । बात यहाँ तक पहुँची कि शेष सब भाइयों ने मिल कर यूसुफ का प्राणांत करने का निश्चय किया । इस विचार से जब वे जङ्गल मे भेड़ चराने जाने लगे तो पिता से कह सुन कर यूसुफ को भी ले गये । वहाँ इन लोगों ने उसे कुएँ में ढकल दिया ।<sup>१</sup> उसका एक कुरता छीन कर बकरी के खून से रँग दिया और घर में पिता के सामने कुरता पेश करते हुए कहा कि यूसुफ को भेड़िये ने मार डाला ।

<sup>१</sup> इस स्थल की यूसुफ की कही हुई बातें और उसका व्यवहार ईसा या मुहम्मद की उच्चता की याद दिलाती हैं ; साथ ही यहाँ की कविता भी उरुच कोटि की बन पड़ी है ।

इधर यूसुफ कुएँ में पड़े रहे। एक दिन कुछ सौदागर उधर से गुज़रे। इनमें एक ने पानी निकालने को डोल डाली जिसे यूसुफ ने पकड़ ली और तब सबों ने इन्हें मिला कर बाहर निकाला। सौदागरों के सरदार ने यूसुफ के रूप और कांति पर मुग्ध हो इन्हें अपने साथ ले जाना चाहा, पर इतने ही में इनके हत्यारे भाई भी उधर आ पहुँचे और उन्होंने कहा कि यह मेरा गुलाम है और भाग आया है तुम चाहो तो इसे खरीद सकते हो। सौदागर ने मुह माँगा दाम देकर यूसुफ को खरीद लिया इस प्रकार इन भाइयों ने यूसुफ को अपने राह के कंटक के समान दूर तो किया ही, साथ ही अच्छी खासी रकम भी वासूल की।<sup>१</sup> खैर सौदागर ने मिस्र की राह ली।

उधर मग़रिब (पश्चिम) देश में तैमूस नामक एक सुलतान राज्य करता था जिसके जुलेखा नाम की एक अर्निष्ट सुंदरी बेटी थी। संसार में कोई उसके समकक्ष नहीं थी। दुनियाँ के कोने-कोने से बड़े से बड़े वादशाहों के विवाह के प्रस्ताव आये पर सुलतान ने सब को कोरा जवाब दिया।

इधर जुलेखा ने स्वप्न में यूसुफ को देख कर मन ही मन उसे ही पति बनाने की प्रतिज्ञा की। पर उससे मिलने का कोई उपाय न देख वह दिन-दिन घुलने लगी। वैद्य, हकीम सब थक गये पर उसकी अवस्था शोचनीय हो चली। उसकी धाय बड़ी चतुर थी और जुलेखा ने उससे अपनी सब बातें प्रगट कर दीं। उसने राय दी कि यदि फिर कभी स्वप्न में उस पुरुष के दर्शन हों तो उसका 'नाँव गॉव' सब पूँछ लेना। और हुआ भी ऐसा ही। फिर जब स्वप्न हुआ तो बहुत ज़िद करने पर यूसुफ ने कहा मिस्र के सचिव के यहाँ आवो तो मुझसे भेंट होगी। धाय ने यह भेद सुलतान पर प्रगट किया कि यदि आप अपनी लड़की की ज़िदगी चाहते हैं तो मिस्र के वज़ीर के साथ इसकी शादी कर दीजिये।

सुलतान बड़ा दुःखी हुआ, क्योंकि वज़ीर की हैसियत उससे कहीं नीचे थी। पर आखीर क्या करता। पैराम भेजा गया और मिस्र के वज़ीर ने बहुत झेप कर इसे मंजूर किया और शादी हुई। जुलेखा रुखसत हुई। रास्ते में धाय से इसने ज़िद किया कि एक बार 'उन्हे' दिखा दे। पर जब उसने पति को देखा तो मानों आसमान से गिरी। वह तो स्वप्न में आने वाला वह सुंदर पुरुष वही था। अब धोर सकट इनके सामने उपस्थित हुआ। बात यह हुई थी कि स्वप्न वाले मनुष्य ने यह तो कहा नहीं था कि मैं मिस्र का वज़ीर हूँ। यह तो सिर्फ़ उसका यहाँ मुलाजिम था। पर जुलेखा ने समझा कि वही वज़ीर है। इसी राततफहमी पर कथा का सारी दिलचस्पी निर्भर करती है।

<sup>१</sup> बिदा होते समय फिर यूसुफ ने बड़े करुण शब्दों में केवल यही कहा कि 'भाई मेरा अपराध क्षमा करना और कभी-कभी याद करना, और पिता को कहना मेरे लिये दुःखी न हों। पर भाइयों ने भेद खुलने के डर से यूसुफ का मुह बंद कर दिया।

खैर, आखिर जुलेखा मिस्र के बज्जीर के हरम में दाखिल हुई। पर अपने सतीत्व की रक्षा के लिये उसने धाय की सलाह से एक उपाय सोच निकाला। वह बामारी का बहाना कर के पड़ रही। धाय ने बज्जीर को समझा दिया कि इसको यह रोग है। इस तरह से बड़े दुःख के साथ जुलेखा के दिन कटने लगे।

इधर वह सौदागर यूसुफ को लिये हुये मिसर पहुँचा। वहाँ उसने गुलामों के बाजार में बेचने के लिये यूसुफ को खड़ा किया। उसका अपूर्व रूपसौंदर्य देख कर सारा मिस्र हैरान था। सारा देश उसकी एक झलक देखने के लिये उमड़ा पड़ता था। बड़ी-बड़ी कोमलें लग रही थी। ऐसी शोहरत सुन धाय को लेकर जुलेखा भी उसके दर्शन को चली। देखते ही उसने पहचान लिया कि यह तो वही पुरुष है जिसने स्वप्न में अपनी सूरत दिखा उसका मन हर लिया था। खैर, धाय की सलाह से यह तय पाया कि बज्जीर से, कह कर इस दास को खरीदवाया जाय। बज्जीर ने जुलेखा को खुश करने के इरादे से यूसुफ को खरीद कर उसकी सेवा के लिये रख दिया।

अब जुलेखा कुछ खुश रहने लगी। धीरे-धीरे जुलेखा अपने मनो-भाव यूसुफ पर प्रगट करने लगी पर वह इस पर कुछ ध्यान न देता। वह अधिकतर उदासीन ही रहता। पर क्रमशः जुलेखा की चेष्टाएँ बहुत स्पष्ट होती गईं और एक दिन यूसुफ बहुत कामातुर हो गया और जुलेखा को पकड़ने को बढ़ा पर उसी समय उसके पिता की मूर्ति उसके सामने खड़ी हो गई। वह तुरत सँभल गया और चलते पाँव भागा। पर भागते समय जुलेखा ने उसका कुरता पकड़ लिया और झटके में वह फट भी गया पर यूसुफ निकल भागा। इससे जुलेखा ने अपने को अपमानित समझ कर बज्जीर से यह शिकायत कर दी कि यूसुफकी निगाह ठीक नहीं है, उसने उस पर हमला किया था। प्रमाणस्वरूप उसने उसके फटे कुरते का टुकड़ा पेश किया। पर कुरते के पीछे का हिस्सा फटा देख बज्जीर ने असल बात का पता लगा लिया पर ऊपर से चुप रहा और जुलेखा का मान रखने के लिये यूसुफ को सिर्फ कारावास का दंड दिया।

अब जुलेखा को अपने ऊपर बड़ी ग्लानि हुई। वह बहुत सतप्त रहने लगी। कारागार में यूसुफ के सुख के लिये भौंति-भौंति के प्रयत्न गुप्त रीति से करने लगी पर वह इन सब हरकतों से बिलकुल उदासीन रहने लगी और कभी जुलेखा की चेष्टाओं पर आकर्षित न होता था।

एक दिन एक सवार किनआँ नगर से मिस्र आया। यूसुफ ने कारागार की खिड़की से उसे देखा और अपने देश का आदमी पहचान कर उसे बुलाया और अपने नगर और अपने पिता का हाल चाल पूँजना चाहा, पर उसने यूसुफ को न पहचान कर इसकी बातों पर कुछ ध्यान न देकर आगे बढ़ना चाहा पर न जाने किस दैवशक्ति से उसके ऊँट के पाँव ही आगे न बढ़ते थे। आखिर उसने यूसुफ से कहा कि मैं व्यापार करने मिस्र आया हूँ। यूसुफ ने पिता के लिये अपना संदेशा

कहा और कहा कि वे ईश्वर से प्रार्थना करें कि मैं जेल से छुटकारा पाऊँ। उसने लौट कर याकूब से यह सँदेशा कहा भी। उधर यूसुफ ने कई पत्र पिता के पास भिजवाये पर कोई भी उनके पास तक न पहुँचा।

इधर मिस्र में जुलेखा की बड़ी निन्दा होने लगी। सब ख्याँ उसे दुर्गचारिणी कहतीं। आखिर जब जुलेखा से न रहा गया तो उसने शहर को बहुत सी औरतो को दावत दी और सब को एक कतार में बैठा कर सब क सामने एक एक तरबूज और एक-एक चाकू रखवा दिया। जब सब तरबूज काटने में लगी तब ठीक उसी समय जुलेखा ने यूसुफ को बुला कर उनके सामने से गुजारा। सब उसके रूप को देख कर इतनी तन्मय हागई कि सबों ने चाकू से अपना हाथ काट डाला। इस प्रकार जुलेखा ने यह सिद्ध कर दिया कि यूसुफ का रूप ही ऐसा है कि उसे देख कर कोई अपने बस में नहीं रह सकता। आखिर यूसुफ के चले जाने पर सब खियाँ बड़ी लज्जित हुईं और सबो ने जुलेखा से क्षमा माँगी।

यूसुफ सात साल तक जेलखाने में सड़ता रहा। जुलेखा उसे मुक्त करने के उपाय सोचा करती पर उसकी कोई तरकोब कारगर न हातो थी। इसी बीच मिस्र के सुलतान ने एक बड़ा बेढब सपना देखा जिसका कोई अर्थ ही न बता सकता था। यूसुफ के पाण्डित्य और अनोखी सूझ-बूझ की बड़ी शोहरत थी। आखिर इस स्वप्न-फल के विचार के लिये सुलतान ने इन्हे तलब किया। इन्होंने बताया कि इसका अर्थ यह है कि सात साल तक वर्षा न होगी और यदि शांति का समुचित प्रबंध किया जायगा तो प्रजा के प्राण बँच जायँगे। इस पर सुलतान ने समुचित प्रबंध करना शुरू किया और बहुत बड़े पैमाने पर अन्न वस्त्र एकत्रित करने लगा। इसी सिल-सिले में सुलतान ने यूसुफ के कैद होने का कारण पूछा और प्रसंगवश जुलेखा ने अपनी सारी आत्म-कथा साफ-साफ सुलतान पर प्रगट कर दी। मंत्री ने क्रोधवश जुलेखा को त्याग दिया।

पर इस सुलतान ने यूसुफ को ही इस मंत्री के पद पर बड़े आदर से बैठाया। इधर जुलेखा तप करने लगीं। मंत्री होने पर सात साल तक अच्छी खेती हुई। यूसुफ ने बहुत सा अन्न तथा खाद्य द्रव्य इकट्ठा कर लिया। इसके बाद घोर दुर्भिक्ष का समय आया चारों ओर त्राहि-त्राहि मँची। इस अकाल के पाँचवें साल वह मिस्र का पुराना बज्जोर मर गया। यूसुफ का मान और भी बढ़ गया और सुलतान ने सारा राज-काज इन्ही के हाथ सौंप दिया।

इधर यूसुफ को जन्म-भूमि फिनर्श में भी अकाल पड़ रहा था। याकूब ने अपन लड़का का अन्न लाने और यूसुफ का पता लगाने के लिये मिस्र की ओर रवाना किया। दसो भाई मिस्र पहुँचे और यूसुफ ने सब को पहचाना पर अपने को इन पर प्रगट नहीं किया। सब का हाल-चाल पूछ कर और बहुत सा अन्न आदि देकर विदा किया और साथ ही यह भी कहला भेजा कि अपने छोटे भाई इडन अर्मी को लाओ तो और भी बहुत सा सामान देंगे।

सभों ने आकर पिता से सब हाल कहा । उन्होंने बड़े दुःख से इब्नअमी को जाने दिया क्योंकि यूसुफ के बाद यही सब से प्यारा बेटा होगया था ।

आखिर ये लोग फिर यूसुफ के पास पहुँचे और इन्होंने सब का बड़ा स्वागत किया । सब एक साथ भोजन करने बैठे । छः थालियाँ लगीं और एक-एक में दो-दो भाई एक-साथ भोजन करने बैठे । इब्नअमी अकेला पड़ता था, इससे खुद यूसुफ उसके साथ बैठ गया । इस मौके पर इब्नअमी यूसुफ को पहचान गया । विदा होते समय यूसुफ ने फिर सबको बहुत सा अन्न बगैरह दिया पर इब्न को रोकने की शरज से उसके कपड़े में बाँट रखवा दी जिससे वह चोर समझ कर पकड़ा गया । कहते हैं कि इस पर किनअर् और मिस्र वालों में घोर युद्ध हुआ और किनअर् वाले हार कर बंदी कर लिये गये और सुलतान ने सब को मरवा डालने का हुक्म दिया पर यूसुफ ने किसी तरह माफ करवाया । बाद को सब भाइयों ने यूसुफ को पहचाना और सब गले मिल कर बहुत देर तक रोये और सबों ने अपनी पिछली करनी पर बड़ा दुःख प्रगट किया । बाद को सब किनअर् गये पर यूसुफ ने इब्न और यहूदा दो भाइयों को रोक लिया था । किनअर् पहुँचने पर सब को यूसुफ का पता चला और याकूब के साथ सारा किनअर् यूसुफ के दर्शन को चला । यूसुफ ने सब को बड़े प्रेम से खतिर की और तीस वर्ष बाद पिता पुत्र मिले । मिस्र का सुलतान भी बड़ा सुखी हुआ । वह निस्सतान था और क्लाफा बूढ़ा हो गया था अतः उसने इस मौक पर यूसुफ को अपने सिंहासन पर बैठा कर राज्याभिषेक कर दिया । यूसुफ अब सुलतान था ।

इधर जुलेखा को यूसुफ के विरह में तप करते ४० वर्ष होगये थे । वह बूढ़ी और रोते-रोते अधी होगई थी । वह अपना सब कुछ खो चुकी थी । अब वह पथ की भिखारिनी थी ।

एक दिन शहर में यूसुफ की सवारी निकली । यद्यपि नेत्र-हीन थी, उसे यूसुफ के अंतिम दर्शन की बड़ी अभिलाषा हुई और बड़ी खुशामद के बाद कुछ औरतों ने उसे यूसुफ के रास्ते में खड़ा किया । संयोग से यूसुफ ने इसे तुरत पहिचाना और इसे बड़ी दया आई । यूसुफ ने पूँछा तुम्हारा यह हाल क्योंकर हुआ । उसने कहा सब तुम्हारे कारण । याकूब को भी सब हाल मालूम हुआ । उन्होंने जुलेखा को दुआ दी जिससे वह फिर षोडषी रूप में परिणत हुई और रूपलावण्य पहले से भी उज्ज्वलतर हुआ । अंत में दोनों का विवाह हुआ और याकूब ने दोनों को दुआ दी ।

पर जब सब कुछ हो गया तब आखिर को जुलेखा को कुछ शरारत सूझी । उसने यूसुफ को छकाने की ठानी ताकि उसे कुछ पता तो चले कि कैसे हमने ये ४० बरस बिताये हैं । आखिर को यूसुफ को नाकों चना चबवा कर तब अंत में जब उसके मरने की नौबत आई तब जुलेखा ने आत्मसमर्पण किया ।



## कथा का आधार तथा उसकी विशेषता

यूसुफ जुलेखा की कथा पद्मावत आदि अन्य कथाओं से एक महत्व-पूर्ण विभिन्नता रखती है और उस पर ध्यान देना आवश्यक है। अन्य: सभी प्रेमगाथा या आख्यानक काव्य जो अभी तक प्राप्त हो सके हैं, किसी न किसी लोकप्रसिद्ध भारतीय ऐतिहासिक घटना का आश्रय लेकर रचे गये हैं। अंतर इतना ही है कि कुछ में यह आश्रय केवल नाम मात्र का और कुछ में ऐतिहासिक तथ्यों के भामजस्य का आद्योपांत यथाशक्ति ध्यान रक्खा गया है। हाँ कविता की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए जितनी निरंकुशता का अधिकार इस कोटि के महाकाव्य लेखकों को हो सकता है इसका किसी ने बहुत दुरुपयोग किया है, किसी ने कम। पर यूसुफ-जुलेखा की कथा भारतीय इतिहास या संस्कृति से कोई सबंध नहीं रखती, इसका आधार या आश्रय पूर्णतया विदेशी है। इसमें जिस समाज का चित्र खींचा गया है वह भी भारतीय न होकर ईरानी या मिसरी कहा जाता है। इसकी प्रेमपरंपरा का कोई सबंध भारतीय-जीवन से नहीं है। वह सोलह आने ईरान या अरब आदि इस्लामी देशों की है।

### जुलेखा की प्रेमपरंपरा

स्वप्न में किसी अपरिचित पुरुष को देख कर उसके प्रेम में पागल हो जाना, भारतीय काव्य और रसपद्धति के लिये एक नई बात है। प्राचीन संस्कृत या हिंदी काव्यों में हम इस प्रकार के प्रेम पर आधारित कोई बड़ा काव्य नहीं पाते। 'ऊषा-अनिरुद्ध' की बात छोड़ दीजिये, वह एक दूसरे ही ढग की चीज है। 'गुणश्रवण' 'चित्रदर्शन' आदि ढंग तो हमारे यहाँ मिलते हैं, और अधिकतर प्रेमगाथाओं में अपनाये गये हैं। पर 'स्वप्नदर्शन' पर आधारित प्रेम बहुत अंश तक अस्वाभाविक होता है और वास्तविक जीवन में असंभव सा ही है। वन, वीथी, तड़ाग आदि कहीं पर नायक-नायिका का एक बार परस्पर साक्षात्कार हो चुका हो, निगाहें चार हो चुकी हों, उसके बाद स्वप्न-दर्शन होना स्वभाविक है, और ऐसा वास्तविक जीवन और काव्य दोनों ही में हम प्रायः देखते हैं। पर जिसको कभी न देखा न सुना, न चित्र ही देखा, उसे स्वप्न में देखना और सदा के लिये उसी में अपने को लीन कर देना यह फारिस की ही देन है।

फिर दूसरी विभिन्नता यह है कि पद्मावत आदि मसनवी काव्यों में गुणश्रवण या चित्र-दर्शन आदि जिस किसी कारण से भी प्रेम आरंभ होता है, दोनों ओर नायक-नायिका में समान रूप से आरंभ होता है। यहाँ सब कुछ जुलेखा की तरफ से ही है। यूसुफ इससे बिलकुल बरी रक्खा गया है। इसने कभी न स्वप्न ही देखा न इसकी याद में अस्थिपिंड मात्र ही दिखलाया गया, इधर जुलेखा इसके कारण अपमानित और लांछित होकर परिस्थित हुई और ४० वर्ष तक तप करते-करते अधी, वृद्धी और मरणसाज अवस्था को प्राप्त हुई, इधर यूसुफ दास से मंत्री, फिर

मिस्त्र का सुलतान तक हो गया। इसे मानों पता भी नहीं कि जुलेखा इसकी याद में मर रही है। अगर इत्तफाक से खुलेखा की कुटिया की तरफ से उसकी सवारी न निकलती तो शायद जुलेखा मर ही जाती और कोई यूसुफ तक उसके मरने की खबर तक पहुँचाने वाला न था।

### लौकिक और अलौकिक

इस प्रकार की अस्वाभाविकताओं का हम एक ही कारण देखते हैं। इस कथा में नायक दो रूप में चित्रित किया गया है—लौकिक और अलौकिक। राम-चरित-मानस के नायक के संबन्ध में भी महाकवि तुलसीदास ने जाने या अन-जाने में ऐसा ही किया है। उनके संबन्ध में 'कवि' तुलसी और 'भक्त' तुलसी दोनों अपनी-अपनी बात बागी-बारी से कहते हैं। पर कवि निसार के संबन्ध में यह बात नहीं है। उन्होंने भगवद्भक्ति से प्रेरित होकर यह कथा नहीं लिखी है। पर इस्लाम की दुनियाँ में यूसुफ 'नबी' या ईश्वर के प्रतिनिधि, मनुष्य रूप में माने गये हैं; और इनकी कथा फारसी यूसुफ-जुलेखा में वर्णित है। इस मौलिक ग्रंथ का कहीं तक अनुकरण निसार ने किया है यह जानने का हमारे पास कोई साधन नहीं है। पर इतना हम कह जानते हैं कि जहाँ-जहाँ चाहे किसी जाति या भाषा के कवि नायक में एक साथ ही 'मनुष्यत्व' और 'ईश्वरत्व' का आरोप करते हुए चले हैं वहाँ इसी तरह का गण्डचौध हुआ है। कवि कुलगुरु तुलसी की प्रतिभा असाधारण थी। उन्होंने दोनों का निर्वाह कर ही दिया है एक प्रकार से, और दातें इतनी खटकी भी नहीं।

### चरित्र-चित्रण

पर यही बात हम निसार के संबन्ध में नहीं कह सकते। यूसुफ के चरित्र-चित्रण में कवि ने किसी हद तक उनको 'हर्ष-विषाद-रहित' महामानव के रूप में चित्रित करने का प्रयास किया है पर सफलता नहीं मिल सकी है। वह 'उदात्त' गांभीर्य हम यूसुफ में नहीं पाते। कहीं-कहीं तो इनका व्यवहार काफी निम्न-कोटि का स्वरूप भी बन पड़ा है। अब जैसे यूसुफ के हृदय में जुलेखा की प्रबल काम-चेष्टाओं से कामातुर होकर उस को आलिंगन करने को दौड़ पड़ना, फिर यका-यक पिता की तस्वीर सामने आजाने पर संभलना और उल्टे पाँव भाग खड़ा होना और जुलेखा का उसे रोकने के लिये झपटना और कुरता थाम लेना, कुरते का फट जाना आदि कुछ ऐसी बातें हैं जो नायक और नायिका दोनों के चरित्र को बहुत नीचे गिरा देती हैं। पर जुलेखा का चरित्र तो यहाँ बहुत ही निम्नकोटि का कर दिया गया है। कहा गया है कि ऐन मौके पर यूसुफ के भाग निकलने से उसे इतना घृणित क्रोध हाँता है कि वह अपने पति से शिकायत करती है कि यूसुफ ने उस पर बलान्कार की चेष्टा की थी, पर उसने किसी तरह अपनी इज़्जत बचाई। अपने कथन की सत्यता में वह यूसुफ के फटे कुर्ते का भाग पेश करती है। यह व्यवहार तो कुछ-कुछ

मुराल कोर्ट की रखेलियों और वीदियों के Intrigues या छल-कपट और प्रेम षड-यंत्रों की याद दिलाता है। पर इसके लिये हम निसार को कहीं तक उत्तरदायी ठहरावें ? यह तो फारसी काव्य-पद्धति और इस्लामी समाज-चित्र की बातें हैं जिन्हे कवि ने अवधी में वर्णन मात्र कर दिया है।

नायक, नायिका के सिवा धाय का चरित्र विशेष ध्यान देने योग्य है। मुसलमान बादशाहों में अतःपुर मे दाई या धाय जैसी होती थीं उनका सच्चा चित्र हम देखते हैं। गुप्त प्रेम में शाहों और सुलतानों की बेटियों को ये दाइयाँ डूबते को तिनके के सहारे की भोंति थीं। ये दूती का काम करती थीं और आखीर तक साथ देती थीं।

भाइयों के पारस्परिक द्वेष का निकृष्टतम उदाहरण इस काव्य में मिलता है। बाप यूसुफ को और भाइयों से जयादा मानता था इसलिये उन्हें बिचारे को खपाहा डाला और बाप से आकर कह दिया कि उसे भेड़िये ने खा डाला ! फिर वह किसी तरह से कुएँ से निकला भी तो उसे अपना दास कह कर बेच डाला और अच्छी खासी रकम बसूल कर ली ! नबी के सगे भाइयों का यह हाल है ! विम ता के पुत्र भरत और शत्रुघ्न की याद बरबस आ जाती है। कितना असम्भव पार्थक्य है !

### कविता

यह हम पहले भी कह चुके हैं कि इन मसनवी कवियों की कविता प्रायः सभो की एक ही ढर्रे की हुई है। रहा अवधी भाषा। वही दोहे, चौपाईयों की छंदावली और वही विषय ! पर निसार का काव्य भाषा और विषय दोनों ही दृष्टि से अन्य मसनवी काव्यों से काफ़ी पार्थक्य रखता है। विषय या कथावस्तु का पार्थक्य हम ऊपर दिखा चुके हैं।

निसार की भाषा में हमें साहित्यिक अवधी के परिमार्जित रूप का आभास मिलता है। पदमावत के ढंग के ग्रामीण या rustic या ठेठ प्रयोग जुलेखा में शायद ही कही मिलते हों। मानस की अवधी से भी कुछ अंशों में निसार की भाषा परिष्कृत है। अरबी, फारसी के शब्द प्रायः आते रहते हैं। इन्होंने अपनी रचना में विशेष कर ऋतुवर्णन और बारहमासा वर्णन के समय कवित्त और सवैये भी खूब लिखे हैं जो कि प्रेम-गाथा कवियों के संबंध में एक अनहोनी बात है। इनके कवित्तों में ब्रज-भाषा की छाया भी प्रचुर परिमाण में मिलती है। एक उदाहरण दिया जाता है।

मासा भादों महुँ सुहावन जगत सुख छायो सभै,

रितु फलत फूलत और तरुवर गैल सों पूरन भए ।

भुवन सीतल छौह सुंदर, सुख संजीगिन के रहै,

कवन हरियर करै पिठ बिन बेत बिरही सों डहै ॥

इस तरह का छंद पदमावत, चित्रावली, मृगावती आदि किसी में न मिलेगा।

अलंकार आदि बाहरी सजावट निसार के काव्य में कम है, अनुप्रास का शौक भी इनको न था। हाँ, रस का परिपाक अच्छा हुआ है। इस काव्य में करुणा रस का प्राधान्य अद्योपांत है। यों तो विरह-वर्णन सभी सूफी कवियों का मुख्य व्यवसाय रहा है और इस संबंध में ये लोग प्रायः ऐसी उड़ान भरने के अभ्यासी होते हैं कि पढ़ कर रसबोध के स्थान पर हँसी आये बिना नहीं रहती। सारा कथानक ही उपहासास्पद हो जाता है। पर जायसी और निसार इसके अपवाद हैं। निसार ने इस काव्य की रचना एक नितांत दुःखद (पुत्र शोक) सांसारिक घटना के बाद लिखी थी। वह इस समय स्वयं ५७ वर्ष के थे और इस समय उनके एक मात्र सुयोग्य पुत्र का निधन निश्चय ही एक दुःखांत घटना थी। इस मर्मगत घटना को यथाकथञ्चित् भुलाने के उद्देश्य से ही उन्होंने इस कथा की रचना में हाथ डाला था।

×

×

×

जायसी आदि अन्य मसनवी शाखा के कवियों का उद्देश्य लौकिक प्रेम के मिस अलौकिक का निर्देश करना होता था पर यहाँ हम वह बात भी नहीं पाते। दो एक स्थान पर हम 'अलख' आदि ऐसे शब्दों का प्रयोग पाते हैं पर उस अध्यात्म-तत्व या रहस्यवाद का पता कहीं नहीं चलता जिनके लिये जायसी और उनके पदमावत की इतनी ख्याति हुई। इस श्रेणी के प्रायः सभी काव्यों में कवि अंत में स्पष्ट रूप से कह देना है कि यह सारी कथा 'अन्योक्ति' के रूप में कही गई है और पाठकों से स्पष्ट अनुरोध रहता है कि वह कथा में वर्णित प्रेम-कहानी को इसी रूप में लें। नायक को सायक, नायिका या माशूक को खुदा या ईश्वर, राह बताने वाले 'सुआ' को गुरु, इमी प्रकार 'शैतान,' माया, सांसारिक बंधन आदि सभी के प्रति-निधि स्वरूप कोई-न-कोई कथा का पात्र होता है। पर इस कथा में हम इस तरह की कोई बात नहीं देखते। यहाँ 'प्रेम की पीर' पहले नायिका पर ही चोट करती है और वही नायक की तलाश में, जिसके नाँव-नाँव का कोई पता नहीं, बाहर निकलती है। सूफी परंपरा में ईश्वर की कल्पना माशूक के रूप में की गई है और एक 'गुरु' की अनिवार्यता पर बहुत जोर दिया गया है। पर कितना ही खींच-तान करने पर भी यहाँ इस तरह की कोई 'अन्योक्ति' ठीक बैठती नहीं; और न कवि कहीं इस तरह का कोई स्पष्ट निर्देश ही करता है।

इस संग्रह में कथा का प्रारंभिक भाग और अंतिम भाग लिया गया है। बीच के कुछ भाग इस ढंग से संग्रहीत हैं कि कथा का संबंध ठीक बैठ जाता है। यह ग्रंथ अभी तक अप्रकाशित है और यह संग्रह पहले पहल प्रेस में जा रहा है। इसी की फारसी में लिखी हुई प्रति-लिपि पहले पूरी संपादन के निमित्त ही पकेडेमी में आई थी, और मुझे तथा श्री सत्यजीवन वर्मा को इसका भार सौंपा गया था, पर अभी तक यह पूरी प्रकाशित न हो सकी। ईश्वरकी पांडु-लिपि फारसी में होने के कारण पाठ में असंख्य गड़बड़ी होना स्वाभाविक है। तुलना के लिये नागरी अक्षरों में लिखी हुई कोई दूसरी पांडु-लिपि भी अभी तक नहीं मिल सकी है।



मलिक मुहम्मद जायसी



हिंदी और संस्कृत के अधिकांश प्राचीन कवियों की भाँति जायसी की भी जन्म-मरण-तिथि, जन्मस्थान, तथा माता पिता आदि के संबंध में प्रामाणिक रूप से कुछ ज्ञात नहीं है। इतना तो इन के उपनाम 'जायसी' से ही प्रगट है कि ये अवध प्रांत के अंतर्गत 'जायस' नामक स्थान के रहने वाले थे। प्रकृत मातृभूमि, या जन्म स्थान चाहे जायस न रहा हो पर इन के क्रियाकलाप का केंद्र यही रहा होगा। पद्मावत में आई हुई इस पंक्ति से भी यही धारणा पुष्ट होती है—

जायस नगर धरम अस्थान् । तहाँ आइ कवि कीन्ह बखान् ॥

इस पंक्ति से यह स्पष्ट है कि कहीं से आकर ('तहाँ आइ') यह जायस में बस गए थे; कहीं से आकर इस का कुछ पता नहीं।

इन की उत्पत्ति के संबंध में यह किंवदंती बहुत दिन से चली आ रही है कि इन का जन्म गाजीपुर जिले के एक बड़े दरिद्र परिवार में हुआ था। सात वर्ष की अवस्था में इन्हे चेचक की बीमारी हुई, जिस में इन के प्राण तो बच गए पर इन की एक आँख जाती रही। कहते हैं इस बीमारी से जायसी की रक्षा करने के लिये इन की माता ने मकनपुर के पीर मदार शाह की मनौती मानी थी और उन्हीं की दुआ से इन की जान बची। पर मनौती पूरी करने के पहले ही इन की माता का स्वर्गवास हो गया और इन के पिता तो पहले ही मर चुके थे। कवि के एकाक्ष होने का प्रमाण पद्मावत की इस पंक्ति से मिलता है—

एक नयन कवि महमद गुनी ।

एक दोहे में इस बात का भी उल्लेख मिलता है कि बीमारी में इन की बाँई आँख तो फूटी थी ही, साथ ही बाँयाँ कान भी बहरा हो गया था। वह दोहांश नीचे दिया जाता है—

मुहम्मद बाईं दिसि तजा एक सरवन एक आँखि ।

इन किंवदंतियों तथा अन्य ऐतिहासिक वृत्तांतों से यह स्पष्ट हो जाता है कि शीतला देवी ने इन के शरीर और स्वरूप के साथ मनमाना अत्याचार किया था। इन के अत्यंत कुरूप होने का प्रमाण इस कथा से मिलता है। एक बार अवध का कोई राजा जो इन्हे पहचानता नहीं था, इन के कुरूप चेहरे को देखकर हंसा।



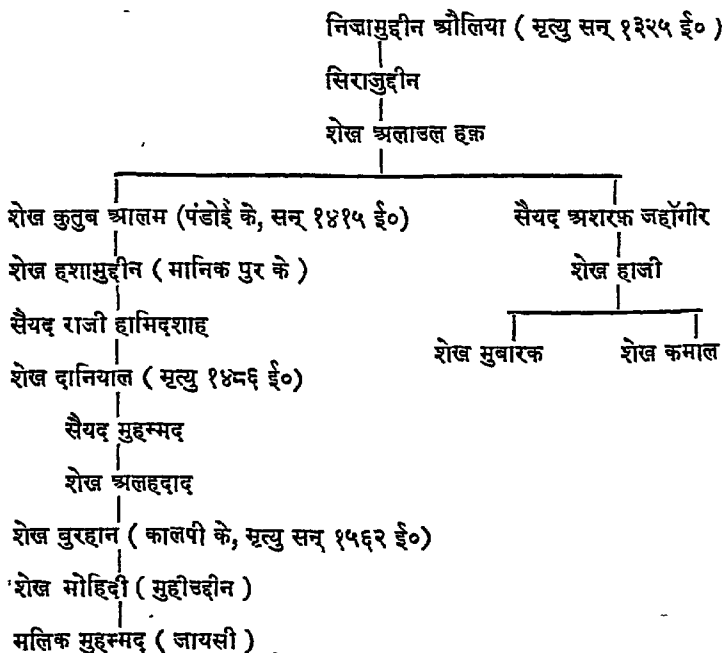
इस पर जायसी ने इन से केवल इतना ही कहा—“मोहि का हंसेसि कि कौहरहि,” अर्थात् तू मुझ पर हसा कि उस कुम्हार ( निर्माता, ईश्वर ) पर ? कहते हैं कि इस पर वह बड़ा लज्जित हुआ और बाद में इन का परिचय जानने पर बहुत तरह से इन से क्षमा माँगी ।

इन के जीवन काल का कुछ अनुमान पद्मावत के रचनाकाल से लगता है जो कि इन्होंने एक ग्रंथ में दे दिया है—

सन् नव सै सैतालिस अहा । कथा अरंभ वैन कवि कहा ॥

इस ग्रंथ का आरंभ सन् ९४७ हिजरी अथवा तदनुसार सन् १५९७ में हुआ था । यह शेरशाह का राजत्वकाल था और ग्रंथारंभ में कवि ने इस की प्रशंसा में भी बहुत से पद्य लिखे हैं । वस इसी से जायसी के आविर्भाव और कविताकाल का स्थूल अनुमान किया जा सकता है ।

जायसी के गुरु शेख मोहिदी ( मुहीचद्दीन ) थे । इनकी गुरुपरंपरा का वर्णन जायसी की 'पद्मावत' और 'अरवरावट' दोनों में मिलता है । यह परंपरा निजामुद्दीन औलिया से आरंभ होती है । इस की प्रतिलिपि नीचे दी जाती है—



उपर्युक्त परंपरा जायसी के अनुयायी मुसलमानों में अब तक प्रचलित है। पद्मावत में दी हुई वंशावली इस से कुछ भिन्न है। अखरावत में इन्होंने अपनी गुरु-परंपरा का इस प्रकार वर्णन किया है—

पा—पाएउं गुच मोहदी मीठा । मिला पंथ तो दरसन दीठा ॥  
 नाँव नियार सेल बुरहानू । नगर कालपी हुत गुच थानू ॥  
 औ तिन्ह दरस गोसाईं पावा । अलहदाद गुच पंथ लखावा ॥  
 अलहदाद गुच सिद्ध नवेला । सैयद मुहमद के वै चेला ॥  
 सैयद मुहमद दीनहि सांचा । दानियाल सिल दीन्ह चुचाचा ॥  
 जुग जुग अमर सा हजरत ख्वाजे । हजरत नबी रसूल नेवाजे ॥  
 दानियाल तहँ परगट कौन्हा । हजरत ख्वाज खिनिर पय दीना ॥

दोनों वंशावलियों का मिलान करने से मालूम होगा कि शेख दानियाल तक तो दोनों एक हैं, पर इस के आगे जायसी की दी हुई वंशावली में दानियाल के गुरु हामिदशाह और इन के ऊपर के गुरुओं का उल्लेख नहीं है। अस्तु, यह तो हुई जायसी की वास्तविक गुरुपरंपरा। परंतु इन के ग्रंथ को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन्होंने अन्य संप्रदाय वालों से भी बहुत कुछ संस्कृति और ज्ञानोपार्जन किया था। इन की रचनाओं में योग, तथा वेदांत दर्शन के बहुत से सिद्धांतों का सूफी संप्रदाय के सिद्धांतों के साथ एक बड़ा रुचिर संमिश्रण देखने में आता है जो शायद अन्य किसी भी कवि की रचना में दुष्प्राप्य है। परमात्मा की प्राप्ति के लिये भिन्न भिन्न आचार्यों ने जितने मार्ग दिखाए हैं उन में से किसी की भी इन्होंने कबीर को भाँति तीव्र आलोचना नहीं की है। जहाँ जिस की चर्चा की है वहाँ उस के प्रति श्रद्धा ही प्रगट की है। पर इस के साथ ही एक सच्चे मुसलमान की भाँति मुहम्मद साहेब के बताए हुए मार्ग को सब से सुगम और अतएव उसे सर्वश्रेष्ठ माना है। नीचे लिखी हुई चौपाइयों से यह बात स्पष्ट हो जायगी—

बिधिना के मारग हैं ते ते । सरग नखत तन रोनों जेते ॥  
 तिन्ह महँ पय कहौ भल गाई । जेहि दूनौ जग छाज बढ़ाई ॥  
 सो बड़ पथ मुहम्मद केप । है निरमल कैलास बसेप ॥

जायसी की एक मुख्य विशेषता यही है कि एक सच्चे पहुँचे हुए फकीर या साधक की भाँति ये सदा दैन्य भाव से ही रहे। न तो इन्होंने कबीर आदि की भाँति अपना कोई नया पंथ ही चलाने का विचार किया और न इन्होंने अपनी फकीरी के संबंध में किसी प्रकार की गर्वोक्ति ही की। कबीर का तो यहाँ तक दावा था कि जिस चादर (चोला या शरीर) को सुर, नर, मुनि सब ने ओढ़कर धन्वा लगा दिया उसे मैंने ज्यों की त्यों धर दी। जायसी की भगवद्-भक्ति में अहंकार के लिये स्थान नहीं था। उन्हें हम सदा एक विनयावनत जिज्ञासु के रूप में ही देखते हैं।

इन के एक मात्र आश्रयदाता तत्कालीन अमेठी के महाराज माने जाते हैं। अमेठी दरबार में इन का प्रवेश इस प्रकार हुआ। एक बार इन का कोई शिष्य अमेठी में जाकर इन का रचा हुआ नागमती का बारहमासा ( पद्मावत का एक प्रकरण ) गा गा कर भीख माँग रहा था। लोगों ने इसे बहुत पसंद किया और इसे राजा साहब के पास ले जाकर उन्हें भी इसे सुनवाया। राजा साहब को भी यह बहुत पसंद आया और खास कर उन्हें यह दोहा बहुत ही अच्छा लगा था—

कवल जो विगसा मानसर, विनु जल गएउ सुखाइ ।  
सखि बेलि पुनि पल्लुहै, नौ पिउ सीनै आइ ॥

इस शिष्य से पूछने पर मालूम हुआ कि यह मलिक मुहम्मद नामक एक संत कवि की रचना है। राजा साहब ने तुरत बड़े आदर और आग्रह से उन्हें बुलावा भेजा और वहाँ आने के बाद जायसी वहीं रहने लगे और वहीं पद्मावत की रचना भी पूरी हुई। कहते हैं कि अमेठी के राजा के कोई सतति नहीं थी और इन्हीं की दुआ से उन का वश चला। तब से इन की मान प्रतिष्ठा उक्त दरबार में बहुत बढ़ गई और लोग इन्हे कोई असाधारण सिद्ध पुरुष समझकर दूर दूर से इन के दर्शनो को आने लगे। इन के देहावसान होने पर अपने कोट के सामने ही इन की कब्र बनवाई गई जो अद्यावधि वर्तमान है।

### जायसी के ग्रंथ

‘पद्मावत’ और ‘अखरावट’ नाम के जायसी रचित केवल दोही ग्रंथ प्राप्त और प्रकाशित हैं। इन में मुख्य पद्मावत है जो कि अवधी का प्रबंध-काव्य है। यह ग्रंथ दोहा चौपाइयों में है और इसी के दग पर सौ वर्ष बाद गोस्वामी तुलसीदास ने अपने जगत्प्रसिद्ध ग्रंथ रामचरित-मानस की रचना की थी।

### प्रेमगाथा-साहित्य

जायसी से करीब सौ सवा सौ वर्ष पहिले ही हिंदू और मुसलमान जनता सांप्रदायिक विद्वेष को बहुत कुछ किनारे कर एक दूसरे की प्रेमगाथा का संस्कृति, उपासना और विचार आदि को सहानुभूतिपूर्वक प्रादुर्भाव समझने और परस्पर इन के आदान प्रदान की ओर रुचि करने लगी थी। यद्यपि तत्कालीन मुसलमान शासकों का भाव हिंदू-प्रजा के प्रति उतना सहानुभूतिपूर्ण नहीं था तथापि हिंदू और मुसलमान प्रजा में एक प्रकार का भ्रातृभाव स्थापित हो चला था और वह उत्तरोत्तर दृढ़ से दृढ़तर होता चला जा रहा था। मुसलमान प्रजा यह समझने लगी थी कि यदि हमें हिंदुस्तान में रहना ही है तो हिंदुओं के विश्वास, संस्कृति तथा साहित्य आदि के प्रति छत्तीस होकर रहना असंभव है। शायद यही कारण था कि तत्कालीन कुछ मुसलमान विचारक, फकीर और कवि हिंदुओं के साहित्य और संस्कृति के अध्ययन की ओर

ती भुके ही पर कुछ ने हिंदुओं की तत्कालीन काव्यभाषा में साहित्य निर्माण का भी श्री गणेश किया। इन लोगों ने इस बात को ठीक ठीक समझ लिया था कि दोनों संप्रदायों के लोगों में एक दूसरे की संस्कृति और साहित्य के प्रचार और लोकप्रिय बनाने से बढ़कर आपस में घनिष्ठता और सौहार्द स्थापित करने का दूसरा उपाय नहीं हो सकता। इसी विचार से प्रेरित हो कर खुसरो, कबीर और जायसी आदि कुछ दूरदर्शी कवियों ने इस दिशा की ओर पैर बढ़ाया और इस में उन्हें अच्छी सफलता भी मिली।

सब से पहले खुसरो ही इस कार्य में अग्रसर हुए। खुसरो की कविता का एक बहुत बड़ा भाग लुप्त हो गया है, तो भी जो प्राप्त है उस से उन की हिंदुओं के धर्मग्रन्थ, संस्कृति तथा साहित्य आदि के प्रति पूरी श्रद्धा और सहायतापूर्ण स्वरूप है। कबीर का मार्ग सब से निराला था। इन्होंने दोनों की तुरादियों का प्रतिवाद करते हुए उन्हें प्रेम के साधारण सूत्र में बाँधने की चेष्टा की। इन के प्रतिवाद प्रायः इतने तीव्र परंतु सच्चे हुआ करते थे कि दोनों ही संप्रदायों के कट्टर और धर्मांध लोग इन के घोर विरोधी हो गए। पर इतना होते हुए भी दोनों ही संप्रदायों को अधिकांश जनता पर इन की शिक्षाओं का बड़ा प्रभाव पड़ा और दोनों ही जातियों की अधिकांश जनता जो धार्मिक कट्टरपन की वहाँ से बरी थी, कबीर की अनुयायी हुई, इस के बाद कुतुबन और जायसी आदि का समय आता है। कबीर की उड़ड़ उक्तियों से जो बात नहीं हुई वह इन की प्रेमगाथाओं से हुई।

इन लोगों ने अपनी प्रेमगाथाओं द्वारा यह सिद्ध कर दिखाया कि सभी मनुष्यों के हृदय में, चाहे वह हिंदू हो या मुसलमान या कोई हो प्रेमगाथाओं का प्रेमभावना का वही बीज समान रूप से अंकुरित होता है। इन लोगों लक्ष्य ने आख्यानक-काव्य द्वारा यह दिखलाया कि किसी के रूप, गुण से आकर्षित हो कर उस से एक होने की इच्छा करना, इस कार्य की सिद्धि के लिए नाना प्रकार के असह्य कष्ट भेलना, अतः उस की प्राप्ति से सुख, फिर इस के वियोग के दुख और प्रेम की पीर, आदि हृदय के विविध भाव और उस की तरंगों, क्या हिंदू क्या मुसलमान सभी के हृदय में समान रूप से उठते हैं। इन लोगों ने मुसलमान होकर हिंदू घरानों में प्रचलित प्राचीन प्रेम-कहानियों को उन्हीं की भाषा में कहा, पर अपने ढंग से, और इस प्रकार यह सिद्ध कर दिया कि जहाँ प्रेम है वहाँ जाति, संप्रदाय या मतमतांतर का भेद कोई अर्थ नहीं रखता। इस प्रकार की प्रेमगाथा लिखने वालों में सब से पहले कवि जिन की रचना प्राप्य है, शेख कुतुबन हैं। ये चिश्तीवश के शेख तुरहान के शिष्य थे और इन की रचित 'मृगावती' ( निर्माण काल ९०९ हिजरी अर्थात् १५५६ वि० ) इस प्रकार का पहला आख्यानक काव्य है। इस में अबधी बोला में दोहा चौपाइयों में चंद्रनगर के राजा गणपतिदेव के राजकुमार और कंचन नगर के राजा रूपसुरार की राजकन्या मृगावती की प्रेम-कहानी वर्णित है।

हम ऊपर कह चुके हैं कि इन लोगों ने कहीं तो इन्होंने हिंदुओं की कहानियां पर उन्हे अपने ढंग से कही। ढंग से यहाँ मेरा मतलब है इन की गाथाओं की रचनाओं के ढांचे और वर्णन शैली से। भारतीय साहित्य विशेषताएँ मे प्रबंधकाव्यों की जो सर्गबद्ध प्रथा पुराकाल से चली आ रही थी उस से इन्होंने काम नहीं लिया। इन्होंने फारसी की मसनवियों को आदर्श बनाया। इन में विस्तार के अनुसार कथा सर्गों या अध्याओं में विभक्त नहीं होती। एक सिरे से इन का क्रम अखंड रूप से बराबर चला जाता है, केवल कहीं कहीं घटनाओं या प्रसंगों का उल्लेख शीर्षकों के रूप में दे दिया जाता है, जैसे—‘सात समुद्र खंड’ राजा गढ़ छेका खड’ या ‘राजा बादशाह युद्ध खड’, इत्यादि। मसनवियों के रचना के संबध में कुछ विशेष साहित्यिक परंपराओं के पालन का प्रतिबंध नहीं होता। इन में केवल इतना ही आवश्यक होता है कि सारी रचना केवल एक ही छंद में हो, पर कथावस्तु के संबध में एक परंपरा का पालन अवश्य करना पड़ता था। आरंभ में परमेश्वर, नबी और तत्कालीन बादशाह को स्तुति मसनवियों में अनिवार्य समझी जाती थी। इस परंपरा का पालन जायसी और कुतुबन आदि सभी प्रेमगाथाकारों ने नियम से किया है। छंद भी इन लोगों ने आद्योपांत दोहा चौपाई ही (सात सात या कहीं कहीं नौ नौ चौपाइयों के बाद एक एक दोहा) रक्खा है। चौपाइयों की विषम सख्या देखकर यह धारणा होती है कि ये लोग दो ही चरणों से चौपाई पूरी मानते रहे होंगे, पर जैसा कि ‘चौपाई’ शब्द ही से स्पष्ट है, चार चरणों में एक चौपाई पूरी होती है। तुलसी दास जी ने ऐसा ही किया है।

सब से मार्के की बात इन प्रेमगाथाओं के संबध में यह है कि ये सभी अवधी में और दोहा चौपाई छंद में ही लिखी गई हैं। अब तक प्रेमगाथाओं का प्रायः दस प्रेमगाथाओं का पता लग चुका है पर उन में के रूप और विषय प्रकाशित सस्करण केवल तीन ही हमारे देखने में आए हैं। पर सभी की भाषा, शैली तथा विषय निर्वाह आदि के संबध में आश्चर्य-जनक समानता पाई गई है। यहाँ तक कि लेखकों के भिन्न भिन्न नाम यदि न बताए जायें तो पाठक यही समझेगा कि ये सब एक ही लेखक की लिखी हुई हैं। विषय प्रायः सभी में कुछ कुछ इसी ढंग का होता है— कोई राजकुमार किमी राजकुमारी के रूप गुण की प्रशंसा सुन या प्रत्यक्ष या स्वप्न या चित्र में देख कर आकर्षित होता है। उधर भी यही हालत होती है। अतः में वह कुछ विश्वस्त साधियों को साथ ले कर उस की खोज में चल पड़ता है। प्रायः उसे कोई मार्गप्रदर्शक भी मिल जाता है। यह अधिकतर राजकुमारी का भेजा हुआ कोई दूत था दूत का काम करने वाला कोई पत्नी या तोता हुआ करता है। राह में उसे बड़ी विघ्न-बाधाओं का सामना करना पड़ता है। कई बार उसे फलागम होते होते कोई ऐसा विघ्न या कोई ऐसी भूल उस से हो जाती है जिस से उस की

उद्देश्यसिद्धि फिर एक अनिश्चित काल तक के लिए रुक जाती है। कारागार और प्राण-संकट तक की नौबत आती है। रक्त-पात और युद्धवर्णन भी इन आख्यायिकाओं का एक आवश्यक अंग होता है। इन के संबन्ध में यह सदा स्मरण रखना चाहिए कि इन कहानियों का आधार सदा ऐतिहासिक होता है और बहुत सी घटनाएँ भी ऐतिहासिक होती हैं, यद्यपि कवि उस में अपनी आवश्यकतानुसार हेर फेर किए रहता है। पर इन इतिहासमूलक कथानकों के अतिरिक्त कवि अपनी इच्छा या आवश्यकता के अनुसार एक या अधिक काल्पनिक कथानक भी मिला देता है। यह प्रायः चरितनायक के उत्कर्ष को बढ़ाने और कथा में अलौकिक या आध्यात्मिक पक्ष को स्पष्ट करने के उद्देश्य से होता है।

इन प्रेमगाथाओं का सब से महत्त्वपूर्ण वह अंश होता है जिस का संबन्ध अध्यात्म या रहस्यवाद से होता है। लौकिक कथा के द्वारा प्रेमगाथाओं में कवि जो परोक्ष की ओर सकेत करता है वही शायद रचना का रहस्यवाद प्रधान उद्देश्य रहता था। कथा के अंत में कवि स्पष्ट रूप से कह देता है कि यह सारी कथा अन्योक्ति रूप में कही गई है और उसी रूप में कथा को समझने के लिए वह पाठक से अनुरोध करता है। उदाहरणार्थ पद्मावत में नायक रतनसेन को साधक समझना चाहिए। पद्मावती को प्राप्त करने की इच्छा से जो उस के हृदय में प्रेम की पीर उठती है उसे ईशरोन्मुख प्रेम या लगन समझना चाहिए। पद्मावती तक पहुँचने की राह बताने वाले 'सुआ' को गुरु, राघव दूत को शैतान, रानी नागमती को सांसारिक बंधन, तथा सुलतान अलाउद्दीन को माया का प्रतिनिधि या शैतान बताया गया है। निम्नलिखित चौपाइयाँ देखिए—

मैं एहि अरथ पंडितन्ह बूझा । कहा कि हम्ह किछु और न सूझा ॥

चौदह भुवन जो तर उपराहीं । ते सब मानुष के घट माहीं ॥

तन चितउर मन राजा कीन्हा । हिय सिफल बुधि पदमिनि चीन्हा ॥

गुरु सुआ जेइ पथ देखावा । विनु गुरु जगत को निरगुन पावा ? ॥

नागमती यह दुनिया-धधा । बोंवा सोइ न एहि चित बधा ॥

राघव दूत सोइ सैतानू । माया अलाउद्दी सुलतानू ॥

प्रेम-कथा एहि भौलि बिचारहु । बूझि लेहु जौ बूझै पारहु ॥

इस प्रकार अंतिम चौपाई में कवि एक प्रकार से चुनौती सी दे देता है कि यदि उक्त रीति से कथा को समझ सको तो समझ लो।

अब यहाँ पर पद्मावत की कथा भी संक्षेप से दे देना आवश्यक है। सिंहल द्वीप के राजा गंधर्वसेन की पुत्री पद्मावती रूप-गुण से अद्वितीय थी, यहाँ तक कि उस के योग्य वर कहीं नहीं मिलता था। उस के पास हिरामन नाम का एक तोता था जो कि बड़ा विद्वान् और वाक्पटु था। पद्मावती के वर न मिलने के सबब में वह एक दिन

अपने विचार प्रकट कर रहा था पर सयोग से राजा ने उस के विचारो को सुन लिया जिस से उसे बड़ा क्रोध आया और उस ने तोते को अपने यहां से निकलवा दिया। इधर उधर कुछ दिनों तक भटकने के बाद हिरामन रतनसेन के यहां पहुँचा और उस ने उसे अपने यहां रख भी लिया। एक दिन जब वह कहीं शिकार खेलने गया तब उस की रानी नागमती ने हिरामन से पूछना आरभ किया कि 'हिरामन तू तो दुनिया मे बहुत घूमा फिरा है, बता तो तूने कहीं मेरे समान कोई और भी सुंदरी देखी है?' हिरामन ने सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती की चर्चा करते हुए कहा कि 'उस मे और तुम मे दिन और अंधेरी रात का अंतर है।' यह सुन कर रानी ने बड़े क्रोध मे आकर उसे मरवा डालने की आज्ञा दे दी। पर चेरियों ने राजा के भय से उसे माग नहीं, केवल एक जगह छिपा कर रख दिया। शिकार से लौटने पर अपने प्यारे तोते को न पाकर रतनसेन का मिजाज बहुत बिगड़ा, यहां तक कि अंत में उस के गुस्से से डर कर बाँदियों ने हिरामन को उस के सामने लाकर रख दिया। पूछने पर उस ने सब वृत्तांत कह सुनाया और प्रसंगवश पद्मावती के सौंदर्य का भी वर्णन किया। राजा के हृदय पर उस की सुनी हुई सुंदरता का ही इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि वह मूर्छित होकर गिर ही पड़ा और होश मे आने पर योगीवेश मे सिंहलगढ़ की ओर चल पड़ा और सोलह हजार उस के साथी राजकुमार भी योगी का बाना धारण कर उस के साथ हो लिये। इस योगियों की पलटन का नेता और मार्गप्रदर्शक वही हिरामन तोता था।

अंत में अनेक विघ्न-बाधाएं भेलते हुए दुर्गम समुद्र पार कर यह विचित्र दल सिंहल द्वीप पहुँचा और रतनसेन ने एक मंदिर मे, जहां कभी कभी पद्मावती पूजन करने आया करती थी, पड़ाव डाला और वहीं पद्मावती की मानसिक पूजा मे लीन हो गया। कुछ समय के उपरांत श्री पंचमी के पर्व के दिन पद्मावती वहां पूजन के निमित्त आई पर रतनसेन ऐन मौके पर चूक गया। वह उसे देखते ही मूर्छित हो गया। तोते ने महल मे जाकर उस की करुण कहानी पद्मावती को कह सुनाई। पद्मावती ने कहला भेजा कि वक्त पर तो तुम चूक गए अब इस दुर्गम सिंहलगढ़ तक चढ़ो तभी मुझे देख सकते हो। राजा अपने साथी जोगियों सहित किले में घुसा पर गढ़ में पहुँचते पहुँचते सवेरा हो गया और वह वहीं पकड़ा गया। राजा के सामने उस का विचार हुआ और उसे सूली पर चढ़ाने की आज्ञा दी गई। पर यह हाल देख कर उस के साथी योगियों ने गढ़ घेर लिया और उन की सहायता के लिये शिव, हनुमान आदि सारे देवता भी उन के दल मे मिल गए। फल यह हुआ कि गंधर्वसेन की सारी सेना हार गई। उस ने जोगियो के बीच जब साक्षात् शिव को लड़ते हुए तो देखा तो वह दौड़ कर उन के पैरों पर गिर पड़ा और बोला, "महाराज पद्मावती आप की है जिसे चाहिए उसे दीजिए।" अब रतनसेन के मार्ग में कोई रुकावट न थी। उस का विवाह पद्मावती से हो गया और वह उसे लेकर चित्तौर गढ़ लौट भी आया।

रतनसेन के दरवार मे राघवचेतन नामक एक पंडित रहता था। वह बड़ा तांत्रिक था और उसे यत्निही सिद्ध थी। उस ने अपनी माया से दरवार के अन्य पंडितों को बड़ा नीचा दिखाया। राजा को इस पर बड़ा क्रोध आया और उसने उसे देश निकाले का दंड दे दिया। राघव इस अपमान का बदला लेने की नीयत से दिल्ली के तत्कालीन बादशाह अलाउद्दीन के पास पहुँचा और उस से पद्मावती के रूप की बड़ी प्रशंसा की। अलाउद्दीन ने उसे प्राप्त करने के अनेक उपाय किए, रतनसेन से कई बार युद्ध हुआ पर प्रत्येक बार उसे नीचा देखना पड़ा। अंत में सधि हुई और धोखे से उसने रतनसेन को पकड़ लिया और कहवा दिया कि जब पद्मावती मेरे पास आएगी तभी रतनसेन छूट सकेंगे। इस पर रानी ने कहलवा दिया कि मैं सात सौ बाँदियों के साथ तुम्हारे पास आ रही हूँ और एक बार राजा से अंतिम साक्षात् कर उन्हें चित्तौर खाना कर तुम से आ मिलूँगी। इस मे सुलतान ने कोई आपत्ति नहीं की। पर इन सात सौ पालकियों के अंदर, और उन के दोने वाले कहार सब वीर राजपूत योद्धा थे। सुलतान के खीमो में पहुँच कर इधर तो रतनसेन को छोड़ा कर एक घोड़े पर बैठा कर वीर बादल के साथ चित्तौर खाना कर दिया गया और इधर गौरा इन राजपूत वीरों के साथ यवनों को रोके रहा। चित्तौर पहुँचने पर पद्मावती ने कुंभलानेर के राजा देवपाल द्वारा अपने पास दूती भेजी जाने की बात कही। इस पर राजा ने कुंभलानेर जा घेरा और दोनों एक दूसरे से लड़ते हुये वीर गति को प्राप्त हुए। इधर जब नागमती और पद्मावती के पास यह समाचार पहुँचा तो दोनों सहर्ष अपने पति के शव के साथ सती हो गईं। बाद मे जब अलाउद्दीन गढ़ में पहुँचा तो उसे जलती हुई चिताओं को छोड़ कर और कुछ नहीं दिखाई पड़ा।

इस कहानी का पूर्वाद्ध तो प्रायः पूरा कल्पित है पर उत्तरार्द्ध ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर है। इस के नायक नायिका दोनों ही इतिहास-कथा में कल्पना प्रसिद्ध पात्र हैं और जायसी यद्यपि मुख्य मुख्य स्थलों पर ऐतिहासिक और इतिहास का हासिक आधार का अनुसरण करते हुये चले हैं तथापि अपनी सम्मिश्रण अपूर्व कल्पना और अनुभूति के साहाय्य से वे पूरी कथा को एक ऐसा रूप देने में सफल हुये हैं जो जनता के हृदय में परंपरा से अवस्थित था और यही कारण है कि यह कथा इतनी लोकप्रिय हुई।

### जायसी की कविता

जायसी की भाषा ठेठ अवधी है। अवधी में इतनी बड़ी और व्यापक प्रबंध-रचना सब से पहले इन्ही की मिलती है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरित मानस की रचना के समय इन की पद्मावती को बहुत सी बातों मे आदर्श बनाया होगा। कम से कम मानस का बाह्य रूप और विशेषतः उस की भाषा तो पद्मावती से बहुत कुछ मिलती जुलती



है, अंतर केवल इतना ही है कि मानस में हम अवधी का परिमार्जित, सुसंस्कृत और सर्वथा साहित्यिक रूप देखते हैं पर पद्मावत में यह अपने ठेठ रूप में है और प्रायः ग्रामीणता लिये हुये है। जायसी उतने काव्यकला-कुशल तो थे नहीं पर साथ ही यह भी मानना पड़ेगा कि जिस भाषा का प्रयोग उन्हो ने किया है उस पर उन्हें पूरा अधिकार था। तुलसी की भाषा जो इतनी सुसंस्कृत या साहित्यिक कही जाती है उस का कारण है उन का संस्कृत का गंभीर पांडित्य। मानस की चौपाइयो का माधुर्य, उन का अोज तथा उन की साहित्यिकता बहुत कुछ उन में प्रयुक्त संस्कृत की कोमल-कान्त पदावली पर निर्भर करती है। जायसी में यह कमी है, या यो कहिये कि यही उन की खूबी है। अवधी का स्वाभाविक माधुर्य जायसी की ही भाषा में प्रस्फुटित हो पाया है। यह कहना कठिन है कि तुलसी ने अपने चुने हुये संस्कृत के तत्सम शब्दों या वाक्यांशों के आभूषण भार से उस को शोभा को सचमुच और प्रदीप्त करके दिखाया है या उस की नैसर्गिक शोभा को ढाँक दिया है।

यों तो जायसी ने अपने काव्य में प्रायः सभी रसों का समावेश किया है पर उन की स्वाभाविक रुचि विप्रलंभ-शृंगार की ओर जान पड़ती है। रस और श्रलकार सभोग-शृंगार, वीर, और करुणा में भी इन्हे अच्छी सफलता मिली है। यद्यपि जायसी का रस-वर्णन भारतीय कविपरंपरा-प्रणाली के अनुसार ही हुआ है, तथापि कुछ बातों में इन का ढंग सब से निराला है। उर्दू कवियों के वियोग-वर्णन में प्रायः जो एक प्रकार की वीभत्सता पाई जाती है उस की प्रचुरता पद्मावत में भी है, और शृंगार के संभोग पक्ष के संबंध में यह भी कहा जा सकता है कि वह बहुत परिष्कृत अथवा कोमल नहीं है। उस में मिठास या प्रेमनिर्भरता की मात्रा इतनी अधिक हो गई है कि कुछ लोगों को उस में ग्रामीणता या अश्लीलता की बू भी मिल सकती है। वीर-रस का वर्णन इन का सर्वत्र शृंगार की आड़ लिये हुए है और उसी के आधार पर स्थित जान पड़ता है। वीर के साथ ही उचित अवसरों पर रौद्र, भयानक और वीभत्स भी अपनी अपनी छटा दिखाते हैं। 'राजा-बादशाह युद्ध खंड' में वीर, और 'लक्ष्मी-समुद्र खंड' में भयानक रस का बड़ा सुंदर समावेश हुआ है। परंतु एक बार फिर कहना पड़ेगा कि यह सभी ग्रंथ के स्थायी रस-शृंगार के आधार पर स्थित हैं। ग्रंथ के स्थायीरस पर विचार करते समय एक बात और स्मरण रखनी पड़ेगी। यह सारा ग्रंथ एक प्रकार से अन्योक्ति के रूप में है। कवि ने अत में स्पष्ट कर दिया है कि इस में वर्णित नायक-नायिका के प्रेम को साधारण लौकिक प्रेम न समझ कर साधक का ईश्वरोन्मुख प्रेम समझना चाहिए। इस दृष्टि से ग्रंथ का स्थायीरस शांत मानना पड़ेगा।

अलंकारों के संबंध में भी जायसी ने अधिकतर कवि-कुलागत पद्धति का ही अनुसरण किया है। इन के अलंकारों में सादृश्यमूलक अलंकारों का ही एक

प्रकार से साम्राज्य है। यद्यपि अलंकारों के प्रयोग में इन्होंने अधिकतर भारतीय काव्य-पद्धति को ही आदर्श माना है तथा स्थान स्थान पर फारसी कवित्व की भी झलक स्पष्ट है, विशेष कर करुण रस और विरह वर्णन के अवसरों पर। अलंकारों का समावेश दो उद्देश्यों से होता है। प्रस्तुत विषय को स्पष्ट करने और भाव को प्रदीप्त करने के लिये। और भी उद्देश्य हो सकते हैं पर मुख्य यही दोनों होते हैं। इस के साथ ही भावुक कवि अलंकारों के प्रयोग के समय इस बात का बड़ा ध्यान रखता है कि कहीं उस के द्वारा प्रयुक्त अलंकार से रस के परिपाक में बाधा न पड़े। प्रायः लोग वर्णन को स्पष्ट करने के लिये ऐसी उपमा या उपेक्षा आदि रख देते हैं जिस से एक प्रकार से वर्णन तो स्पष्ट हो जाता है पर साथ ही रंग में भंग भी हो जाता है। जायसी भी स्थान स्थान पर इस दोष के भागी हुए हैं। विरह-वर्णन के समय शृंगार को वीभत्स के आधारभूत करना इन के लिये साधारण बात है। नख सिख वर्णन के समय इन की उपमा और उपेक्षाएं, विशेषतः हेतुप्रेक्षाएँ, भिन्न भिन्न वर्णनीय अंगों की विशेषताओं का तो बहुत स्पष्ट परिचय देती हैं पर साथ ही हँसी भी आती है। शृंगार रस के लिये अलंकार भी वैसे ही होने चाहिए जिन से सौंदर्य भावना में व्याघात न पड़े। पर जायसी की उड़ान तो कहीं कहीं उपहासास्पद सी जान पड़ने लगती है।

पद्मावत एक वृहत् प्रबंध-काव्य है। इस में कवि को थोड़े से ऐतिहासिक आधार पर एक बहुत बड़ी इमारत खड़ी करनी पड़ी है। प्रबंध-कुशलता किधी भी इमारत का सर्वांगसुंदर बनना असंभव है और फिर जायसी के सामने ऐसे आदर्श भी नहीं थे जिन से वे कोई विशेष लाभ उठा सकते। मधुमालती, मुग्धावती, मृगावती, तथा प्रेमावती, आदि कुछ प्रेमगाथाओं का उल्लेख पद्मावत में मिलता है और इस से यह स्पष्ट है कि जायसी के पहले कुछ कवि इस प्रकार की प्रेमगाथा-काव्यों की रचना कर चुके थे पर इस से यह निष्कर्ष निकालना कि इन्हीं को आदर्श मान कर जायसी ने अपने ग्रंथ की रचना की होगी, भूल है। पहले तो उक्तगाथाओं में से मुग्धावती और प्रेमावती का अभी तक पता ही नहीं लगा। मधुमालती और मृगावती की खंडित प्रतियां नागरी प्रचारिणी सभा को देखने में मिली हैं। इन का जो भाग देखने में आया है उन से यह किसी प्रकार सिद्ध नहीं होता कि जायसी ने अपनी प्रबन्धकल्पना में इन को आदर्श बनाया होगा। सांगंश यह कि इतने विस्तृत और व्यापक रूप से एक प्रबंधकाव्य की रचना में जायसी का प्रयास बहुत कुछ मौलिक था। अब यहाँ पर देखना यह है कि इन को इस काम में कहां तक सफलता मिली है। किसी भी प्रबंधकाव्य की सफलता की विवेचना के पहले यह देखना चाहिए कि कवि का दृष्टिकोण क्या रहा है। क्या अपनी कथा के परिणाम द्वारा कवि किसी विशेष आदर्श को स्थापित करना चाहता है अथवा उस का उद्देश्य कथा के रूप में कोई

सुंदर वस्तु पाठकों के सामने उपस्थित करना है। यह तो हम तुरंत कह सकते हैं कि इस रचना में किसी आदर्श विशेष को सामने रख कर उसे स्थापित करने के उद्देश्य से पात्रों के स्वाभाविक विकास अथवा घटनाओं के नैसर्गिक प्रवाह को किसी खास दिशा की ओर नहीं मोड़ा गया है, फिर जायसी और भारतीय काव्य-परम्परा के प्राचीन आदर्श — ‘अंत भले का भला और बुरे का बुरा,’ — के भी क्रायल नहीं थे। इस के प्रमाण में इतना ही कहना यथेष्ट होगा कि इस कथा का अंत बढ़ा करुण और अत्यंत दुःखांत है, सब आपत्तियों के टलने के बाद नायक नायिका आदि सभी मुख्य पात्र मृत्युमुख में पतित होते हैं और सारे फसाद की जड़ उस राघव चेतन, या अलाउद्दीन ही का, कोई परिणाम-दुःखद या सुखद-दिखलाना कवि ने आवश्यक नहीं समझा। और फिर कथा के इतने करुण अंत को कविने उपसंहार में एक विचित्र रूप से शांत रस में परिणत कर दिया है। पर्यवसान के समय कवि इस चातुरी से अपना दृष्टिकोण दार्शनिक बना लेता है जिस से यह स्पष्ट भासित होने लगता है कि मनुष्य के वास्तविक जीवन का वास्तविक अंत दुःखमय नहीं बल्कि सांसारिक माया-मोह से उदासीन और पूर्ण रूप से शांत होना चाहिए। इस धारणा का कारण यही है कि जहाँ कवि ने कथा के बीच बीच में नागमती और पद्मावती को प्रिय-वियोग में अत्यंत खिन्न और विषाद पूर्ण दिखलाया है वहाँ प्रिय के निधन अवसर पर भी विषादपूर्ण करुण-क्रंदन अपेक्षित था। पर ऐसा नहीं हुआ। हम देखते हैं कि रतनसेन के मरने पर दोनों महिषियों का विलाप में रत न हो शोक से उदासीन होकर एक शांतिमय आनंद के साथ मृतपति के साथ सती हो जाती हैं। यही हाल वीरगति को प्राप्त अन्य पुरुषों की स्त्रियों का भी दिखलाया गया है। सब कुछ शेष हो जाने पर अलाउद्दीन जब बड़ी बड़ी उम्मीदें बाँधता हुआ गढ़ में घुसा तो इस के सामने एक ऐसा दृश्य आया जिस की उसे स्वप्न में भी आशा न थी। वह दृश्य इस लोक का नहीं था। उस के हृदय पर भी इस दृश्य का गहरा प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सका। सतियों के चिताओं की एक मुट्टी भस्म उसने उठाई और दुनियाँ को इसी ( भस्म ) की भाँति झूठी समझा —

“छार उठाइ लीन्ह एक मूठी। दीन्ह उठाइ पिरिधिबी झूठी”

सिंहलद्वीप वर्णन खंड

पुनि महुवा चुअ अधिक मिठास । मधु जस मीठ, पुहुप जस बासू ॥  
 और खजहजा अनवन नाऊँ । देखा सब राउन अमराऊँ ॥  
 लाग सबै जस अमृत साखा । रहै लोभाइ सोइ जो चाखा ॥

लवंग सुपारी जायफर, सब फर फरे अपूर ।

आस पास घन इमिली, औ घन तार खजूर ।

बसहि पखि बोलहि बहु भाखा । करहि हुलास देखि कै साखा ॥  
 मोर होत बोलहि चुहचूही । बोलहि पोंडुक "एकै तूही" ॥  
 सारौ सुआ जो रहचह करहीं । कुरहि परेवा औ करवरहीं ॥  
 "पीव पीव" कर लाग पीवा । "तुही तुही" कर गडुरी जीहा ॥  
 "कुहू कुहू" करि कोइलि राखा । औ भिंगराज बोल बहु भाखा ॥  
 "दही दही" करि महरि पुकारा । हारिल बिनवै आपन हारा ॥  
 कुहकहि मोर सोहावन लाग । होइ कुराहर बोलहि कागा ॥

जावत पखी जगत के, भरि बैठे अमराऊँ ।

आपनि आपनि भाषा, लेहि दई कर नाऊँ ॥

पैग पैग पर कुवाँ बावरी । साजी बैठक और पोंवरी ॥  
 और कुह बहु ठावहिं ठाऊँ । सब तीरथ औ तिन्ह के नाऊँ ॥  
 मठ मढ्य चहुँ पास सँवारे । तपा जपा सब आसन मारे ॥  
 कोइ सु ऋषीसुर, कोइ सन्यासी । कोइ रामजती विस्वासी ॥  
 कोई ब्रम्हाचर पथ लागे । कोइ सो दिगवर विचरहिं नोंगे ॥  
 कोई सु महेशुर जगम जती । कोइ एक परखै देवी सती ॥  
 कोइ सुरसती कोई जोगी । कोई निरास पथ बैठ बियोगी ॥

सेवरा, खेवरा, बानपर, सिध, साधक, अवधूत ।

आसन मारे बैठ सब, जारि आतमा भूत ॥

मानसरोदक बरनौ काहा । मरा समुद अस अति अवगाहा ॥  
 पानि मोति अस निरमल तासू । अमृत आनि कपूर सुबासू ॥  
 लंक दीप कै सिला अनाई । बोंधा सरवर घाट बनाई ॥  
 खंड खंड सीढी भई गरेरी । उत्तरहिं चढ़हिं लोग चहुँ फिरी ॥  
 फूला कँवल रहा होइ राता । सहस सहस पखुरिन कर छाता ॥  
 उलथहिं सीप, मोति उतिराही । जुगहि हंस औ केलि कराहीं ॥  
 खनि पतार पानी तहँ काढ़ा । छीरसमुद्र निकसा हुत बाढ़ा ॥

ऊपर पाल चहुँ दिशि, अमृत-फल सब रूख ।

देखि रूप सरवर कै, गै पियास औ भूख ॥

पानि भरे आवहिं पनिहारी । रूप सुरूप पदमिनी नारी ॥  
 पदुमगध तिन्ह अग बसाहीं । भँवर लागि तिन्ह सग फिराहीं ॥

लक - सिधिनी, सारंगनैनी । हसगामिनी कोकिलधैनी ॥  
 आवहिं भुड सो पॉतिहिं पॉती । गवन सोहाइ सु भॉतिहिं भॉती ॥  
 कनक कलस मुखचद दिपाहीं । रहम केलि सन आवहिं जाहीं ॥  
 जा सहूँ वै हैरै चख नारी । बॉक नैन जनु हनहिं कटारी ॥  
 केस भेघावर सिर ता पाई । चमकहिं दसन बीजु कै नाईं ॥  
 माये कनक गागरी आवहिं रूप अनूप ।

जेहि के असि पनहारी सो रानी केहि रूप ॥

ताल तलाव बरनि नहिं जाहीं । सूभै चार पार किछु नाहीं ॥  
 फूले कुमुद सेत उजियारे । मानहुँ उए गगन महुँ तारे ॥  
 उतरहिं भेघ चढ़हिं खेइ पानी । चमकहिं मच्छ वीजु कै बानी ॥  
 पौराह पख सुसगहिं सगा । सेत पीत राते बहु रगा ॥  
 चकई चकवा केलि कराहीं । निसिक विछोइ, दिनहिं मिलि जाहीं ॥  
 कुररहिं सारस करहिं हुलासा । जीवन मरन सो एकहिं पासा ॥  
 बोलहिं सोन ठेक बगलेदी । रही अबोल मीन जल-भेदी ॥

नंग अमोल तेहि तालहिं, दिनहिं बरहिं जस दीप ।

जो मरजिया होइ तहँ, सो पावै वह सीप ॥

आस पास बहु अमृत वारी । फरी अपूर, होइ रखवारी ॥  
 नारग नीवू सुरग जँभीरा । औ बदाम बहु मेद अँत्रीरा ॥  
 गलगलं तुरज सदाफर फरे । नारग अति राते रस भरे ॥  
 किसमिस सेव फरे नौ पाता । दारिउँ दास देखि मन राता ॥  
 लाग सुहाई हरफारचौरी । उनै रही केरा कै बौरी ॥  
 फरे तूत कमरख औ न्योजी । रायकरौंदा बेर चिरौंजी ॥  
 सगतप व छुहारा दीठे । और खजहजा खाटे मीठे ॥

पानि देहिं खंडवानी कुवहिं खाइ बहु मेलि ।

लागी घरी रहंट कै सीचहिं अमृतबेलि ॥

पुनि फुलवारि लागि चहुँ पासा । विरिछु वेधि चन्दन भइ बासा ॥  
 बहुत फूल फूलों धनबेली । केवड़ा चम्पा कुद चभेली ॥  
 सुरंग गुलाल कदम औ कूजा । सुगंध बकौरी गध्रव पूजा ॥  
 जाही जूही बगुचन लावा । पुहुप सुदरसन लाग सुहावा ॥  
 नागसर सदवरग नेवारीं । औ सिंगारहार फुलवारीं ॥  
 सानंजरद फूलों सेवती । रूपमजरी और मालती ॥  
 मौलंसिरी वेइलि औ करना । सबै फूल फूले बहु बरनां ॥

तेहि सिर फूल चढ़हिं वै जेहि माये मनि भाग ।

आछुहिं सदा सुगन्ध बहु जनु बसत औ फाग ॥

सिंहलनगर देखु पुनि बसा । धनि राजा अस जे कै दसा ॥  
 ऊँची पौरी ऊच अवासा । जनु कैलास इन्द्र कर बासा ॥  
 राव रक सब घर घर सुखी । जो दीखै सो हसता-मुखी ॥  
 रचि रचि साजे चन्दन चौरा । पोते अग्रर मेद औ गौरा ॥  
 सब चौपारहि चन्दन खँभा । ओठेधि सभापति बैठे सभा ॥  
 मनहुँ सभा देवतन्ह कर जुरी । परी दीठि इद्रासन पुरी ॥  
 सबै गुनी औ पंडित ज्ञाता । ससकिरित सब के मुख बाता ॥

असकै मंदिर सवारैँ जनु सिवलोक अनूप ।

घर घर नारि पदमिनी मोहहि दरसन रूप ॥

पुनि देखी सिंहल कै हाया । नवो निद्धि लछिमी सब बाटा ॥  
 कनक हाट सब कुहकुह लीपी । बैठ महाजन सिंघलदीपी ॥  
 रचहि हथौड़ा रूपन दारी । चित्र कटाव अनेक सँवारी ॥  
 सोन रूप भल भयउ पसारा । धवल सिंरी पोतहि घर बारा ॥  
 रतन पदारथ मानिक मोती । हीरा लाल सो अनवन जोती ॥  
 औ कपूर बेना कस्तूरी । चदन अग्रर रहा भरपूरी ॥  
 जिन्ह एहि हाट न लीन्ह बेसाहा । ता कहँ आन हाट कित लाहा ॥

कोई करै बेसाहनी काहू केर बिकाइ ।

कोई चलै लाभ सन कोई मूर गँवाइ ॥

पुनि सिंगारहाट भल देसा । किए सिंगार बैठी तहँ बेसा ॥  
 मुख तमोल, तन चीर कुसुभी । कानन कनक जड़ाऊ खुभी ॥  
 हाथ बीन सुनि मिरिग भुलाहीं । नर मोहहि सुनि, पैग न जाहीं ॥  
 भौंह धनुष तिन्ह नैन अहेरी । मारहि बान सान सौ फेरी ॥  
 अलक कपोल डोल हँसि देहीं । लाइ कटाछ मारि जिउ लेहीं ॥  
 कुछ कनुक जानौ जुग सारी । अंचल देहि सुभावहि दारी ॥  
 केत खिलार हारि तेहि पासा । हाथ भारि उठि चलहि निरासा ॥

चेटक लाइ हरहि मन जब लहि होइ गथ फँट ।

साठनाठ उठि भए बटाऊ ना पहिचान न भेट ॥

लेइ के फूल बैठि फुलहारी । पान अपूरव धरे सँवारी ॥  
 सोंधा सबै बैठ लै गोंधी । फूल कपूर खिरीरी बाधी ॥  
 कतहुँ पंडित पढहि पुरानू । धरम पथ कर करहि बखानू ॥  
 कतहुँ कथा कहै किछु कोई । कतहुँ नाच-कूद भल होई ॥  
 कतहुँ चिरहँटा पखी लावा । कतहुँ पखडी काठ नचावा ॥  
 कतहुँ नाद सबद होइ भला । कतहुँ नाटक चेटक-कला ॥  
 कतहुँ काहु ढगविद्या लाई । कतहुँ लेहि मानुष बौराई ॥

चरपट चोर गंडिछोरा मिले रहहिं ओहि नाच ॥

जो ओहि हाट सजग भा गय ताकर पै बाँच ॥

पुनि आए सिंहलगढ पासा । का बरनौं जनु लाग अकासा ॥

तरहि करिन्ह बासुकि कै पीठी । ऊपर इद्रलोक पर दीठी ॥

परा खोह चहुँ दिसि अस बाँकी । काँपै जोध, जाइ नहि भाँकी ॥

अगम असूभ देखि डर खाई । परै सो सपत-पतारहि जाई ॥

नव पौरी बाँकी, नवखडा । नवौ जो चढै जाइ बरम्हडा ॥

कचन केाट जरे नग सीसा । नखतहि भरी बीजु जनु दीसा ॥

लका चाहि ऊँच गढ ताका । निरखि न जाइ, दीठि मन थाका ॥

हिय न समाइ दीठि नहि, जानहुँ ठाढ़ सुमेर ।

कहँ लागि कहाँ उँचाई कहँ, लागि बरनौं फेर ॥

नितिगढ बाँचि चलै ससि सूरु । नाहि त होइ बाजि रथ चूरु ॥

पौरी नवौ बज्र कै साजी । सहस सहस तहँ बैठै पाजी ॥

फिरहि पाँच केातवार सुभौरी । काँपै पाँच चपत वह पौरी ॥

पौरिहि पौरि सिंध गढ़ि काढ़े । डरपहि लोग देखि तँह ठाढ़े ॥

बहुबिधान वै नाहर गढ़े । जनु गाजहिं चाहहिं सिर चढ़े ॥

टारहि पूँछ, पसारहिं जीहा । कुंजर डरहिं कि गुँजरि लोहा ॥

कनक-सिला गढ़ि सीढी लाई । जगमगाहिं गढ ऊपर ताई ॥

नबैलड नव पौरी औ तहँ बज्र-केवार ।

चारि बसेरे सौं चढै, सत सौं उतरै पार ॥

नव पौरी पर दसवँ दुवारा । तेहि पर बाज राज घरियारा ॥

घरी सो बैठि गनै घरियारी । पहर पहर से आपनि बारी ॥

जबहीं घरी पूजि तेहिं मारा । घरी घरी घरियार पुकारा ॥

परा जो डौंड जगत सब डौंडा । का निचिंत माटी कर भौंडा ॥

तुम्ह तेहि चाक चढ़े हौ काँचे । आपहु रहै, न थिर होइ बाँचे ॥

घरी जो भरी घटी तुम्ह आऊ । का निचिंत होइ सोउ बटाऊ ॥

पहरहिं पहर गजर निति होई । हिया बजर, मन जाग न सोई ॥

मुहमद जीवन जल भरन रहँट घरी कै रीति ।

घरी जो आई उयो भरी, ढरी-जनम गा बीति ॥

गढ़ पर नीर खीर दुइ नदी । पनिहारी जैसे दुरपदी ॥

और कुड एक सोतीचूरु । पानी अमृत, बाँच कपूरु ॥

ओहि क पानि राजा पै पीया । बिरिध होइ नहिं जौ लहि जीया ॥

कचन-बिरिछ एक तेहि पासा । जस कलपतच इद्र कैलासा ॥

मूल पतार, सरग ओहि साखा । अमरवेलि को पाव, को चाखा ॥

चाँद पात औ फूल तराई । होइ उजियार नगर जहँ ताई ॥



वह फल पावै तप करि कोई । विरिष खाइ ती जीवन हाई ॥  
 राजा भए भिखारी सुनि वह अमृत भोग ।  
 जेइ पांवा सो अमर भाई, ना किछु व्याधि न रोग ॥  
 गढ पर बसाहि भारि गढ़पती । असुपति गजपति भू-नर-पती ॥  
 सब धौराहर सोने साजा । अपने अपने घर सब राजा ॥  
 रूपवत धनवत सभागे । परस-पखान पौरि तिन्ह लागे ॥  
 भोग विलास सदा सब माना । दुख चिंता कोइ जनम न जाना ॥  
 मंदिर मंदिर सब के चौपारी । बैठि कुंवर सब खेलहि सारी ॥  
 पासा ढरहि खेल मल होई । खड्गदान सरि पूज न कोई ॥  
 भोट बरनि कहि कीरति भली । पावहि हस्ति घोड़ सिहली ॥  
 मंदिर मंदिर फुलवारी चोवा चदन वास ।  
 निसि दिन रहै बसत तहँ छुवाँ ऋतु बारह मास ॥  
 पुनि चलि देखा राज दुआरा । मानुष फिरहि पाइ नहि बारा ॥  
 हस्ति सिधली बोंघे बारा । जनु सजीव सब ढाढ़े पहारा ॥  
 कौनो सेत पीत रतनारे । कौनो हरे धूम औ कारे ॥  
 बरनहि बरन गगन जस मेधा । औ तिन्ह गगन पीठि जनु ठेधा ॥  
 सिधल के बरनौ सिधली । एक एक चाहि एक एक बली ॥  
 गिरि पहार वै पैगहि पेलहि । विरिछु उचारि डारि मुख मेलहि ॥  
 माते तेई सब गरजहि बोंघे । निसि दिन रहहि महँजित कोंघे ॥  
 धरती भार न अंगवै, पावँ धरत उठ हालि ।  
 कुचम टुटै मुहँ फाटै, तिन्ह हस्तिन्ह के चालि ॥  
 पुनि बोंघे रजवार तुरगा । का बरनौ जस उन्हकै रंगा ॥  
 लील, समद चाल जग जाने । होंसल, भौर, गियाह बखाने ॥  
 हरे, कुरग, महुआ बहु भौंती । गरर, कोकाह, बुलाह सु पौंती ॥  
 तीख तुखार चोड़ औ बोंके । सँचरहि पौरि ताज बिनु होंके ॥  
 मन ते अग्रमन डोलाहि बागा । सेत उसास गगन सिर लागा ॥  
 पौन-समाज समुद्र पर धावहि । बूढ न पावँ, पार होइ आवाहि ॥  
 थिर न रहहिं रिस लोह चवाहीं । भौंजहि पूँछ, सीस उपराहीं ॥  
 अस तुखार सब देखे जनु मन के रथवाह ।  
 नैन-पलक पहुँचावहि जहँ पहुँचा कोइ चाह ॥  
 राज सभा पुनि देख बईठी । इद्रसभा जनु परि गै डीठी ॥  
 धनि राजा असि सभा सँवारी । जानहु फूलि रही फुलवारी ॥  
 मुकुट बोंधि सब बैठे राजा । दर निसान नित जिन्हके बाजा ॥  
 रूपवत, मनि दिपै ललाटा । माये छात, बैठ सब पाटा ॥  
 मानहुँ कवल सरोवर फूले । सभा क रूप देखि मन भूले ॥

पान कपूर मेद कस्तूरी । सुगंध वास भरि रही अपूरी ॥  
मोक्ष ऊँच इद्रासन साजा । गम्भवसेन बैठ तहँ राजा ॥

छत्र गगन लागि ताकर, सूर तवै जस आप ।

सभा कंवल अस विगसइ, माये बड़ परताप ॥

साजा राजमदिर कैलास । सोने कर सब धरति अक्रास ॥

सात खड धौराहर साजा । उहै सँवारि सकै अस राजा ॥

हीरा ईंट, कपूर गिलावा । औ नग लाइ सरग लै लावा ॥

जावत सवै उरेह उरेहै । भौति भौति नग लाग उवेहै ॥

आ कटाव सब अनबन भौती । चित्र कोरि कै पौतिहि पौती ॥

लाग खभ मनि-मानिक जरे । निसि दिन रहि दीप जनु बरे ॥

देखि धौराहर कर उँजियारा । छपि गए चाँद सूरज औ तारा ॥

सुना सात वैकुण्ठ जस तस साजे खंड सात ।

बेहर बेहर भाव तस खंड खड उपरात ॥

बरनौ राजमदिर रनिवास । जनु अछुरीन्ह भरा कैलास ॥

सोरह सहस पदमिनी रानी । एक एक ते रूप बखानी ॥

अति सुरूप औ अति सुकुवारी । पान फूल के रहहि अघारी ॥

तेहि ऊपर चपावति रानी । महा सुरूप पाट-परधानी ॥

पाट वैठि रह किए सिगारु । सब रानी ओहि करहि जोहारु ॥

निति नौरग सुरगम सोई । प्रथम त्रैस नहि सरवरि कोई ॥

सकल दीप महँ जेती रानी । तिन्ह महँ दीपक बारह-बानी ॥

कुँवरि बतीसा-लच्छनी, अस सब मोह अनूप ।

जावत सिघलदीप के सवै बखानै रूप ॥



मानसरोदक खंड



## मानसरोदक खंड

एक दिवस पून्यो तिथि आई । मानसरोदक चली नहाई ॥  
 पदमावति सब सखी बुलाई । जनु फुलवारि सबै चलि आई ॥  
 कोइ चपां कोइ कुद सहेली । कोइ सुकेत करना, रस वेली ॥  
 कोइ सु गुलाल सुदरसन राती । कोइ सो बकावरि-बकुचन भोंती ॥  
 कोइ सो मौलसिरि, पुहपावती । कोइ जाही जूही सेवती ॥  
 कोई सोनजरद कोइ केसर । कोइ सिंगार-हार नागसर ॥  
 कोइ कूजा सदवर्ग चमेली । कोई कदम सुरस रस-वेली ॥

चलीं सबै मालति सँग फूलीं कवैल कुमोद ।  
 बेधि रहे गन गंधरव वास - परमदामोद ॥

खेलत मानसरोवर गई । जाइ पाल पर ठाढी भईं ॥  
 देखि सरोवर हँसैं कुलेली । पदमावति सौं कहहि सहेली ॥  
 ए रानी ! मन देखु बिचारी । एहि नैहर रहना दिन चारी ॥  
 जौ लागि अइ पिता कर राजू । खेलि लेहु जो खेलहु आजू ॥  
 पुनि सासुर हम गवनव काली । कित हम, कित यह सखर-पाली ॥  
 कित आवन पुनि अपने हाथा । कित मिलि कै खेलव एक साथी ॥  
 सासु ननद बोलिन्ह जिउ लेहीं । दासन ससुर न निसरै देहीं ॥

पिउ पियार सिर ऊपर, पुनि सो करै दहुँ काह ।  
 दहुँ सुख राखै की दुख, दहुँ कस जनम निवाह ॥

मिलहि रहसि सब चढहिं हिडोरी । भूलि लेहिं सुख वारी भोरी ॥  
 भूलि लेहु नैहर जब ताई । फिरि नहि भूलन देखि साईं ॥  
 पुनि सासुर लेइ राखिहिं तहाँ । नैहर चाह न पाउव जहाँ ॥  
 कित यह धूप, कहाँ यह छाहों । रहव सखी त्रिनु मदिर माहों ॥  
 गुन पुछिहिं औ लाइहिं दोख । कौन उतर पाउव तहँ मोखू ॥  
 सासु ननद के भौह सिकारे । रहव सँकोचि दुवौ कर जोरे ॥  
 कित यह रहसि जो आउव करना । ससुरेइ अत जनम दुख भरना ॥

कित नैहर पुनि आउव कित ससुरे यह खेल ।

आपु आपु कहँ होइहि परव पखि जस डेल ॥

सरवर तीर पदमिनी आई । खोपा छोरि केस मुकलाई ॥  
 ससि मुख, अग मलयगिरि बासा । नागिन भोंपि लीन्ह चहुँ पासा ॥  
 झोनई घटा परी जग छाहों । ससि कै सरन लीन्ह जनु राहों ॥

छुपि गै दिनहि भानु कै दसा । लेइ निसि नखत चोंद परगसा ॥  
 भूलि चकोर दीठि मुख लावा । मेघ घटा मँह चद देखावा ॥  
 दसन दामिनी, कोकिल भाखी । भौहँ धनुख गगन लेइ राखी ॥  
 नैन खँजन दूह केलि करेहँ । कुच-नारंग मधुकर रस लेहँ ॥  
 सखर रूप बिमोहा हिए हिलोरहि लेइ ।

पावँ छुवै मकु पावौँ एहि मिस लहरहि देइ ॥

धरी तीर सब कञ्चुकि सारी । सरवर मह पैठौँ सब बारी ॥  
 पाइ नीर जानौँ सब वेली । हुलसहि करहि काम कै केली ॥  
 करिल कैसे बिसहर बिस-भरे । लहरैँ लेहि कवँल मुख धरे ॥  
 नवल बसत सँवारी करी । होइ प्रगट जानहु रस-भरी ॥  
 उठी कोंप जस दारिब दाखा । भई उनत पेम कै साखा ॥  
 सरवर नहि समाइ ससारा । चोंद नहाइ पैठ लेइ तारा ॥  
 धनि सो नीर ससि तरई ऊई । अब कित दीठ कमल औ कूई ॥

चकई बिल्लुरि पुकारै कहाँ मिलौँ, हो नोंह ।

एक चोंद निसि सरग मँह, दिन दूसर जल मोंह ॥

लागी केलि करै मभ नीरा । हस लजाइ बैठ ओहि तीरा ॥  
 पदभावति कौतुक कहँ राखी । तुम ससि होहु तराइन साखी ॥  
 बाद मेलि कै खेल पसारा । हार देइ जो खेलत हारा ॥  
 सँवरहि सोंवरि, गोरिहि गोरी । आपनि आपनि लीन्ह सो जोरी ॥  
 बुझि खेल खेलहु एक साथ । हार न होइ पराए हाथा ॥  
 आञ्जुहि खेल, बहुरि कित होई । खेल गए कित खेलै कोई ॥  
 धनि सो खेल खेल सह पेमा । रउताई औ कूसल खेमा ॥  
 सुहमद बाजी पेम कै ज्यो भावै त्यो खेल ।

तिल फूलहि के सग ज्यो होइ फुलायल तेल ॥

सखी एक तेइ खेल न जाना । भै अचेत मनि-हार गँवाना ॥  
 कवँल डार गहि भै वेकराय । कासों पुकारौँ आपन हारा ॥  
 कित खेलै आइउँ एहि साथ । हार गँवाइ चलिउँ लेइ हाथा ॥  
 घर पैठत पूँछत यह हारू । कौन उतर पाउब पैसारू ॥  
 नैन सीप आँसू तस भरे । जानौ मोति गिरहि सब ढरे ॥  
 सखिन कहा बौरी कोकिला । कौन पानि जेहि पौन न मिला ॥  
 हार गँवाइ सो ऐसै रोवा । हेरि हेराइ लेइ जौँ खोवा ॥

लागी सब मिलि हेरै बूढ़ि बूढ़ि एक साथ ।

कोइ उठी मोती लेइ काहु धोधा हाथ ॥

कहा मानसर चाह सो पाई । पारस-रूप इहाँ लागि आई ॥  
 भा निरमल तिन्ह पायँह परसे । पावा रूप रूप के दरसे ॥

मलय-समीर वास तन आई । भा सीतल-गै तपनि बुभाई ॥  
 न जानौ कौन पौन लेह आवा । पून्य-दसा मै, पाप गँवावा ॥  
 ततखन हार वेगि उतिराना । पावा सखिन्ह चद थिहँसाना ॥  
 विगसा कुमुद देखि ससि-रेखा । मै तहँ ओप जहँ जोह देखा ॥  
 पावा रूप रूप जस चहा । ससि-मुख जनु दरपन होह रहा ॥  
 नयन जो देखा कँवल भा, निरमल नीर सरीर ।  
 हँसत जो देखा हंस भा, दसन-जोति नग हीर ॥

---





नखशिख खंड



## नखशिख—खंड

का सिँगार ओहि बरनों, राजा । ओहिक सिँगार ओही पे छाजा ॥  
 प्रथम सीस कस्तूरी केसा । बलि बासुकि, का और नरेसा ॥  
 भौर केस, वह मालति रानी । विसहर लुरे लेहि अरधानी ॥  
 वेनी छोरि फार जौ वारा । सरग पतार होइ अंधियारा ॥  
 कोंवर कुटिल केस नग कारे । लहरन्हि भरे भुअँग बैसारे ॥  
 बेघे जनौ मलयगिरि बासा । सीस चढ़े लोटहि चहुँ पासा ॥  
 धुधुरवार अलकँ विषभरी । सँकरैँ पेम चहैँ गिउ परी ॥

अस फँदवार केस वै परा सीस गिउ फाँद ।

अस्टौ कुरी नाग सत्र अरुभ केस के बाँद ॥

बरनौ मोंग सीस उपराही । सेदुर अबहि चढा जेहि नाही ॥  
 बिनु सेंदुर अस जानहु दीआ । उजियर पँथ रैनि महँ कीआ ॥  
 कँचन रेख कसौटी कसी । जनु घन महँ दामिनि परगसी ॥  
 सुरज-किरिन जनु गगन विसेखी । जमुना मोंह सुरसती देखी ॥  
 खाँड़े धार रहिर जनु भरा । करवत लेइ बेनी पर धरा ॥  
 तेहि पर पूरि धरे जो मोती । जमुना मोंभ गग कै सोती ॥  
 करवत तपा लेहि होइ चूरु । मकु सो रहिर लेइ देइ सेदूरु ॥

कनक दुवादस बानि होइ चह सोहाग वह मोंग ।

सेवा करहि नखत सत्र उवै गगन जूस गोंग ॥

कहौ लिसार दुइज कै जोती । दुइजहि जोति कहौ जग ओती ॥  
 सहस किरिन जो सुरज दिपाई । देखि लिलार सोउ छुपि जाई ॥  
 का सरवरि तेहि देउँ मयकू । चौद कलक्री वह निकलकू ॥  
 औ चौदहि पुनि राहु गहासा । वह बिनु राहु सदा परगसा ॥  
 तेहि लिलार पर निलक बईठा । दुइज पाट जानहु धुव दीठा ॥  
 कनक-पाट जनु वैठा राजा । सवै सिगार-अन्न लेइ साजा ॥  
 ओहि आगे थिर रहा न कोऊ । दहुँ का कहँ अस लुरै सजोऊ ॥

खरग, धनुक, चक, बान दुइ जग मारन तिन्ह नाँव ।

सुनि कै परा मुरुछि कै ( राजा ) मो कहँ हए कुटाव ॥

मोंहै स्याम धनुक जनु ताना । जा सहुँ हेर मार विष-बाना ॥  
 हनै धुनै उन्ह मोंहनि चढे । केइ हतियार काल अस गढे ? ॥  
 उहै धनुक किरसुन पहाँ अहा । उहै धनुक राधौ कर गहा ॥

आहि धनुक रावन सधारा । ओहि धनुक कसासुर मारा ॥  
 ओहि धनुक बेधा हुत राहू । मारा ओहि सहत्तावाहू ॥  
 उहै धनुक मैं तापहँ चीन्हा । धानुक आप बेभ जग कीन्हा ॥  
 उन्ह भौहनि सरि केउ न जीता । अछरी छपी छपी गोपीता ॥

भौह धनुक, धनि धानुक, दूसर सरि न कराइ ।

गगन धनुक जो ऊगै लाजहिं सो छपि जाइ ॥

नैन बोक, सरि पूज न कोऊ । मानसरोदक उलथहिं दोऊ ॥  
 राते कँवल करहिं अलि भवों । घूमहि माति चहहिं अपसवों ॥  
 उठहि तुरग लेहिं नहिं बागा । चाहहि उलथि गगन कहँ लागा ॥  
 पवन भुकोरहि देइ हिलोरा । सरग लाइ भुईं लाइ बहोरा ॥  
 जग डोलै डोलत नैनाहों । उलटि अडार जाहि पल माहों ॥  
 जबहिं फिराहि गगन गहि बोरा । अस वै भौर चक्र के जोरा ॥  
 समुद-हिलोर फिरहिं जनु भूले । खजन लरहि मिरिग जनु भूले ॥

सुभर सरोवर नयन वै मानिक भरे तरग ।

आवत तीर फिरावहीं काल भौर तेहि सग ॥

बरुनी का बरनौं इमि बनी । साधे बान जानु दुइ अनी ॥  
 जुरी राम रावन कै सैना । बीच समुद्र भए दुइ नैना ॥  
 वारहिं पार बनावरि साधा । जा सहुँ हेर लाग विष-बाधा ॥  
 उन्ह बानन्ह अस को जो न मारा ? वेधि रहा सगरौ ससारा ॥  
 गगन नखत जो जाहि न गने । वै सब बान ओही के हने ॥  
 धरती बान वेधि सब राखी । साखी ठाढ देहि सब साखी ॥  
 रोवँ रोवँ मानुष तन ठाढे । सूतहि सूत वेध अस गाढ़े ॥

बरुनि-बान अस ओपहँ वेधे रन बन-ढाँख ।

सौजहिं तन सब रोवों पखिहिं तन सब पॉख ॥

नासिक खरग देउँ कह जोगू । खरग खीन, वह बदन-सँजोगू ॥  
 नासिक देखि लजानेउ सूआ । सूक आइ वेसरि होइ ऊआ ॥  
 सुआ जो पिअर हिरामन लाजा । और भाव का बरनौ राजा ॥  
 सुआ सो नाक कठोर पँवारी । वह कौवर तिल पुहुप सँवारी ॥  
 पुहुप सुगध करहि एहि आसा । मकु हिरकाइ लेइ हम पासा ॥  
 अघर दसन पर नासिक सोभा । दारिउँ विव देखि सुक लोभा ॥  
 खंजन दुहुँ दिसि केलि कराहीं । दहुँ वह रस कोउ पाव कि नाहीं ॥

देखि अमिय रस अघरन्ह भएउ नासिका कीर ।

पौन बास पहुँचावै अस रम छुँइ न तीर ॥

अघर सुरग अमी-रस-भरे । विव सुरग लाजि बन फरे ॥  
 फूल दुपहरी जानौं राता । फूल भरहि ज्यों ज्यों कह बाता ॥

हीरा लेइ सो विद्रुम-धारा । विहंसत जगत होइ उजियारा ॥  
 भए मँजोठ पानन्ह रँग लागे । कुसुम-रंग यिर रहै न आगे ॥  
 अस कै अघर अमी भरि राखे । अरहिं अछूत, न काहू चाखे ॥  
 मुख तँबोल-रँग धारहिं रसा । केहि मुख जोग सो अमृत बसा ? ॥  
 राता जगत देखि रँगराती । रहिर भरे आछहिं विहँसाती ॥  
 अमी अघर अस राजा सब जग आस करेइ ।

केहि कहं कंवल विगासा को मधुकर रस लेइ ॥  
 दसन चौक बैठे जनु हीरा । औ विच विच रँग त्याम गँभौरा ॥  
 अस भादौ-निसि दामिनि दीसी । चमकि उठै तस बनी बतीसी ॥  
 वह जुजोति हीरा उपराही । हीरा-जोति सो तेहि परछाहीं ॥  
 जेहि दिन दसनजोति निरमई । बहुतै जोति जोति ओहि भई ॥  
 रवि ससि नखत दिपहिं ओहि जोती । रतन पदारथ मानिक मोती ॥  
 जहँ अहँ विहसि सुभावहि ह सी । तहँ तहँ छिद्रकि जोति परगसी ॥  
 दामिनि दमकि न सरवरि पूजी । पुनि ओहि जोति और को दूजी ? ॥  
 हँसत दसन अस चमके पाहन उठे छरकि ।  
 दारिअँ सरि जो न कै सका, फाटेउ हिया दरकि ॥

रसना कहीं जो कह रस वाता । अमृत-वैन सुनत मन राता ॥  
 हरै सो सुर चातक कोकिला । विनु बसंत यह वैन न मिला ॥  
 चातक कोकिल रहहिं जो नाहीं । सुनि वह वैन लाज छपि जाहीं ॥  
 भरे प्रेम-रस बोलै बोला । सुनै से माति घूमि कै डोला ॥  
 चतुरवेद-मत सब ओहि पाहों । रिग, अजु, साम अथरवन माहों ॥  
 एक एक बोल अरथ चौगुना । इद्र मोह, ब्रह्मा स्त्रि घुना ॥  
 अमर, भागवत, पिंगल गीता । अरथ बूझि पंडित नहिं जीता ॥  
 भासवती औ व्याकरन पिंगल पढ़ै पुरान ।

वेद-भेद सौं वात कह सुजनन्ह लागै वान ॥  
 पुनि बरनों का सुरंग कपोला । एक नारंग दुइ किए अमोला ॥  
 पुहुप-पंक रस अमृत चाषे । केह यह सुरंग खिरौरा बाँषे ॥  
 तेहि कपोल बाँप तिल परा । जेइ तिल देख सो तिलतिल जरा ॥  
 जनु धुँधची ओहि तिल कर मुहीं । निरह-वान चाषे सापुहीं ॥  
 अग्नि-वान जानौं तिल सूझा । एक कटाछ लाल दस जूझा ॥  
 सो तिल गाल मेटि नहिं गएऊ । अब वह गाल काल जग भयऊ ॥  
 देखत नैन परी परछाहीं । तेहि तें रात साम उपराहीं ॥  
 सो तिल देखि कपोल पर गगन रहा धुव गाड़ि ।  
 खिनहि उठै खिन वूड़ै डोलै नहिं तिल छौंड़ि ॥  
 स्रवन सीप दुइ दीप सँवारे । कुंडल कनक रचे उजियारे ॥

मनि-कुडल भलकें अति लोने । जनु कौंधा लौकहिं दुइ कोने ॥  
 दुहुँ दिसि चाँद सुरज चमकाहीं । नखतन्ह भरे निरखि नहिं जाहीं ॥  
 तेहि पर खूँट दीप दुइ बारे । दुइ ध्रुव दुआँ खूँट बैसारे ॥  
 पहिरे खुभी सिधलदीपी । जनौ भरी कचपचिआ सीपी ॥  
 खिन खिन जबहि चीर सिर गहे । काँपति बीजु दुआँ दिसि रहै ॥  
 डरपहिं देवलोक सिधला । परै न बीजु टूटि एक कला ॥

करहि नखत सब सेवा स्रवन दीन्ह अम दोउ ।

चाँद सुरज अस गोहने और जगत का कोउ ? ॥

बरनौं गीउ कबु कै रीमी । कचन-तार-लागि जनु सीसी ॥  
 कुदै फेरि जातु गिउ काढी । हरी पुञ्जार ठगी जनु ठाढी ॥  
 जनु हिय काढि परेवा ढाढा । तेहि तैं अधिक भाव गिउ बाढा ॥  
 चाक चढाइ सोंच जनु कीन्हा । बाग तुरग जानु गहि लीन्हा ॥  
 गए मयूर तमचूर जो हारे । उहै पुकारहिं सोंभ सकारे ॥  
 पुनि तेहि ठोंव परी तिन रेखा । धूँट जो पीक लीक सब देखा ॥  
 धनि ओहि गीउ दीन्ह बिधि भाऊ । दहुँ का सौं लेइ करै मेराऊ ॥

कठसिरी मुकुताचली सोहै अभरन गीउ ।

लागै कंठहार होइ को तप साधा जीउ ? ॥

कनक-दंड दुइ भुजा कलाई । जानौं फेरि कुँदेरै भाई ॥  
 कदलि-गाभ कै जानौ जोरी । औ राती ओहि कंवल-हथोरी ॥  
 जानौ रक्त हथोरी बूडी । रवि-परमात तात, वै जूडी ॥  
 हिया काढि जनु लीन्हिसि हाया । रहिर भरी अँगुरी तेहि साया ॥  
 औ पहिरे नग-जरी अँगूठी । जग बिनु जीउ, जीउ ओहि मूठी ॥  
 बाहुँ कगन, टाड़ सलोनी । डीलत बाँह भाव गति लोनी ॥  
 जानौ गति वेडिन देखराई । बाँह डोलाइ जीउ लेइ जाई ॥

भुज उपमा पौनार नहि खीन भएउ तेहि चित ।

ठोंवहिं ठोंव वेध भा ऊबि सोंस लेइ नित ॥

हिया थार, कुच कचन लार । कनक कचोर उठे जनु चार ॥  
 कुदन बेल साजि जनु कुँदे । अमृत रतन मनो दुइ भूँदे ॥  
 वेधे भौर कट केतकी । चाहहिं वेध कीन्ह कचुकी ॥  
 जोवन धान लेहिं नहि बागा । चाहहिं हुलसि हिये हटि लागी ॥  
 अग्नि-ध्यान दुइ जानौं साधे । जग वेधहिं जौ होहिं न बाँधे ॥  
 उतंग जेभीर होइ रखवारी । छुइ को सकै राजा कै वारी ॥  
 दारिउँ दाख फरे अनन्वाखे । अस नारंग दहुँ का कहँ राखे ॥

राजा बहुत मुए तपि लाइ लाइ सुईं माथ ॥

काहूँ छुवै न पाए गए मरोखत हाथ ॥

पेट परत जनु चदन लावा । कुहँकुहँ केसर बरन सुहावा ॥  
 खीर अहार न कर सुकुर्वोरा । पान फूल के रहै आधारा ॥  
 साम भुअगिनि रोमावली । नाभी निकसि कँवल कँह चली ॥  
 आइ दुअरौ नारंग बिच-भई । देखि मयूर ठमकि रहि गई ॥  
 मनहुँ चढी भौरन्ह कै पॉती । चदन-खोभ बास कै भाती ॥  
 की कालिंदी निरह-सताई । चलि पयाग अरइल बिच आई ॥  
 नाभिकुड बिच बारानसी । सौह को होइ, मीचु तहँ बसी ? ॥

सिर करवत, तन करसी बहुत सीभ तेहि आस ॥

बहुत धूम घुटि घुटि सुए उतर न देह निरास ॥

बैरिनि पीठि लीन्ह वह पाछे । जनु फिरि चली अपछरा काछे ॥  
 मलयगिरि कै पीठि सँवारी । वेनी नागिनि चढी जो कारी ॥  
 लहरै देति पीठि जनु चढी । चीर-ओहार कँचुली मढी ॥  
 दहुँ का कहँ अस वेनी कीन्हि । चदन बास भुअगै लीन्हो ॥  
 किरसुन करा चढा ओहि माथे । तब तौ छूट, अत्र छुटै न नाथे ॥  
 कारे कँवल गहे मुख देखा । ससि पाछे जनु राहु बिसखा ॥  
 को देखै पावै वह नागू । सो देखै जेहि के सिर भागू ॥

पन्नग पकज मुख गहे खजन तहाँ बईठ ॥

छत्र, सिंघासन, राज, धन ताकहँ होइ जो डीठ ॥

लक पुहुमि अस आहि न काहू । केहरि कहौ न ओहि सरि ताहू ॥  
 बसा लक बरनै जग भौनी । तेहि ते अधिक लक वह खीनी ॥  
 परिहँस पियर भए तेहि बसा । लिए डक लोगन्ह कहँ डसा ॥  
 मानहुँ नाल खड दुइ भए । दुहुँ बिच लक-तार रहि गए ॥  
 हिय के मुरे चलै वह तागा । पैग देत कित सहि सक लाग़ा ? ॥  
 छुद्रघटिका मोहहि राजा । इद्र-अखाइ आइ जनु बाजा ॥  
 मानहुँ बीन गहे कामिनी । गावहि सबै राग रागिनी ॥

सिध न जीता लक सरि हारि लीन्ह बन बासु ॥

तेहि रिस मानुस-रकत पिय, खाइ मारि कै मौंसु ॥

नाभिकुड सो मलय-समीरू । समुद-भँवर जस भवै गँभीरू ॥  
 बहुतै भँवर बवडर भए । पहुँचि न सके सरग कहँ गए ॥  
 चदन भौंभ कुरगिनि खोजू । दहुँ को पाउ, को राजा भोजू ॥  
 को ओहि लागि हिवचल सीभा । का कहँ लिखी, ऐस की रीभा ? ॥  
 तीवइ कवँल-सुगध सरीरू । समुद-लहरि सोहै तन चीरू ॥  
 भूलहि रतन पाट के भौंपा । साजि मैन अस का पर कोपा ? ॥  
 अवहि सो अहै कवँल कै करी । न जनौ कौन भौर कहँ धरी ॥



बेधि रहा जग बासना परिमल मेद सुगंध ।  
 तेहि अरघानि भौर सब लुबुधे तजहि न बध ॥  
 बरनौ नितब लक कै सोभा । औ गज-गवन देखि मन लोभा ॥  
 जुरे जंघ सोभा अति पाए । केरा-खभ-फेरि जनु लाए ॥  
 कवेल-चरन अति रात बिसेखी । रहै पाट पर, पुहुमि न देखी ॥  
 देवता हाथ हाथ पगु लेहीं । जहँ पगु धरै सीस तहँ देही ॥  
 माथे भाग कोउ अस पावा । चरन-कवल लेह सीस चढावा ॥  
 चूरा चोद सुरुज उजियारा । पायल बोच करहि भनकारा ॥  
 अनवट बिछिया नखत तराई । पहुँचि सकै को पायन ताई ॥  
 बरनि सिंगार न जानेउ नखसिख जैस अभोग ॥  
 तस जग किछुइ न पाएउ उपमा देउ ओहि जोग ॥

— — —

## प्रेम-खंड

सुनतहि राजा गा मुरभार्दे । जानौ लहरि सुरज कै आर्डि ॥  
 प्रेम-भाव-दुख जान न कोई । जेहि लागै जानै पै सोई ॥  
 परा सो प्रेम समुद्र आपारा । लहरहि लहर होइ विसंभारा ॥  
 विरह-भौर होइ भोवरि देई । खिन खिन जीउ हिलोरा लेई ॥  
 खिनहि उसास धूड़ि जिउ जाई । खिनहि उठै निसरै बौराई ॥  
 खिनहि पीत, खिन होइ मुख सेता । खिनहि चेत, खिन होइ अचेता ॥  
 कठिन मरन तैं प्रेम-वेवस्था । ना जिउ जियै न दसवै अवस्था ॥

जनु लेनिहार न लेहि जिउ हरहि तरासहि ताहि ।

एतनै बोल आव मुख करै 'तराहि तराहि' ॥

जहँ लागि कुटुव लोग औ नेगी । राजा राय आय सब वेगी ॥  
 जावत गुनी गारुडी आए । ओभा, ब्रैद, सयान बोलाए ॥  
 चखहि चेष्टा, परिखहि नारी । नियर नाहि ओपद तहँ वारी ॥  
 राजहि आहि लखन कै करा । सकति-वान मोहा है परा ॥  
 नहि सो राम, हनिवैत बडि दूरी । के लेइ आव सजीवन-मूरी ? ॥  
 विनय कहिं जे जे गढ़पाती । का जिउ कीन्ह, कौन मति मती ? ॥  
 कहहु सो पीर, काह पुनि खोंगा ? । समुद सुमेरु आव तुम्ह मोंगा ॥

धावन तहँ पठावहु देहि लाख दस रोक ।

होइ सो बेलि जेहि वारी, आनहि सवै बरोक ॥

जब भा चेत उठा बैरागा । बाउर जनौ सोइ उठि जागा ॥  
 आवत जग बालक जस रोआ । उठा रोइ 'हा जान सो खोआ' ॥  
 हौं तौ अहा अमरपुर जहँ । इहँ मरनपुर आएउ कहँ ? ॥  
 केइ उपकार मरन कर कीन्हा । सकति हँकारि जीउ हरि लीन्हा ॥  
 सोवत रहा जहँ सुख-साखा । कस न तहँ सोवत विधि राखा ? ॥  
 अब जिउ उहँ, इहँ तन सूता । कब लागि रहै परान-बिहूना ॥  
 जौ जिउ घटहि काल के हाथा । घट न नीक पै जीउ निसाथा ॥

अहुठ हाट तन-सरवर हिया कवल तेहि माहँ ॥

नैनहि जानहु नीघरे, कर पहुँचत औगाह ॥

सबन्ह कहा मन समुझहु राजा । काल सँति कै जूझ न छाजा ॥  
 तासौं जूझ जात जो जीता । जानत कृस्न तजा गोपीता ॥  
 औ न नेह काहू सौं कीजै । नाँव मिटै, काहे जिउ दीजै ॥  
 पहिले सुख नेहहि जब जोरा । पुनि होइ कठिन निवाहत थोरा ॥

अहुड हाथ तन जैस सुमेरू । पहुँचि न हुआइ परा तस फेरू ॥  
ज्ञान-दिस्टि सौं जाइ पहुँचा । पेम अदिस्ट गगन तें ऊँचा ॥  
धुव तें ऊँच प्रेम-धुव ऊआ । सिर देइ पाँव देइ सो छूआ ॥

तुम राजा औ सुखिया करहु राज-सुख भोग ।

एहि रे पथ सो पहुँचै सदै जो दुःख वियोग ॥

सुए कहा मन बूझहु राजा । करव पिरीति कठिन है काजा ॥  
तुम राजा जेई घर पोई । कवेल न भेटेउ, भेटेउ कोई ॥  
जानहि भौर जो तेहि पथ लुटे । जीउ दीन्ह औ दिएहु न छूटे ॥  
कठिन आहि सिफल कर राजू । पाइय नाहि जूझ कर साजू ॥  
ओहि पथ जाइ जो होइ उदासी । जोगी, जती, तपी, सन्यासी ॥  
भोग किए जौ पावत भोगू । तजि सो भोग कोइ करत न जोगू ॥  
तुम राजा चाहहु सुख पावा । भोगिहि जोग करत नहि भावा ॥

साधन्ह सिद्धि न पाइय जौ लगि सधै न तप्य ।

सो पै जानै बापुरा, करै जो सीस कलप्य ॥

का भा जोग-कथनि के कथे । निकसै धिउ न बिना दधि मथे ॥  
जौ लहि आप हेराइ न कोई । तौ लहि हेरत पाव न सोई ॥  
पेम-पहार कठिन विधि गढा । सो पै चढै जो सिर सौ चढा ॥  
पथ सूरि कर उठा अंकूरू । चोर चढै की चढ मसूरू ॥  
तू राजा का पहिरसि कथा । तोरे घरहि मॉभ दस पथा ॥  
काम, क्रोध, तिस्ना, मद, माया । पाँचौ चोर न छोड़हि काया ॥  
नवौ सेध तिन्ह कै दिठियारा । घर मूसहि निसि, की उजियारा ॥

अबहु जागु अजाना होत आव निसि भोर ।

तव किछु हाथ न लागिहि मूसि जाहि जव चोर ॥

सुनि सो बात राजा मन जागा । पलक न मार पेम, चित लागगा ॥  
नैनन्ह दरहि मोति औ भूंगा । जस गुर खाइ रहा होइ भूंगा ॥  
हिय कै जोति दीप वह सूझा । यह जो दीप अंधियारा बूझा ॥  
उलटि दीठि माया सौ रूठी । पलटि न फिरी जानि कै भूठी ॥  
जौ पै नाहीं अहथिर दसा । जग उजार का कीजिय बसा ॥  
गुरु बिरह-चिनगी जो मेला । जो सुलगाइ लेइ सो चेला ॥  
अव करि फनिग भृग कै करा । भौर होहुँ जेहि कारन जरा ॥

फूल फूल फिरि पूँछौं जौ पहुँचौं ओहि केत ।

तन नेवछावरि कै मिलौं ज्यो मधुकर जिउ देत ॥

बधु मीत बहुतै समुझावा । मान न राजा कोउ भुलावा ॥  
उपजी पेम-पीर जेहि आई । परबोधत होइ अधिक सो आई ॥

अमृत बात कहत विप जाना । पेम क वचन मीठ कौ माना ॥  
 जो ओहि विपै मारि कौ खाई । पूँछहु तेहि सन पेम-मिठाई ॥  
 पूँछहु बात भरथरिहि जाई । अमृत राज तजा विप खाई ॥  
 औ महेस बड़ सिद्ध कहावा । उनहुँ विपै कठ पै लावा ॥  
 होत आव रवि किरिन विकासा । हनुवैत होइ को देइ सुआसा ॥  
 तुम सब सिद्धि मनावहु होइ गनेस सिधि लेव ।  
 चेला को न चलावै तुलै गुरु जेहि भेव ॥



## जोगी खंड

तजा राज, राजा भा जोगी । औ किगरी कर गहेउ वियोगी ॥  
तन विसँभर मन वाउर लटा । अरुभा पेम, परी सर जटा ॥  
चंद्र-वदन औ चदन-देहा । भसम चढ़ाइ कीन्ह तन खेहा ॥  
मेखल, सिधी, चक्र, धंधारी । जोगवाट, रुद्रराज, अघारी ॥  
कंचा पहिरि दड कर गहा । सिद्ध होइ कहँ गोरख कहा ॥  
मुद्र सवन, कठ जपमाला । कर उदपान, कोंध बधछाला ॥  
पोंवरि पोंव, दीन्ह सिर छाता । खप्पर लीन्ह भेस करि राता ॥

चला भुगुति माँगै कहँ साधि कया तप जोग ।

सिद्ध होइ पदमावति जेहि कर हिये वियोग ;

गनक कहहि गनि गौन न आजू । दिन लेइ चलहु, होइ सिध काजू ॥  
पेम-पथ दिन घरी न देखा । तव देखै जत्र होइ सरेखा ॥  
जेहि तन पेम कहँ तेहि मोंस । कया न रकत नैन नहि आँस ॥  
पडित भूल, न जानै चालू । जीउ लेत दिन पूछु न कालू ॥  
सती कि वारी पूछहि पोंडे । औ घर पैठि कि सैतै भोंडे ॥  
मरै जो चलै गग-गति लेई । तेहि दिन कहँ घरी को देई ? ॥  
मैं घर वार कहँ कर पावा । घरी क आपन, अत परावा ॥

हौं रे पथिक पखेरु जेहि वन मोर निवाहु ॥

खेलि चला तेहि वन कहँ तुम अपने घर जाहु ॥

चहुँ दिसि आन सोंटिया फेरी । मै कटकाई राजा केरी ॥  
जावत अहहि सकल अरकाना । सोंभर लेहु, दूरि है जाना ॥  
सिधलदीप जाई अत्र चाहा । मोल न पाउव जहँ वेसाहा ॥  
सब निबहै तहँ आपनि सोंठी । सोंठि विना सोर ह मुखमाटी ॥  
राजा चला साजि कै जोगू । आजहु वेगि चलहु सब लोगू ॥  
गरब जो चढे तुरय कै पीठी । अत्र मुई चलहु सरग कै डीठी ॥  
मंतर लेहु होहु सँग-लागू । गुदर जाइ सत्र होइहि आगू ॥

का निचिंत रे मानुस ! आपन चीते आहु ।

लेहि सजग होइ अगमन मन पछिताव न पाहु ॥

बिनवै रतनसेन कै माया । माथे छात, पाट निति पाया ॥  
बिलसहु नौ लख लच्छि पियारी । राज छाड़ि जिनि होहु भिखारी ॥  
निति चंदन लागै जेहि देहा । सो तन देख भरत अत्र खेहा ॥

सब दिन रहेहु फरत तुम भोगू । से कैसे साधव तप जोगू ? ॥  
 कैसे धूप सहव विनु छाहा । कैसे नौद परिहि भुई मोहा ? ॥  
 कैसे श्रोढव काथरि कथा । कैसे पाव चलव तुम्ह पथा ? ॥  
 कैसे सहव खिनहि खिन भूखा । कैसे पाव कुरकुटा रूखा ? ॥

राजपाट, दर, परिगद तुम्ह ही सौ उजियार ॥

वैठि भोग रस मानहु कै न चलहु औंधियार ॥

मोहि यह लोभ सुनाव न गाया । काकर सुख काकर यह काया ॥  
 जो निश्रान तहे होइहि छारा । माटिहि पोखि मरे को मारा ? ॥  
 का भूला एहि चदन चेवा । धैरी जहा अग कर रोवा ॥  
 हाथ, पाँव, सरवन औ औखी । ए सब उडा भरहि मिलि साखी ॥  
 सुत सुत तन बोलहि दोखू । कहु कैसे होइहि गति मोखू ॥  
 जो मल होत राज औ भोगू । गोपिचद नहि साधत जोगू ॥  
 उन्ह हिय-दीठि जो देख परेवा । तजा राज कजरी-वन सेवा ॥

देखि अत अस होइहि गुरु दीन्ह उपदेस ।

सिषलदीप जाव हम माता देहु अदेस ॥

रोवहि नागमती रनिवास् । केह तुम्ह कत दीन्ह वनवास् ॥  
 अरु को हमहि करहि भोगिनी । हमहूँ साथ होव जोगिनी ॥  
 की हम लावहु अपने साथ । की अरु मारि चलहु सेह हाथा ॥  
 तुम्ह अस बिल्लुरे पीउ विरीता । जहँवों राम तहाँ सग सीता ॥  
 जो लहि जिउ संग छाड़ि न काया । करिहों सेव पखरिहों पाया ॥  
 भलेहि पदमिनी रूप अनूपा । हम ते कोइ न आगरि रूपा ॥  
 भँवै भलेहि पुरुखन कै डीठी । जिनहि जान तिन्ह दीन्ही पीठी ॥

देहि असीस सबै मिलि तुम्ह माये निति छात ।

राज करहु चितउरगढ राखहु पिय अहिवात ॥

तुम्ह तिरिया मति हीन तुम्हारी । मूरुख से जो मँतै घर नारी ॥  
 राषव जो सीता संग लाई । रावन हरी, कौन सिधि पाई ? ॥  
 यह ससार सपन कर लेखा । बिल्लुरि गए जानौ नहि देखा ॥  
 राजा भरथरि सुना जो ज्ञानी । जेहि के घर सोरह सै रानी ॥  
 कुच लीन्हें तरवा सहराई । भा जोगी, कोउ सग न लाई ॥  
 जोगिहि काह भोग सौँ काजू । चहै न धन घरनी औ राजू ॥  
 जूड कुरकुटा भीखहि चाहा । जोगी तात भात कर, काहा ? ॥

कहा न मानै राजा तजी सवाई भीर ।

चला छाँड़ि कै रोवत फिरि के देह न धीर ॥

रोवत माय न बहुरत बारा । रतन चला, घर भा अंधियारा ॥  
 • बार मोर जो राजहि रता । सो लै चला, सुआ परवता ॥  
 रोवहि रानी, तजहि पराना । नोचहि बार, करहि खरिहाना ॥  
 चूरहि गिउ, अमरन-उर हारा । अब का पर हम करव सिंगारा ।  
 जा कह कहहि रहसि कै पीऊ । सोइ चला, काकर यह जीऊ ॥  
 मरै चहहि, पर मरै न पावहि । उटै आगि सब लोग बुभावहि ॥  
 घरी एक सुठि भएउ अंदोरा । पुनि पाछे बीता होइ रोरा ॥

दूटै मन नै मोती फूटे मन दास काँच ।

लौन्ह समेटि एक अमरन होइगा दुख कर नाच ॥

निकसा राजा सिगी पूरी । छौंड़ नगर मेलि कै धूरी ॥  
 राय रान सब भये बियोगी । सोरह सहस कुंवर भए जोगी ॥  
 माया मोह हरा सेइ हाथा । देखेन्हि बूझि निआन न साथी ॥  
 छौं डेन्हि लोग कटुं सब कोऊ । भए निनार सुख दुख तजि दोऊ ॥  
 सँवरै राजा सोइ अकेला । जेहि के पंथ चले होइ चेला ॥  
 नगर नगर औ गोंवहि गोंवों । छौंड़ि चले सब ठोंवहि ठावों ॥  
 का कर मड, का कर घर माया । ता कर सब जाकर जिउ माया ॥

चला कटक जोगिन्ह कर कै गेरुआ सब भेसु ।

कोस बीस चारिहु दिसि जानौ फूला टेसु ॥

आगे सगुन सगुनियै ताका । दहिने माछ रूप के टोंका ॥  
 भरे कलस तरुनी जल आई । 'दहिउ लेहु' ग्वालनि गोहराई ॥  
 मालिनि आव मौर लिए गोंथे । खजन बैठ नाग के माथे ॥  
 दहिने मिरिग आइ बन धाएँ । प्रतीहार बोला खर बाएँ ॥  
 बिरिख सँवरिया दहिने बोला । बाएँ दिसा चाषु चरि बोला ॥  
 बाएँ अकासी धौरी आई । लोवा दरस आइ दिखराई ॥  
 बाएँ कुररी दहिने कूचा । पहुँचै भुगुति जैस मन रुचा ॥

जा कह सगुन होहि अस औ गवनै जेहि आस ।

अस्ट महासिधि तेहि कह जस कवि कहा वियास ॥

भएउ पयान चला पुनि राजा । सिग-नाद जोगिन कर बाजा ॥  
 कहेन्हि आजु किछु थोर पयाना । काल्हि पयान दूरि है जाना ॥  
 ओहि मिलान जौ पहुँचै कोई । तब हम कहव पुरुष भल सोई ॥  
 है आगे परवत कै बाटा । विषम पहार अगम सुठि घाटा ॥  
 बिच बिच नदी खोह औ नारा । ठोंवहि ठोंव वैठि बटपारा ॥  
 हनुवंत केर सुनव पुनि होंका । दहुँ को पार होइ, को थाको ॥  
 अस मन जानि सँभारहु आगू । अगुआ केर होहु पछलागू ॥

करहि पयान मोर उठि पथ केस दम जाहि ।

पयी पयी जे चलहि ते का रहहि ओठाहि ॥

करहु दीठि थिर होइ वटाऊ । आगे देखि घरहु भुइ पाऊ ॥

जो रे उवट होइ परे भुलाने । गए मारि, पथ चलै न जानै ॥

पौयन पहिरि लेहु सब पौरी । काँट घसै, न गडै अँकरौरी ॥

परे आइ वन परवत माहों । दडाकरन बीभा-वन जाहा ॥

सघन ठाँख वन चहुँ दिसि फूला । बहु दुख पाव उहाँ कर भूला ॥

भोखर जहाँ सो छोड़हु पथ । हिलगि मकैइ न फारहु कथा ॥

दहिने निदर, चँदेरी बाएँ । दहुँ कहँ होइ वाट दुइ ठाएँ ॥

एक वाट गइ सिधल, दुसरि लंक समीप ।

हैं आगे पथ दूझौ दहुँ गौनव केहि दीप ॥

ततखन बोला सुआ सरेखा । अगुआ सोइ पंथ जेइ देखा ॥

सो का उडै न जेहि तन पोंखु । लेइ सो परासहि बूडत साखू ॥

जस अंधा अधै कर सगी । पथ न पाव होइ सहलगी ॥

सुनु मत, काज चहसि जौ साजा । बीजानगर विजयगिरि साजा ॥

पहुँचौ जहाँ कुड औ गोला । तजि बाएँ अंधियार खटोला ॥

दक्खिनवन दहिने रहहि तिलगा । उत्तर बाएँ गढ़-कांगा ॥

मोझ रतनपुर सिधदुवारा । भारखड देइ वाँव पहारा ॥

आगे पाव उडैसा बाएँ दिये सो वाट ।

दहिनावरत देइ कै उत्तर समुद कै घाट ॥

होत पयान जाइ दिन केरा । मिरिगारन महँ भयउ बसेरा ॥

कुस-साँथरि भइ सौर सुपेती । करवट आई वनी भुइँ सेंती ॥

चलि दस कोस ओस तन भीजा । कया मिलि तेहि भसम मलीजा ॥

ठाँव ठाँव सब सोआहि चेला । राजा जागै आपु अकेला ॥

जेहि के हिए पेम-रंग जामा । का तेहि भूख नींद बिसरामा ॥

वन अंधियार, रैन अंधियारी । भादों विहर भएउ अति भारी ॥

किंगरी हाथ गहे बैरागी । पाँच तहु धुनि ओही लागी ॥

नैन लाग तेहि मारग पदमावति जेहि दीप ।

जैस सेवातिहि सेवै वन चातक जल सीप ॥



## बोहित खंड

सो न डोल देखा गजपती । राजा सत्त दत्त हुहुँ सँती ॥  
 अपनेहि कया, अपनेहि कंथा । जीउ दीन्ह अगुमन तेहि पथा ॥  
 निहचै चला भरम जिउ खोई । साहस जहाँ सिद्धि तहाँ होई ॥  
 निहचै चला छोंड़ि कै राजू । बोहित दीन्ह, दीन्ह सब साजू ॥  
 चढ़ा बेगि, तब बोहित पेले । धनि सो पुरुष पेम जेह खेले ॥  
 प्रेम-पथ जौ पहुँचै पारा । बहुरि न मिलै आइ एहि छारा ॥  
 तेइ पावा उत्तिम कैलास । जहाँ न मीजु, सदा सुख-वास ॥

एहि जीवन कै आस का? जस सपना पल आधु ।

मुहमद जियतहि जे मुए तिन्ह पुरुषन्ह कै साधु ॥

जस बन रँगि चलै गज-ठाटी । बोहित चले, समुद्र गा पाटी ॥  
 धावहि बोहित मन उपराहीं । सहस कोस एक पल महँ जाहीं ॥  
 समुद्र अपार सरग जनु लागा । सरग न घाल गनै बैरागा ॥  
 ततखन चाल्हा एक देखावा । जनु धौला गिरि परबत आवा ॥  
 उठी हिलोर जो चाल्ह नराजी । लहरि अकास लागि भुईं बाजी ॥  
 राजा सँती कुँवर सब कहही । अस अस मच्छ समुद्र महँ अहही ॥  
 तेहि रे पथ हम चाहहि गवना । होहु सँजत बहुरि नहीं अवना ॥

गुरु हमार तुम्ह राजा, हम चेला तुम्ह नाथ ।

जहाँ पाँव गुरु राखै चेला राखै माथ ॥

केवट से सो सुनत गवेजा । समुद्र न जानु कुर्वो कर मेजा ॥

यह तौ चाल्ह न लागै कोहू । का कहिहौ जब देखिहौ रोहू ? ॥

सो अबहीं तुम्ह देखा नाहीं । जेहि मुख ऐसे सहस समाहीं ॥

राजपखि तेहि पर मेंडराहीं । सहस कोस तिन्ह कै परछाहीं ॥

तेइ ओहि मच्छ ठोर भरि लेही । सावक-मुख चारा लेइ देही ॥

गरजै गगन पखि जब बोला । डोल समुद्र डैन जब डोला ॥

तहाँ चोंद औ सर असूफा । चढै सोइ जो अगुमन बूफा ॥

दस महँ एक जाइ कोइ करम, धरम, तप, नेम ।

बोहित पार होइ जब तबहि कुसल औ खेम ॥

राजै कहा कीन्ह मैं पेमा । जहाँ पेम कहँ कुसल खेमा ॥

तुम्ह खेवहु जौ खेवै पारहु । जैसे आपु तरहु मोहि तारहु ॥

मोहि कुसल कर सोच न ओता । कुसल होत जौ जनम न होता ॥

धरती सरग जॉत-पट दोरु । जो तेहि बिच जिउ राख न कोरु ॥  
 हौ अन्न कुसल एक पै मॉगौ । पेम-ग्रथ सत बॉधि न खागौ ॥  
 जौ सत हिय तौ नयनहि दीया । समुद न डरै पैठि मरजीया ॥  
 तहँ लागि हेरौ समुद ढढोरी । जहँ लागि रतन पदारथ जोरी ॥  
 सत पतर खोजि कै काढौ वेद गरथ ।  
 सात सरग चडि धावौ पदमावति जेहि पथ ॥

-----

## सात समुद्र खंड

सायर तरै हिये सत पूरा । जौ जिउ सत, कायर पुनि सूर ।  
 तेह सत बोहित कुरी चलाए । तेह सत पवन पख जनु लाए ॥  
 सत साथी सत कर ससारू । सत्त खेइ लेइ लावै पारू ॥  
 सत्त ताक सब आगू पाछू । जहँ जहँ मगर मच्छ औ काछू ॥  
 उठै लहरि जनु ठाढ पहारा । चढै सरग औ परै पतारा ॥  
 डोलाह बोहित लहरै खाहीं । खिन तर होहि, खिनहि उपराहीं ॥  
 राजै सो सत हिरदै नोंधा । जेहि सत टेकि करै गिरि काधा ॥

खार समुद्र सो नोंधा आए समुद्र जहँ खीर ।

मिले समुद्र वै सातौ बेहर बेहर नीर ॥

खीर समुद्र का बरनौ नीरू । सेत सरूप पियत जस खीरू ॥  
 उलथाह मानिक, मोती, हीरा । दरब देखि मन होइ न थीरा ॥  
 मनुआ चाह दरब औ भोगू । पथ भुलाइ बिनासै जोगू ॥  
 जोगी होइ मनहिँ सो सँभारै । दरब हाथ कर समुद्र पवारै ॥  
 दरब लेइ सोई जो राजा । जो जोगी तेहि के केहि काजा ? ॥  
 पथिहि पथ दरब रिपु होई । ठग, बटपार, चोर संग सोई ॥  
 पथी सो जो दरब सौँ रुसे । दरब समेटि बहुत अस मूसे ॥

खीर-समुद्र सो नोंधा, आए समुद्र-दधि मोंह ।

जो हैं नेह क बाउर तिन्ह कहँ धूप न छोंह ॥

दधि-समुद्र देखत तस दाधा । पेम क लुबुध दगध पै साधा ॥  
 पेम जो दाधा धनि वह जीऊ । दधि जामाइ मथि काढै धीऊ ॥  
 दधि एक बूँद जाम सब खीरू । कौंजी-बूँद बिनसि होइ नीरू ॥  
 सँस डोंडि मन मथनी गाढी । हिये चोट बिनु फूट न साड़ी ॥  
 जेहि जिउ पेम चँदन तेहि आगी । पेम बिहून फिरै डर भागी ॥  
 पेम कै आगि जरै जौ कोई । दुख तेहि कर न अँविरथा होई ॥  
 जो जानै सत आपुहि जरै । निसत हिये सत करै न पारै ॥

दधि-समुद्र पुनि पार मे, पेमहि कहा सँभार ?

भावै पानी सिर परै, भावै परै अँगार ॥

आए उदधि समुद्र अपारा । धरती सरग जरै तेहि भारा ॥  
 आगि जो उपनी ओही समुदा । लका जरी ओहि एक बुंदा ॥  
 विरह जो उपना ओहि-तँ गाढा । खिन न बुझाइ जगत महँ बाढा ॥  
 जहँ सो विरह आगि कह डीठी । सौह जरै, फिरि देइ न पीठी ॥

जग महँ कठिन खडग कै धारा । तेहि तें अधिक विरह कै भारा ॥  
अग्रम पथ जो ऐम न होई । साध किए पावै सब कोई ॥  
तेहि समुद्र महँ राजा परा । जरा चहै पै रोवँ न जरा ॥

तलफै तेल कराह जिमि इमि तलफै सब नीर ।

यह जो मलयगिरि प्रेम कर बेधा समुद्र समीर ॥

सुरा-समुद्र पुनि राजा आवा । महुआ मद-छाता देखरावा ॥  
जो तेहि पियै सो भाँवरि लेई । सीस फिरै, पथ पैगु न देई ॥  
पेम-सुरा जेहि के हिय माहों । कित बैठे महुआ कै छाहों ॥  
गुरु के पास दाख-रस रसा । बैरी बजुर मारि मन कसा ॥  
विरह के दगध कीन्ह दन भाठी । हाइ जराइ दीन्ह जस काठी ॥  
नैन-नीर सौं पोता किया । तस मद चुवा करा जस दिया ॥  
विरह सरागन्हि भूँजै भाँसू । गिरि गिरि परै रक्त कै आँसू ॥  
मुहमद मद जो पेम कर गए दीप तेहि साध ।

सास न देइ पतग होइ तौ लागि लहै न खाध ॥

पुनि किलकिला समुद्र महँ आए । गा धीरज, देखत डर खाए ॥  
भा किलकिल अस उठै हिलोरा । जनु अकास टूटै चहुँ ओरा ॥  
उठै लहरि परवत कै नाई । फिरि आवै जोजन सौ ताई ॥  
धरती लेह सरग लहि बाढा । सकल समुद्र जानहुँ भा ठाढा ॥  
नीर होइ तर ऊपर सोई । माये रभ समुद्र जस होई ॥  
फिरत समुद्र जोजन सौ ताका । जैसे भैवै कोहार क चाका ॥  
मैं परलै नियराना जबहीं । मरै जो जय परलै तेहि तबहीं ॥

गै औसान सबन्ह कर देखि समुद्र कै बाढि ।

नियर होत जनु लीलै रहा नैन अस काढि ॥

हीरामन राजा सौं बोला । एही समुद्र आए सत डोला ॥  
सिंघलदीप जो नाहि निबाहू । एही ठाँव साँकर सब काहू ॥  
एहि किलकिला समुद्र गभीरू । जेहि गुन होइ सो पावै तीरू ॥  
इहे समुद्र-पंथ मँभधारा । खाँडे कै असि धार निनारा ॥  
तीस सहस्र कोस कै पाटा । अस साँकर चलि सकैन चोटा ॥  
खाँडें चाहि पैनि बहुताई । वार चाहि ताकर पतराई ॥  
एही ठाँव कहँ गुरु सँग लीजिय । गुरु सँग होइ पार तौ कीजिय ॥  
मरन जियन एही पथहि एही आस निरास ।

परा सो गयउ पतारहि, तरा सो गा कैलास ॥

राजै दीन्ह कटक कहँ बीरा । सुपुरुष होहु, करहु मन धीरा ॥  
ठाकुर जेहिक सूर भा कोई । कटक सूर पुनि आपुहि होई ॥  
जौ लहि सता न जिउ सत बाँधा । तौ लहि देह कहँर न काँधा ॥

पेम-समुद्र महँ बाँधा बेरा । यह सब समुद्र बूँद जेहि केरा ॥  
 ना हौँ सरग न चाहौँ राजू । ना मोहि नरक सँति किछु काजू ॥  
 चाहौँ ओहि कर दरसन पावा । जेह मोहिँ आनि पेम-पथ लावा ॥  
 काठहि काह गाढ का डीला । बूड़ न समुद्र, मगर नहि लीला ॥  
 कान समुद्र धेसि लीन्हैसि भा पाछे सब कोइ ।

कोइ काहू न सँभारै आपनि आपनि होइ ॥

कोइ बोहित जस पौन उड़ाहीं । कोई चमकि बीजु अस जाहीं ॥  
 कोई जस भल धाव तुखारू । कोई जैस बैल गरियारू ॥  
 कोई जानहुँ हरुआ रथ हाँका । कोई गरुअ भार बहु थाका ॥  
 कोई रेगहिँ जानहुँ चाँटी । कोई दूटि होहिँ तर माटी ॥  
 कोई खाहिँ पौन कर भोला । कोई करहिँ पात अस डोला ॥  
 कोई परहिँ भौर जल माहा । फिरत रहहिँ, कोइ देह न बाहाँ ॥  
 राजा कर भा अगमन खेवा । खेवक आगे सुआ परेवा ॥

कोइ दिन मिला सवेरे कोइ आवा पछ-राति ।

जा कर जस जस साजु हुत सो उसरा तेहि भाँति ॥

सतएँ समुद्र मानसर आए । मन जो कीन्ह साहस, सिधि पाए ॥  
 देखि मानसर रूप सोहावा । हिय हुलास पुरइनि होइ छावा ॥  
 गा अँधियार, रैन-मसि कूटी । भा भिनसार किरिन-रवि फूटी ॥  
 'अस्ति अस्ति' सब साथी बोले । अँध जो अहे नैन विधि खोले ॥  
 कवँल बिगस तस बिहँसी देहीं । भौर दसन होइ कै रस लेहीं ॥  
 हँसहिँ हँस औ करहिँ कियोरा । चुनहिँ रतन मुकुताहल होरा ॥  
 जो अस आव साधि तप जोगू । पूजै आस, मान रस भोगू ॥

भौर जो मनसा मानसर लीन्ह कँवलरस आइ ।

धुन जो हियाव न कै सका भूर काठ तस खाइ ॥

## पद्मावती-वियोग खंड

पद्मावति तेहि जोग सँजोगा । परी पेम-बस गहे वियोगा ॥  
 नीद न परै रैनि जाँ आवा । सेज कँवाच जानु कोइ लावा ॥  
 दहे चद और चदन चीरु । दगध करै तन विरह गँभीरु ॥  
 कलप समान रैनि तेहि वाढ़ी । तिल तिल भर जुग जुग जिमि गाढ़ी ॥  
 गहे बीन मकु रैनि बिहाई । ससि बाहन तहँ रहै ओनाई ॥  
 पुनि धनि सिंध उरेहै लागै । ऐसिहि विधा रैनि सब जागै ॥  
 कह वह भौर कँवल रस-लेवा । आइ परै होइ धिरिनि परेवा ॥

से धनि विरह-पतंग भइ, जरा चहै तेहि दीप ।

कत न आव भिरिंग होइ, का चदन तन लीप ॥

परी विरह बन जानहुँ घेरी । अगम अरु अहँ लागि हेरी ॥  
 चतुर दिसा चितवै जनु भूली । सो बन कहँ जहँ मालति फूली ? ॥  
 कँवल भौर ओही बन पावै । को मिनाइ तन-तपनि बुझावै ? ॥  
 अग अंग अस कँवल सरीरा । हिय भा पियर कहै पर-पीरा ॥  
 चहै दरस, रवि कीन्ह बिगास । भौर-दीठि मनो लागि अकास ॥  
 पूँछै धाय, बारि कहु बाता । तुहँ जस कँवल फूल रँग राता ॥  
 केसर बरन हिया भा तोरा । मानहुँ मनहिं भएउ किछु भोरा ॥

पौन न पावै संचरै, भौर न तहाँ बईठ ।

भूलि कुरगिनि कस भई, जानु सिंध तुहँ दीठ ॥

धाय सिंध बरु खातेउ मारी । की तसि रहति अही जसि बारी ॥  
 जोवन सुनेउँ कि नवल बसत । तेहि बन परेउ हस्ति मैमत ॥  
 अब जोवन-बारी को राखा । कुँजर-विरह बिघसै साखा ॥  
 में जानेउँ जोवन रस भोगू । जोवन कठिन सँताप वियोगू ॥  
 जोवन गरुअ अपेल पहारू । सहि न जाइ जोवन कर भारू ॥  
 जोवन अस मैमत न कोई । नवँ हस्ति जाँ आँकुस होई ॥  
 जोवन भर भादौँ जस गगा । लहरै देह, समाइ न अंगा ॥  
 परिउँ अथाह, धाय । हौँ, जोवन-उदधि भीर ।

तेहि चितवौँ चारिहुँ दिसि जो गहि लावै तीर ॥

पद्मावति तुहँ समुद सयानी । तोहि सरि समुद न पूजै, रानी ॥  
 नदी समाहिँ समुद महँ आइ । समुद डोलि कहु कहाँ समाई ? ॥  
 अबहाँ कँवल-करी हिय तोरा । आइहि भौर जो तो कहँ जोरा ॥  
 जोवन-तुरी हाथ गहि लीजिय । जहाँ जाइ तहँ जाइ न दीजिय ॥

जोवन जोर मात गज अहै । गहहु शान-आकुस जिमि रहै ॥  
 अन्हि बारि तुहँ पेम न खेला । का जानसि कस होइ दुहेला ॥  
 गगन दीठि कस नाइ तराहीं । सुरज देखु कर आवै नाहीं ॥  
 जब लागि पीउ मिलै नहि साधु पेम कै पीर ।  
 जैसे सीप सेवाति कहँ तपै समुद मंभू नीर ॥

दहै, धाय जोवन एहि जीऊ । जानहुँ परा अगिनि महँ धीऊ ॥  
 करवत सहौँ होत दुइ आधा । सहि न जाइ जोवन कै दाधा ॥  
 बिरह समुद्र भरा असेभारा । भौर मेलि जिउ लहरिन्ह मारा ॥  
 बिरह नाग होइ सिर चढि डसा । होइ अगिनि चदन महँ बसा ॥  
 जोवन पखी, बिरह बियाधू । केहरि भएउ कुरगिनि-खाधू ॥  
 कनक-पानि किन जोवन कीन्हा । औटन कठिन बिरह ओहि दीन्हा ॥  
 जोवन-जलहि बिरह मसि छुआ । फूलहि भौर, फरहि भा सूआ ॥  
 जोवन चाँद उआ जस बिरह भएउ संग राहु ।

घटतहि घटत छीन भइ, कहै न पारौँ काहु ॥

नैन ज्यों चक्र फिरे चहुँओरा । बरजै धाय, समाहि न कारा ॥  
 कहेसि पेम जौँ अपना, बारी । बाँधु सत्त, मन डोल न भारी ॥  
 जेहि जिउ महँ होइ सत्त पहारू । परै पहार न बोकै बारू ॥  
 सती जो जरै पेम सत लागी । जौँ सत हिय तौ सीतल आगी ॥  
 जोवन चाँद जो चौदस-करा । बिरह के चिनगी सो पुनि जरा ॥  
 पौन बंध सो जोगी जती । काम बंध सो कामिनी सती ॥  
 आव बसंत फूल फुलवारी । देव बार सब जैहँ बारी ॥

तुम्ह पुनि जाहु बसत लेइ पूजि मनावहु देव ।

जीव पाइ जग जनम है पीउ पाइ कै सेव ॥

जब लागि अवधि आइ नियराई । दिन जुग जुग बिरहिनि कहँ जाई ॥  
 भूख नोद निसि दिन गै दोउ । हियै मारि जस कलपै कोऊ ॥  
 रोवँ रोवँ जनु लागहि चाँटे । सूत सूत बेधहि जनु काँटे ॥  
 दगधि कराह जरै जस धीऊ । बेगि न आव मलयगिरि पीऊ ॥  
 कौन देव कहँ जाइ कै परसौँ । जेहि सुमेरु हिय लाइय कर सौँ ॥  
 गुप्त जो फूलि साँस परगटै । अब होइ सुभर दहहि हम्ह घटै ॥  
 भा संजोग जो रे भा जरना । भोगहि गए भोगि का करना! ॥

जोवन चंचल ढीठ है, करै निजाजे काज ।

धनि कुलवति जो कुल धरें कै जोवन मन लाज ॥

## पद्मावती सुत्रा भेंट खंड

तेहि वियोग हीरामन आवा । पदमावति जानहुँ जिउ पावा ॥  
 कंठ लाह सूत्रा सौं रोई । अधिक मोह जौं मिलै बिछोही ॥  
 आगि उठे दुख हिये गँभीरू । नैनहिं आइ चुवा होइ नीर ॥  
 रही रोइ जब पदमिनि रानी । हंसि पूछुहिं सव सखी सयानी ॥  
 मिले रहस भा चाहिय दूना । कित रोइय जौं मिलै बिछूना? ॥  
 तेहि क उतर पदमावनि कहा । विछुरन दुख जो हिए भरि रहा ॥  
 मिलत हिए आएठ सुख भरा । वह दुख नैन-नीर होइ दरा ॥

विछुरता जब मँटै सो जानै जेहि नेह ॥

सुकल सुहेल उगवै दुःख भरै जिमि मेह ॥

पुनि रानी हंसि कूसल पूछा । कित गवनेहु पीजर कै छूँछा ॥  
 रानी तुम्ह जुग जुग सुख पाइ । छाज न पखिहि पीजर-ठाइ ॥  
 जब भा पख कहों थिर रहना । चाहे उड़ा पखि जौ डहना ॥  
 पीजर महेँ जो परेवा घेरा । आइ मजारि कीन्ह तहेँ फेरा ॥  
 दिन एक आइ हाथ पै मेला । तेहि डर बनोबास कहेँ खेला ॥  
 तहाँ बियाध आइ नर साधा । छूटि न पाव मोचु कर बाँधा ॥  
 वै धरि वेचा बाम्हन हाथा । जबूदीप गएउँ तेहि साथा ॥  
 तहाँ चित्र चितउरगढ़ चित्रसेन कर राज ।

टीका दीन्ह पुत्र कहेँ आपु लीन्ह सिव साज ॥

बैठ जो राज पिता के ठाऊँ । राजा रतनसेन ओहि नाऊ ॥  
 बरना काह देस मनियारा । जहेँ अस नग उपना उंजियारा ॥  
 धनि माता औ पिता बखाना । जेहि के बस अस अस आना ॥  
 लछन बतीसौ कुल निरमला । वरनि न जाइ रूप औ कला ॥  
 वै हौं लीन्ह, अहा अस भागू । चाहे सोने मिला सोहागू ॥  
 सो नग देखि हीँछा भइ मोरी । है यह रतन पदारथ जोरी ॥  
 है ससि जोग इहेँ पै भानू । तहाँ तुम्हार मैं कीन्ह बखानू ॥

कहाँ रतन रतनागर, कचन कहों सुमेर ।

दैव जो जोरी दुहुँ लिखी मिलै सो कौनेहु फेर ॥

सुनत बिरह-चिनगी ओहि परी । रतन पाव जौं कचन-करी ॥  
 कठिन पेम बिरहा दुख भारी । राज छाँड़ि भा जोगि भिखारी ॥  
 मालति लागि भौर जस होई । होइ वाउर निसरा बुधि खोई ॥  
 कहेसि पतग होइ धनि लेऊँ । सिधलदीप जाइ जिउ देऊ ॥



पुनि ओहि कोउ न छाँड़ अकेला । सोरह सहस कुँवर भए चेला ॥  
 और गने को सग सहाई ? महादेव मढ मेला जाई ॥  
 सूरज पुरुष दरस के ताई । चितवै चद चकेर कै नाई ॥  
 तुम्ह बारी रस जोग जेहि, कँवलहि जस अरघानि ।

तस सूरज परगास कै भौर मिलाएउ आनि ॥

हीरामन जो कही यह बाता । सुनिकै रतन पदारथ राता ॥  
 जस सूरज देखे होइ ओपा । तस भा बिरह, कामदल कोपा ॥  
 सुनि कै जोगी केर बखानू । पदभावति मन भा अभिमानू ॥  
 कंचन करी न काँचहि लोभा । जौ नग होइ पाव तब सोभा ॥  
 कचन जौ कसिए कै ताता । तब जानिय दहूँ पीत कि राता ॥  
 नग कर भरम सो जड़िया जाना । जड़े जो अस नग देखि बेखाना ॥  
 को अब हाथ सिंध मुख घालै । को यह बात पिता सौँ चालै ॥  
 सरग इद्र डरि कपि बासुकि डरै पतार ।

कहा सो अस वर प्रियिमी मोहि जोग ससार ॥

तू रानी ससि कचन-करा । वह नग रतन सूर निरमथ ॥  
 बिरह-बजागि बीच का कोई । आगि जो लुचै जाइ जरि सोई ॥  
 आगि बुझाइ परे जल गाढे । वह न बुझाइ आपु ही बाढ़ै ॥  
 बिरह के आगि सूर जरि कापा । रातिहि दिवस जरै ओहि तापा ॥  
 खिनहि सरग, खिन जाइ पतारा । थिर न रहै एहि आगि अपारा ॥  
 धनि सो जीउ दगध इमि सहे । अकसर जरै, न दूसर कहे ॥  
 सुलगि सुलगि भीतर होइ सारवाँ । परगट होइ न कहे दुख नारवाँ ॥  
 काह कहौ हौँ ओहि सौँ जेह दुख कीन्ह निमेट ।

तेहि दिन आगि करै घह बाहा जेहि दिन होइ सो भेट ॥

सुनि कै धनि, 'जारी अस कया' । तब मा मयन हिये भै मया ॥  
 देखौ जाइ जरै कस भानू । कचन जरे अधिक होइ बानू ॥  
 अब जौ मरै वह पेम-वियोगी । हत्या, मोहि जेहि कारन जोगी ॥  
 सुनि कै रतन पदारथ राता । हीरामन सौँ कह यह बाता ॥  
 जौ वह जोग सभारै छाला । पाइहि सुगुति, देहूँ जैमाला ॥  
 आव बसत कुसल जौ पावौँ । पूजा मिस मडप कहँ आवौँ ॥  
 गुरु के बैन फूल हौँ गाँधि । देखौ नैन, चढावौँ माये ॥  
 कबल भँवर तुम्ह बरना मैं माना पुनि सोइ ।

चाँद सूर कहँ चाहिय जौ रे सूर घह होइ ॥

हीरामन जो सुना रस बाता । पावा पान भएउ मुख राता ॥  
 चला सुआ, रानी तब कहा । भा जो परावा कैसे रहा ? ॥  
 जो नीति चलै सँवारे पाखा । आजु जो रहा, काल्हि को राखा ? ॥

न जनौं आशु कहाँ दुहुँ ऊआ । आएहु मिलै, चलेहु मिलि, सुआ ॥  
 मिलि कै बिलुर मरन कै आना । कित आएहु जौं चलेहु निदाना? ॥  
 सुनु रानी हौं रहतेउँ राधा । कैसे रहौं यचन कर बाँधा ॥  
 ता करि दिस्टि ऐसि तुम्ह सेवा । जैसे कुँज मन रहै परेवा ॥  
 बसै मीन जल घरती आवा बसै अकास ।

जौ पिरित पै दुवौ महँ अत होहि एक पास ॥

आवा सुआ बैठ जहँ जोगी । मारग नैन, बियोग बियोगी ॥  
 आइ पेम-रस कहा सँदेसा । गोरख मिला, मिला उपदेसा ॥  
 तुम्ह कहँ गुरू मया बहु कीन्हा । कीन्ह अदेस, आदि कहि दीन्हा ॥  
 सबद, एक उन्ह कहा अकेला । गुरु जस भिग फनिग जस चेला ॥  
 भिगी ओहि पाँखि पै लेई । एकहि वार छीनि जिउ देई ॥  
 ताकहँ गुरु करै असि माया । नव औतार देइ, नव काया ॥  
 होइ अमर जो मरि कै जीया । भौर कवल मिलि कै मधु पीया ॥

आवै ऋतु वसत जब तब मधुकर, तब वासु ।

जोगी जोग जो हमि करै सिद्धि समापत तासु ॥



## पार्वती-महेश खंड

ततखन पहुँचे आइ महेश् । बाहन बैल-कुस्टि कर भेस ॥  
 काथरि कथा, हड़ावरि बाधे । मुड-माल औ हत्या काधे ॥  
 सेसनाग- जाके कठमाला । तनु भभूति, हस्ती कर छाला ॥  
 पहुँची रुद्र कर्बल कै गटा । ससि माथे औ सुरसरि जटा ॥  
 चँवर, घट औ डँवरू हाथा । गौरा पारवती धनि साथा ॥  
 औ हनुवत वीर संग आवा । धरे भेस बाँदर जस छावा ॥  
 अवतहि कहेन्हि न लावहु आगी । तेहि कै सपथ जरहु जेहि लागी ॥  
 की तप करै न पारेहु, की रे नसाएहु जोग ? ।

जियत जीउ कस काढहु ? कहहु सो मोहि बियोग ।

कहेसि मोहि बातन्ह बिल्लभावा । हत्या केरि न उर तोहि आवा ॥  
 जरै देहु, दुख जरौ अपारा । निस्तर पाइ जाउँ एक बारा ॥  
 जस भरथरी लागि पिगला । मो कहँ पदमावलि सिधला ॥  
 मैं पुनि तजा राज औ भागू । सुनि सो नावँ लीन्ह तप जोगू ॥  
 एहि मढ सेएउँ आइ निरासा । गइ सो पूजि, मन पूजि न आसा ॥  
 तैं यह जिउ डाढे पर दाधा । आधा निकसि रहा घट आधा ॥  
 जो अधजर सो बिल्लव न लावा । करत बिलाव बहुत दुख पावा ॥  
 एतना बोल कहत मुख उठी बिरह कै आगि ।

जौँ महेश न बुभावत जाति सकल जग लागि ॥

पारवती मन उपना चाऊ । देखौँ कुँवर केर सत भाऊ ॥  
 ओहि एहि बीच, कि पेमहि पूजा । तन मन एक कि मारग दूजा ॥  
 भइ सुरूप जानहुँ अपछरा । बिहँसि कुँवर कर आँचर घर ॥  
 सुनहु कुँवर मो सौँ एक बाता । जस मोहि रग न औरहि राता ॥  
 औ बिधि रूप, दीन्ह है तोका । उठा सो सबद जाइ सिव-लोका ॥  
 तब हौँ तोपहँ इद्र पठाई । गइ पदमिनि, तैं अछरी पाई ॥  
 अब तजु जरन, मरन, तप, जोगू । मोसौँ मानु जनम भरि भोगू ॥

हौ अछरी कैलास कै जेहि सरि पूज न कोइ ।

मोहि तजि सँवरि जो ओहि मरसि, कौन लाभ तोहि होइ ? ॥  
 भलेहि रंग अछरी तोर राता । मोहि दुसरे सौँ भाव न बाता ॥  
 मोहि ओहि सँवरि मुए तस लाहा । नैन जो देखसि पूछसि काहा ? ॥  
 अबहि ताहि जिउ देइ न पावा । तोहि असि अछरी ठाढि मनावा ॥  
 जौँ जिउ देइहौँ ओहि कै आसा । न जानौँ काह होइ कैलासा ॥

हौ कैलास काह लै करऊँ । सोइ कैलास लागि जेहि मरऊँ ॥  
ओहि के बार जीउ नहि चारौ । सिर उत्तारि नेवछावरि सारौ ॥  
ताकर चाह कहै जो आई । दोउ जगत तेहि देहुँ बड़ाई ॥

ओहि न मोरि किछु आसा हौ ओहि आस करेउँ ।

तेहि निरास पीतम कहँ जिउ न देउँ का देउँ ॥

गौरइ हँसि महेश सौ कहा । निहचै एहि विरहानख दहा ॥  
निहचै यह ओहि कारन तथा । परिमल पेम न ओछे छपा ॥  
निहचै पेम पर यह जागा । कसे कसौटी कचन लागा ॥  
बदन पियर जल डभकहि नैना । परगट हुवौ पेम के नैना ॥  
यह एहि जनम लागि ओहि सीभा । चहै न औरहि ओही रीभा ॥  
महादेव दंवन्ह के पिता । तुम्हरी सरन राम रन जिता ॥  
एहूँ कहँ तस मया करेहू । पुरवहु आस कि हत्या लेहू ॥

हत्या दुइ के चढ़ाए कधि बहु अपराध ।

तीसर यह लेउ माये जौ लेवै कै साध ॥

सुनि कै महादेव कै भाखा । सिद्ध पुरुष राजै मन लाखा ॥  
सिद्धहि अग न बैठे माखी । सिद्ध पलक नहि लावै आंखी ॥  
सिद्धहि सग होइ नहि छाया । सिद्धइ होइ भूख नहि माया ॥  
जेहि जग सिद्ध गोसाईं कीन्हा । परगट गुपुत रहै को चीन्हा ॥  
नैल चढ़ा कुस्टी कर मेसू । गिरजापति सत आहि महेसू ॥  
चीन्है सोइ रहै जो खेजा । जस विक्रम औ राजा भोजा ॥  
जा ओहि तत सत्त सौँ हेरा । गण्ड हेराइ जा ओहि भा मेरा ॥

बिनु गुरु पथ न पाइय भूलै सो जो भेट ।

जोगी सिद्ध होइ तब जब गोरख सौँ भेट ॥

ततखन रतनसेन गह्वरा । रोउत्र छुँडि पौव लेइ परा ॥  
मातै पितै जनम कित पाला । जो आस फाँद पेम गिउ धाला ॥  
धरनी सरग मिले हुत दोऊ । केइ निनार कै दीन्ह बिछोऊ ॥  
पदिक पदारथ कर हुँत खोवा । दूटहि रतन रतन तस रोवा ॥  
गगन मेघ जस बरसै भला । पुहुमी पूरि सलिल बहि चला ॥  
सायर दूट सिखर गा पाटा । सूक्त न बार पार कहूँ घाटा ॥  
पौन पानि होइ होइ सब गिरइ । प्रेम के फंद कोइ जनि परइ ॥  
तस रोवै तस जिउ जरै गिरै रक्त औ आँसु ।

रोवै रोवै सब रोवहि सूत सूत भरि आँसु ॥

रोवत बूडि उठा ससारू । महादेव तब भयउ मयारू ॥  
कहेन्हि न रोव बहुत तैं रोवा । अब ईसर भा दारिद खोवा ॥  
जो दुख सहै होइ सुख ओका । दुख बिनु सुख न जाइ सिबलोका ॥

अब तैं सिद्ध भएसि सिधि पाई । दरपन कया छूटि गइ काई ॥  
 कहौ बात अब हौं उपदेसी । लागु पथ भूले परदेसी ॥  
 जौ लागि चोर सेंधि नहि देई । राजा केरि न मूसै पेई ॥

कहाँ से तोहि सिंघलगढ है खंड सात चढाव ।

फिरा न कोई जियत जिउ सरग पथ देह पाव ॥

गढ़ तस बाँक जैसि तोरि काया । पुरुख देखु ओही कै छाया ॥  
 पाइय नाहिं जूझ हठि कोन्हे । जेइ पावा तेह आपुहि चीन्हें ॥  
 नौ पौरी तेहि गढ़ मफियारा । औ तहँ फिरहि पाँच कोटवारा ॥  
 दसवें दुवार गुपुत एक ताका । अगम चढ़ाव बाट सुठि बोका ॥  
 भेदै जाइ कोइ ओहि घाठी । जो लह भेद चढे छोइ चोट्टी ॥  
 गढ तर कुंड सुरंग तेहि माहौं । तँह वह पथ कहौं तेहि पाहौं ॥  
 चोर बैठ जस सेंध संवारी । जुआ पैत जस लाव जुआरी ॥

जस मरजिया समुद धँस हाथ आव तब सीप ।

ढूँढि लेइ जो सरग-दुआरी चढै सो सिंघलदीप ॥

दसवें दुआर ताल कै लेखा । उलटि दिम्टि जो लाव सो देखा ।  
 जाइ सो तहँ सौंस मन बधी । जस धसि लीन्ह कान्ह कालिदी ॥  
 तू मन नाथु मारि कै सासा । जो पै मरहि आपु करि नासा ॥  
 परगट लोकाचार कहु बाता । गुपुत लाउ मन जासौं राता ॥  
 हौं हौं कहत सत्रै मति खोई । जौ तू नाहिं आहि सब कोई ॥  
 जियतहि जुरै मरै एक बारा । पुनि का मीचु को मारै पारा ॥  
 आपुहि गुच सो आपुहि चेला । आपुहि सब औ आपु अकेला ॥

आपुहि मीच जियन पुनि आपुहि तन मन सोइ ।

आपुहि आपु करे जो चाहै कहौं सो दूसर कोइ ॥

## पदमावती-रत्नसेन-भेंट

सात खड ऊपर कैलास । तहवों नारि-सेज सुख बास ॥  
 चारि खभ चारिहु दिसि खरे । हीरा- रतन - पदारथ जरे ॥  
 मानिक दिया जरावा मोती । होइ उजियार रहा तेहिं जोती ॥  
 ऊपर राता चंदवा छावा । औ भुईं सुरंग विछान विछावा ॥  
 तेहि महँ पालक सेज सो डासी । कीन्ह विछावन फूलन्ह वासी ॥  
 चहुँ दिसि गेहुआ औ गल सूई । काँची पाट भरी धुनि रूई ॥  
 बिधि सो सेज रची केहि जोगू । केा तहँ पौढि मान रस भोगू ॥  
 अति सुकुवारी सेज सो डासी छुवै न पावै कोइ ।

देखत नवै खिनहि खिन पावै धरत कसि होइ ॥

राजै तपत सेज जो पाई । गाँठि छोरि धनि सखिन्ह छुपाई ॥  
 कहै कुँवर हमरे अस चारु । आज कुँवरि कर करत सिगारु ॥  
 हरदि उतारि चढाउत रगू । तत्र निसि चाँद सुरज सौ सगू ॥  
 जस चातक मुख बूँद सेवाती । राजा चख जोहत तेहि भोती ॥  
 जोगि छरा जनु अछुरी साया । जोग हाथ कर भएउ वेहाथा ॥  
 वै चातुरि कर लै अपसई । मत्र अमोल छीनि लेइ गईं ॥  
 बैठेउ खोंइ जरी औ बूटी । लाभ न पाव मूर भइ दूटी ॥

खाइ रहा ठग-लाइ तत मंत बुधि खोइ ।

भा धौराहर वनखंड ना हँसि आव न रोइ ॥

अस तप करत गएउ दिन भारी । चारि पहर वीते जुग चारी ॥  
 परी सोँभ पुनि सखी सो आई । चाँद रहा अपनी जो तराई ॥  
 पूँछहि गुरु कहौ रे चेला । विनु ससि रे कस सूर अकेला ॥  
 “घातु कमाय सिखे तैं जोगी । अत्र कस भा निर्घातु वियोगी ? ॥  
 “कहौ सो खोएहु विरवा लौना । जेहि तैं होइ रूप औ सोना ॥  
 “का हरतार पार नहि पावा । गधक काहे कुरकुटा खावा ॥  
 “कहा छुपाए चाद हमारा ? । जेहि विनु रैनि जगत अंधियारा ॥

नैन कौड़िया हिय समुद गुरु सो तेहि महँ जोति ।

मन मरजिया न होइ परे हाथ न आवै मोति ॥

का पूछहु तुम घातु निछोही । जो गुरु कीन्ह अंतरपट ओही ॥  
 सिधि गुटिका अब मो सँग कहा । भएउ रँग सत हिए न रहा ॥  
 सो न रूप जासौ दुख खोलौ । गएउ भरोस तहँ का बोलौ ॥  
 जहँ दौना विन्वा कै जाती । कहि कै संदेस जान को पाती ॥

कै जो पार हरतार करीजे । गधक देखि अबहि जिउ दीजे ॥  
 तुम्ह जोरा कै सूर मयक् । पुनि बिछोहि सो लीन्ह कलंक ॥  
 जो एहि घरी मिलावै मोहीं । सीस देउ बलिहारी ओही ॥  
 होइ अबरक ईगुर भया फेरि अगिनि महुँ दीन्ह ।

काया पीतर होइ कनक जो तुम चाहहु कीन्ह ॥

का बसाइ जो गुरु अस बूझा । चकाबूह अभिमनु ज्यौं जूझा ॥  
 बिष जो दीन्ह अमृत देखराई । तेहि रे निछोही को पतियाई ॥  
 मरै सोइ जो होइ निगूना । पीर न जानै विरह बिहूना ॥  
 पार न पाव जो गधक पीया । सो हत्यार\* कहौ किमि जीया ॥  
 सिद्धि-गुटीका जा पहुँ नाहीं । कौन धातु पूछहु तेहि पाहीं ॥  
 अब तेहि बाज रोग भा डोलौ । होइ सार तौ बर के बोलौ ॥  
 अबरक कै पुनि ईगुर कीन्हा । तो मन फेरि अगिनि महुँ दीन्हा ॥

मिलि जो पीतम बिहुरहि काया अगिनि जराइ ।

की तेहि मिले तन तप बुझै की अब मुए बुझाइ ॥

सुनि कै बात सखी सब हँसी । जनहुँ रैनि तरई परगसीं ॥  
 अब सो चोद गगन महुँ छपा । लालच कै कित पावसि तपा ॥  
 हमहुँ न जानहिं दहुँ सो कहौ । करब खोज औ बिनउच तहाँ ॥  
 औ अस कहब आहि परदेसी । करहि मया हत्या जनि लेसी ॥  
 पीर तुम्हारि सुनत भा छोहू । दैउ मनाउ होइ अस ओहू ॥  
 तू जोगी फिरि तपि कर जोगू । तो कहँ कौन राजसुख भोगू ॥  
 वर रानी जहवों सुख राजू । बारह अबरन करै सो साजू ॥

जोगी ढिढ़ आसन करै अहथिर धरि मन ठोव ।

जो न सुना तो अब सुनहि बारह अबरन नावँ ॥

प्रथमै मञ्जन होइ सरीरु । पुनि पहिरै तन चदन चौरू ॥  
 साजि माँग सिर सेंदुर सारै । पुनि लिलाट रचि तिलक सँवारै ॥  
 पुनि अजन दुहुँ नैनन्ह करै । औ कु डल कानन्ह महुँ पहिरै ॥  
 पुनि नासिका भल फूल अमोला । पुनि राता मुख खाइ तमोला ॥  
 गिउ अबरन पहिरै जहुँ ताई । औ पहिरे कर कँगन कलाई ॥  
 कटि छुद्रावलि अबरन पूरा । पायन्ह पहिरै पायल चूरा ॥  
 बारह अबरन अहै बखाने । ते पहिरै बरहौ अस्थानै ॥

पुनि सो रहो सिंगार जस चारिहु चौक कुलीन ।

दीरघ चारि चारि लघु चारि सुभर चौ खीन ॥

पद्मावति जो सवारै लीन्हा । पुनिउँ राति दैउ ससि कीन्हा ॥  
 करि मरुजन तन कीन्ह नहानू । पहिरे चीर गएउ छुपि भानू ॥  
 रचि पत्रावलि माँग सेंदूरू । भरे मोति और मानिक चूरू ॥  
 चदन चीर पहिर वह भाँती । मेघ घटा जानहुँ बग-भाँती ॥  
 गूँधि जो रतन माग बैसारा । जानहुँ गगन टूट निसि तारा ॥  
 तिलक लिलाट धरा तस दीठा । जनहुँ दुइज पर सुहल बईठा ॥  
 कानन्ह कुँडल खूँट औ खूटी । जानहुँ परी कचपची टूटी ॥

पहिरि जराऊ ठाढि भइ कहि न जाइ तस भाव ।

मानहुँ दर्पन गगन भा तेहि ससि तार देखाव ॥

बाँक नैन औ अजन रेखा । खजन मनहुँ सरद ऋतु देखा ॥  
 जस जस हर फेर चख मोरी । लरै सरद महँ खजन जेरी ॥  
 भौहँ धनुक धनुक पै हारा । नैनन साधि बान विप मारा ॥  
 करनफूल कानन्ह अति सोभा । ससि मुख आइ सरु जनु लोभा ॥  
 सुरंग अधर औ मिला तमोरा । सोहै पान फूल कर जेरा ॥  
 कुसुमगध अति सुरंग कपोला । तेहि पर अलक भुअगिनि डोला ॥  
 तिल कपोल अलि कवँल बईठा । वेधा सोइ जेइ वह तिल दीठा ॥

देखि सिंगार अनूप विधि बिरह चला तब भागि ।

काल कस्ट इमि ओनवा सब मोरे जिउ लागि ॥

का बरनौँ अभरन औ हारा । ससि पहिरे नखतन्ह कै मारा ॥  
 चीर चारु औ चदन चोवा । हीर हार नग लाग अमोला ॥  
 तेहि भोंपी रोमावलि कारी । नागिनि रूप डसै हत्यारी ॥  
 कुच कचुकी सिरीफल उभे । हुलसहिं चहहिं कत हिय चुभे ॥  
 बाहनह बहुँटा टाँड़ सलोनी । डोलत बाँह भाव गति लोनी ॥  
 तरवन्ह कवँल करी जनु बाँधी । बसा लक जानहुँ दुइ आधी ।  
 छुद्र घट कटि कचन तागा । चलतै उठहिं छुतीमौ रागा ॥

चूरा पायल अनवट पायन्ह परहि वियोग ।

हिप लाइ टुक हम कहँ समदहु मानहु भोग ॥

अस बारह सोरह धनि साजै । छाज न और ओहि पै छाजै ॥  
 बिनवहि सखी गहर का कीजै । जेइ जिउ दीन्ह ताहि जिउ दीजै ॥  
 सँवरि सेज धनि मन भइ सका । ठाढि तेवानि टेकि कर लका ॥  
 अनचिन्ह पिउ काँपौ मन माहाँ । का मै कहव गहव जौ बाहाँ ॥  
 बारि बैस गइ प्रीति न जानी । तरनि भई मैमल भुलानी ॥  
 जोवन गरब न मै किछु चेता । नेह न जानौ साव कि सेता ॥  
 अब सो कत जो पूछिहि बाता । कस मुख होइहि पीत कि राता ॥



हौं बारी औ दुलहिनी पीउ तदन सह तेज ।  
ना जानौं कस होइहि चढत कॅस के सेज ॥

सुनु धनि डर हिरदय तब ताई । जौ लगि रहसि मिलै नहिं साईं ॥  
कौन कली जो भौर न राई । डार डूट पुहुप गरु आईं ॥  
मातु पिता जौ बियाहै सोई । जनम निबाह कत संग होई ॥  
भरि जीवन राखै जहँ चहा । जाइ न मेंटा ताकर कहा ॥  
ताकहँ विलंब न कोजै बारी । जो पिउ-आयसु सोइ पियारी ॥  
चलहु बेगि आयस भा जैसे । कत बोलावै रहिये कैसे ॥  
मान न करसि पोढ कर लाइ । मान करत रिस मानै न चाँइ ॥

साजन लेह पढावा आयसु जाइ न मेंट ।  
तन मन जीवन साजि कै देइ चली लेह मेंट ॥

पदामिनि गवन हस गए दूरी । कुजर लाज मेल सिर धूरी ॥  
बदन देखि घटि चद छपाना । दसन देखि कै बीजु लजाना ॥  
खजन छुपे देखि कै नैना । कोकिल छुपी सुनत मधु बैना ॥  
गोव देखि कै छुपा मयूरु । लक देखि कै छुपा सदूरु ॥  
भौहन्ह धनुक छुपा आकारा । बेनी वासुकि छुपा पतारा ॥  
खड़ा छुपा नासिका बिसेखी । अमृत छुपा अधररस देखी ॥  
पहुँचहिं छुपी कवेल पौनारी । जघ छुपा कदली होइ बारी ॥

अछरी रूप छुपानी जबहिं चली धनि साजि ।

जावत गरब गहेली सबै छुपीं मन लाजि ॥

मिलीं गोहने सखी तराई । लेइ चाँद सूरज पहँ आईं ॥  
पारस रूप चाँद देखराई । देखत सूरज गा मुरझाई ॥  
सोरह कला दिस्टि ससि कीन्ही । सहसौ कला सुरुज कै लीन्हीं ॥  
भा रवि अस्त तराई हसी । सूर न रहा चाद परगसी ॥  
जोगी आहि न भोगी होई । खाइ कुरकुटा गा पै सोई ॥  
पदमावति जसि निरमल गगा । तू जो कत जोगी भिखमगा ॥  
आइ जगावहि चेला जागै । आवा गुरु पाय उठि लागै ॥

बोलाहि सबद सहेली कान लागि गहि माथ ।

गोरख आइ ठाढ भा, उठु रे चेला नाथ ॥

सुनि यह सबद अमिय अस लागा । निद्रा टूटि सोइ अस जागा ॥  
गही बाँह धनि सेजवाँ आनी । अचल ओट रही छुपि रानी ॥  
सकुचै डरै मनहिमन बारी । गहु न बाँह रे जोगि भिखारी ॥  
ओहट होसि, जोगि । तोरि चेरी । आवै वास कुरकुटा केरी ॥  
देखि भभूति छूति मोहि लागै । काँपे चाँद सूर सौं भागै ॥

जोगि तोरि तरसी कै काया । लागि चहँ मारे अंग छाया ॥  
चार भिखारि न माँगि से भीखा । माँगै आइ सरग पर सीखा ॥

जोगि भिखारी कोई मदिर न पैठै पार ॥

मागि लेहु किछु भिच्छा जाइ ठाढ़ होइ वार ॥

मै तुम्ह कारन पेम पियारी । राज छाँड़ि कै भएऊ भिखारी ॥  
नेह तुम्हार जो हिये समाना । चितउर सौ निरगुँ होइ आना ॥  
जस मालति कहँ भौर बियोगी । चढ़ा बियोग चलेउ होइ जोगी ॥  
भौर खोजि जस पावै केवा । तुम्ह कारन मै जिउ पर छेवा ॥  
भएउँ भिखारि नारि तुम्ह लागी । दीप लग होइ अंगएउँ आगी ॥  
एक बार मरि मिलै जो आई । दूतरि वार मरै कित जाई ॥  
कित तेहि मीचु जो मरि के जीया । भा सों अमर अमृत मधु पीया ॥

भौर जो पावै कँवल कहँ बहु आरति बहु आस ।

भौर होइ नेचछावरि कँवल देइ हँसि वास ॥

आपने मुंह न बड़ाई छाजा । जोगी कतहुँ होहि नहिं राजा ॥  
हौ रानी, तू जोगि भिखारी । जोगिहि भोगिहि कौन चिन्हारी ॥  
जोगी सवै छंद अस खेला । तू भिखारि तेहि माहि अकेला ॥  
पौन बाँधि अपसवहिं अकासा । मनमहि जाहि ताहिके पासा ॥  
एही भाँति सिस्टि सब छुरी । एही भेख रावन सिय हरी ॥  
भौरहि मीचु नियर जव आवा । चंपा वास लेइ कहँ घावा ॥  
दीपक जोति देखि उजियारी । आइ पाँखि होइ परा भिखारी ॥

रैनि जो देखै चंदमुख सति तन होइ अलोप ।

तुहुँ जोगी तस भूला करि राजा कर ओन ॥

अनुधनि तू निसियर निसि माहाँ । हौँ दिनअर जेहि कै तू छाहाँ ॥  
चौदहि कहाँ जोति औ करा । सुदुज के जोति चाँद निरमरा ॥  
भौर वास चंपा नहिं लेई । मालति जहाँ तहाँ जिउ देई ॥  
तुम्ह हुँत भएउँ पतंग कै करा । तिभलदीन आइ उड़ि परा ॥  
सेएउँ महादेव कर वारु । तजा अन्न भा पवन अहारु ॥  
अस मै प्रीति गाँठि हिय जोरी । कटै न काटे छुटै न छोरी ॥  
सौतै भीखि रावनहि दीन्ही । तूँ असि निडुर अंतरपट कीन्ही ॥

रंग तुम्हारेहि रातेउँ चढ़ेउँ गगन होइ सर ॥

जँह सति सीतल तहँ तपौ मन हँझा धनिपूर ॥

जोगि भिखारि करसि बहु वाता । कहसि रग देखौ नहि राता ॥  
कापर रंगे रंग नहिं होई । उपजै औटि रंग भल सोई ॥  
चंद के रंग सुदुज जस राता । देखै जगत सारु परभाता ॥  
दगधि विरह निति होइ अँगारा । ओही आच धिके संवाप ॥

जौ मजीठ औटै बहु आँचा । सों रँग जनम न डोलै राँचा ॥  
जरै बिरह जस दीपक-वाती । भीतर जरै उपर होइ राती ॥  
जरि परास होइ कोइल भेस । तब फूलै राता होइ टेस ॥

पान सुपारी खैर जिमि मेरइ करै चकचून ।

तौ लगि रंग न रोंचै जौ लगि होइ न चून ॥

का, धनि पान रग का चूना । जेहिं तन नेह दाध तेहिं दूना ॥  
हौं तुम्ह नेह पियर भा पानू । पेजी हुँत सोनरास बखानू ॥  
सुनि तुम्हार ससार बड़ौना । जोग लीन्ह तन कीन्ह गड़ौना ॥  
करहिं जो किंगरी लैइ बैरागी । नौती होइ बिरह कै आगी ॥  
फेरि फेरि तन कीन्ह भुँजौना । औटि रक्त रग हिरदय औना ॥  
सूखि सोपारी भा मन मारा । सिरहिं सरौता करवत सारा ॥  
हाड चून भा बिरहहिं दहा । जानै सोइ जो दाध इमि सहा ॥

सोइ जान वह पीरा जहि दुःख ऐस सरौर ।

रक्त पियासा होइ जो का जानै पर पीर ॥

जोगिन्ह बहुत छंद न ओराहीं । बूद सेवाती जैस पराहीं ॥  
परहिं भूम पर होइ कचूरू । परहिं कदलि पर होइ कपूरू ॥  
परहिं समुद्र खार जल ओही । परहिं सीप तौ मोती होहीं ॥  
परहिं भेस पर अमृत होई । परहिं नाग मुख विष होइ सोई ॥  
जोगी भौर निठुर ए दोऊ । केहि आपन भय कहै जौ कोऊ ॥  
एक ठाँव ए थिर न रहाहीं । रस लेइ खेलि अनत कहुं जाहीं ॥  
होइ गही पुनि होइ उदासी । अत काल दूवौ बिसवासी ॥

तेहि सौ नेह के दिढ करै ! रहहिं न एकौ देस ।

जोगी भौर भिखारी इन्ह सौ दूरि अदेस ॥

थल थल नग न होहिं जेहिं जोती । जल जल सीप न उपनहिं मोती ॥  
बन बन बिरिछ न चदन होई । तन तन बिरह न उपनै सोई ॥  
जेहि उपना सो औटि मर गएऊ । जनम निनार न कबहुँ भयऊ ॥  
जल अजुज रवि रहै अकासा । जौ इन्ह प्रीति जानु एक पासा ॥  
जोगी भौर जो थिर न रहहीं । जेहिं खोजहिं तेहिं पावहिं नाहीं ॥  
मैं तोहिं पाएँउ आपन जीऊ । छुँड़ि सेवाति न आनहिं पीऊ ॥  
भौर मालती मिलै जौ आई । सो तजि आन फूल कित जाई ॥

चपा प्रीति न भौरहिं दिन दिन आगरि वास ।

भौर जो पावै मालती म्रएहु न छुँड़िहिं पास ॥

ऐसे राजकुँवर नहिं मानौ । खेछु सारि पासा तब जानौ ॥  
काँचे बारह परा जो पाँसा । पाके पैत परी तनु रासा ॥  
रहे न आठ अठारह भाखा । सोरह सतरस रहैं न राखा ॥

सत जो धरै सो खेलन हारा । ढारि इग्यारह जाइ न मारा ॥  
तूँ लीन्हैं आळसि मन दूवा । औ जुग सारि चहसि पुनि छूवा ॥  
हौ नव नेह रचौ तेहि पाहाँ । दसवँ दौब तोरे हिय माहाँ ॥  
तौ चौपर खेलौ करि हिया । जौ तरहेल होइ सौलिया ॥

जेहि मिलि विछुरन औ तपनि अंत होइ जौ नित ।

तेहि मिलि गाजन के सहै बर विनु मिले निचित ॥

बोलौ रानि बचन सुनु सोंचा । पुरुष न बोल सपथ औ वाचा ॥  
यह मन लाग्ये तोहि अस नारी । दिन तुइ पासा औ निसि सारी ॥  
पौ परि बारहि बार मनाएउ । सिरसौ खेलि पैत जिउ लाएउ ॥  
हौ अब चौक पज ते वाची । तुम्ह विन गोठ न आवहि काँची ॥  
पाकि उठाएउ आस करीता । हौं जिउ तोहि हारा तुम्ह जीता ॥  
मिलि कै जुग नहि होहु निनारी । कहाँ श्रीच दूती देनहारी ॥  
अब जिउ जनम जनम तोहि पासा । चढ़ेउ जोग आएउँ कैलासा ॥

जाकर जीउ बसै जेहि तेहि पुन ताकरि टेक ।

कनक सोहाग न विछुरै औटि मिलै होइ एक ॥

बिहँसी धनि सुनि कै सत बाता । निहचय तू मोरे रंग राता ॥  
निहचय भौर कँवल रस रसा । जो जेहि मन सो तेहि मन बसा ॥  
जब हीरा मन भएउ संदेसी । तुम्ह हूँत मँडप गएउँ परदेसी ॥  
तोर रूप तस देखिउँ लोना । अनु जोगी तू मेलेसि टोना ॥  
सिधि गुटिका जो दिस्टि कमाई । पारहि मेलि रूप बैसाई ॥  
भुगुति देइ कह मै तोहि दीठा । कँवल नैन होइ भौर बईठा ॥  
नैन पुहुप तू अलि भा सोमी । रहा वेधि अस उड़ा न लोभी ॥  
जाकरि आस होइ जेहि तेहि पुनि ताकरि आस ।

भौर जो दाधा कँवल कह कस न पाव सो बास ॥

कौन मोहनी दहुँ हुति तोही । जो तोहि बिथा सो उपनी मोही ॥  
विनु जल मीन तलफ जस जीऊ । चातकि भइउ कहत पिउ पीऊ ॥  
जरिउँ बिरह जस दीपक वाती । पंथ जोहत भई सीप सेवाती ॥  
डाढ़ि डाढ़ि जिमि कोइल भई । भइउ चकोरि नीदि निसि गई ॥  
तोरे पेम पेम मोहि भएऊ । राता हेम अगिनि जिमि तयऊ ॥  
हीरा दिपै जौ सूर उदौती । नाहित कित पाहन कहँ जोती ॥  
रवि परगासे कँवल विगासा । नाहित कित मधुकर कित बासा ॥

तासौँ कौन अंतरपट जो अस पीतम पीउ ।

नेवलावरि अब सारौ तन, मन, जोवन जीउ ॥

हंसि पदमावत माना बाता । निहचय तू मोरे रंग राता ॥  
तू राजा दुहुँ कुल उजियारा । अस कै चेरचिह्न मरम तुम्हारा ॥

पै तू जबू दीप बसेरा । किमि जानेसि कस सिधल मेरा ॥  
 किमि जानेसि सो मानस केवा । सुनि सो भौर भा जिउ पर छेवा ॥  
 ना तुह सुनी न कबहूँ दीठी । कैसे चित्र होइ चितहि पईठी ॥  
 जौ लहि अग्नि करै नहि भेदू । तौ लहि औटि चुवै नहि भेदू ॥  
 कहँ सकर तोहिं ऐस लखावा । मिला अलख अस पेम चखावा ॥

जेहि कर सत्य सँघाती तेहि कर डर सोइ भेट ।

सो सत कहु कैसे भा दुवौ भाँति जो भेट ॥

सत्य कहौ सुनु पदमावती । जहँ सत पुरुष तहाँ सुरसती ॥  
 पाएउ सुवा कही वह बाता । भा निहचय देखत मुख राता ॥  
 रूप तुम्हार सुनेउँ अस नीका । जेहि चढा काहु कह टीका ॥  
 चित्र किएउ पुनि लोइ लोइ नाऊ । नैनहि लागि हिये भा ठाऊ ॥  
 हौँ भा साँच सुनत ओहि घड़ी । तुम होइ रूप आइ चित चढ़ी ॥  
 हौँ भा काठ मूति मन मारे । चहै जो कर सब हाथ तुम्हारे ॥  
 तुम्ह जौ डोलाइहु तबहीं डोला । मैन साँस जौ दीन्ह तौ बोला ॥

को सोवै को जागै अस हौँ गएउ बिमोहि ।

परगट गुपुत न दूसर जह देखौँ तहँ तोहि ॥

बिहँसी धनि सुनि कै सत भाऊ । हौँ रामा तू रावन राऊ ॥  
 रहा जो भौर कँवल के आसा । कस न भोग मानै रस बासा ॥  
 जस सत कहा कुँवर तू मोही । तस मन मोर लाग पुनि तोही ॥  
 जब हूँत कहि गा पखि सँदेसी । सुनिउ कि आवा है परदेसी ॥  
 तब हूँत तुम्ह बिन रहै न जीऊ । चातकि भइउँ कहत पिउ पीऊ ॥  
 भइउँ चकैरि सो पथ निहारी । समुद सीष जस नैन पसारी ॥  
 भइउ बिरह दहि कोइल कारी । डार डार जिमि कूकि पुकारी ॥

कौन सो दिन जब पिउ मिलै यह मन राता जासु ।

वह दुख देखै मोर सब हौँ दुख देखौँ तासु ॥

कहि सत भाव भई कठँ लागू । जनु कचन औ मिला सोहागू ॥  
 चौरासी आसन पर जोगी । खट रस बधक चतुर सो भोगी ॥  
 कुसुम माल असि मालति पाई । जनु चपा गहि डार ओनाई ॥  
 कलौ बेधि जन भँवर भुलाना । हना राहु अरखुन के बाना ॥  
 कचन करी जरी नग जोती । बरमा सौ बेधा जनु मोती ॥  
 नारंग जानि कीर नख दिये । अधर आमरस जानहुँ लिए ॥  
 कौतुक केलि करहिं दुख नसा । खूँदहिं कुरलहि जनु सर हसा ॥

रही बसाइ बासना चोवा चदन भेद ।

जेहि अस पदमिनि रानी सो जानै यह भेद ॥

रत्नसेन सो कत सुजानू । खटरस-पडित सोरह बानू ॥  
 तस होइ मिले पुरुष औ गोरी । जैसी बिल्लुरी सारस जौरी ॥  
 रची सारि दूनौ एक पासा । होइ जुग जुग आवहि कैलासा ॥  
 पिय धनि गही दीन्हि गलवाहीं । धनि बिल्लुरी लागी उर माही ॥  
 ते छुकि रस नव केलि करेही । चोका लाइ अघर रस लेहीं ॥  
 धनि नौ सात सात औ पाँचा । पुरुष दस तेरह किमि बोंचा ॥  
 लीन्ह विधांसि विरह धनि साजा । औ सब रचन जीत हुत राजा ॥

जनहूँ औटि कै मिलि गए तस दूनौ भए एक ।

कचन कसत कसौटी हाथ न कोऊ टेक ॥

चतुर नारि चित अधिक चिहँटी । जहाँ पेम वाढै किमि छूटी ॥  
 कुरला काम केरि मनुहारी । कुरल जेहि नहिं सो न सुनारी ॥  
 कुरलहि होइ कत कर तोखू । कुरलहि किए पाव धनि मोखू ॥  
 जेहि कुरला सो सोहाग सुभागी । चदन जैस साम कठ लागी ॥  
 गेद गोद कै जानहु लई । गेद चाहि धनि कोमल भई ॥  
 दारिउ दाख बेल रस चाखा । पिय के खेल धनि जीवन राखा ॥  
 भएउ बसत कली मुख खोली । बैन सोहावन कोकिल बोली ॥

पिउपिउ करत जो सूखि रहि धनि चातक की भाँति ।

परी सी बूद सीप जन मोती होइ सुख साँति ॥

भयउ जूझ जस रावन रामा । सेज विधांसि विरह सप्रामा ॥  
 लीन्हि लक कचन गढ़ दूटा । कीन्ह सिगार अहा सब लूटा ॥  
 औ जोवन मैमत विधांसा । विचला विरह जीउ जो नासा ॥  
 दूटे अग अग सब मेसा । छूटी मोंग भंग भए केसा ॥  
 कचुकि चूर चूर भइ तानी । दूटे हार मोति छहरानी ॥  
 बारी टाँड़ सलोनी दूटी । बाहूँ कँगन कलाई फूटी ॥  
 चंदन अंग लूट अस भेंटी । बेसरि दूटि तिलक गा भेंटी ॥

पुहुप सिगार सँवार सब जोवन नवल बसत ।

अरगज जिमि हिय लाइ कै मरगज कीन्हैउ कंत ॥

बिनय करै पद्मावति बाला । सुधि न सुराही पिण्ड पिबाला ॥  
 पिउ आयसु माये पर लेऊ । जो माँगै नइ नइ सिर देऊ ॥  
 पै पिय एक बचन सुनु भोरा । चाखु पिया मधु थोरै भोरा ॥  
 पेम सुरा सोई पै पिया । लखै न कोई कि काहू दिया ॥  
 चुवा दाख मधु जो एक बारा । दूसरि बार लेत बेसँभारा ॥  
 एक बार जो पी कै रहा । सुख जीवन सुख भोजन लहा ॥  
 पान फूल रस रंग करीजै । अघर अघर सौ चाखा कीजै ॥

जो तुम चाहौ सो करौ न जानौ भल मद ।  
जो भावै सो होह मोहि तुम्हपिउ चहौ आनद ॥

सुनु धनि प्रेम सुरा के पिए । मरन जियन डर रहै न हिए ॥  
जेहि मद तेहि कहौ ससारा । की सो धूमि रह वी मतवारा ॥  
सो पै जान पियै जो कोई । पी न अघाई जाइ परि सोई ॥  
जा कह होइ बार एक लाहा । रहै न ओहि विनु ओही चाहा ॥  
अरथ दरख सो देख बहाई । की सब जाहु न जाइ पियाई ॥  
रातिहु दिवस रहै रस भीजा । लाभ न देख न देखै छीजा ॥  
भोर हैत तब पुलह सरीरु । पाव खुमारी सीतल नीरु ॥

एक बार भरि देहु पियाला बार बार को माँग १।

मुहमद किमिन पुकारै ऐस दाँव जो खाँग ॥

भा बिहान ऊठा रवि साई । चहुँ दिसि आई नखत तराई ॥  
सब निसि सेज मिला ससि सूर । हार चीर बलया भए चूरु ॥  
सो धनि पान चून भइ चोली । रँग रँगिलि निरँग भइ भोली ॥  
जागत रैनि भएउ भिनसारा । भई अलस सोवत बेकरारा ॥  
अलक सुरगिनि हिरदय परी । नारँग छुव नागिनि विष भरी ॥  
लरी मुरी हिय हार लपेटी । सुरसरि जनु कालिदी मेंटी ॥  
जनु पथाग अरइल विचमिली । सोभित बेनी रोमावली ॥

नाभी लामुपुञ्जि कै कासी कुड कहाव ।

देवता करहि कलप सिर आपुहि दोष न लाव ॥

बिहँसि जगावहि सखी सयानी । सूर उठा, उठु पदमिनि रानी ॥  
सुनत सूर जनु कँवल विगासा । मधुकर आइ लीन्ह मधु बासा ॥  
जनहुँ भाति निसयानी बसी । अति बेसँभार फूलि जनु अरसी ॥  
नैन कँवल जानहुँ दुइ फूले । चितवन मोहि मिरिगि जनु भूले ॥  
तन न सँभार केस औ चोली । चित अचेत जन बाउरि भोली ॥  
भइ ससि हीन गहन अस गही । विथुरे नखन सेज भरि रही ॥  
कँवल माँह जनु केसरि दीठी । जोवन हुत सो गंवाइ बईठी ॥

बेलि जो राखी इद्र कहँ पवन बास नहि दीन्ह ।

लागेउ आइ भौर तेहि कली बेधि रस लीन्ह ॥

हँसि हँसि पूछहि सखी सरेखी । मानहुँ कुमुद चद्र मुख देवी ॥  
रानी तुम ऐसी सुकुमारा । फूल बास तन जीव तुम्हारा ॥  
सहि नहि सकहु हिये पर हाव । कैसे सहिउ कत कर भारु ॥  
मुख अंबुज बिगसै दिन राती । सो कुँभिलान कहहु केहि भोंती ॥  
अधर कँवल जो सहान पानू । कैसे सहा लाग मुख भानू ॥

लक जो पैग देत मुर जाई । कैसे रही जौ रावन राई ॥  
चदन चोव पवन अस पीऊ । भइउ चित्र सम कस भा जीऊ ॥

सब अरगज मरगज भएउ, लोचन विंघ सरोज ।

सत्य कहहु पद्मावति सखी परीं मव खोज ॥

कहाँ सखी आपन सत भाऊ । हौं जो कहति कस रावन राऊ ॥  
काँपी भौर पुहुप पर देखे । जनु ससि गहन तैम मोहिं लेखे ॥  
आजु मरम मै जाना सोई । जस पीयर पिउ और न कोई ॥  
डर तौ लगि हिय मिला न पीऊ । भानु के दिस्टि छूटि गा सीऊ ॥  
जत खन भानु कीन्ह परगासू । कवल कली मन कीन्ह विगासू ॥  
हिये छेहा उपना औ सीऊ । पिउ न रिसाउ लेउ वर जीऊ ॥  
हुत जो अपार विरह दुख दूखा । जनहुँ अगस्त उदय जल सूखा ॥

हौ रग बहुतै आनति लहरै जेस समुद ।

पै पिउ कै चतुराई खसेउ न एकौ बुद ॥

करि सिगार तापहँ का जाऊँ । ओही देखहुं ठाँवहि ठाऊँ ॥  
जौ जिउ मह तौ उहै पियारा । तनमन सौ नहि होइ निनारा ॥  
नैन माँह है उहै समाना । देखौं तहाँ नाहि केऊ आना ॥  
आपन रस आपुहि पै लेई । अधर सोइ लागे रस देई ॥  
हिया थार कुच कंचन लाहू । अगमन भेंट दीन्ह कै चाहू ॥  
हुलसी लक लक सौं लसी । रावन रहसि कसौटी कसी ॥  
जोवन सबै मिला ओहि जाई । हौं रे बीच हुत गइउ हेरोई ॥  
जस किछु देइ धरै कहँ आपन लेइ संभारि ।  
रसहि गारि तस लीन्हेसि कीन्हेसि मोहि ठँठारि ॥

अनु रे छत्रीली तोहि छवि लागी । नैन गुलाल कत संग जागी ॥  
चप सुदर्सन अस भा सोई । सोन जरद जस केसर होई ॥  
बैठ भौर कुच नारंग बारी । लागे नख उछरी रंग धारी ॥  
अधर अधर सौं भीज तमोरा । अलका उर मुरि मुरिगा तोरा ॥  
रायमुनी तुम औ रतमुहीं । अलिमुख लागि भई फुलचुही ॥  
जैस सिगार हार सौं मिली । मालति ऐसि सदा रहु खिली ॥  
पुनि सिगार करु कला नेवारी । कदम सेवती बैठु पियारी ॥  
कुद कली सम विगसी ऋतु वसत औ फाग ।

फुलहू फरहु सदा सुख औ सुख सुफल सोहाग ॥

कहि यह बात सखी सब धाई । चपावति पह जाइ सुनाई ॥  
आजु निरंग पद्मावति बारी । जीवन जानहुँ पवन अधारी ॥  
तरकि तरकि गइ चदन चोली । धरकि धरकि हिय उठै न बोली ॥  
अही जो कली कवल रस पूरी । चूर चूर होइ गई सो चूरी ॥



देखहु जाइ जैसि कुँभिलानी । सुनि सोहाग रानी बिहँसानी ॥  
 लेइ सँग सबही पदमिनि नारी । आई जहँ पदमावति बारी ॥  
 आई रूप सो सबही देखा । सोन बरन होइ रही सो रेखा ॥

कुसुम फूल जस मरदै निरंग देख सब अग ।

चपावति भइ बारी चूम केस औ मग ॥

सब रनिवस बैठ चहुँ पासा । ससि मडल जनु बैठ अकासा ॥  
 बोली सबै बारी कुँभिलानी । करहु सँभार देहु खँड़वानी ॥  
 कर्बल कली कामल रग भीनी । अति सुकुमारि लक कै छीनी ॥  
 चाँद जैस धनि हुस परगासा । सहस करा होइसर बिगासा ॥  
 तेहि के भार गहन अस गही । भइ निरग मुख जोति न रही ॥  
 दरब बार किछु पुन्न करेहुँ । औ तेहि लेइ सन्यासिहि देहु ॥  
 भरि कै थार नखन गज मोती । बारा कीन्ह चद कै जोती ॥

कीन्ह अरगजा गरदन औ सखि दीन्ह नहानु ।

पुनि भइ चौदसि चाँद सो रूप गएउ छपि भानु ॥

पुनि बहु चीर आन सब छोरी । सारी कचुकि लहर पटोरी ॥  
 फुँदिया और कसनिया राती । छायाल बंद लाए गुजराती ॥  
 चिक्का चीर मधौना लोने । मोति लाग औ छापे सोने ॥  
 सुरंग चीर मल सिंघल दीपी । कीन्ह जो छाया धनि वह छीपी ॥  
 पेमचा डोरिया औ चौधारी । साम सेत पीयर हरियारी ॥  
 सात रग औ चित्र चितेरे । भरि के दीठि जाहि नहि हेरे ॥  
 चँदनीता औ खरदुक भारी । बोंसपूर भिलमिल कै सारी ॥

पुनि अभरन बहु काढ़ा अनवन माँति जराव ।

हेरि फेरि निति पहिरै जब जैसे मन भाव ॥

## षट् ऋतु वर्णन

पदमावति सब मखी बुलाई । चीर पटोर हार पहिराई ॥  
 सीस सबन्ह के सेदुर पूरा । औ राते सब अग सेदूरा ॥  
 चदन अगार चित्र मव भरी । नए चार जानहु अवतरी ॥  
 जनहु कवल संग फूली कूई । जनहु चाँद संग तरई ऊई ॥  
 धनि पदमावति धनि तोर नाहू । जेहि अभरन पहिरा सब काहू ॥  
 शरह अभरन सोरह सिगारा । तोहि नौह नहि ससि उजियारा ॥  
 ससि सकलक रहै नहि पूजा । तू निकलक न मरि कोइ दूजा ॥

काहू वीन गहा कर काहू नाठ मृदग ।

सबन्ह अनद मनावा महसि कूढि एक सग ॥

पदमावति कह सुनहु सहेली । हौ सो कवल कुमुदिनि-वेली ॥  
 कलस मानि हौ तेहि दिन आई । पूजा चलहु चढावहि जाई ॥  
 मँझ पदमावति कर जो वेवानू । जनु परभात परै लखि भानू ॥  
 आस पास वाजत चौडोला । दुहुभि, भाभ, दूर, डफ, ढोला ॥  
 एक सग सब सोषे-भरो । देव दुवार उतरि भइ खरी ॥  
 अपने हाय देव नहवावा । कलस सहस इक घिरित भरावा ॥  
 पोता मँडप अगार औ चदन । देव भरा अरगज औ बदन ॥

कै प्रनाम आगे भई विनय कीन्हि बहु भाँति ।

रानी कहा चलहु घर सखी होति हँ राति ॥

भइ निसि धनि जस ससि परगसी । राजै देखि भूमि फिर वसी ॥  
 भइ कटकई सरद ससि आवा । फेरि गगन रवि चाहै छावा ॥  
 सुनि धनि भौह धनुक फिर फेरी । काम कटाछन्ह कोरहि हेरा ॥  
 जानहु नाहि पैज पिय खोंचौ । पिता सपथ हौ आञ्जु न ब्रोंचौ ॥  
 कालिह न होइ रही महि रामा । आञ्जु करहु रावन सप्रामा ॥  
 सेन सिंगार महुँ है साजा । गज गति चाल अचल गति धजा ॥  
 नैन समुद औ खड्ग नासिका । सखरि जूझ को मो सहुँ टिका ॥

हौ रानी पदमावति मै जीता रस भोग ।

तू सरवरि कर तासौ जो जोगी तोहि जोग ॥

हौ अस जोगि जान सब काऊ । वीर सिंगार जीते मै दोऊ ॥  
 उहाँ सामुहें रिपु दल माहाँ । यहाँ त काम कटक तुम्ह पाहाँ ॥  
 उहाँ न हय चढि कै दल मडो । इहाँ न अघर अभिय रस खडौ ॥  
 उहाँ न खड्ग नरिदहि भारौ । इहा त विरह तुम्हार सघारौ ॥

उहाँ त गज पेलौ होइ केहरि । इहवाँ काम कामिनी हिय हरि ॥  
 उहाँ त लूटौ कटक खंधारू । इहाँ त जीतौ तोर सिंगारू ॥  
 उहाँ त कुभस्थल गज नावौ । इहाँ त कुच कलसहिं कर लावौ ॥  
 परै बीच धरहरिया प्रेम राज को टेक ।

मानहि भोग छवौ ऋतु मिलि दूवौ होइ एक ॥

प्रथम बसत नवल ऋतु आई । सुऋतु चैत बैसाख सोहाई ॥  
 चदन चीर पहिरि धनि अगा । सेंदुर दीन्ह विहंसि भरि भगा ॥  
 कुसुम हार औ परिमल बासू । मलयागिरि छिरका कैलासू ॥  
 सौर सुपेती फूलन डासी । धनि औ कत मिले सुख बासी ॥  
 पिउ सँजोग धनि जोवन बारी । भौर पुहुप सँग करिह धमारी ॥  
 होइ फाग भलि चाँचरि जोरी । बिरह जराइ दीन्ह जस होरी ॥  
 धनि ससि सरिस तपि पिय सूरू । नखत सिंगार होहि सब चूरू ॥

जिन घर कता ऋतु भली आव बसत जो निच ।

सुख भरि आवहि देहरै दुःख न जानै कित्त ॥

ऋतु ग्रीषम है तपान न तहाँ । जेठ असाढ़ कत घर जहाँ ॥  
 पहिरि सुरग चीर धनि भीना । परिमल भेद रहा तन भीना ॥  
 पदमावति तन सिअर सुबासा । नैहर राज कत घर पास ॥  
 औ बड़ जूड तहा सोवनारा । अगार पोति सुख तनै ओहारा ॥  
 सेज बिछावन सौर सुपेती । भोग विलास करहि सुख सेंती ॥  
 अगार तमोर कपुर भिमसेना । चदन चरचि लाव तन बेना ॥  
 भा अनंद सिषल सब कहूँ । भागवत कहं सुख ऋतु छहूँ ॥

दारिउ दाख लेहि रस आम सदाफर डार ।

हरियर तन सुअटा कर जो अस चाखन हार ॥

ऋतु पावस बरसै पिउ पावा । सावन भादौ अधिक सोहावा ॥  
 पदमावति चाहति ऋतु पाई । गगन सोहावन भूमि सोहाई ॥  
 कोकिल बैन पाँति बग लूटी । धनि निसरी जुनु बीर बहूटी ॥  
 चमक बीजु बरसै जल सोना । दादुर मोर सबद सुठि लोना ॥  
 रँग राती पीतम सँग जागी । गरजे गगन चौँकि गर लागी ॥  
 सीतल बूद ऊच चौपारा । हरियर सब देखाइ ससारा ॥  
 हरियर भूमि कुसुभी चोला । औ धनि पिउ सँग रचा हिंडोला ॥

पवन भखोरे होइ हरष लागे सीतल वास ।

धनि जानै यह पवन है पवन सो अपने पास ॥

आइ सरद ऋतु अधिक पियारी । आसिन कातिक ऋतु उजियारी ॥  
 पदमावति मइ पुनिउँ कला । चौदसि चाँद उई सिषला ॥  
 सोरह कला सिंगार बनावा । नखत भरा सूरज ससि पावा ॥

भा निरमल सव धरति अकासू । सेन सँवारि कीन्ह फुल-वासू ॥  
सेत विछावन औ उजियारी । हँसि हँसि मिलहिं पुरुष औ नारी ॥  
सोन-फूल भइ पुहुमी फूली । यिय धनि मौ, धनि यिय सौ भूली ॥  
चख अजन दइ खेजन देखावा । होइ सारस जोरी रस पावा ॥

एहि श्रुतु कता पास जेहि, सुख तेहि के हिय माँह ।

धनि हसि लावै पिउ गरै, धनि-गर पिउ कै बाह ॥

श्रुतु हेमंत संग रिएउ पियाला । अगहन पूस सीत सुख-काला ॥  
धनि औ पिउ महँ सीउ सोहागा । दुहुँन्ह अग एकै मिलि लागी ॥  
मन सौं मन, तन सौं तन गहा । हिय सौंहिय बिच हार न रहा ॥  
जानहु चंदन लागेउ अंगी । चंदन रहै न पावै सगी ॥  
मोग करहिं सुख राजा रानी । उन्ह लेखे सव सिस्टि लुडानी ॥  
जूफ दुवौ जीवन सौ लागी । बिचहुँत सीउ जीउ लेइ भागी ॥  
दुइ घट मिलि एकै होइ जाहीं । ऐस मिलहिं तवहुँ न अवाहीं ॥

हसा केलि करहिं जिमि, खूँदि कुरलहिं दोउ ।

सीउ पुकारि कै पार भा, जस चकई क विछोउ ॥

आइ सिसर श्रुतु, तहाँ न सीउ । जहाँ मान फागुन धर पीऊ ॥  
सौर सुपेती मदिर राती । दगल चीर पहिरहि बहु भौनी ॥  
धर धर सिषल होइ सुख भोजू । रहा न कनहुँ दुःख कर खोजू ॥  
जहँ धनि पुरुष सीउ नहिं लागी । जानहुँ फाग वेसि सर भागी ॥  
जाइ इद्र सौं कीन्ह पुकारा । हौं पदमावति देस निनारा ॥  
एहि श्रुतु सदा सग महँ सोवा । अथ दरसन ते मोर विछवा ॥  
अथ हँसि कै ससि सूरहि भेटा । रहा जो सीउ बीच सो भेटा ॥

भएउ इद्र कर आवसु, बड सतान यह सेइ ।

कवहुँ काहु के पीर भइ, कवहुँ काहु के होइ ॥

## गोरा-बादल-युद्ध खंड

मते बैठि बादल औ गोरा । सो मत कीज परै नहि भोग ॥  
 पुरुष न करहि नारि-मति काँची । जस नौशावा कीन्ह न बाँची ॥  
 परा हाथ इसकदर बैरी । सो कित छोड़ि कै भई बंदेरी ॥  
 बुबुधि सौ ससी सिध कहँ मारा । कुबुधि सिध कूआँ परि हारा ॥  
 देवहि छुरा आइ अस आँटी । सज्जन कचन दुरजन माटी ॥  
 कचन जुरै भए दस खडा । फूटि न मिलै काँच कर भडा ॥  
 जस दुरकन्ह राजा छुर साजा । तस हम साजि छोड़ावहि राजा ॥

पुरुष तहाँ पै करै छुर, जहँ बर किए न आँट ।

जहाँ फूल तह फूल है, जहाँ काँट तहँ काँट ॥

सोरह सौ चडोल सँवारे । कुँवर सजोइल कै बैठारे ॥  
 पदमावति कर सजा विवानू । बैठ लोहार न जाने भानू ॥  
 रचि विवान सो साजि सँवारा । चहुँ दिसि चँवर करहि सब ढारा ॥  
 साजि सबै चडोल चलाए । सुरँग आँहार, मांति बहु लाए ॥  
 भए सँग गोरा बादल बली । कहत चले पदमावति चली ॥  
 हीरा रतन पदारथ भूलहि । देखि विवान देवता भूलहि ॥  
 सोरह सै संग चलीं सहेली । कँवल न रहा, और को बेली ? ॥

राजहि चलीं छोडावै, तहँ रानी होइ ओल ।

तीस सहस दुरि खिचीं, सँग सोरह सै चडोल ॥

राजा बँदि जेहि के सौंपना । गा गोरा तेहि पहँ अगमना ॥  
 टका लाख दस दीन्ह अँकोरा । विनती कीन्ह पायँ गहि गोरा ॥  
 विनवा बादसाह सौं जाई । अब रानी पदमावति आई ॥  
 विनती करै आइ हौं दिल्ली । चितउर कै मोहि स्यो है किल्ला ॥  
 विनती करै जहाँ है पूजी । सब भँडार कै मोहि स्यो कूँजी ॥  
 एक घरी जौ अज्ञा पावौ । राजहि सौपि मदिर महँ आवौ ॥  
 तब रखवार गए सुलतानी । देखि अँकोर भए जस पानी ॥

लीन्ह अँकोर हाथ जेहि, जीउ दीन्ह तेहि हाथ ।

जहाँ चलावै तहँ चलै, फेरे फिरै न माथ ॥

लोभ पाप कै नदी अँकोरा । सत्त न रहै हाथ जौ बोरा ॥  
 जहँ अँकोर तहँ नीकन राजू । ठाकुर केर विनासै काजू ॥  
 भा जिउ विउ रखवारन्ह केरा । दरब-लोभ चडोल न हेरा ॥

जाइ साह आगे मिर नावा । ए जगसूर । चोंद चलि आवा ॥  
जावन हँ सय नखन तराई । सोरह सै चडाल सो आई ॥  
चितउर जेति राज कै पूंजी । लेइ सो आई पदमावति कुँजी ॥  
बिनती करै जोरि कर खरी । लेइ सौँपौ राजा एक घरी ॥

इहाँ उहाँ कर स्वामी, दुअरौ जगत मोहि आस ।

पहिले दरम देखावहु, तौ पठवहु कैलास ॥

आज्ञा भई, जाय एक घरी । छूँछि जो घरी फेरि विधि भरी ॥  
चलि विवान राजा पहुँ आवा । संग चडोल जगत सय छावा ॥  
पदमावति के भेस लोहारू । निरुनि काटि यदि कीन्ह जोहारू ॥  
उठा कोपि नस छूटा राजा । चढा तुरग, सिध अम गाजा ॥  
गोरा बादल खाँडै बाढे । निकसि कुँवर चढ़ि चढि भए ठाढ़े ॥  
तीख तुरग गगन सिर लागा । केहुँ जुगुति करि टेकी बागा ॥  
जो जिउ ऊर खडग संभारा । मरनहार सो सहसन्ह भारा ॥

भई पुकार साह सौँ, ससि औ नखत सो नाहिँ ।

छर कै गहन गरामा, गहन गरसे जाहि ॥

लेइ राजा चितउर कहँ चले । छूटेउ सिध, मिरिग खलभले ॥  
चढा साहि, चढि लाग गोहारी । कटक अरुभ परी जग कारी ॥  
फिर गोरा बादल सौँ कहा । गहन छूटि पुनि चाहे गहा ॥  
चहुँ दिसि आवै लोपत भानू । अब इहै गोइ, इहै मैदानू ॥  
तुइ अब राजहि लेइ चलु गोरा । हौँ अब उलटि जुरौँ भा जोरा ॥  
बह चौगान तुरुक कस खेला । होइ खेलार रन जुरौँ अकेला ॥  
तौ पावौँ बादल अस नाऊँ । जौ मैदान गोइ लेइ जाऊँ ॥

आखु खडग चौगान गहि, करा सीत-रिपु गोइ ।

खेलौँ सौँह साह सौँ, हाल जगत महँ होइ ॥

तब अगमन होइ गोरा मिला । तुइ राजहि लेइ चलु, बादला ! ॥  
पिता मरै जो संकरे साथ । मीखु न देइ पूत के माथा ॥  
मैं अब आउ भरी औ भूँची । का पछिताव आउ जौ पूजी ? ॥  
बहुतन्ह मारि मरौँ जौ जूझौँ । तुम जिनि रोएहुँ तौ मन बूझी ॥  
कुँवर सहस संग गारा लीन्हे । और वीर बादल संग कीन्हे ॥  
गोरहि समदि मेघ अस गाजा । चला लिए आगे करि राजा ॥  
गोरा उलटि खेत भा ढाढ़ा । पुरुष देखि चाव मन बाढ़ा ॥

अब कटक सुलतानी, गगन छपा मसि माँझ ।

परति आव जग कारी हाँति आव दिन साँझ ॥

होइ मैदान परी अब गाँई । खेल हार दहुँ का करि होई ॥  
जोबन-दुरी चढ़ी जा रानी । चली जीति यह खेल सथानी ॥

## गोरा-घ.दल-युद्ध खड

कटि चौगान, गोइ कुच साजो । हिय मैदान चली लेइ बाजा ॥  
हाल सो करै गोइ लेइ बाडा । कूरी दुवौ पैज कै काढा ॥  
भइ पहार वै दूनौ कृग । दिस्टि नियर पहुँचत सुठि दूरा ॥  
छाढ़ बान अस जानहु दोऊ । सालै हिये अन काढै काऊ ॥  
सालहि हिय, न जाहि सहि ठाढे । सालहि परै चहै अनवाढे ।

मुहमद खेल प्रेम कर, कठिन चौगान ।

सीस न दीजै गोइ जिमि, हाल न होइ मैदान ।

फिरि आगे गोरा तब हाँका । खेलौ करौं आजु रन-साका ॥  
हौं कहिए धौलागिरि गोरा । टरौं न टारे अग न मोरा ॥  
सोहिल जैस गगन उपराही । मेघ-घटा मोहि देखि विलाहीं ॥  
सहसौ सीस सेस सम लेखौं । सहसौ नैन इन्द्र सम देखौं ॥  
चारिउ भुजा चतुरभुज आजू । कस न रहा और को साजू ? ॥  
हौं होइ भीम आजु रन गाजा । पाछे घालि डुंगवै राजा ॥  
होइ हनुवत जमकातर ठाहीं । आजु स्वामि साँकरे निवाहौं ॥

होइ नल नील आजु हौं, देहुँ हमुद महुँ मँडू ।

कटक साह कर टेकौं, होइ सुमेरु रन बँडू ॥

ओनई घटा चहुँ दिसि आई । छूटहि बान मेघ-भरि लाई ॥  
डोलै नाहि देव जस आदी । पहुँचे आइ तुरुक सब बादी ॥  
हाथन्ह गहे खड्ग हरद्वानी । चमकहि सेल बीजु कै बानी ॥  
सोभ बान जस आवहि गाजा । बासुकि डरै सीस जनु बाजा ॥  
नेजा उठे डरै मन इदू । आइ न बाज जानि कै हिदू ॥  
गोरै साथ लीन्ह सब साथी । जस मैप्रत सूँड विनु हाथी ॥  
सब मिलि पहिँल उठौनी कोन्ही । अवत आइ हाँक रन दीन्ही ॥

रुड मुड अब टूटहि, स्यो बखतर औ कूँड ।

तुरय होहि विनु काँधे, हसित होहि विनु सूँड ॥

ओनवत आइ सेन सुलतानी । जानहुँ परलय आव तुलानी ॥  
लौहे सेन सूभ सब कारी । तिल एक कहुँ न सूभ उघारो ॥  
खड्ग फोलाद तुरुक सब काढे । धरे बीजु अस चमकहि ठाढे ॥  
पोलवान गज पेले बाँके । जानहुँ काल करहि दुइ फाँके ॥  
जनु जमकात करहि सब भवा । जिउ लेइ चहहि सरग अपसर्वा ॥  
सेल सरप जनु चाहहि डसा । लेहि काढ़ि जिउ मुख विप-वसा ॥  
तिन्ह सामुहुँ गोरा रन कोपा । अगद सरिस पावें भुँइ रोपा ॥

सुपुरुष भागि न जानै, सुहँ जौ फिरि फिरि लेइ ।

सूर गहे दोऊ कर स्वामि काज जिउ देइ ॥

भइ बगमेल, सेल घनघोरा । औ गज-मेल; अकेल सेा गोरा ॥  
सहस कुँवर सहसौ सत बाँधा । भार-पहार जूझ कर बाँधा ॥  
लागे मरै गोरा के आगे । बाग न मोर धाव मुख लागे ॥  
जैम पतग आगि धसि लेई । एक सुवै, दूसर जिउ डेई ॥  
दूटहिं सीम, अधर धर मारै । लोटहिं कबहिं कंव निरारै ॥  
कोई परहिं रहिर होइ राते । कोई घागल घूमहिं माते ॥  
कोई खुरखेह गए भरि भोगी । भसम चडाइ परे होइ जोगी ॥

घरी एक भारत भा. भा असवारन्ह मेल ।

जूझि कुँवर सब निवरे, गोरा रहा अकेल ॥

गौरै देख साथि सथ जूझा । आपन काल नियर भा वूझा ॥  
कोपि सिध सामुहँ रन मेला । लाखन्ह सौ नहि मरै अकेला ॥  
लेइ हँकि हस्तिन्ह कै टटा । जैसे पवन बिदारै घटा ॥  
जेहि सिर देइ कापि करचारु । स्यो घोड़े दूटे असवारु ॥  
लोटहिं सीम कवष निनारे । माठ मजोठ जनहुँ रन दारे ॥  
खेलि फाग सेदुर छिरकावा । चाँचरि खेलि आगि जनु लावा ॥  
हस्ती घोड़ घाइ जो धूका । ताहि कान्ह से रहिर भभुका ॥

भइ अजा सुलतानी, “वेगि करहु एहि हाथ ।

रतन जात है आगे, लिए पदारथ साथ” ॥

सवै कटक मिलि गोरहिं छेका । गूँत सिध जाइ नहिं देका ॥  
जेहि दिसि ठठै सोइ जनु खावा । पलटि सिध तेहि ठावँ न आवा ॥  
गुरुक बोलावहिं चोलै बाहाँ । गौरै मीनु घरी जिउ माहाँ ॥  
मुए पुनि जूझि जाज जगदेऊ । जियत न रहा जगत महुँ केऊ ॥  
जिनि जानहु गोरा सेा अकेला । सिध के मोछु हाथ के मेला ? ॥  
सिध जियत नहि आपु धरावा । मुए पाछु केई घिसियावा ॥  
करै सिध सुख-सौहहिं दीठी । जो लागि जियै देइ नहि पीठी ॥

रतनसेन जो बाँधा, मसि गोरा के गात ।

जौ लागि रहिर न धोवौ तौ लागि होइ न रात ॥

गरजा वीर सिंध चढ़ि गाजा । आइ सौह गोरा सौं बाजा ॥  
पहलवान सेा बखाना बली । मदद मीर हमजा औ अली ॥  
लँधउर धरा देव जस आदी । और को वर बाँधै को वादी ? ॥  
मदद अयूब सीस चढ़ि कोपे । महामाच जेइ नाव अलोपे ॥  
औ ताया सालार सेा आए । जेइ कौरव पडव पिड पाए ॥  
पहुँचा आइ सिध असवारु । जहाँ सिध गोरा बरियारु ॥  
मारसि सोंग परे महुँ घसी । कादेसि हुमुकि आनि मुई खसी ॥



## गोरा-बादल-युद्ध खंड

भाँट कहा धनि गोरा, तू भा रावन राव ।

अति समेति बौधि कै, तुरय देत है पाव ॥

कहेसि अत भा अब भुईं परना । अन्त न खसे खेह सिर भरना ॥

कहि न गरजि सिध अस धावा । सरजा सारदूल पहुँ आवा ॥

सरजै लीन्ह साँग पर, धाऊ । परा खडग जनु परा निहाऊ ॥

बज्र न सोंग बज्र कै डौंडा । उठी आगि तस बाजा खोंड़ा ॥

जानहु बज्र बज्र सौं बाजा । सब ही कहा परी अब गाजा ॥

दूमर खडग कध पर दीन्हा । सरजै ओहि ओहन पर लीन्हा ॥

तीसर खडग कुँड पर लावा । वीध गुरुज हुत धाव न आवा ॥

तस मारा हठि गोरै, उठी बज्र कै आगि ।

कौई नियरे नहिँ आवै, सिध सदूरहि लाग ॥

तब सरजा काया बरिबडा । जानहु सदूर कै भुजदडा ॥

कौपि गरजि मारेसि तस बाजा । जानहु परी टूटि सिर गाजा ॥

ठोंठर टूट फूट सिर तास । स्यो सुमेरु जनु टूट अकास ॥

धमकि उठा सब सरग पतारू । फिरि गइ दीठि फिरा सनारू ॥

भइ परलय अस सबही जाना । काढा खेडग सरग नियराना ॥

तस मारेसि स्यो धोडै काटा । धरतीं फाटि सेस-फन फाटा ॥

जौ अति सिह बरी होइ आई । सारदूल सौं कौनि बड़ाई ? ॥

गोरा परा खेत महँ, सुर पहुँचावा पान ।

बादल लेइगा राजा, लेइ चितउर नियरान ॥

कवि नूरमहम्मद कृत  
इंद्रावती



## स्तुति खंड

धन्य आप जग-सिरजन हाथ। जिन-विन-खंभ अक्रोस सँवारा ॥  
 होऊ-जग के-अमुहि-राजा। राज-दोऊ जग-को तेहि-छाजा ॥  
 दीन्हा-नैन-पंथ-पहिचानो। दीन्हा-रसना-साहि-बखानो गु-  
 वात-सुनै कहँ-सरवन-दीन्हा। दीन्हा-बुद्धि-जान-तेहि-चीन्हा ॥  
 गगन-कि-सोभा-कीन्हे-सितारा। धरती-सोभा-मनुष-सवारा नी

आप गुपुत औ परगट, आप आदि औ अत ॥

आप-सुनै औ देखै-कीन्हे-मनुष-बुधवंत ॥

अहइ अकेल-सो-सिरजन हाथ। जानत-परगट-गुपुत-हमारा ॥  
 कीन्हा-गगन-रवि-सखि-महि-भेरा। कोऊ-जाही-जेरी-तेही-केरा ॥  
 कीन्हा-राति-मिले-मुख-तासी। कीन्हा-दिन-कारज-है-जासी ॥  
 धन-सो-महि-भर-भेजत-नीस-पलुअत-सूखी-भूमि-सरीखा ॥  
 सब-बिलाय-जाहहि-एक-बारा-रहे-तेहिक-मुख-रवि-उजियारवा

है-क्योता-औ-उदिग्या, तेहि-सम-कोऊ-न-आहि ॥

जो-कुछ-है-महि-गगन-महँ, सब-सुमिरत-है-तोहि ॥

अरे-दोऊ-जग-के-करतारा। कित-कै-सकत-बखान-बुधारा ॥  
 रसना-होइ-रोम-सुब-मोही-तबहु-वरन-न-पाउत-तोही ॥  
 है-अपार-सागर-सो-केरी। मोहि-करनी-को-नोब-न-बेरी ॥  
 कै-किरपा-ओहि-पर-उतारी। दया-दृष्टि-मोहि-ऊपर-बारी ॥  
 है-इभकहँ-अलम-बुधारी। तोहि-दया-सो-सुकुत-हिमारी ॥  
 है-मगु-बहुत-जगत्त-महँ, तिन-मग-को-नहि-चाबै ॥

आपन-पंथ-देखाबहु, राखौ-तापर-पौब ॥

सुमिरो-चेत-धर-अन-ठाऊ-अरवी-नवी-मुहम्मद-नाऊ ॥  
 जा-कहँ-करता-देस-देखाएऊ-न-कै-किरपा-सब-भेद-बताएऊ ॥  
 जेहिक-बखान-अइ-लौ-लार्की-वाहि-बखानत-दोऊ-जग-अक्रो ॥  
 चार-बास-चारिउ-अस-तारे-न-दीन-गगन-ऊपर-उजियारे ॥  
 अम्वकर-औ-उमर-बखामो-उरसो-बहुरि-अली-कहँ-जानी ॥

अहदहुत-अहमद-मएल, एक-जेत-दुइ-नाउ ॥

भएउ-जगत-के-कारने, परेउ-मोहम्मद-नाउ ॥

कहौ-मोहम्मद-साह-बखानू-है-सूज-दिहली-सुलतानू ॥  
 धरम-पन्थ-जग-जग-बीच-चलावा। निबन-सबरे-सो-बुखे-पावा ॥

पहिरे सलातीनु जग केरे । आप मुहॉस बने हैं चेरे ॥  
उहे साह नित धरम बढ़ावै । जेहि पहराँ मानुष सुख पावै ॥  
सब काहू पर दाया धरई । धरम सहित सुलतानी करई ॥

धरम भलो सुलतान कहँ, धरम करै जो साह ।

सुख पावै मानुष सवै, सबको होइ निबाह ॥

कवि अस्थान कीन्ह जेहि ठाऊँ । सो वह ठाऊँ सबरहद नाऊँ ॥  
पूरब दिस कहलास समान । अहै नसीबद्दी कोन थान ॥  
है भल जग महँ पथिक रहना । लेहु इहासो आगम लहना ॥  
जग औ आपुहि कस पहिचानों । तरिवर और बटोहिय जानों ॥  
चला जात जस होइ बटोही । आह छँहाइ विरिछ तर बोही ॥

जवा शुडाइ तरिवरतर, धरै पंथ पर पौव ।

बास हमार जगत महँ, बूझो तेही सुभाव ॥

आज रहन यह चोद न ऊआ । आनन्द हरन जगत कर हूआ ॥  
साह करबला के दुख सोगू । समुक्ति समुक्ति रोवै सब लोगू ॥  
रोएउ गमन सँदुरी नाहीं । रक्त अॉस है मुख उपराहीं ॥  
रोवै बादशाह जग साहँ । हम ना रहे करबला ठाई ॥  
देतेउँ सीस दीनपति कारन । करतेउँ जिउ तन मन सब वारन ॥

रोवै अच्छर सीस धुनि, सत्स सबिल भाखार ।

आज छिपान जगत रवि, जगत भएउ अँधियार ॥

बावैला प्यासा गा मारा । आल रसूल बतूल पियारा ॥  
उठा चहुँ दिस तें बावैला । महि सिर परेउ सोग को सैला ॥  
पहिरेउ गगन मातमी बागा । परेउ चद के हियरे दागा ॥  
औ ससि कहूँ दुख राहु गराहा । सुरज कहँ उपनेउ उर दाहा ॥  
इनके बीच हसन का प्यारा । सेहरा लीन्ह रक्त के धारा ॥

नूर मोहम्मद जीभ तें, कहँ न मातम होइ ।

जिय सों कहँ मातम कथा, मन आखिन सो रोइ ॥

मन इगसों एक रात मझारा । सूक्ति परा मोहिँ सब ससारा ॥  
देखेउँ एक नीक फुलवारी । देखेउँ तहों पुरुष अउ नारी ॥  
दोउ मुख सोभा बरनि न जाई । चद सुरज उतरेउ मुई आई ॥  
तपी एक देखेउँ तेहि ठाऊँ । पूछेउँ तासों तिन कर नाऊँ ॥  
कहा अहँ राजा अउ रानी । इंद्रवति औ कुँओ गेयानी ॥

आगमपुर इंद्रावती, कुँवर कलिजर राय ।

प्रेम हुते दोऊ कहँ, दीन्हा अलख मिलाय ॥

सब कहानी दीन्ह सुनाई । कहा दया सेती हो भाई ॥

इंद्रावति औ कुँवर कहानी । कहु भाषा मो हो कवि ज्ञानी ॥  
गाढ़ी गांठ परै जहा तोही । छुटि जाय सुमिरेहु तुम मोही ॥  
आशा दीन्हा तपिय सेयाना । मन जिउ सो आशा मैं माना ॥  
होत भोर लिखनी मैं लीन्हा । कहै लिलै ऊपर चित दीन्हा ॥

सन इग्यारह सौ रहेउ, सत्तावन उपराह ।

कहे लगोउ पोथी तबै, पाय तपी कर बाह ॥

कवि है नूर मोहम्मद नाऊँ । है पछलग सब को जग ठाऊँ ॥  
शुनि कविजन खेतन सो बाला । करै चहत खरिदान विसाला ॥  
है कवि समै नई तरुनाई । छुट न अरवहीं कवि लरिकाई ॥  
जाके हिण लरिक बुधि होई । बहुतै चूक कहत है सोई ॥  
बिनवत कविजन कहँ कर जोरी । है थोरी बुधि पूंजिय मेरी ॥

चूका देखि समहारि कै, जोरेहु अञ्छर दूट ।

दाया कर मोहि दीन पर, दोस न लायहु कूट ॥

हौ हीना विद्या बुधि सेती । गरब गुमान करौं कैहि नेती ॥  
हाँ मैं लरिकाई को चेला । कहौं न पोथी खेलउं खेला ॥  
गुरुजन यह सो बिनतिय मेरी । कोप न मानहिं भौंह सिकोरी ॥  
दोस बहुत खेलत महँ होई । दाया करेहु न कोपेहु कोई ॥  
दोस करै जो छोटा आही । मया करै गुरुजन कहँ चाही ॥

मोहि विवेक कछु नाहीं, नहिं विद्या बल आहि ।

खेलत हौं यह खेल एक, दिष्टा देइ निवाहि ॥

एक रात सपना मैं देखा । सिंधु तीर वह तपिय सरेला ॥  
अहै ठाढ़ मोहि लीन्ह बुलाई । कहेसि कि सिंधु में बूड़हु भाई ॥  
प्रसा छाड़ पोढा के हीया । मोती काढ़हु होइ मरजीया ॥  
ससि मोती को हार सवारहु । इंद्रावति को गीउ महँ डारहु ॥  
लौ मोती दोउ हाथन माहा । भारू रतन सीर उपराहा ॥

अस सपना मैं देखेउँ, जागि उठेउँ अकुलाइ ।

बहुत बूझ संचारेउँ, सपन न बूझा जाइ ॥

चित औ चेत बहुत मैं धरा । तब वह सपन बूझि मोहिं परा ॥  
सिंधु समा मन को पहिचानेउ । मोती समा बचन कहँ जानेउ ॥  
हार गुहन बूकेउँ चउपाई । रतन ग्रीव कहँ रतन बड़ाई ॥  
मनुष सुबचन कहे सो लहई । बचन सरस मोती सो अहई ॥  
बचन एक करतार निसारा । भा तेहि बचन हुते संसारा ॥

बचन हसावै मनुष्य कहँ, बचन रोवावै ताहि ।

बचनहु तें थह जगत मों, कीरत परगट आहि ॥

हैं मन फूलवारी हो भाई । फूल समों यह बचने सोहाई ॥  
 बचने अरथ है वास समाना । कवि स्त्रोता है भवर सयाना ॥  
 अचरज ऐस फूल पर अहई । बारी माई कली नित रहई ॥  
 जब वह फूल तजत फूलवारी । बिकसत वास देत अधिकारी ॥  
 जुगजुग रहत न तनु कुम्हिलाई । दिन दिन वास बढ़त अधिकारी ॥

मन चाहत सों अस पुहुप, आज चुनौ भरि गोद ।

॥ हार गूथि के पहिरेउ, मनमो बाढै भोद ॥

दिया कहा दुइ हार सवारहु । रवि औ कमल गले मह डारहु ॥

बुद्धि कहा दुइ हार बनावहु । मालति मधुकर कह पहिरावहु ॥

तेहि पल तपसी दरस देखाएउ । मोहि संग एहि बात सुनाएउ ॥

राजकुंअर रानी इद्रावती । हैं रवि कमल औ भवर मालती ॥

चुनि परसन दुइ हार सवारहु । तिनके ग्रीव बीच लै डारहु ॥

अज्ञानमान तपी कर, चलेउ जहां फूलवार ।

॥ खुला न पायउ द्वार को, मोलिहि दिएउ पुकार ॥

आएउ आली सुनत पुकारा । खोलेउ फूलवारी का द्वार ॥

पैठेउ फूलवारी मह जाई । रहसेउ देखत फूल निकरई ॥

तन पलुहा बारी की नाई । मन भा फूलवारी तेहि ठाई ॥

माली कहा जएत मन होई । लोहु फूल नहि बरजत कोई ॥

जब आजा मालिहि सों पाएउ । तब मैं फूल चुनै पर आएउ ॥

॥ किरपा सों बारी सहै माली दीन्हा साथ ॥

॥ आड़े कोउ न आएउ, मैं फूलवारी हाथ ॥

रहत न आगर रूप छिपाना । आपुहि परगट करै निदाना ॥

जो रस रूप सों बाधहु द्वार । जाइ भरोखे चितवै प्यारा ॥

सिरजनहार छिपा ना रहा । आपुहि फेर चिन्हावै चहा ॥

तब यह जग करता सवार । चिन्ह पड़ा वह सिरजन हारा ॥

मानुष फूल सुरस सी नाऊ । धरि धरि भा परगट सब ठाऊ ॥

आपुहि भोगि रूप धरि, जगमो मानत भोग ।

॥ आपुहि जोगी भेस होइ, निस दिन साधत जोग ॥

अलक्ष प्रेम कारन जग कीन्हा । धन जो सीस प्रेम मह दीन्हा ॥

जाना जेहिक प्रेम मह हीया । मरै न कबहुं सो मर जीया ॥

प्रेम खेत है यह दुनियाई । प्रेमी पुरुष करत बोवाई ॥

जीवन जाग प्रेम को कहई । सोवन मीचु वो प्रेमी कहई ॥

आग तपन जल चाल समूझो । पुनि टिकान मोटी कह झूमो ॥

हो प्रेमी है प्रेम को, चचलताइ बाय ॥

जा मन जामा प्रेम रस, भा दोउ जग को राय ॥

## स्वप्न खंड कुँवर

एक रात मैं कुर सरेखा । सपन बीच दर्पन एक देखा ॥  
रहा अमल दरपन उजियारा । जिब मुख को निखावन हारा ॥  
दरपन में एक सुदर नारी । देखहु चंदहु ते उजियारी ॥  
रही तैइस सुंदर जस चही । दरपन देह बीच जिउ रही ॥  
रही न तेहि संग सखीय सहेली । रहिउ मुकुर मह आप अकेली ॥

ससि वदनी मनु रवि रही, रहा मुकुर जिमि धूप ।

तेहि रूपवन्ती रूप सों, दरपन पाएउ रूप ॥

जागो भोर कुँअर कंह पावा । सपन चित में देवस गँवावा ॥  
दूसरे रात कस्तूरिये भारा । तासो सुगध कीन्ह ससारा ॥  
तेहि त्रिजमा राग सरेखा । पहिली रात कि मूरत देखा ॥  
रहेउ न मूरत दरपन माही । दरपन बहुत रहे अगुवाही ॥  
कालिंजरी निर्प नैर नाहा । तासो धदन देखा सप माहा ॥

जस दर्पन निर्मल रहे, तस देखा अधिकार ।

दरसन एक नारि को, सब आदरस मभार ॥

पहिली रात महीप सरेखा । मुख पर लठ विशुरी नहि देखा ॥  
दूसरे रात महीपति दानी । देखा मुख पर लठ छितरानी ॥  
देखि वदन लठ सुदरताई । सपने बीच रहा मुंछाई ॥  
मोहि अचरज हिरदय में आहीं । कैसे मुकुर न देखा चाही ॥  
यह सपने को को पतिआई । मुकुर सौह विनु देखि न जाई ॥

यह सपने की बात पर, अचरज करै न कोह ।

सपने मोसी होत है, जो सौतुके न होई ॥

राजा देखि सपन अस जागा । लागी प्रीव प्रेम की तांगा ॥  
तागा पाह प्रेम को राजा । मां प्रेमी छाड़ा सुख कौजा ॥  
का - जाने सुख भोग भुलाना । प्रेम मरम जब लग अनजाना ॥  
जाना जात प्रेम तब भाई । जब मन भीतर प्रेम समाई ॥  
कालिंजरी को राय सथाना । वह नारी के रूप भुलाना ॥

हग सों विह्वुती मूरत, हिंदय आई समान ।

जब हिय बीच समोन, हरिगै चिता आन ॥

राजै राज काज तज दीन्हा । चिता वह मूरत की लीन्हा ॥  
काहै कहाँ वह चन्द लिलायो । वरु तेहि आगे है ससि घाटो ॥  
कहा धनुक भौही वह नारी । वरुनी वान चोख जेई मारी ॥



कहवा मृग नैनी वह बाला । प्रेमद दीन्ह कीन्ह मतबाला ॥  
 होतेउँ दरपन ता मुख केरा । मो महेँ ता मुख लेत बसेरा ॥  
 राजकुँअर भा बाउर, छाड़ेउ सुख रस भोग ।  
 परे सकल सह मो, कालिजर के लोग ॥  
 राज कुँअर छाड़ा सुख भोगू । असुखी भए नगर के लोगू ॥  
 दस सघातिय राजा केरे । रहे सो रहे आठ जस चेरे ॥  
 परे चित मो आठ सँघाती । आठों कहेँ दिन भा जस राती ॥  
 काहु बात सुनवत जी दीन्हा । कोउ कौतुक पर दिष्ट न कीन्हा ॥  
 रस सुगध कह छाड़ा काहु । आठो परे बहुत दुख माहूँ ॥  
 राजा के अनमन भए, अनमन भा सब कोह ॥  
 मोंगहिँ सब करतार सों, मोद कुँअर कहं होह ॥  
 आठों मों मत्री एक रहा । राजा मानै ताकर कहा ॥  
 बुद्धसेन रह ताको नाऊँ । जन्म भूमि तेहि मनपुर ठाऊँ ॥  
 तेहि बिनु सात मित्र अबटाहीं । ताहि मिले सातो सुधराहीं ॥  
 सुख छाड़ा सब राय सयाना । बुद्ध सेन मन ससै माना ॥  
 कहा कुँअर सो अहो नरेसू । दिवस चार सों कस तोहि मेसू ॥  
 औरै तन मन देखऊ, औरै चिता चाव ।  
 सुख अनन्द को छाड़ेऊ, कहौ कुँअर केहि भाव ॥  
 कहा बुद्ध सों राय सरेखा । रानी एक सपन में देखा ॥  
 पहिल रात अस देखउँ ज्ञानी । दरपन बीच रही वह रानी ॥  
 दूसर निस बहु दरपन देखेउँ । सब दरपन ता रूप परेखेउँ ॥  
 सोवत रहिउ नयन के नियरे । जागत आह समानिउ हियरें ॥  
 अमल रूप वह नारी केरा । मन हरि लीन्ह कीन्ह मोहिँ चेरा ॥  
 तामुख वृति के आगेँ, अहै सूर ससि छाई ।  
 काहु नृप की है सुता, जेहि देखेउँ निस माई ॥  
 सुनि बुद्ध राजा कहेँ समुभावा । तोहि सपने महेँ कौतुक आवा ॥  
 सपन रूप पर का विसवादा । तज मन चिन्त बढाव हुलादा ॥  
 कुँअर कहा यह सपन न होई । मोहिँ लेखे सैतुक है सोई ॥  
 दरपन मों दरपन मुख ताको । भा जिउ लाग मुकुन सोभा को ॥  
 मोहिँ नृप वह प्रान पियारी । करै चहत है दरस भिखारी ॥  
 विश्वरी प्यारी नेन सों, हियरें आह समान ।  
 दिया हाथ मों कीन्हा, भएउ परान परान ॥  
 मत्री मरम कुँअर को पाएउ । गुनी चितेरा एक बोलाएउ ॥  
 अस सुनवन्त चितेरा रहा । जल पर चित्र बनावे चहा ॥  
 बुद्ध कहा लिखि आनु चितेरा । सुधर रूप इस्तिरीन केरा ॥

निर्ण सपने एक नारिय देखा । रीभा तापर निर्ण सरेखा ॥  
 होइ अहेर फाद मो आवै । देखे कुँअर बोध मन पावै ॥  
 बहु नारिन की मूरते, लिखा चितेरा जाइ ।  
 बुद्ध बाह सो राजही, सकल देखाएउ आइ ॥  
 देखि सकल राजै मुख फेरा । कहा कहा वह अरे चितेरा ॥  
 कहा लिखै आवै वह प्यारी । सपने बीच बान जेई मारी ॥  
 ताको मूरत को लिखि पारै । दिगं बान बरुनी को मारै ॥  
 अधर तेहिक जो लिखै चितेरा । मीठ होइ लिखनी नहि केरा ॥  
 सुनि अस बात चितेरा हँसा । कहा प्रेम महिपति मन बसा ॥  
 कहि बुध साथ चितेरा, गएउ सदन कहँ सोइ ।  
 पहिले प्रेम न गाढा, अत गाढ पुनि हीइ ॥  
 आना बुद्ध मनुष दस ज्ञानी । राजा नियरें कहै कहानी ॥  
 रूप बखान करै बहुतेरा । होइ फिर मन राजा केरा ॥  
 राजा के मन बोध न होई । सपन कहानी कहेउ न कोई ॥  
 जा दग लागेउ जो रँग नीका । नीको वही आन रँग फीका ॥  
 जा मन आइ वसै जो कोई । ता कहँ पीन पियार सोई ॥  
 रचिक ताहि न भावै, कहै कहानी जेत ।  
 परम दवात कहँ जत, दुखद होइ तेहि तेत ॥  
 राजा की फुलवारिष जहाँ । लीन्ह बसेरा तपी एक तहाँ ॥  
 मौन रहा गहि तपिय सयाना । सकत तिहिक सब काहुब जाना ॥  
 रात होत मन मो धरि आसा । गएउ कुँअर तापस के पास ॥  
 राजा तपी चरन गहि परा । तापस हाथ पीठ पर धरा ॥  
 राजहि दाया सहित उठावा । मुख सो बहुत असीस सुनावा ॥  
 तपी कहा केहि कारन, आवन भएउ तोहार ।  
 राजै सपन सुनावा, चाहा सपन विचार ॥  
 तपी कहा अस पार न मोहीं । सपन विचार झनाबउ तोही ॥  
 पै तेहि कारन राजा ज्ञानी । सत्त लिहै एक कहउ कहानी ॥  
 होइ सुनत उपजय तेहि हियरे । सत्त सनेह होसि तेहि नियरे ॥  
 कुँअर पाय गहि अस्तुति गावा । दरसन पाइ बोध मे पावा ॥  
 जो बच भाषै अधर तुम्हारा । उदई ओषध होय हमारा ॥  
 तब ज्ञानी राजा सों, कहा तपी मुसकात ।  
 सुद्ध सव के स्रोता, सुनिए वक्ता बात ॥  
 हे एक देस अगमपुर नाऊं । मानहुँ सरग बसेउ महि ठाऊं ॥  
 देस बड़ो अगमपुर आही । राजदीप पुनि कहिये ताही ॥  
 हे वह देस सिंधु के पारा । होत धरम नित ताहि मभारा ॥

सुभग-रूप-ने आगमपुर होई । धरती सरग-कहावत-सोइ-नी  
जैत-फूल-फल-पत्रिय चांही । तावत आगमपुर-मो-आही ॥

अगम पथ-सो-सात वन, और-समुद्र-अथाह-।

होत-न-कैसेहु-मग-मो, अगुव-बिना-निवाह-॥

सिंधु-पार-है-आगमपूरु । पारते-बनियर-वारते-दूरु ॥

है-आगमपूरु-जस-फूलवारी-। तामे-फूल-पुरुष-अरु-नारी ॥

नार-पदुघिनी कचन-वरनी-। होहि-तहां-सब-मन-की-हरनी-॥

हरनि-होई-जंग-को-मन-हरई-। गोलत-काज-सुधा-को-करई-॥

है-हस्तर-कर-मडप-तहां-। पूजा-होत-रात-दिन-जहां-॥

जोगी-तपी-सनासी, बैरागी-तेहि-ठाब-।

भोर-साभ-निस-वासर-। जपहि-अलल-को-नाव-॥

ऐसे-धरम-नगर-के-ठाउ । अहै-महीपति-जगपति-नाऊ ॥

धरति-आगन-तेहिक-जस-मानी ॥ इद्रपुरी-सुर-क्रीत-बखानी ॥

है-धीमान-महीपति-शानी । दायावत-सुसील-सुवानी ॥

आप-धरम-देही-है-राजा । नगरे-न-होत-धर्म-को-काजा ॥

है-गंज-कटक-अहै-अनकूता । ऊच-भाग-को-है-तेहि-बूता ॥

एक-हाथ-के-बल-सो, कर-समूद्र-सो-लेत-।

एक-हाथ-सो-महीपति, दान-जगत-को-देत ॥

राजै-गढ-नौ-खड-बनावी । ऊंच-गगन-संग-ताहि-उठावा ॥

पहिल-खड-जगमग-मेनियारा । निस-सो-दीख-चंद-उजियारा ॥

चौथे-खड-दीप-है-मानू । शान-अम-किमि-कहो-बलानू ॥

मदिर-एक-। अहै-तेहि-ठाऊ-। तीरथ-मंदिर-मदिर-नाउ ॥

तासो-स्लोग-बहुत-फल-पावै । सत्स-सहस-न-नित-आवै ॥

सठ-के-ऊपर-ठीक-ही, अड़ियाली-अड़ियाल-।

निस-दिन-चैठे-साथै, अड़िये-सुहरत-काल ॥

का-बरनो-सुख-मदिर-ठाऊ । आठ-सदन-आठो-कर-नाऊ ॥

तिने-भीतर-बड-है-कोई । तम-कह-भूख-अस-ना-हीई ॥

सुदर-नारी-है-धनेरी । भई-नि-किमिन-काहु-अकेरी ॥

है-आनंद-नाम-एक-शानी । ताकर-सब-मदिर-बरबानी ॥

बिलौ-एक-अस-ठार-पसारा । सब-निकेत-पर-अहुचे-ठारा ॥

वह-सुख-बासे-महीप-को, है-उत्तम-कहास ॥

सुख-जीवन-तामो-मिलै, पूरुत-मन-की-आस ॥

सरनो-आगमपूरु-को-हाटन-भूलहि-नुगुव-देखि-सै-बाटा ॥

कतहु-तमोलिय-पानि-धुलाने-। कहु-पटवा-भाटहि-अरुभाने ॥

रूप-कनक-कहु-गढ-सोनारु-। कहु-लोहि-की-ताव-लोहार ॥

कहुँ जौहरिये कतहु चितेरा । कतहुँ कुंदेरा कतहुँ ठठेरा ॥  
सब भूले अपने जग धधा । का डिठियारू का जो अधधा ॥

सब तो अहँ वटाऊ, पै पाए सुख भोग ।

त्रापुहि कोइ न जानत, हँ पथिक हमलोग ॥

पुनि बखान सुनु मन तारा को । वसुधा बीच सुधा जल ताको ॥

जो मनताए सम्बर पीअै । सुख जीवन पावै म० जीअै ॥

आवै नीर भरै पनिहारी । सुदर आगमपुर की नारी ॥

औउर नदी नीर जस छीरू । मद अस भेद सगेवर नीरू ॥

मधु अस मीठ जीउ सर पानी । यह बखान समभौ नर शानी ॥

जो मानुष अनुरागबल, अचवै चारों नीर ।

निर्मल होइ सरोर तेहि, व्याध न रहै सरोर ॥

पुनि बखान सुनु मत के चेरा । आगमपुर के जोगिन केरा ॥

बैरागी सन्यासिय जोगी । साधू सजम तपिय वियोगी ॥

कोउ ठाढा है ध्यान लगाए । कोउ धरती पर सीस नवाए ॥

कोउ महिपर माथा धरि रहा । जोग लाग सुख भोग न चहा ॥

बहुतन कह जगसों सुधि नाही । रीक्ति रहे करता उपराहीं ॥

रसना एक न कहि सकों, आगमपुर की बात ।

धरम धनी है राजा, सुखी छुतीसौ जात ॥

रहा महीपति घर उँजियारा । बालक दीपक बिनु अँधियारा ॥

जाइ ग्रीस मडप महँ पूजा । बहुत कीन्ह सँग लीन्ह न दूजा ॥

सिब सपने मों दरस देखावा । दरस दान देइ बात सुनावा ॥

बालक एकौ लिखा न राजा । देइ न बालक अपचित काजा ॥

राजै कहा पुत्र जो ताहीं । होइ सुता तो मन अनदाहीं ॥

आतमजा जो होत एक, होत सदन उँजियार ।

कन्यादान दिहें सों, होतै मुकुत हमार ॥

कहा महिस काज एक करहु । रतन एक मडप मों धरहु ॥

निसमों राखहु मोरे आएहु । बिर्ज धरे जैसो फल पाएहु ॥

जैसो इस्सर अशा दीन्हा । तैसो मानि महीपति कीन्हा ॥

सिब दाता कह बहुत मनावा । तुम करता त्रीलोक बनावा ॥

धरती गगन पवन जल आगी । सिजेँउ सिजेँत बेर न लागी ॥

होइ रतन सों कन्या, यह मनसा है मोर ।

राज सदन अँधियारो, तासो होइ अँधजोरा ॥

सिवा अलखसो बिनती कीया । जस है रतन जोत सों दीया ॥

दीप रतन सम कन्या होई । करइ निकेत अजोरा सोई ॥

भा दयाल दाता तेहि धरी । बोहि रतन कन्या अवंतरी ॥

भै महेस मडप उंजियारी । उतरी मनहुँ इद्रपुर नारी ॥  
भोर होत राजा चलि आएउ । मडप बीच चंद्र सम पाएउ ॥

परमद सो मडप मों, पुलकेउ राजा देह ।

कन्या कहँ अति आदरे, आनेउ अपने गेह ॥

पुन सिवरात होत सपनावा । गौरिहु आपहुँ दरस देखावा ॥

कहा धरेउ अवतार सुभाऊ । रतन जोत कन्या कर नाऊं ॥

मोती एक वटामों कीजे । जलधिम भार डार तेहि दीजे ॥

वह मोती काढ़ै जो राजा । सोई वर कन्या कर छाजा ॥

मोती काढ न पारै कोई । काढे सोई वर जो होई ॥

सिव भावित के पाछें, सिवा कहा तेहि ठाउ ।

होत भलो इद्रावति, वह कन्या को नाउ ॥

राजै दोऊ नाम तेहि राखा । रतन जोत इंद्रावति भाखा ॥

रूपम्मा वाई तेहि पाला । लाग चलै महि ऊपर चाला ॥

भइ जो सयान भई चित्तगरी । पढ़ि विद्या भई विद्याधरी ॥

लागों साथ अगमपुर वारी । जोरेउ स्थामा राज दुलारी ॥

जगपति मरम सुता कर पावा । कीन्हा परन जो ईस बतावा ॥

बूड़े बहुत समुद्र मों मोती चढेउ न हाथ ।

नहि जानौ को देइ है, सेंदुर ताकी माथ ॥

मंडप मों जाते ऊष भागे । बरस देवस पर तीरथ लागे ॥

जब आगमपुर कह मै गयऊ । पूजा नित मडप मह भयऊं ॥

तति खन भय चहुँ और पुकारी । आवत है जगपति की वारी ॥

पथ देउ कोउ रहइ न आगे । जात मडप कहँ पूजा लागे ॥

पंथ छाड़ भा सब कोउ ठाढ़ा । सबके हिये प्रेम रस बाढ़ा ॥

पथ छाड़ सब ठाढ़ भा, नैन भएउ सब देह ।

इद्रावति दरसन नित, सब मन बढेउ सनेह ॥

सब मानुष मन प्रीत घनेरी । उपजी इद्रावति मुख केरी ॥

मुकुर बने -चाहा सब कोई । जामों आई परौ मुख सोई ॥

सखिन साथ इंद्रावति आई । बरनि न पारौ सुंदरताई ॥

रहि न सखी सुदर जहाँ ताई । जिउ अस लिहें रतन कह आईं ॥

देह भई सब आगम वारी । जीउ रही इद्रावति प्यारी ॥

सखी रही अतर पट देखा बिरलै कोइ ।

मडप बीच गई वह, सब को मति नग खोई ॥

रचिक तेहि देखा जो कोई । कीन्ह बखान आप मों सोई ॥

कहुव कहा अहै अपछरा । नहि चितएउ ऐसे मन हरा ॥

काहुव कहा दिष्ट जो देती । मन औ प्रान दोऊ हर लेती ॥

रूप गगन जग काया वारी । है जिउ है जिउ है जिउ प्यारी ॥  
 वो वहि मुख को परगट देखा । गूंग मण्ड भा बाउर मेला ॥  
 तेहि अस आपुहि होइ रहा, रहा न ताहि विवेक ।  
 जातें जानैं एक मै, औ इद्रावति एक ॥  
 इद्रावति घर कीन्ह बहोरा । ससि होइ लै नछत्र चहुँ ओरा, ॥  
 आप गई मदिर कह प्यारी । बहुतन को कह गई भिखारी ॥  
 जो रचिक ता दरसन पावा । हाथ मलेउ मानेउ पछतावा ॥  
 कहां सहेलिन बैरिन भई । वोटे वोटे किहैं लै गईं ॥  
 आज आइ वह परगट भई । मिला न दरस गुपुत होइ गईं ॥  
 सुमिरेउ सिरजनहारहीं, जब देखेउ असरूप ।  
 ऐसो रूप सवारहू धन्य त्रिविष्टपभूप ॥  
 है पद्मिनि इद्रावति प्यारी । ताको बदन रूप फुलवारी ॥  
 कोमलताइ सुदरताई । से रना सों बरनि न जाई ॥  
 दिर्गन हरा मान मृग केरा । मन लजाइ वन लीन्ह बसेरा ॥  
 ना अति लाब न छोटी आही । है तस इद्रावति जस चाही ॥  
 यह बखान का बरने होई । जो देखा जानहि पाइ सोई ॥  
 कै बखान जोगी कहा, मोहि जाने होराय ।  
 चद्र बदन इद्रावती, तोहि सपनाएउ आय ॥  
 पहिले इद्रावति सुकुमारी । रहिल रतन दरपन मों प्यारी ॥  
 जब जगमों अबतरी नवेली । ताको दरपन भई सहेली ॥  
 है वह दीप सिखा उँजियारी । आपन जोत सखिन मों डारी ॥  
 हैं वह रतन खान आमा को । जोत सुरूप रूप है ताको ॥  
 है आनद बदन वह प्यारी । छवि तापर है लट सटकारी ॥  
 इद्रावति है पद्मिनी, रम्भा तुलै न ताहि ।  
 एक जीम सों कित मै, ताको सकों सराहि ॥  
 सुनत बखान कलिजर ईसू । तपिय चरन पर डारेउ सीसू ॥  
 कहा कुवर हो सिद्ध सरीरा । ओषद दे काटेहु मन पीय ॥  
 सपन विचारेहु मोर गोसाई । पीरा हरेहु रही जह ताईं ॥  
 जेहि रानी के करहु बखानू । निसचै हरा सोई मन शानू ॥  
 तजि कह राज होब मै जोगी । इद्रावति पर होउँ बियोगी ॥  
 हौ मै चेला तुम गुरू, विनै करत हौँ तोहि ।  
 आगम पथ देखावहु, लै पहुँचावहु मोहि ॥  
 तपिय कहा तोहि जोग न छाजा । बैठे राज करीजे काजा ॥  
 अइ कठिन आगम को बाटा । गहिर समुद्र न थाइ न घाटा ॥  
 औ है गुलिक काढिनो गाढा । मिथु न जानै तट जो ढाढा ॥

है हम कह तीरथ बहु करना । कासिय पथ उपर पग धरना ॥  
 जाय पयाग करउ अस्नानो । पुनि महेस को देखेउ थानो ॥  
 तपी भेस मैं मानुष, नाम मोर गुरु नाथ ।  
 तब गुरु नाथ कहावउ, जब आनउ तप हाथ ॥  
 कुंवर कहा गुरुनाथ गुसाईं । राज रहा मीठा अवताईं ॥  
 अब निसचै मैं होव भिखारी । तहाँ चलि जाउ जहाँ वह प्यारी ॥  
 जिउ के लोभ कछुहु मोहिं नार्हीं । ता नित पैठउ पावक माहीं ॥  
 अगुवाई जो कीजे नाथा । तो वह मूल होइ मोहि हाया ॥  
 ना तो सुमिरत दया तुम्हारी । जाउ तहाँ होइ तपसि भिखारी ॥

राज पाट भव छाडउ, लेउ अगम के पथ ।  
 पथिक होऊँ अगम को, पहिर जोग को कथ ॥  
 जाना तपी तजहि सुख पाटा । हिये सुधान अगम की वाटा ॥  
 सकल आपनो परगट कीन्हा । देव दिष्टि राजा कह दीन्हा ॥  
 माया रहित कीन्ह मनुसाईं । उपवन सों कीन्हा अगुवाई ॥  
 फुलवारी मों राय सरेखा । पथ सहित आगमपुर देखा ॥  
 देखा देस अगमपुर केरा । रीभि रहा राजा भा चेरा ॥

अगम पथ मन मो बसेउ, भूली दूसर बात ।  
 हिर्द चिन्त सोउ तरिगा, राज मुकुट औ पाट ॥  
 तपिय कहा राजा कुछ सूझा । राजा सुनत मरम सब बूझा ॥  
 कहा भएउ कृपाल गोसाईं । सूझी बाट रही जहाँ ताई ॥  
 सूझा इद्रवती कर देसू । होएउ निसचै जोगिय भेसू ॥  
 मुनि गुरनाथ ऋषेश्वर जाना । पथ अगम राजहि पहिचाना ॥  
 गुपुत भएउ पुनि कुवर न देखा । आएउ मदिर राय सरेखा ॥

गुरु जानि गुरुनाथहों, चेला आपुहि जानि ।  
 आगम जेत धरा चित, मन परान मों मानि ॥  
 कालिजर सों भएउ उदासा । भएउ नरक मदिर-कविलासा ॥  
 सुदर कहा कत कस जीऊ । कस उदास तेहि देखेउ पीऊ ॥  
 परेउ मीस ऊपर कछु भार । ऊदासे है जीउ तुम्हारा ॥  
 दीन्हा ऊनर सुदर केरा । सैतुक बीच सपन भा नेरा ॥  
 सुनेउ आज मैं तेहिक ब्रह्माचू । सपन देखाइ हर जेइ शनू ॥

राजपाट वन भोग सुख, सब तजि साधौ जोग ।  
 जाउ चोही के देस कह, हीइ सजोग वियोग ॥  
 मुनि कै कहा सुदरी राजा । तुम्हें भोग तजि जोग न छाजा ॥  
 सुख सपन सब दीन्हा दाता । मार न छीर भात मों लाता ॥

कहा रहेउं अवलग मैं भोगी । अब में होउ अगम को जोगू ॥  
जोगी होउ अगमपुर केरा । लेउ जाइ तेहि गलिय बसेरा ॥  
भोगै बीच रहउ जउ भोला । कित मोहिं हाथ चढ़इ वह मूला ॥

तुम कामिनी मत हीनी, भोग सुपावहु मोहि ।

प्रेम खींच है मो कह, सुभ बूभ नहिं तोहि ॥

राजै राजपाट सुख तजा । प्रेम आइ मति सों श्रवजा ॥  
मनमों प्रेम बसेरा लीन्हा । बरवस राजा प्रेमिय कीन्हा ॥  
प्रेम अगिन मन मों उदगरी । तासे दाव बुद्धि कर जरी ॥  
भार बोही राजा सिर परा । जो नभ औ महि को बल हरा ॥  
निबर मनुष को धन मनुसाई । जो अस भारिय भार उढाई ॥

प्रेम आग के बाढे, मेघा भयो मलीन ।

सूर किरिन के आगे, है मयक वृति हीन ॥

रे कलवार आव चलि वेगें । हौं मैं ठाढ़ सिधु जा नेगें ॥  
है निर्मल मद सदन तुम्हारा । मोहि लेखें सज ठाकुर द्वारा ॥  
दे मदिरा भर प्याला पीवो । होइ मतवार काथरा सीवों ॥  
सो काधर काषे पर डारउं । जोगी होइ जग चाहत मारउ ॥  
होइ जोगी तेहि देसहि जाऊ । है जेहि देस सुप्रीतम ठाऊ ॥

मोहि यह देस न भावत, छन है वरष समान ।

अब तेहि देस सिधारउ, जहाँ रहत वह प्रान ॥





## मालिन खंड

जव राजा फुलवारिय आयेउ । तजि पर चिन्ता ध्यान लगायेउ ॥  
मालिन सुदर चेता नाऊँ । आइउ मन फुलवारिय ठाऊँ ॥  
भइ सोहँ राजा के ठाढी । मनु समुद्र सो मोतिय काढी ॥  
अहो बियोगी भेस भिखारी । इद्रावति की यह फुलवारी ॥  
इहाँ न कोऊ जोगिय आवै । जो आवे तो जीउ गँवावै ॥

कवहँ कवहँ आवै, इहाँ पियारिय सोई ।

चार दिष्ट होइ जाइही, जाउ जीउ सों खोइ ॥

है मनोरमा जगत कर सोई । है ससि जौ ससि बोलत होई ॥  
कुमुम उसीसा लाइ बहँठै । मान समेत जगत दिस दीठै ॥  
धन के नैन दिष्टि जेहि डारा । सो आतिथ भा भा मतवारा ॥  
मुख है फूल कपोल कली है । है छबि औ सोभा विमली है ॥  
फूल अहै पै कलिय समानू । कलिय अहै पै है विकसानू ॥

है सुकुवार पियारी, है प्यारी सुकुवार ।

है फुलवारिय रूप को, अहै रूप फुलवार ॥

राजा कुँवर कहा सुनु प्यारी । आयेउँ भलो लाग फुलवारी ॥  
जग मे मरन हुतें का डरऊँ । एक दिन मरो छार होइ परऊँ ॥  
जो इद्रावति के दोउ नैना । प्रान लेत हैं करि कै सयना ॥  
तो मोहिं सोच जीउ कर नार्हीं । होइ सुधा तेहि अघरन माहीं ॥  
बहुर प्रान देखै मोहिं सोई । नित जीवन पुन मरन न होई ॥

दरस देखि जो जिय तजौँ, यातें भलो न और ।

एहि कारन मैं लीन्हेंउँ, मन फुलवारी ठौर ॥

अहो यह नित बरजेउँ जोगी । जिय न तजहु पै होहु बियोगू ॥  
जोग तोर औ गुरु तुम्हारा । जाइहि भूल जासि ढग मारा ॥  
जाकी चितवन भए वेहाया । नाथ मुछ्दर गोरख नाथा ॥  
तेहि देखत सुधि भूलै तोही । भूलै जोग वो मन वोही ॥  
निदा नौके फेर मुलाहू । सीके देस न वेगहिं जाहूँ ॥

अबहीं अहसि सरेखा, जहँ चाहसि तहँ जासि ।

ना तो दरसन पाइकै, सुधि गवाइ बौरासि ॥

ससि कारन तुम लायहु फाँदू । फाँदे वीच न आवइ चोँदू ॥  
जीउ चलाउ जहाँ लग हाथा । गगन चढावइ चाहसि माथा ॥

पट बाहर जेड पाव पसारा । जाडा कट्टिन अत तेहि मारा ॥  
जो पखी वित बाहर धावा । मो निदान महि ऊपर आवा ॥  
अपने जोग टाव जेड लीन्हा । सब कोऊ तेहि आदर कीन्हा ॥  
सब काहूँ कहूँ ठाउँ है, अपने अपनै मान ।

रानी राजा जोग है, नसि जोगे है मान ॥

हौं मैं ता दरसन नित जोगी । भसम चढाए भेस वियोगी ॥  
ताको प्रेम गुरू है मेरो । जोग सिखाय कीन्ह मोहि चैरो ॥  
जव मन वसी धरेउं तव जोगू तजि कै सकल जगत सुख भोगू ॥  
वहि उत्तम दरसन के कारन । आएउ नाधि भेष वधि आग्न ॥  
जा टिन मैं दरसन वह पावउ । होइ आर आपुहि हेरवावउ ॥  
दरसन देखै कारनहि रोम रोम भवे नैन ।

नींद न आवत निस कहँ, वासर परत न चैन ॥

चैन कहों चिन्ता जेहि जीऊ । जीऊ दुग्ध भा चिन्ता धीऊ ॥  
जव चिन्ता तव नींद न आवै । आवै तव जव चिन्ता आवै ॥  
प्रेमी पर चिन्ता कहँ मारै । मारै मन चाहुत जिथ वारै ॥  
हेरै प्रीतम मुख नहि फेरै । कोरै भिन्न भिन्न कहँ हेरै ॥  
रोवै रक्त आस नहि सोवै । दरसन लाग रात दिन रोवै ॥

सत्तर सिर मन तीस सै, पाव एक सै जाहि ।

प्रेमी को दुख देत सो, प्रेम अथ यह आहि ॥

हौं जोगी पै उत्तम भीला । प्रेम पाइ मार्ग मैं सीखा ॥  
जहि मन ऊँच उँच भा सोई । जेहि मन नीच नीच सो होई ॥  
कहाँ चोद कहँ रहइ चकोरा । प्रीत लाग चितवत तेहि ओरा ॥  
औ अरविंद रहै जल माहीं । रवि सेवत तेहि जोगे नाहीं ॥  
दादुर कवल सनेह न पावै । बनसों मधुकर तेहि नित धावै ॥

दूर देस की दिष्टि सों, है समीप गुन मूर ।

बिना नैन औ दिष्टि के, नियरे के है दूर ॥

मालिन कहा बहुत तुम वृक्षा । प्रेम पथ उजियारा सुरक्षा ॥  
कवन जात है का है नाऊ । कहों जनम भुम्मी का ठाऊ ॥  
कहा रहेउ मैं जात चदेला । अथ सम जात धूर सिर मेला ॥  
जनम भुम्मि कालिजर ठाऊँ । राजकुवर है मेरो नाऊँ ॥  
प्रेम तेहिक मोहि चेला कीन्हा । राज छोड़ाय जोग गुन दीन्हा ॥  
हौं जोगी तेहि पथ को, नहिं चाहौं कविलास ।

चाहउ दरसन भिच्छा, राखत हौं नित आस ॥

हो जागी मुख आभा तेरी । साखि देत है राजा केरी ॥  
पै तोहि साथ न सेवक कोई । राजा पर विस्वास न होई ॥

औ मोती का ढब हैं गाढा । बूड़े बहुत न काहुअ काढा ॥  
 भोख मिलन गाढी है जोगी । भाग जो होइ तो होहु सजोगू ॥  
 याहू; पर बहुतै तुम कीन्हा । तजि मुख भोग जोग दुख लीन्हा ॥  
 जेहि दरसन के दीप पर, है पतग ससार ।  
 प्रेम तेहिक तुम लीन्हा, मरै न नाम तोहार ॥

है इद्रावति विद्याधरी । विद्याधरी आप अवतरी ॥  
 है पदमिनि भृगसावक नैनी । ज्ञानवत औ कोकिल नैनी ॥  
 जो काहुअ पर ठारै डीठी । सो जन देइ जगत दिस पीठी ॥  
 अस रूपवती सुदर आहै । विनु देखे सब ताहि सराहै ॥  
 खोलै मुख परभात देखावै । खोलै केस सोंभ होइ आवै ॥  
 है तेहि चद्र बदन लखि, जगत नयन उंजियार ।

गगन सहस लोचन सो, निखै तेहिक सिंगार ॥  
 धन दृग मतवारे पैरारे । चितवन वीच सिधु जा दारे ।  
 अधरन सो मुसुकान सोहाई । बात कहत सो भरत मिठाई ॥  
 सखी अहै दरपन तेहि माहीं । डारा सुदर मुख परछाहीं ॥  
 तासों सखी भई छुबि धारी । छुबि दाता है प्रान पियारी ॥  
 से मन अलक० बीच हैं बाँधे । लेहि सहस जिउ हत्या काँधे ॥  
 बहुतन तजि जग धधा, तप साधा तेहि लाग ।

अरुभि रहा मन अलकै, जिउ मारा अनुराग ॥  
 है तेहि अस ताक मो दीया । भा उजियारो मदिर हीया ॥  
 सीसा बीच दिया है धरा । मनु सीसा तारा निर्मरा ॥  
 है मदिर सोभित फुलवारी । अहै सुगध मालति वह बारी ॥  
 लेहि रहै आखिन पर चोरी । अहै सखी छाया तेहि केरी ॥  
 दिष्ट न आवत ताकी छाया । मानहुँ जीव धरे है काया ॥  
 वोहि डोलै सब डोलै, थिरे थिरे सब कोइ ।  
 काया सों जो होत है, सो छाया मों होइ ॥

सात अतर पट भीतर सोई । रिहत न देखत अचिन्ह कोई ॥  
 बारह मदिर मों वह प्यारी । रहत सदा है सेज सवारी ॥  
 हीरा सात सात जस तारे । हैं मदिर भीतर उजियारे ॥  
 दुइ सै औ अढतालिस करी । लागे रतन पदारथ भरी ॥  
 है मदिर मो तेरह द्वारा । नौ द्वारा नित रहत उधारा ॥  
 वाय तेज जल पृथिवी, मानहुँ कैयक ठाउ ।  
 बारह मदिर सवारा, जगपत जाको नाउ ॥

आवै जाइ पवन दुइ द्वारें । सर्गी सोहु न सवद सवारें ॥  
 दसई द्वार खोलत कोई । तब खोलै जब मरमी होई ॥  
 दस चेरी धन की गुन भरीं । सेवा बीच रहै नित खरीं ॥

पाँच मंदिर के बाहर रहई । पाँच मंदिर भीतर गुन गहई ॥  
 एक सुध पाँचो सौ नित लेई । सुध चारो चेरिन कहँ देई ॥  
 है चरूप वह रानी, रहै सात पट मोह ।  
 सखियन सो वह प्रगटै, अहँ सखी सय छौं ॥  
 सुनि इंद्रावति रूप नखानो । राजकुवँर हिंदै रहसानो ॥  
 कहा लेहिउ तेहि कारन जोगू । है महिमानस प्रीत वियोगू ॥  
 भायउ आवत इहाँ अकेला । गुरु न भयउ का राखउ चेला ॥  
 होउ अविध मो होइ मर जीया । तजि जिउ भय पोड़ा कइ हीया ॥  
 भाग जो होइ जलज निसाराऊँ । तो जिउ जिउ कारन वारऊँ ॥  
 प्रेम फौद मो ही परा, नहि छूटै की आस ।  
 मिलनो चाहौ प्रान को, अहँ न भूल पियाम ॥  
 जो चाहत संजोग वियोगी । जो मै कहहुँ सो साधहु जोगी ॥  
 खोटे काज के नियर न जाहुँ । निरमल कथा होइ जस चाहँ ॥  
 पर चिता तजि सुमिरहुँ ताके । होइ सो भरता मन आभा के ॥  
 ना रहिये आपा गुन साथ । निरमलता आवै जिउ हाया ॥  
 मन जिउतँ सुमिरहु वह नाऊँ । वूझहु प्रान मों ताके ठाऊँ ॥  
 दूसर चिता छानि कै, तापर लावहु ध्यान ।  
 मन फुलवारी मो रहै, पावहु दरस निदान ॥  
 आपन है नाहीं कर जोगी । पुनि है होसिहोसिहै भोगी ॥  
 नाहीं होइ नाहि तँ हेरा । ना तो मिलत नियर तेहि केरा ॥  
 नियर मिलेँ ते दरसन होई । जोग भूल है तीनउँ सोई ॥  
 जो मर जिया सो भामोर जीया । मोती लिया दिया भा दीया ॥  
 मरि के जिउ पुनि मीनु न आवै । प्रानपियारी वदन दिखावै ॥  
 छिन अतरपट होइ रही, फुलवारी के फूल ।  
 देखु रग प्यारी कर, दै रगन को मूल ॥  
 कहि राजा सो भेद कहानी । गइल जहाँ इद्रावति रानी ॥  
 मै व्याकुल प्यारी तब ताई । जोगी आइ वसा मन ठाई ॥  
 वाढेउ प्रीति जोगेश्वर केरी । मन पद परी प्रेम की बेरी ॥  
 कहै कहीं वह रावल प्यारा । है दरसन मन हरा हमारा ॥  
 सोइव रहेउ जाय सो भला । जामो मिला दरस निर्मला ॥  
 मिला दरस जेहि सपन मो, तापर वाग जाउ ।  
 जागव मोहि बैरी भयेउ । कीन्ह दूर दुइ ढोंउ ॥  
 वोही समै मो मालिनि गई । प्यारी कहँ सुख दाता भई ॥  
 पूछे लाग परान पियारी । है कस आज काल्ह फुलवारी ॥  
 बीता फायुन औ पतिभारा । जो निर्पात कीन्ह कुँज डारा ।  
 १३

जो पच्छिम को जीउ सतावा । पत्र को छारिके छाँह नसावा ॥  
 सो तो अब न रहेउ जग माहीं । फुलवारी पलुही की नाहीं ॥  
 बदन उघारा है पुहुप, अली भँवहि उपराह ।  
 की समुभंत पतिभार कों, अहँ छिपी पट मॉह ॥  
 चेता नारी उतर निसारी । हो फुलवारी प्यारी फूली ॥  
 मान पाट पर बैठे फूले । फूल वास मधुकर मन भूले ॥  
 देइ के उतर कुसुम को हारा । इद्रावति के गल मों डारा ॥  
 फेरि कहा दिन बहुत न गयऊ । सपन तुम्हारो सैतुक भयऊ ॥  
 फुलवारी मों है एक जोगी । रानी दरसन लाग वियोगी ॥  
 हे कालिजर महिपति, राजकुअर है नाउ ।  
 नाम तिहारो जपत हैं, मन फुलवारी ठाउ ॥  
 ए रानी का बरनउ ताही । धूर लपेटा मानिक आही ॥  
 बहुत सरूप अहइ वह तपा । कथा बीच रतन है छुपा ॥  
 होइ दग जिय जो देखनहारी । तो मुख ताको लखै पियारी ॥  
 जावत राजा लच्छन चाहीं । है सब दग रतनारी आही ॥  
 अर्द्ध चद सम भाल सोहाई । रेखा तीन दिष्ट मोहिं आई ॥  
 धनुक समा है भिकुंटी, बरना चोखी बान ।  
 कीर समा है नासिका, सबद मोर परमान ॥  
 लवर करन को सीर न आहै । राजा सिद्ध होन कस चाहै ॥  
 कुओ वियोगी उपबन ठाऊ । निस दिन सुमिरत रानी नाऊ ॥  
 अहै प्रेम मदिरा मतवारा । जपत सास मो नाम तुम्हारा ॥  
 लेत न एकउ सूके सासा । दरसन लाग देह सुख नासा ॥  
 जोगी मेस न सकउ सराही । गोपीचद्र दूसरो आही ॥  
 होत जियत को भरथरी, ताको चेला होत ।  
 आइ बसा फुलवारी, सुनहु खोलि मनस्त्रोन ॥  
 इन्द्रावति सुनि जोगी नाऊ । जोगिन होइ चहा तेहि ठाऊ ॥  
 कहा सपन को जोगी प्यारा । होई वही मनहरा हमारा ॥  
 सकल आक तुम आइ सुनावा । सपन तमी लच्छन मै पावा ॥  
 एक अचभे आवत हियरं । है न कहुँ कालिजर नियरं ॥  
 मो मुनरूप कहा ते पावा । जोगी होइ अगमपुर आवा ॥  
 भेंट न होइ न गुन सुनै, प्रेम कहा सो होइ ।  
 कैसे मोशि कारन भयउ, आगम जोगी सोइ ॥  
 अहो पियारी बूझन लोका । तोर बखान गयउ सुर लोका ॥  
 तहा सदा सब निर्जर नारी । चरचा तेरो करइ पियारी ॥  
 धरती पर कालिजर देख । सुनि बखान भा जोगी मेइ ॥

ते धन कली समा पट माहीं । सैकी लालप तोहि उपराही ॥  
 नहि जानो कस परत पुकारा । जो परगट मुख होत तुम्हाय ॥  
 तुम धन प्यारी पदुमिनि, सुधा मरे अधरान ।  
 बहुत अमी अधरन पग, दिहेनि सुन्धु मों प्रान ॥  
 ही धन जाकी नाम सुनायहु । फुलवारी मों दरसन पायहु ॥  
 मन औ शान हरा है सोई । होत भलो जो दसन होई ॥  
 मैं सकुचाउ जात फुलवारी । भइउ नयन सों मैं हत्यारी ॥  
 चार दिष्टि काहुव सों होई । जात चेत सों मुरछेइ सोई ॥  
 औ परगट मोहि चलत न भावै । अब मोहि लज्या जिउ सकुचावै ॥  
 गयेउ सखी वह सामै, आखिन रहो न लाज ।  
 अब यह नैन हमारो, प्रायेउ लाज समाज ॥  
 लाज नहीं जेहि आखिन माहीं । है वह पसु है मानुप नाही ॥  
 घुषरू पहिरि लाज यह आही । पगु कहँ धीमे राख बचाही ॥  
 औ धन ऊँची सबद न बोलै । सुनत विराने को मन डालै ॥  
 औंचे नैन लाज सो कीजै । औ मुख ऊपर घूषट लीजै ॥  
 हों प्यारी अब पहिरहु गहना । पुरूप विराने सों छिप रहना ॥  
 हों वारी अलबेली, वारी कैसे जाउं ।  
 भेंट होइ काहुअ सों, खोर और मग ठाउं ॥  
 जो जोगी तुम देखै चाहा । जोगहि मिलै जोग सो लाहा ॥  
 परगट तुम्है चलै को कहई । तो पट भलो पवन रथ अहई ॥  
 तेहि पर चढ़ि कै चलिये प्यारी । चारो दिष पट लीजै खड़ाही ॥  
 जोगी साथ न दूसर कोई । है अकेल वारी मों सोई ॥  
 है भिच्छुक तेहि दाय़ा कीजै । उत्तम दरसन भिच्छा दीजै ॥  
 दर निखाइ कै दरसन, आपुहिं लेहु छिपाह ।  
 अधिक बढै अभिलाख तेहि, दूसर पथ न जाइ ॥  
 चलहँ चलहुँ निसचै फुलवारी । देखउँ जोगी कहँ मन वारी ॥  
 आज देवस औ रैन वितावउँ । प्रात सबै फुलवारी आवउ ॥  
 जोगी पास अहै मन मोरा । भयेउ सीस पर प्रान भुकोरा ॥  
 होइ गये खापन मन पावउँ । मन पाये आनद मनावउँ ॥  
 पहिले आपन दरस दिखायेउ । पाछे सों मोहि जोग सिखायेउ ॥  
 रहिउँ अचेत भुलानी, लाग राग को बान ।  
 प्रेम निबाहीं जो जियउँ, तेहि के मरउँ निदान ॥  
 ना ले मरन का नाम पियारी । तोहि मरत मरिहँ बहु नारी ॥  
 जहँ लग हँ नारी रज दीपी । का बिछुरानी काह समीपी ॥  
 तोहि जिय सों जीयत सब कोई । कहु न मरन तो पर लो होई ॥

हैं जहाँ लगरजदीपी नारी । जीउ तिन्है है प्रीत तुम्हारी ॥  
भलो भयेउ जो बाढ़ा प्रेमू । मिलि है प्रीतम होइहै खेमू ॥  
अति समीप है प्रीतम, अहै न एकौ बाट ।

एक पाव दे आप पर बैठु, मिलन के पाट ॥  
काहे न लोउ मरन के नाऊँ । मरव एक दिन धरती ठाऊँ ॥  
केतिको प्रीत जगत मर्ह होई । देत न साथ मरन मर्ह कोई ॥  
जावत जिया जंतु जग रहई । करता बस सबको जिय अहई ॥  
है समीप वह मित्र हमारा । पै जग धध दूर मोहि डारा ॥  
काम क्रोध तिस्ना मन माया । है रिपु कछहु उपाय न पाया ॥

किछु उपाय नहिं आवै, जाते जाहि नेवारि ।

है बैरी मोहि गाढे, सको न यह सब मारि ॥

अहो तुम राजा कर बारी । अरुभि रहिउ सुख बीच पियारी ॥  
सुखमों काम क्रोध अधिकई । तिस्ना मया करइ अगुवाई ॥  
चारि पखेरु तोहि तन माहीं । चारों चारा नित उड़ि जाहीं ॥  
रेत भीउं चारों कर प्यारी । मरि कै जियहि होहि गुनधारी ॥  
मन दरपन ऊपर चित दीजै । नाहीं है सो निर्मल कीजै ॥

माज सजो मन दरपन, रात देवस चित लाइ ।

स्याम रग अतरपट, उठि आगे सों जाइ ॥

बोलव सोइव खाइव थोरा । होइ होइ ती कारज तोरा ॥  
औ चिहार प्रीतम की लीजै । जो सिखवै सो कारज कीजै ॥  
औ, निसबासर अकसर रहना । सुमिरन जाप बीच दुख सहना ॥  
पै यह मन है सनु समाना । जात न मारा सुख लुब्धाना ॥  
मन बरजे कर्ह काको करई । मन न मरै बरु पारा मरई ॥

मालिन हिता उपाय दै, गई आपने ग्रेह ।

इद्रावति कै मान से, भयउ समस्त सनेह ॥

चलु मन तहा जहा फुलवारी । तहाँ बसा है दरस भिखारी ॥  
मित्रहि भेंटहु देखहु फूलू । है फुलवारी परमद मूलू ॥  
धन सो मानुष धन तेहि भागू । जेहि मधु मिठेउ खेलि कै फागू ॥  
जेतो तेहि पतिभार सतावा । तेतो सो वसन्त सुख पावा ॥  
धन जग माली सिर्जन हारा । कुल पलुहावत है पतिभारा ॥

भागवत सो मानुष, है तेहि धन धन हाथ ।

मित्र बदन औ फूल मुख, देखै एकै साथ ॥

## फुलवारी खंड

इद्रावति दिन रात बितावा । भोरहि सखियन कह हकरावा ॥  
 भै न विलव सखी सब आई । तारा समा रही जहं ताई ॥  
 आई ससि बदनी थोर दीनी । सकल राज दीपी पटुमीनी ॥  
 आई समुदे कुल की सुता । यहु व्याहों बहु अग्याहुता ॥  
 घोर समय वह नषत सहेली । धन मयक घेरेन अलवेली ॥  
 रानी की सब सहचरीं, आई जुरीं तेहि पास ।

सब अपछरा समा रहि, भवन भयउ कविलास ॥

इद्रावति सखियन सों कहा । सो दिन गयउ विछुं जो दहा ॥  
 जग सों पतिभारी रिनु गई । पलोहे विछुं नवल रिनु भई ॥  
 काल्ह जनायेउ चेला नारी । फूल रही है मन फुलवारी ॥  
 चलहु गवन बारी दिस कीजे । फूल देखि परमद रस लीजे ॥  
 नहिं जानहिं सिर परिहै कैसो । खेलहु होइ खेलना जैसे ॥  
 फुलवारी चाहत है, मन बैरागी मोर ।

चलहु देखिये उपवनै, है बसत रिनु थोर ॥

थोरा है कुसुमाकर बेला । चलि देखिहु औ खेलहु खेला ॥  
 बीतो बेला छूटा वानू । हाथ न आवै भँलै परानू ॥  
 सकल समै को भेद छुपाना । है हम लोगन ताको जाना ॥  
 भेटत आ राखत करतारा । जो चाहै है सिरजनहारा ॥  
 समय खरग है काटन हारी । जात चलछि तेहि भेटु पियारी ॥  
 मधु मीठो है मधु समा, मधु दरसन को लेहु ।  
 हार सरीर शीव को, हार कुसुम को देहु ॥

सब काहु धन आज्ञा माना । फुलवारी दिस कीन्ह पयाना ॥  
 इद्रावति रथ ऊपर चढ़ी । दूनो बढी रूप को बढी ॥  
 चली मानसों ब्राह्मन वारी । बनियाइन नाइन पटिहारी ॥  
 चली सोनारिन कचन बरनी । रजपुती खतिरिन मनहरनी ॥  
 लोनी धन हलवाइन भली । अघर मिठाई चाटत चली ॥

चली सहेली सुदरी, इद्रावति के संग ।

गीत बसंती गावतैं, पहिरे दकुल सुरंग ॥

मन फुलवारी मों सब गई । देखि सुमन को सुमना भई ॥  
 वेता मालिन भेटेउ आई । चद्रवदन देखै दुति पाई ॥  
 सुगंध कुसुम को हार सवारा । सब सुदरि के गीउ मों डारा ॥



देखि भंवर गन गुजत तहा । एक सखी बोली गन महा ॥  
 धन यह मधुकर धन यह फूलै । किन के ऊपर अलि मन भूलै ॥  
 जगत मभार सराहिये , भवर फूल के हेत ।  
 भवरहि चिता फूल की , फूल वास रस देत ॥  
 सुनि सचेत इद्रावति रानी । बोली सुनिए सखी सयानी ॥  
 जग में प्रीति बखानहु सोई । जीवन मरन एक सँग होई ॥  
 खोटी प्रीति भवर की आहे । भवर आपनो कारज चाहै ॥  
 आइ भवात वास रस आसा । लै रम तजत फूल को पासा ॥  
 लै रस वास भवर उडि जाई । मरत न जव सुमनस कुम्हिलाई ॥  
 प्रेमी ताको जानिये, देह मित्र पर प्राण ।  
 मित्र पथ पर जिउ दिहै, जुग जुग जिए निदान ॥  
 धन जो प्रीतम पर जिउ वारा । सिर पर चला प्रेम का आरा ॥  
 धन जो परा हुतासन माहीं । और सहायक चाहा नाहीं ॥  
 दया दिष्ट प्रीतम तब धरा । पावक फूल भयेउ नहि जरा ॥  
 धन जो मित्र आपनौ चीन्हा । पुत्र जीउ आगे कै दीन्हा ॥  
 मुवा न कहो जियत है सोई । अलख पथ जो जूझा होई ॥  
 मित्र जो हैं करतार के, मरत नाहि हैं सोइ ।  
 एक मदिर तजि दूसरे, गवनत हैं वै लोइ ॥  
 गायउ गीत एक धन प्यारी । जग है करता की फुलवारी ॥  
 आपुहि माली आपुहि फूला । आपुहि भवर फूल पर भूला ॥  
 आपुहि रूपवत सो होई । प्रेमी होइ रिक्त है सोई ॥  
 आपुहि परगट गुपुत अकेला । गुरु होइ कहूँ कहूँ होइ चेला ॥  
 आपुहि दाता करता होई । दिष्टा खोता बकता सोई ॥  
 सुनि सरवन दै चेत सों, सपन बखाना गीत ।  
 उपजी सब के हिदैं , चतुर सखी की प्रीति ॥  
 एक कहा हो राजदुलारी । है आनद ठाउ फुलवारी ॥  
 खेल एक खेलहु सब कोई । जासों स्वात बीच मुद होई ॥  
 एक कहा आनद न चहक । निस दिन आगम सोचमो रहक ॥  
 बहुत अनद न चाहैं प्यारी । ना तो परै आइ दुख भारी ॥  
 एक कहा चिता भल नाहीं । तरुनी चिता सोंक बिरभाहीं ॥  
 खेलि लोडु नैहर मो, सब मिलि परमद खेल ।  
 पुनि नैहर के छाडतैं, सासुर होव अकेल ॥  
 हम अज्ञात न सासुर चीन्हा । यह नैहर ऊपर चित दीन्हा ॥  
 है जग जीवन खेल समानू । ऊमर नहीं है मरन निदानू ॥  
 हम कह पार मीनु सो नाहीं । निसरि गगन महि तट ते जाहीं ॥

जानत मरम हमारो सोई । जाको सुमिरत है सग कोई ॥  
मूरत अलख नहीं जग टाऊ । हम तुम राखा है तेहि नाउ ॥

यह मूरत कां तजि कै, चित्त अमूरत देहु ।

जाहि अमूरत श्यान से। स्वर्ग लोक फल लेहु ॥

राजकुअर फुलवारी माहीं । धन को आवन वृभा नहीं ॥  
चातुर चेता की चतुराई । सब काहू से बात जनाई ॥  
है फुलवारी मो एक जोगी । है काहू को प्रेम वियोगी ॥  
है यह टौर बहुत दिन संती । नहि जानउ वाउर केहि नेती ॥  
सुनि के सखिन कहा चलु रानी । देखे हैं कस जोगिय ध्यानी ॥  
बात सुधानी सखिन कह, चली सखिन के सग ।

एक एक सब काहू, लीन्हे फूल सुरग ॥

वरजा एक अगम की नारी । तुम सुरूप राजा की वारी ॥  
अलखेली लागहु भल देखे । तुम तिय जिय अस जिय के लेखे ॥  
हसितै वारी बिना वियाही । जोगी देखे तोहिं न चाही ॥  
लागहु तपी नयन मों मीठी । यह जिनि होइ लगै तोहि डीठी ॥  
नहि जानहि जोगी कस अहई । आपन कथा केहि नित दहई ॥

देखहु मन फुलवारी, जाहु न तपी सर्पी ।

होत पतग तपी वह, देखि वदन के दीप ॥

जब यह बात सखी वह कही । सुनि मलीन रानी वह रही ॥  
औरन कहा चलहु वहि वारा । जग करता है रच्छक तोरा ॥  
रच्छक आप अलख है जाको । एकहु बार न वाकै ताकहु ॥  
पै अबहीं देखहु फुलवारी । फेर चलेहु जेहि और भिखारी ॥  
सुखी भई यह बात सयानी । लीन्ह सुरग फूल एक रानी ॥  
देखत रहिगै रानी, लीन्हे फूल के हाथ ।

एक सखी ह सि बोली, इद्रावति के साथ ॥

ह सि कै मालिन कै गुन गावा । धन चेता अस फूल लगावा ॥  
उतर दीन्ह सुनि चेता रानी । मोहि न सराही अहो पियारी ॥  
सुमिरहु तेहि जो है मुख दाता । जे यह फूल कीन्ह रग राता ॥  
जो हमार दोउ हाथ बनावा । जेहि करते मै फूल लगावा ॥  
जग मों जावत है सब बना । तावत करता का दरपना ॥

दीठ होइ तो देखऊ, तन आदरस मन्तार ।

वदन विराजत है तेहिक, जेहिक सकल ससार ॥

है वह एक जगत उपराजा । जो दोइ होत वनत नहि काजा ॥  
धरती गगन सवारा सोई । तासो जोत अउर तम होई ॥  
करता तीन अउर दुइ नाहीं । एकै है दोऊ जग माहीं ॥

जो किछु करत न पूछा जाई । पूछा जाइ जनम जेह पाई ॥  
 कौन्हा निस दिन औ रवि चदा । तेहि सुमिरन मों सबहि अनदा ॥  
 रात दिवस दुह चीन्ह है, रात भिटत दिन होत ।  
 याही सो लेखा बरस, जानत है सत्र कोइ ॥  
 इद्रावति धन कमल सुबासा । आइ भवर गूजे चहुं पासा ॥  
 कहा सखिन सो डर जिव पावै । भवरन मो तन डक लगावै ॥  
 कहेन सखिन तुम कमल पियारी । लेत भवर हैं बास तुम्हारी ॥  
 मोहें बास पाइ कै तेरी । कहा तिन्हें सुधि बिनधै केरी ॥  
 फूल भवर होइ आइ भवाहीं । तोहि ऊपर तो अचरज नाहीं ॥  
 भवर बास के कारने, चहुं दिस आइ भवाहि ।  
 पोढा मजकरू रानिया, बिनधै की डर नाहि ॥  
 जहं लग सुदर रहीं सयानी । फुलवारी देखे रह सानी ॥  
 कहा एक आगम की वारी । धन नइहर जायो फुलवारी ॥  
 फुलवारी औ फूल विलोकैं । बहुत अनद वढी है भोकैं ॥  
 फेर न देखब अस फुलवारी । जव गवनै जावै ससुरारी ॥  
 परै सीस पर भारी भारा । कैसे राखिही कन्त हमारा ॥  
 नइहर अहै पियाइ, चक चूहट जिय होइ ।  
 सुमिर गवन सासुर को, दूर परै सच कोइ ॥  
 सुनि इद्रावति सासुर नाऊ । मन मो सोच कीन्ह तेहि ठाऊ ॥  
 कहा जात्र निश्चय ससुरारी । नइहर तजव तजव फुलवारी ॥  
 छूटि परैं सब सखी सहेली । जावै सासुर अन्त अकेली ॥  
 अहो सखी आगम मोहि सूझा । सासुर गवन आजु मै बूझा ॥  
 अस फुलवारी पाउब कहा । सासुर नगरी होइह जहा ॥  
 तुम्हें समा कित पाऊ, एक बैस की नार ।  
 नइहर खेल ना पाइव, जव जावै ससुरार ॥  
 समुझा सखिन सोच मो रानी । बोली सरब बोध की बानी ॥  
 अहो पियारी सोच न करहु । जेहि प्रीतम प्यारे सग रहऊ ॥  
 ठाउ देह सुख मन्दिर प्यारी । लाइ देखावहि तोहि फुलवारी ॥  
 देइहै बहुत हमै अस चेरी । करइ रात दिन सेवा तेरी ॥  
 प्रीतम जिउ सम राखै तोही । तोहि सग खेलै खेलइ वोही ॥  
 अस दुख देइहै सासुरे, तोहि कामिन कह सोइ ।  
 वैसो सुख नइहर मो, मिला न कबहुं होइ ॥  
 इद्रावति फिर बात निसारा । तो सुख देइहै कन्त हसारा ॥  
 जो नइहर मो जोरब नेहा । होवै एक जीव दुइ देहा ॥  
 चलब मान तजि सूधी चाला । तो सासुर अचउव सुख हाला ॥

रहवै सत्त सनेह संहारे । काम क्रोध त्रिसना कह मारे ॥  
 राखव प्रीत सिलव गुन नीका । सुमिरन करव पियारे पीका ॥  
 तो पाइव सासुर सुख, प्रीतम होइह वाय ।  
 सुख अनन्द निन मानव पिया पियारे साथ ॥  
 घन की करनी जोखइ पीऊ । एहि समुझ डर मानत जोऊ ॥  
 जाकर भारी होइहै तूला । सुख मंदिर द्वारा तेहि खूला ॥  
 जेहि हलुका होइहै दुख सहुई । औ दुख अगिन मंदिर मा रहई ॥  
 करनी सिखा जान सब कोई । दाहिन सो पाये भल होई ॥  
 देहि लिखा वाउ सो जाको । बहुत कलेस परै सिर ताको ॥  
 करनी तेती छोट बड, सब किछु पूछे जाहि ।  
 सतवती गुनवत पर, डर एको कछु नाहि ॥  
 सखी एक आँसू कह ढारा । पूछेन कहा परान तुम्हारा ॥  
 कहा गवन को दिन मै बूझा । सकट दुख ता दिन को सूझा ॥  
 जब सासुर गवने मै जाऊ । देहि सकत मंदिर मोहि टाऊ ॥  
 दुइ जन पूछहि को पिय तेरा । को है जासो मगु तैं हेरा ॥  
 पूछहि कवन पथ तैं लीन्हा । डरे सो उत्तर जाइ न दीन्हा ॥  
 उत्तर देउं तो वाचऊ, ना तो मारी जाउ ।  
 यही बूझि मै रोई, कैसे होइ वह ठाउ ॥  
 रानी कहा रहइ जिउ कहा । पूछहि नदिन गवन घर महा ॥  
 एक कहा यह जीउ पियारा । तापल रहइ सरीर मभारार ॥  
 एक कहा जिउ पूछा जाइहि । पूछे बीच न काया आइहि ॥  
 एक कहा दुइ वात न अहई । का पर कया बीच जिउ रहई ॥  
 एक कहा कछु लइ तन कहना । कहना सो लहना चुप रहना ॥  
 गवन मंदिर मो सुख दुख, डर सो दूटै हाड ।  
 अहै सरग फुलवारी, अहै नरक को गाड ॥  
 बोल उठो एक सुदर नारी । रहत फूल नित भरत न प्यारी ।  
 रग सलो न फूल भरि जाई । चक चूहट उपगत अधिकारी ॥  
 सुमन सुवर्न सुगन्ध सोहाहीं । अत भरे माटिन मिलि जाहीं ॥  
 उतर निसारा बूझन हारी । नित जो एकै रहत पियारी ॥  
 जग माली गुन रहत छियाना । बहुत बरन गुन जात न जाना ॥  
 यह जग है फुलवारी, माली सिरजन हार ।  
 एक एक सो सुदर, लावत ताहि मभार ॥  
 जीवन यह जगती हम पाई । निरु एक आवै निरु एक जाई ॥  
 केतिक बरन के फूलन फूले । केतिक की लालय मन भूले ॥  
 केतिकन रूपवत अवतरे । केतिक विरस आग सो जरे ॥

केतिकन भइन सलोनी नारी । केतिकन तिन पर भयेन भिखारी ॥  
केतिकन विद्यावती भयऊ । केतिकन धनी बली होइ गयऊ ॥

अब हेरे नहिं पाइये, तेन सररीर को चीन्ह ।

केतिक रतन पदारथ, मीचु चोर हरि लीन्ह ॥

हम हूँ चलन अवध के पूजे । फेर न जग मो आइव दूजे ॥

फूल दखि का भँखहु पियारी । हम तुम सबकी आइहि पारी ॥

एक कहा वैरागिन होहु । अहै मरन हम कहँ औ तोहु ॥

होइकै वैरागिन तप करहु । जासों सरग सदन मह परहु ॥

कहकी भेस न फेरै चाही । फेरे भेस भलो नहिं आही ॥

पिय की सेवा नित करहु, रहहु सम्हारे नेह ।

याते दाता- देइहै । आगम दिन सुख गेह ॥

कहेन बहुत अब आगम सूझा । परमारथ सब का हुअ बूझा ॥

अब रानी चलि देखहु जोगी । कैसे राखत भेष बियोगी ॥

चंद्र नखत सँग पाव उठायउ । जाइच कोरहि दरस देखायउ ॥

सकल सखिन कह जोगी भेषा । जिउ दरवन पायउ जिउ देखा ॥

इन्द्रावति औ सखिय सयानी । जोगी रूप बिलोकि लोभानी ॥

मन लोचन मों चद दिस, रहिगा चितै चकोर

चद बिलोकत रहि गयउ, निज चकोर की ओर ॥

जब लग नैन चार रहु चारी । राजकुवर कह ढग अस भारी ॥

दामिन चमक चाह अधिकई । हुअऊ चितै रहे चित लाई ॥

बहेउ पवन लट पर अनुरागे । लट छितिरान पवन के लागे ॥

परी बदन पर लट सटकारी । तपी देवस भा निस अधियारी ॥

मोहि परा दरसन कर चेरा । हना बान धन आखिन केरा ॥

प्रेम पथ को पथिक, पहरें जोग डुकूल ।

परी साभ तेहि मगुमों, गएउ बाट सो भूल ॥

हा हा सखिन कहा पछिताई । काहें तपी परा मुरभाई ॥

नहि मुरछा मुख देखि सयाना । लट परतहि मुख पर मुरुछाना ॥

एक कहा जठ से मुख सोभा । होत अधिक लखि मुरछा लोभा ॥

एक कहा लट नागिन कारी । डसा गरल सों गिरा भिखारी ॥

एक कहा लट जामिनि होई । रात जानि जोगीगा सोई ॥

एक कहा निसि जानि के, तपी गयउ जो सोह ।

का जोगी के जोग सों, तप पुरषारथ होइ ॥

जोगी सो जो जागै रयना । मन पर धरै ध्यान की नयना ॥

ध्यान समेत रयन जो जागै । ताको हाथ मनोरथ लागै ॥

पहरू जागत ध्यान न लावा । याते तेहि कल्लु हाथ न आवा ॥

मन जागै तब जागव नीको । चित फिरि आवै धरती जीको ॥  
एकै बार न जागै कोई । थोरे दिन को बाउर होई ॥  
जाके मन औ नैन मों, दरसन रहा समाइ ।  
ताको नींद कहा परै, चिन्ता आवै जाइ ॥

बोली एक सहचरी स्यानी । जब मुख ऊपर लट छितिरानी ॥  
यह मुख यह तिल यह लटकारी । ये तो कहि कै गिरा भिखारी ॥  
नहि जानहि आगे कस कहते । चेत समेत तपी जो रहते ॥  
आवहु आगे अरथ लगावें । सब कोउ अरथ पंथ पर पावै ॥  
सुनि सब सखी चेत दउड़ावा । जोगी हु ते समस्या पावा ॥

एक कहा मुख लट तिल, मुकुर फाँद है चार ।

जग मनसुता फँदै कह, है एतो उपकार ॥

आपुहि देखि मुकुर मो भूलैं । दूसर सुवा जानि मन फूलैं ॥  
दूसर देखि देखि कै चारा । कहैं तुरत यह फाद मभारा ॥  
एक कहा मुख तिल लटकारी । सबुल भवर अहै फुलवारी ॥  
एक कहा मुख ससिहि लजावा । लट जोगी को मन अरुभावा ॥  
तिल इद्रावति मुख पर सोहै । तिल नाहीं जासो जग मोहै ॥  
इद्रावति दृग लिखित कै, भा विरच मतवार ।

मसि लगाउ लेखनी गिरेउ, सोभा मै अधिकार ॥

एक कहा का कोउ सराहै । रूप गरन्थ रानि मुख आहै ॥  
तिल है सुन गरन्थ मभारा । लट स्वामल सोहत मसिधारा ॥  
सबन बखाना जो जस बूझा । इन्द्रावति कह आगम सूझा ॥  
कहा तपी अस कहते आगे । गरव न करु सुन्दर डर त्यागे ॥  
यह मुख यह तिल यह लटकारी । अत होइ एक दिन सब छारी ॥  
कहेन सखी सब आपमो, घन इद्रावति बूझ ।

घन अधीनता घन वचन, घन घन घन घन सूझ ॥

दाया सखी गुलाब मगायउ । छिरिकि कुअर कह बहुत जगायउ ॥  
सोह गये अधि को नहि जागा । वह गुलाब सीतल तेहि लाग्गा ॥  
एक कहा यह भी मतवारा । घन कै नैन बरनी दारा ॥  
सखिन कहा हो प्रान पिथारी । मारेहु चखुसर गिरा भिखारी ॥  
फिर जिउ जो जोगी यह पावै । तोहि तजि औरहि ध्यान न लावै ॥  
सखिन न जानहि जोगी, है बाउर तेहि लाग ।

तजा राज कालिंजर, लीन्ह जोग बैराग ॥

नाह नाह में आपन मारा । काहे बूझहु दोष हमारा ॥  
कहेन दोष नाहीं घन तेरा । दोष तुम्हारी आखिन केरा ॥  
जेहि चितवें तेहि मारहि बाचू । सुमिरि सुमिरि तोहि देइ परान् ॥

फेर सखी सब बात सम्हारा । दोष नैन नहिं दोष तुम्हारा ॥  
रूप दरब मुख तोर पियारी । अम्बुक जमल करहिं रखवारी ॥

चाहा लेइ तपी दृग, होइ के चोर समान ।

नैन तुम्हारे तस करै, मारा बरुनी बान ॥

कर तसकर को काटा चाही । जीउ न मार दोष धन आही ॥

हैं हत्यारे नैन यह तेरे । खजन भिर्ग अहै दोउ चेरे ॥

अहै नयन सेो उचम कानू । तासेो बात सुना यह प्रानू ॥

यह नित जो दोऊ जग कीन्हा । रसना एक करन दुइ दीन्हा ॥

की कहु एक बात मति सानी । सुनि दुइ बात आन सेो रानी ॥

बहुतन को ससार में, जो सिर्जा दिन रैन ।

छाप दिन मन ऊपर, औ सरवन पट नैन ॥

भसि औ पत्र सखी एक आनी । जीउ कहानी लिखा सथानी ॥

बहुरि लिखा हेो जोगी मेपा । जोग तोर इन्द्रावति देखा ॥

ताको दरसन पाय भिखारी । मुरछानेउ नहिं सकेउ सम्हारी ॥

अवहीं तेरो जोग न पूजा । जोग छोडि करु काज न दूजा ॥

लिखा सोधान सखिन के हियरे । चली राखि राजा के नियरे ॥

जीउ कहानी लिख कै, राखि चलीं तेहि पास ॥

छोडि तपी को आई, जहाँ सदन सुख बास ॥

जब राजा जागा सुधि पावा । जागि चहुँदिस दिष्ट लगावा ॥

पत्र उठाइ विलोकेउ ज्ञानी । पदा संपूरन जीउ कहानी ॥

जब बाचा इन्द्रावति नाऊ । भूखा बहुत अपन मन ठाऊ ॥

उपली प्रेम भाव डर दाहा । बहुतै पछताना कहि हा हा ॥

सेो रानी आई मोहि आगे । पहिरेउं यह कथा जेहि लागे ॥

मोहिं लेखे एक पल भर, उपवन भएउ बहार ।

अब देखेउ फुलवारी आई बसेउ पतभार ॥

कहा गई वह प्रान पियारी । जेहि कारन मैं भयउ भिखारी ॥

कहा गई वह दीप सिखा सी । जाको मैं रम्भा सी दासी ॥

दिष्ट घरी तनु पुनि का भई । देखिन परी परी सम गई ॥

रे जिउ कमल सुगधित अरगू । गयेउ न लागेउ अलि होइ सगू ॥

गोरी वह गोरी सम गोरी । नैन नैन सेो स्यामा जोरी ॥

गहा धिर्ज मन भीतर, लिहैं मिलन की आस ।

भा कालिंजर राजा, विप्र योग को दास ॥

## नहान खंड

इद्रावति मन प्रेम पियाप। पहुँचा आइ तीज तेवहारा ॥  
 रहिल जहाँ इन्द्रावति प्यारी; आइन राजदीर की वारी ॥  
 होइ कष्ट मन रहा समाना। पै आनन्द सखी नित माना।  
 कहेनि सहेलिन है डर मानू। मन तारा चलि करहि नहानू ॥  
 रतच हितू जन के वध भई। सखिन माथ मन तारा गई ॥  
 केस सुगधित खोलि कै, राखि चीर सब नीर।

पहिरि नहान दुकुल सकल, कीन्दा सजल करीर ॥

अव जूरा इन्द्रावति छोरा। भयउ घटा भौ चाद अंजोरा ॥  
 पैटिहु जव जल भीतर रानी। पानिय पायउ तारा पानी ॥  
 भुनना भूलेहु करत नहानू। लहकि चहेउ जुम्वे अधिरानी ॥  
 लखि नय मोती की अमलाई। सुक छपाना आप लजाई ॥  
 मनु तारा भा गगन समानू। भयेउ मयंक समा वह प्रानू ॥  
 सुरज उआ आकासही, चद्र उआ जल माह।

कुमुद तामरस फूले, दोउ मित्र के पाह ॥

कहा रतन सौ एक सहेली। वरनि न पारो तोहि अलवेली ॥  
 केस कस्तुरी हिदें फांदू। अहै लिलाट अजोरा चोंदू ॥  
 अहै भिऊंटी धनुक समानू। है वरनी जिसनू कै वानी ॥  
 नैन सलोन जगत मन हरा। करन सीप मोतों सौ भरा ॥  
 नासिक मनहुं कीर वैठो है। वरक अकर कला निधि को है ॥

चिबुक कूप को पानी, चाहत कीर घरान।

फूल गुलाब कपोल है, तिल है भँवर तमान ॥

सीरन लाल अघर रतनारा। दसन पाँत मोती को हारा ॥  
 मन भेरो लालहि चित धरा। जाइ चिबुक गाड़ा भौ परा ॥  
 रेखा एक ग्रीठ भौ सोहै। का वरनो सोभा मन मोहै ॥  
 निर्मल वदन आरसी छल्लै। गल कंचन की डाड़ी राखै ॥  
 अमल कनक सौ भुजा बनावा। सुन्दर हाथ कमल मन भावा ॥

यह सामै हो रानी, जल औ मुख रवि तोर ॥

पाइ होऊ कर वारिज, विकस चलें मुख गेर ॥

उरज वीर दुइ मनमथ कोहैं। छवि उपवन दुइ श्रीफल मोहैं ॥  
 नाहीं नाहीं चुप यह जानहु। बंटा जमल जोत के मानहु ॥  
 का वरनो रोमाचलि हेरी। सेरुहै मदन वाहनी नेरी ॥



पातर लक केस की नाई । नाहीं सों सिरजा जग साई ॥  
 जघ चरन सो आचम्भो है । रम्भा खम्भ कमल पर सोई ॥  
 मानहु खम्भा रूप के, जुगल जघ है तोर ।  
 चरन बखान न कै सकों, नित परसै चित मोर ॥  
 मुदरता को लच्छुन जेते । प्यारी चेरे तेरे तेते ॥  
 लट कुतल अति स्यामल आहै । भौंह स्याम जैहि इद्र सराहै ॥  
 स्याम अधिक लोचन सेवराहै । स्यामल बरुनी जिशनु डेराहै ॥  
 ललित अधर औ रसना तोरे । अंगुली सीस ललित रग बोरे ॥  
 ललित कपोल गुलाब लजाहीं । जग मन मधुकर समा लोभाहीं ॥  
 तरवा और हथोरी, आनन रसना छोट ।  
 गल कुतल दिर्गलाव है, बानन मिलै न बोट ॥  
 दसन सेत औ नैन सेताई । अधिक सेत कछु बरनि न जाई ॥  
 गोल सीस औ बदन तुम्हारा । गल एड़ी विधि गोल सेवारा ॥  
 ऊँच नासिका ऊँची भौहैं । बरुनी ऊँच बात सम सोहैं ॥  
 करन छिद्र पायउ सकराहै । साकर नासिक छिद्र सोहाहै ॥  
 आहै साकरि नाम तुम्हारी । तोहि विधि सौँपै सानि सवारी ॥  
 एतो सुषराहै पर, रचिक गरब न तोहिं ।  
 सुदर सील तेहारी, लागत नीको मोहि ॥  
 निज बखान इद्रावति पाए । रही लजाइ सीस औंधाए ॥  
 कहा बखान करहु का मेरा । है मनाक जीवन जग केरा ॥  
 का अमिमान देह पर करहुँ । एक दिन होइ छारे होइ परऊँ ॥  
 गरब सखी सब ताकह छाजा । जो त्रैलोक बीच है राजा ॥  
 जे निघनी को सग न चाहा । भयेउ न तेन्है अगम सौं लाहा ॥  
 परगट रग देह को, देखि न गरबै कोइ ।  
 आवै एक देवस अस, छार कलेवर होइ ॥  
 बोलिन राजदीप की नारी । आवहु जलमों रचे घमारी ॥  
 जब लग सीस प्रिता को छाहा । खेलहिं कोउ करहि जगमाहा ॥  
 जब चल जाहिं कंत के देख । कैसी कैसो सहै कलेस ॥  
 नइहर देस कहा फिर आवन । कहँ यह पथ चलै यह पावन ॥  
 सो गुन एकउ हाथ न आया । जासों होई प्रीतम दाया ॥  
 जानों नहि पिय प्यारा, राखे कौनै मान ।  
 एकौ गुन नहिं सीखा, हम बाउर अज्ञान ॥  
 रानी कहा मेद अय कहना । केहि गुन होइ कत सों लहना ॥  
 एक कहा सेवा नित कीन्हेउ । चित मूरत सम पिय पर दीन्हेउ ॥  
 एक कहा लहना तब होई । पिय जो कहै करै घन सोई ॥

एक कहा नित करत सिगारा । चाहे धन कहँ कत पियारा ॥  
 एक कहा जो सूघर होई । पावै लाभ कत सोँ होई ॥  
 इद्रावति प्यारी कहेउ, ताकहँ चाहे पीउ ।  
 जो पिय की सेवा किहँ, गरब न राखै जीउ ॥  
 समुझ बन्दमों प्रीतम प्यारा । इद्रावति अलुक जल दारा ॥  
 नहि जानो केहि भाते सोई । दिन औ रात वितावत होई ॥  
 अरे जीउ दाया तोहि नाही । तेरो जीउ परेउ वँद माहीं ॥  
 जलभो रानी ठाढ तवानी । सखिन सात रसमों पहिबानी ॥  
 पूछे आगमपुर की बारी । सजल नयन केहि लाग पियारी ॥  
 आन अनद देवस है, अहै तीज तेवहार ।  
 केहि कारन चिन्ता मों, प्यारी जीउ तोहार ॥  
 सकल सखिन सो मरम छिपावा । आनहि भाँति कि बात सुनावा ॥  
 वह दिन समुझ सखी मै रोई । जा दिन नइहर विछुरन होई ॥  
 वह दिन समुझ सखी मै रोई । जा दिन नइहर विछुरन होई ॥  
 विछुरहु तुम सब सखी सहेली । सब अलवेलि रूप अलवेली ॥  
 मिलै कहाँ तुम समों पियारी । कहाँ अलिवेल कहाँ फुलवारी ॥  
 रहै न सासुर आदर मोरा । सासुर लोग करै नक तोरा ॥  
 सो दिन समुझि परै सोँ, जल महँ ठाढ तवाउ ।  
 नहि जानों कस होइ है, हम कहँ सासुर ठाउ ॥  
 रग न फीको करिये जी को । पी को सग पियारी नोको ॥  
 तब लग नइहर देस पियारा । जब लग मूरखता को पारा ॥  
 जब हीं खुलै से मुखी नैना । सासुर सोच बढे दिन रैना ॥  
 सासुर देस मिलै सब प्यारी । हितू तइग राग फुलवारी ॥  
 पीउ अनन्द मूल जब पावा । सब सुख राज हाथ मों आवा ॥  
 तुम का आपुहि को डरहु, है हमहूँ कहँ पास ।  
 पै सासुर कविलास है, रहँ जो प्रीतम पास ॥  
 खेलै लागिन तारा माहा । कोउ धरि काथ कोऊ धरि बाहा ॥  
 सुन्दरता सागर वह नारी । मन तारा मों रचा धमारी ॥  
 लै जल मुख कै ऊपर मारै । नरम कलोल देहि जब हारै ॥  
 रानी साथ कहा एक नारी । गहिरें पाँव न धरहु पियारी ॥  
 जो गहिरें पग राखइ कोई । नीर सीस ते ऊपर होई ॥  
 गहिर बहुत है आगे, डूवि मरै ननि कोई ।  
 ना तो खेल कोउ मो, महा दन्द दुख होई ॥  
 सुनि यह बात सखी एक रोई । आसु गुलिक जल ऊपर वोई ॥  
 पूछै और आसु कस दारे । खेल के बीच अनन्द नेवारे ॥

उतर दीन्ह सासुर मगु ठाऊँ । हे सागर भौ सागर नाऊँ ॥  
 होइ है जा दिन गवन हमारा । नहि जानौ किम उतरउं पारा ॥  
 यह नइहर तारा है जाना । जेहि आगे पगु धरत डेराना ॥

वह न जान कस होइ है, गहिर गम्हीर अथाह ।

इहै समुभि मैं रोइउँ, केहि बिधि होइ निबाह ॥

सुनि सब राज दीप की नारी । तजि आनद समुझा समुसारी ॥  
 आगम सोच कीन्ह सब कोई । सासुर पथ बीच कम होई ॥  
 बोलिन फेर सोच यह काहै । प्रीतम दाया पथ निबाहै ॥  
 होइ जलधि तो सेवक लेई । धन कहँ जलधि पार कै देहो ॥  
 जा सग व्याह होत जग माहो । पथ निबाहत सो धरि बाहो ॥

जनम सँघाती होत सो, जाके सग बियाह ।

जैम परै तस अगवै, धन को करै निबाह ॥

कै नहान सब वाहर आई । निर्मल अग परी की नाई ॥  
 लटकी लट इद्रावति केरी । दोऊ दिस ते मुख कहँ घेरी ॥  
 मुख लट सो सोहै वह रामा । एक चंद्रमा दूइ त्रिजामा ॥  
 लट कपोल पर सोहै कैसे । बैठा नाग वित्त पर जैसे ॥  
 सोन बिनावट दुकुज रंगीला । कीन्हा अग सो परगट लीला ॥

कै नहान घर कहँ चली, वै सब कनक सरीर ।

उनकी निर्मलताह सौं, भा निर्मल मन नीर ।

मन तारा केती रहि रानी । दिउरी एक देखि विथकानी ॥  
 प्रान नाटिका की वह स्यामा । पूछा कवन सती यह डाना ॥  
 सखियन कहा सती यह ठाऊँ । रानी कहा सती है नाऊँ ॥  
 तब की बात हमै सुनि परी । अपने कत लाग धन जरी ॥  
 जस तोहार तस ता गल नीका । खात तमोल देखावै पीका ॥

अब धन जरिकै छार भै, रहे न एकौ चीन्ह ।

दिउरी साखी करत है, अगिन छार तेहि कीन्ह ॥

इद्रावति करुना मैं रोई । एक दिन छार होइ सब कोई ॥  
 दिउरी के समीप होइ कहेऊ । हँहुँ कैसेो यह रानी रहेऊ ॥  
 हँहुँ कम रही चाल नारी की । दयावन्ति की मानिनि जी की ॥  
 कहाँ गई धन मिलै न हेरै । है ता जिउ दिउरी के नेरै ॥  
 हँहुँ कस रहा चरन औ हाथा । कैसेो रहा ग्रीउ औ माथा ॥

मन तेवान के डाढी, रही घरी भर आप ।

हिर्ट सात रस झूठा, बुझि जगत कहँ स्वाप ॥

इद्रावति जब ध्यान लगावा । सबद एक एक दिस ते आवा ॥  
 मैं का रहिउ रहौं बहुतेरी । जिनकी रहौं अपछरा चेरी ॥

सोक जगत छाड़ि के गई । मिलि धरती में माटी भई ॥  
इहा न लहत सिंगारी काया । लहत न गरव लहत है दाया ॥  
लहत न काया सुन्दरताई । लहत पुन्य मन की निर्मलाई ॥

सबद पाह इंद्रावति, अधिकी रही तवाइ ।

चिन्ता बहुते कीन्हा, अपने मदिर आइ ॥

हौ मै पाप भरी जग माहीं । आस मुकुत की है किन्हु नाहीं ॥  
है मोहि बीच दीप जहँ ताई । डरजँ करै कैसे जग साईं ॥  
साहस देत परान हमारा । अहै रसूल निवाहन द्वारा ॥  
निस दिन मुमिक मोहम्मद नाजँ । जासों मिलै सरग में ठाजँ ॥  
करता तोहि मोहमदि कीन्हा । माथ सुभाग अस तोहि दीन्हा ॥

ना कर सोच अगम को, राखु हिंदै में आस ।

जाके दीन बीच तैं, सो देइ है सुख वास ॥

अरे प्रीतम तैं मन हरा । अहों वियोग बन्दमों परा ॥  
आइ बंद सों मोहि छुड़ावहु । दोऊ जगत भलो फल पावहु ॥  
मोहि पाछे बैरी बहुतेरे । चरे साथी सेवक मेरे ॥  
खरग काड़ि बैरी कहँ मारहु । बद कूप ते मोहि निसारहु ॥  
अलख सँवारा तुम कहँ वली । चलै जगत मौ कीरत भली ॥

दूसर बद न भावत, जहाँ प्रेम को बद ।

जगत बद दुखदायक, प्रेम बद आनन्द ॥

## जुद्ध खंड

बुद्ध सेन क्रीपा कहँ सेवा । जैसे मानुष सेवै देवा ॥  
 राज कुंवर को वद सुनावा । सुनि क्रीपा क्रीपा पर आवा ॥  
 तब सहाय जगपति सों माग । सब पायव कछु एक न खाग ॥  
 क्रीपा चला कटक लै भारी । गोहन सुभट चले बलधारी ॥  
 पानहु दीन्ह समुद्र हलौरा । लहर मनुज तवेरम घौरा ॥  
 तवेरम दल सोहै , कज्जल गिर के रूप ।

रहेउ अचल कज्जल गिर , ताहि चलायउ भूप ॥

कहत न पारउँ तुरै वखानू । रहे चलत महेँ पवन समानू ॥  
 औ धिराय कै सामै माही । माटी चाह सो अधिक थिराहीं ॥  
 नीचे जल सम पाव उठावै । अगिन समा ऊपर कहँ धावै ॥  
 बाजी सकल पवन के जाये । मानहु चेत भेस धर आये ॥  
 वै सवार है पर केहि मानन । मनहुँ पवन ऊपर पउचानन ॥  
 यह समीर तेन आगे , चलत थकित होइ जाइ ।

आगे वै पगु राखहीं , पाछे पवन थिराइ ॥

क्रीपा आबागढ़ नियराया । आवा पति दुर्जन सुधि पावा ॥  
 गढ भारेउ औ कटक बटोरा । धरेनि अलग वीर चहुँ ओरा ॥  
 तिहना कोप सहायक आयउ । आयेउ गरव अधिक बल पायेउ ॥  
 गढ़ सों छूटन लागेउ गोला । डोला सात अकासहि डोला ॥  
 क्रीपा दिस छूटत अरि चोटा । भयेउ जगत करता की ओटा ॥  
 बाजहि बाला संजुगी , चहुँ दिस परेउ पुकार ॥

चार मास तहँ बीता , होत सत्रु सो मार ॥

जो करतार पथ पर जूझा । ताकहँ चिरञ्जीव हम बूझा ॥  
 करता मगु पर जे रन लायेउ । ताहि सहाय गगन सौ आयेउ ॥  
 आयेउ नभवासी की सैना । दीख न पारा ता कहँ नैना ॥  
 करता की सेवा के बेरा । होइ जहाँ डर दुर्जन केरा ॥  
 सुमिरन सेवा आधे करहीं । आधे लोग सत्रु संग लडहीं ॥

धन जो सिरजनहार मगु , गहि कै राखेउ पाव ।

पाव न टारा बुद्ध सो , आय उरद मो धाव ॥

गढ नों गरव राय मुख खोला । गरव वचन दुर्जन सों बोला ॥  
 जैसो जगपति तस तुम राजा । गढ सों निगरि बुद्धि तेहि छात्रा ॥  
 एकै एक करहि मिलि जूझा । जाय सुभट जन को गुन बूझा ॥

तब दुर्जन गढ़ सो निसराना । हलकी रज तिमिरार छुपाना ॥  
 चढ़ि मैदान कोप मा ठाना । छुमा खरग यह दीसो काढा ॥  
 भयेउ खेत के ऊपर, सीधै नीच भिड़ाव ।  
 आइ सरीरन सचरेउ, काहे करमों धाव ॥  
 सुमिरि हिये करता कर नाऊँ । मारा जमा कोप सिर ठाऊँ ॥  
 जय वह कोप गिरा गा मारा । आयउ मदनसिंह बरियारा ॥  
 धरम राय यह दिसते धायेउ । गदन निह कहँ बाधि लिगयेउ ॥  
 मदन विमद होइ सेवक भायेउ । आपा सुरा उतरि तेहि गयेउ ॥  
 दुर्जन कटक सहित तब धावा । अतरन रकत समुद्र बहावा ॥  
 एकै भये दौऊ दल, जमल जलधि मै एक ।  
 कटिन परगटेउ नजुग, मन सो गयेउ विवेक ॥  
 भयेउ घटा दालन सो कारी । खरगन भये बीज चमकारी ॥  
 गेदा सीस खरग चौगानू । खेलहि वीरहि चढ़ि मैदानू ॥  
 हाल आपनो आपनो चाहँ । अरि को शख चलाव सराहँ ॥  
 भाला खरग हनै सब कोई । बोडन खरग ठनाठन होई ॥  
 गगन खरग सो ठनठन गयेउ । दिन दिन औ धुन हन हन भयेउ ॥  
 वोनई घटा धूर सो, दिन मन रहा छिपाय ।  
 तहा महाभारथ भा, सबद परेउ हू हाय ॥  
 साहस राय गयद सरीरा । औ मन सिंह धरम रन वीरा ॥  
 खरग हनै जाके उपराहीं । विनु बिलगे सो वाचै नाही ॥  
 कैउ भये घायल वेउ मारे । भाला खरग सुरा मतवारे ॥  
 छुछावान सो भयेउ निखगू । भयेउ निखग वान को अगू ॥  
 बड़ेउ कमठ कहँ दाह कराहू । चकाचाक भा धाधक हाहू ॥  
 शुद्ध करत दौऊ कटक, थाके रहे अघाय ।  
 दुर्जन रिपु मारा परा, ता दल गयेउ पराय ॥  
 क्रीपा जय दुर्जन कहँ मारा । जाइ के बद सो कुँवर निसारा ॥  
 कुँवर कहा क्रीपा जस लीजे । जलज सिंधु दिस गवन करीजे ॥  
 क्रीपा कुँवर सहित गा तहाँ । रहा समुद्र गुलिक को जहाँ ॥  
 कहा बहुत राजा जिउ दीन्हा । काहुअ मोती हाथ न कीन्हा ॥  
 बहुत महीप भये मर जीया । मोती काडे नित जिउ दीया ॥  
 दीन्ह कुँवर कहँ क्रीपा, मोती ठउर बताह ।  
 औ खेवक हकरायेउ, राहहि दीन्ह चिन्हाह ॥  
 राजा जगपति यह सुधि पावा । मरमी जन सो मरम जनावा ॥  
 एक मनुष राजा सो कहा । ना जानहि जोगी कस अहा ॥  
 राजन ऊपर परन दुम्हार । नाही सबै निसारन हारा ॥

यह मोती तेहि काढ़व छाजा । राजा पुत्र होइ जो राजा ॥  
 बरजि पठावहु बेर न कीजै । जात खोजि कै आशा दीजै ॥  
 भायेउ बात निर्प कहँ, मेजा तुरत वसीठ ।  
 फेलि लियाई कुँवर कहँ, दीन्ह जलज दिस पीठ ॥  
 बैठा विछँ तरें अनुरागी । चिन्ता कथन हुतासन लागी ॥  
 ऋहै कवन उपकार बनावउँ । जातें प्रान बल्लभा पावउ ॥  
 जावक होउँ होइ दुख भेटउ । तो वह कमल चरन कहँ भेंटउ ॥  
 कजल होउ नयन लागि रहऊ । होउ पवन लट ऊपर बहऊ ॥  
 होइ मोती बेसर महँ परऊँ । होइ प्रतिविम्बी छाया धरऊँ ॥  
 ओहि प्रान प्यारी के, अमी भरे अधरान ।  
 ता पगु रज के ऊपर, वारो आपन प्रान ॥

---

## मधुकर खंड

इंद्रावति चिन्ता महँ परी । रहै न विनु चिन्ता एक घरी ॥  
आइ रैन तेहि बहुत सतावै । कल न सुपैती ऊपर पावै ॥  
कलगै गलगै जलगै काया । तेहि वियोग को पीर सतावा ॥  
सखिन मता आपुस मों कीन्हा । सब मिलि कै ऐसे मत लीन्हा ॥  
निस कहँ जहाँ रहै वह रानी । सदा सुनावहु एक कहानी ॥

होइ बहोरै जीउ के , सुनत कहानी बात ॥

चिन्ता जाय सरीर सों , नीद परे बहि रात ॥

एक सखी निस हेतहि आई । मधुरी वचन असीस सुनाई ॥  
कहा कहत ही एक कहानी । सरवन दै कै सुनियो रानी ।  
बहुत वचन करतार पठावा । जेहि सुनि कै बहुतेन मनु पावा ॥  
कहा बहुत जेन की मति फेरी । अहै कहानी आगेहि कैरी ॥  
अहै कहानी पै सुन रानी । है अमृत सानी रस बानी ॥

कहा कहानी कहिये , सुनो कान दे ताहि ।

जीउ बिरह सो तन महँ , उठत कराहि कराहि ॥

मन रानी को पाय सयानी । धन सों लाग से कहै कहानी ॥  
मोहनपूर रहा एक गाऊँ । तहाँ महीपत मधुकर जाऊँ ॥  
जस मधुकर रस रहै सोभाना । तैसे वह रस महँ लपटाना ॥  
जग रस बीच परा जो कोई । आगम रस नहिँ पावहि सोई ॥  
रस पावै जो जेहि करतारा । दहय दिष्ट सो हया उषारा ॥

मधुकर के मन्दिर् मों , रहै बहुत रनिवास ॥

संघत करै भँवर सम , लब अम्बुज के पास ॥

एक दिन राजा गयेउ अहेरें । देखा एक मिर्ग कहँ नेरें ॥  
मिर्ग चला मधुकर है हाका । मिर्ग पवन दुहुँ रहै कहा का ॥  
चला मिर्ग के पाछे सोई । छुटा लोग ना पहुँचा कोई ॥  
जात जात एकै बन महँ परा । देखा निर्छुँ एक अति हरा ॥  
भयेउ कुरंग कुरंग हेराना । तरिवर तरे आइ पछताना ॥

ऊँचा तरिवर देखि कै , और गम्हीरो छाह ।

सुख पायेउ दुख भूला , भउ अनद मन माह ॥

सोतल छाहा सो सुख पाई । पौड़ा भुई पर बसन छिपाई ॥  
ततिखन दुइ सुक आइ वईडे । बोले वचन आप महँ भीडे ॥  
पूछा एक कुसल हो प्यारे । केहि धरती सुख वास दुम्हारे ॥



जब सो हम तुम बिछुरे होऊ । मिला न तुम्हें समों हित कोऊ ॥  
 जेहि भेटेउ अपकारी पायेउ । तासो मागेउ प्रीत न लायउ ॥  
 सुभ बेला यह सुभ देवस, दरसन मिला तोहार ।  
 समाचार आपन कहे, जीउ धिराय हमार ॥  
 दूसर सुआ अघर कहँ खोला । समाचार की बानिय बेला ॥  
 जा दिन छूटा सग तुम्हारा । जाइ परेउँ एक विपिन मभारा ॥  
 तरिवर पर निर्विन्त वईठेउ । छल पहरा को एक न डीठेउँ ॥  
 सब अनजान न जानत कोई । गुपुत अतर पट सों का होई ॥  
 जिनि यह कहौ करौ असि मोरे । दहुँ अस प्रगटे भोर अँजोरे ॥  
 मै निवित्त अपने मन, आइ एक चिरिमार ।  
 खान्चा मारि बभायउ, डारेउ बद मभार ॥  
 लै मोहि प्रेम नगर के हाटा । बेचेसि चलिगा दूसर बाटा ॥  
 परेउँ रूप राजा घर माहीं । जहाँ दरब कछु खागा नाहीं ॥  
 तेहि के घरे सुन्दर एक बारी । तेहि की सुता सुदर सुकुमारी ॥  
 अति सुगध मालति की काया । जनुविधि सुगध मिलाइ बनाया ॥  
 मोहि राजा मालति कहँ दीन्हा । बचननसों सेवा मै कीन्हा ॥  
 कीन्ह पियार बहुत मोहि, दायावन्ती होइ ।  
 सेवा किहे पियारा, होइ अत सब कोइ ॥  
 मालति रूप न बरनै पारउँ । केतिको अर्थ न चित सँचारहु ॥  
 अबहीं तेहि सग भँघर न लागा । भिगँ नयन लखि आनन भागा ॥  
 मालति बास सालती बासा । मालति पास मालती पास ॥  
 जानहुँ ससि भुई पर अवतारा । पुहुमी पर उचरी अपछरा ॥  
 है सुकुमार बहुत बह रानी । बोलत बानी अमृत सानी ॥  
 है मालती सुवासित, सुगध भरे जनु अग ।  
 ज्ञान भरी सुदर सखी, रहै सदा तेहि सग ॥  
 एक देवस धन रूप निधानू । निर्मल तारा गइल नहानू ॥  
 सून मँदिर मों पिजर मोरा । रेवाँ रहा मजारिय तोरा ॥  
 बाचेउँ रिपु सों हियेँ डेराना । पिजर सो मै निसरि पराना ॥  
 बद छुटे आनद मै पावा । अत पखेरू अहइ परावा ॥  
 जेहि के छुलें छुटा सुखवास । तेहि बैरी कर का विसवास ॥  
 अब बन बन फेरा करउँ, समुभि पिजर को बद ।  
 काहू कर सेवक नहीं, मन मों रहत अनन्द ॥  
 सुनि मधुकर मालति कै नाऊँ । भा मालति मधुकर तेहि ठाऊँ ॥  
 उठि कै कहा बिहग पियारे । बात न बान प्रेम कर मारे ॥  
 तुम पडित बुधवत गरेवा । उतरहु आइ करउँ मै सेवा ॥

हहु नियरे पै करमो नार्हीं । रहेउ समाइ सकल तन माही ॥  
 आवहु सीस देउं तेहि ठाऊँ । तेहि लै चलहु अपाने गाऊँ ॥  
 जिउ अस राखऊ तुम कह , घरउ न पिजर माह ।  
 जल चारा आगे कै , रहौ जोरि दोउ बाह ॥  
 कहा सुवा तुम मानुष होऊ । तुम धरती पर डारहु लोहू ॥  
 आगे अब मानुष नहिं आवा । बहुतन औगुनता पर लावा ॥  
 है मानुष निर्दे हत्यारा । सकै अनुज कहँ जिउ सो मारा ॥  
 सात देह मानुष कर जाँरै । सात नरक द्वारे मर् डारै ॥  
 चाम जैरे तव दूसर देहीं । मानुष बार बार दुख लेहीं ॥  
 हौ पडित औ चातुर , कहाँ चलौ तेहि सग ।  
 जिउ पखी नहि पासै , पासे अग बिहग ॥  
 तुम मोहि यह सत बात सुनावा । मानुष परसै ऐगुन आवा ॥  
 पै मानुष बुध कै बउसाऊ । सकलो सिष्ट को जाना नाऊ ॥  
 मानुष पर दाता की दाया । सकलो सिष्ट कै नाम सिखाया ॥  
 करता की नेव मानुष अहई । का जो दोष पाप मो रहई ॥  
 प्रेम नगर औ मालति बाते । फेर सुनाउ चतुर महाते ॥  
 एक एक कै बरनहु , वह मालति की बात ।  
 सुनउ जीउ सरवन दै , हो पडित मुखरात ॥  
 कहा मोहि प्रान समो जेइ पाला । मन भा तेहि की प्रीत को माला ॥  
 मरमी भयउँ सदा कह सेवा । तेहि बेरान से भाषउँ मेवा ॥  
 सरवन सुनै जोग तेहि नाही । भूल न देखेसि देखेसि छाहीं ॥  
 नरक बीच बहुतन कहँ भरई । मन राखहि पै बूझि न करई ॥  
 नैना होइ न देखइ नैना । सरवन रखहि सुनहि नहि बैना ॥  
 वे सब पसु के मान हैं , वरु पसु चाह अचेत ।  
 जेहि के मन नहिं चेत हैं , तेहि को भेद न देत ॥  
 कहा कहा तुम मेरो भेटा । नहिं जानो का ऐगुन भेटा ॥  
 बिनती एक करउँ कर जोरी । मानु दया से बिनतिय मोरी ॥  
 मोर सदेस कान कै लीजै । प्रेम नगर कहँ गबन करीजे ॥  
 जायेहु जहँ वह मालति प्यारी न तासो भाखेहु विथा हमारी ॥  
 सपत तेहिक जेइ जनमा नोही । प्रेम हमार जनायहु वोही ॥  
 मोहनपुर मँ मधुकर , कहहुँ निर्प एक आह ।  
 बहुत बेयाकुल कीन्हा , प्रेम तेहारो ताह ॥  
 कहा तेहारो बिनती मानेउ । मालति कर मधुकर तेहि जानेउ ॥  
 एक बार तेहि कारन जाऊँ । धन से कहऊँ तेहारो नाऊँ ॥  
 शानक सपत दिहा नहिं काही । सपत भलो करता कर आही ॥

बहुत सपत जो मानुष खाहीं । ते जिन रहु तेहि अज्ञा जोही ॥  
 कहौ नाम सुनि कै तोहि लोभा । बिनु देखै मूरत औ सोभा ॥  
 यह सब कहि उड़िगा सुवा , मधुकर मन पछतान ।  
 पखी सम चंचल है , काया बीच परान ॥  
 हेरत सकल लोग और दास । आए सब मधुकर के पास ॥  
 लोग समेत निर्प घर पर आए । मन महँ प्रेम बसेरा पाएउ ॥  
 परगट राज करै औ बोलै । गुपुत दिष्ट मालति पर खोलै ॥  
 परगट सब के जाने भोगी । गुपुत भएउ मालति कर जोगी ॥  
 परगट रहइ आपने गाऊ । गुपुत रहै मालति के ठाऊ ॥  
 परगट सब से बोलै , गुपुत जपै वह नाम ।  
 मन महँ रहै व्याकुल , हरिगा सुख बिसराम ॥  
 मालति उहाँ बहुत दुख देखा । जा दिन सो गा सुआ सरेखा ॥  
 कहै कहौ वह पंडित सुवा । कादहु हुआ जियत की सुआ ॥  
 छूछा पिजर रहिगा रेवा । उड़िगा प्यारा प्रान परेवा ॥  
 जो पिजर की भीतर बोला । औ जानौ यह पिंजर डोला ॥  
 सो चलिगा केहि बन ठहराना । रहा आपना भयेउ बिराना ॥  
 सुवा आनि के मेरवे , पिजर देइ जियाइ ।  
 का औगुन दहुँ देखा , तजि के गथउ पराइ ॥  
 सखिन बुभावहि सुवा पियारा । ठहरा जब लग रहा तुम्हारा ॥  
 उड़िकै गा रहिगा पछतावा । कहाँ थिरै जब भएउ परावा ॥  
 जो पछताने आवइ हाथा । हम पछताई सकल तुम साथी ॥  
 पिजर देह रहा तेहि भारी । हलुक देह उड़ि लीन्हेति प्यारी ॥  
 उड़ि कै पन करि भयेउ अहेरी । तेहि डर छूट मजारिन कैरी ॥  
 पिजर बीच रहा सुवा , चारा चिन्त मभार ।  
 अब ऐसे तब मैं गएउ , सुख सो मिलै अहार ॥  
 दिन दस बीते सोच मों गथऊ । सुवा जाइ कै परगट भयऊ ॥  
 मालति देखि जीउ जन पावा । प्रान मिलै कहँ आगेहँ धावा ॥  
 कहा प्रान अस निथरे होइ । तोहि नित बहुत पिया मैं लोहू ॥  
 कहा सुवा बाचा मोहि दीजै । मोहि पिजर के बीच न कीजै ॥  
 मैं बन - बीच रहेउं जब भागा । नरक समा अब पिंजर लागा ॥  
 बाचा दीन्हा मालती , सुवा नियर भा आइ ।  
 कंठ सुवा कहँ लायेउ , प्रान पियारी धाइ ॥  
 कहा कुसल कुहु प्यारे सुवा । तोहि नित आसु नैन सो चुवा ॥  
 कहौ कवन औगुन मोहि लागे । जेहि नित छाड़ि हमै तुम भागे ॥  
 केहि बन भीतर रहेउ बसेरा । कहा कहा तुम कीन्हा फेरा ॥

सुनि कै सुधा असीस सुनावा । देह असीस सीस पुनि नावा ॥  
 तुम औगुन सेो निर्मल प्यारी । औगुन भरी सरीर हमारी ॥  
 तुम तो निर्मल तारा , गहहु करै अस्नान ।  
 पिजर धरा मंजारी , गा वह दूट निदान ॥  
 पिजर दूटा मिला दुबारा । बाहर निकसि पख मै भारा ॥  
 रहत न भावा वैरी रांषे । रिपु नित रहै घात सर साषे ॥  
 परोस जहाँ सत्रु केो होई । तहाँ निचिन्त रहै का केोई ॥  
 जाइ परेउँ ऐसे बन माहीं । खाग जहाँ चारा कर नाहीं ॥  
 हम तुम छूटि गये तेहि ठाँकेँ । इहाँ अहै हम तुम सब नाकेँ ॥  
 आयेउँ दरसन कारने , औ राखेउँ एक वात ।  
 सुनो मंदिर होइ जब , बात कही तब जात ॥  
 सुन मंदिर तब मालति कीन्हा । सुवा सयान भेद तब दीन्हा ॥  
 उड़ि उड़ि सब कानन महँ भयकेँ । औ सब तरिवर ऊपर गयकेँ ॥  
 मिला एक दिन एक परेवा । मित्र रहा कीन्हा मोर सेवा ॥  
 दोऊ एक बिछै पो गयकेँ । छाहा पाय सुखी मन भयकेँ ॥  
 सुवा साथ मै तुम्हें बखाना । जस तोहार सब बोनहूँ जाना ॥  
 बिछै तरे एक मानुष , सुना सकल गुन तोर ।  
 विनु आज्ञा अब आगे , कहि न सकै मुख मोर ॥  
 कहा पियारे बात तुम्हारी । जीउ देत हँ कहु बलिहारी ॥  
 तुम पंडित जो पंडित होई । अब सकु बात न भाषै सोई ॥  
 सिद्ध रूप तुम सुवा गेयानी । बात तोहार अमीरस सानी ॥  
 सिद्ध बात लाभ की कहई । का जो उलटी बातें रहई ॥  
 स्वानौ कोकरा जो मरि जाहीं । सिद्ध कहै भल है भल माहीं ॥  
 आज्ञा का मागत हौ , भाषहु जो मन होय ।  
 मिलबो लूट तुम्हारे , मरम न राखौ गोइ ॥  
 कहत बखान नाम गुन तेरो । सुनि कै वह मानुष भा चरो ॥  
 बिनती बहुत कीन्ह मोहि साथा । नग संदेस केो दीन्हा हाथा ॥  
 कहा जाइ मालति के गाकेँ । प्यारी साथ कहेउ मन भाकेँ ॥  
 मोहनपूर देस है मेरो । मै मधुकर राजा हित तेरो ॥  
 मोहि राजा कहँ प्रेम तुम्हारा । व्याकुल कीन्ह सोच मेो डारा ॥  
 एहि सदेस तेही कहे , कञ्हु बसीठ पर नाहि ।  
 जो सदेस ले आवहाँ , पहुँचावै चलि जाहि ॥  
 यह सुनि कै मालति सुकुमारी । चुप होइ रही न बात निसारी ॥  
 बिनती कीन्ह सुवा कहँ राता । दीन्हा ठाव बिछै कहँ राखा ॥  
 पिजर भीतर सुवा न आवा । लाग रहै छूटा सुख पावा ॥

रहै सुवा फुलवारी माहा । जहँ फल फूल औ सीतल छाहँ ॥  
 जस बैकुण्ठ बीच फल निथरें । तस निथरे अनदाना हियरें ॥  
 उडि बैठहि तेहि डार पर, जहाँ चलावै जीउ ।  
 मन काया के छौर महँ, सुख अनद भै धीउ ॥  
 मालति मन पर मधुकर नाऊँ । लिखिगा देखि परै मन ठाऊँ ॥  
 कवल समा मन प्यारी केरी । होइ मधुकर भा मधुकर चेरा ॥  
 प्रेम फाद प्यारी मन परा । मधुकर मन मालति मनहरा ॥  
 मन सो का कहँ सुमिरें कोऊ । सुमिरै ता कहँ मन सो सोऊ ॥  
 कहा अलख सुमिरौ तुम मोहीं । सुमिरे सो सुमिरौ मैं तोही ॥  
 रही सुगधित मालती, प्रेम भँवर तेहि कीन्ह ।  
 व्याकुल भई जीउ महँ, भेद न काहू दीन्ह ॥  
 दुर्बल भइ जव मालति बारी । धाई धाइ कहा बलिहारी ॥  
 कवन कलेस समान सरीरा । कहत सरीर सो आपन पीरा ॥  
 कहा कलेस न एकौ मोहीं । कवन कलेस सुनावउ तोही ॥  
 कहा भई दुर्बल तैं बारी । बिनु दुख दुर्बल होत न प्यारी ॥  
 हो री मात समा है तोरी । मोरी मरम न गोवहु गोरी ॥  
 जो दुख होई पिड महँ, सो मोसे कहि देहु ।  
 धाइ करौ उपकार सै, दुख कर अषद लेहु ॥  
 कहा सुवा वोही दिन जो आवा । मोसे मधुकर नाँव सुनावा ॥  
 है जो एक देस मोहनपुर । मधुकर राय तहाँ जस सुर ॥  
 सुवा सुनायेउ तेहिक सदेस । हौ तेहि कारन प्रेमी भैसु ॥  
 हौ माता सुनि मधुकर नाऊँ । भा गन मधुकर उडि कै जाऊँ ॥  
 मोहि मालति कहँ मधुकर नेहा । कीन्हा मधुकर नेही देहा ॥  
 तुम माता दाय्या भरो, दाय्या ऊपर आउ ॥  
 मोहि मालति कहँ मधुकर, कै उपकार मोराउ ॥  
 सुनि धाई दाय्या पर आई । मालति सो उपकार सुनाई ॥  
 सोपहु काज आपनो ताके । सिरजनहार नाम है जाकौ ॥  
 पुरुब पछुम के पालन हारा । है सो पुरवै काज तुम्हारा ॥  
 सुमिरहु ताहि बिसारहु नाहीं । सुमिरन बढ़ो अहै दिन माहीं ॥  
 बहुरि सुवा सो बिनती कीजै । बिनती कै जिउ कर महँ लीजै ॥  
 भेजहु तेहि कोहनपुर, मधुकर आनै आस ।  
 आने प्रेम वढाइ कै, तेहि मालति कै पास ॥  
 एक दिवस मालति मति पागी । बिनती करै सुवा सो लागी ॥  
 कामल बात जीभ से खोला । फाँद भलो है कामल बोला ॥  
 कामल बात कहै कहँ दाता । कहा अहै भल कामल बाता ॥

धरती ऊपर जाड परावा । कामल कहें हाथ महेँ आवा ॥  
 तुम हो सुवा प्रान जस प्यारा । जैसे प्रेम वान तुम मारा ॥  
 तैसेँ महि धायल कहें, श्रीपद फाहा देहु ।  
 लैश्रावहु मधुकर कहें, यह पूरा जस लेहु ॥  
 सुवा कहा सुन वारो मोरी । अहेँ सीम पर आशा तोरी ॥  
 मेँ पखी वह मानुप आही । मनुप बसीठ मनुप दिस चाही ॥  
 सो जेई कीन्हा जगत अजोरा । मानुप भेजा मानुप वारा ॥  
 मानुप मानुप बचन समूझे । सुवा सुवा की बातें बूझे ॥  
 औ मोहनपुर देखेउँ नाहीं । अकस जाउँ भूल बन माहीं ॥  
 होइ साध जो मानुप, जाउँ मोहनपुर देस ।  
 दोऊ मिलि समुभावेँ, आवै इहा नरेस ॥  
 दुई समुभायेँ समुभई लेई । दुइ जन मिले वृत भल होई ॥  
 जोहि बसीठ कै जीठ डेराई । लीन्ह सहायक आपन भाई ॥  
 गा तेलि दिस जासे डर माना । भापा साची बात सयाना ॥  
 दुइ मन एक होइ गिर तोरै । कटक विदारत बदन न भोरै ॥  
 जेइ मन तोरा सोगा तोरा । मन तोरा कहि तोरा मोरा ॥  
 प्रेम नाम बन जारा, बसै तुम्हारे गाड ।  
 ताके संग पढावहु, मोहनपुर कहें जाउँ ॥  
 माना वान मालती रानी । धाई साथ जनायति ज्ञानी ॥  
 धाई गई प्रेम दिस धाई । विनै सुनाई बात जानई ॥  
 दीन दरब औ आसा दीन्हा । प्रेम सीस पर आशा लीन्हा ॥  
 दरब करै सब कारज पूरा । उद्दित करै दरब जिमि सरा ॥  
 जो न दरब को निर्मल करई । अगिन होम होइ गल मो परई ॥  
 करता अपने पथ पर, दरब कहा है देइ ।  
 जो नहिँ देई सो एक दिन, लाख दरब सो लेइ ॥  
 सग ले सुवा प्रेम बनिजारा । मोहनपूर पथ पगु ढारा ॥  
 अहेँ बनिज का उद्दम भलो । पै जो करै बनिज निर्मलो ॥  
 सरिजनहार आप का बेला । आवत तजै बनिज का खेला ॥  
 बेचन लेव कहा है भलो । अहेँ वियाज नहीं निर्मलो ॥  
 सुन्दर रिन करता कहें देहु । वह जग मूल लाभ संग लेहु ॥  
 बिनु पद दरब जो आन का, जो कोइ अगमो खात ।  
 आनहु अगिन सो खात है, है यह साची बात ॥  
 काटत पथ सुवा बनिजारा । पहुँचे मोहनपूर मभारा ॥  
 मधुकर उहाँ विथनकुल हियेँ । ध्यान रहै मालति पर दीये ॥  
 बेकल बहुत भा मधुकर राजा । गा सब छूट राज का काजा ॥

मरम की कली फूल विकसाना । वास पाय सब काहुअ जाना ॥  
 छपि ये प्रेम कस्तूरी दोऊ । अंत वास पावै सब कोऊ ॥  
 लोगन बहुत बुभावा, फिरा न मधुकर प्रान ।  
 भयेउ प्रेम के बाढ़े, बाउर भेस निदान ॥  
 सुवा- प्रेम कह मरम सिखावा । बेचहु हम कह जानि परावा ॥  
 हाट चढ़ाइ मोल कर भारी । लै न सकै बैठै सब हारी ॥  
 तब राजा मधुकर मोहिं लेई । भारी मोलि बेगि तोहि देई ॥  
 मित्र जो होई सो मोल बढ़ावै । बैरी जान से औगुन लावै ॥  
 अति सुंदर कहं बैरी लोगू । बेचा थोरै पर बिनु जोगू ॥  
 मधुर बचन मैं बोलऊ, मधुकर लेइ निदान ।  
 रहि राजा के सग मह, करौ हाथ मों प्रान ॥  
 प्रेम जबै दूसर दिन पावा । लैकै सुवा हाट महं आवा ॥  
 हाट नगर मों भयेउ पुकारा । पेम नगर का है बनिजारा ॥  
 बेचत है एक सुवा सरेला । वैलें पंडित कीर न देखा ॥  
 गाहक आये मोल उधारा । भारी मोल सुनत सब हारा ॥  
 मधुकर प्रेम नगर कर नाऊ । सुनि आनन्दित भा मन ठाऊ ॥  
 आपउ मधुकर हाट मों, लीन सुवा कहं मोल ।  
 सुवा अधर कहं खोला, बोला कोमल बोल ॥  
 मनिमय पिंजर बीच परेवा । राखा मधुकर कीन्हा सेवा ॥  
 भयउ अहार सुवा की बातें । मधुकर राजा कहं दिन रातें ॥  
 एक दिन प्रेमहिं पास हंकारा । सुन सदन कै बात निशारा ॥  
 है मालति रानी वह देसा । रूप बिहाय कला निधि भेसा ॥  
 वह रानी कर सुनत बखानू । सुरत सनेही भयेउ परानी ॥  
 तुम आवहु वहि नगर सों, ताकर कहौ बखान ।  
 एक सुवा सो मैं सुना, उडिगा सुवा निदान ॥  
 सुनि यह बात प्रेम तब हँसा । हँसा फूल मानहुं महि खसा ॥  
 जो एक मोल निर्प तुम लीन्हा । मोल गुलिक नग मानिक दीन्हा ॥  
 येही सुवा मालति गुन कहा । अब अनचीन्हा तुम सों होइ रहा ॥  
 उहइ सुवा है तुम नहिं चीन्हा । पंडित जान मोल तुम लीन्हा ॥  
 सुवा का पिंजर नियरें राखौ । तब रसाल वच को रस चाखौ ॥  
 सुनि रहसाना मधुकर, पिंजर लीन्हा उतार ।  
 पूछा कुल कहा कुसल है, है जब कुसल तुम्हार ॥  
 प्रेम सुवा दोऊ गुन गावा । एकै मुख होइ बात सुनावा ॥  
 हम मालति के भेजें आये । दरसन देखि बहुत सुख पाये ॥  
 मालति तुम्हें दिन रात संवारा । भा अब मन तोहि उपर भंवारा ॥

तुम कह आने हर्ष पठावा । प्रेमहि निर्प को ताहि जनावा ॥  
 बनिज हमार तुम्हीं हो राजा । अत्र वह देश गवन तोहि छाजा ॥  
 रटत चातकी होइ रही , नलि दरसन जल लेहु ।  
 ना तो प्रान लेइ धन , यह अपराध न लेहु ॥  
 सुनि मधुकर जानहु जिउ पावा । कहा तुम्हें मोहि लाग पठावा ॥  
 छाजत सीस अकास लगावउ । सीस चरन कै तेहि दित्त धावउ ॥  
 अत्रलग रहेउ भरम मदमाहीं । रही पथ की सुधि मों नाहीं ॥  
 तुम हुइ अगुवा चतुर सयाने । मिलेहु करेउ तेहि श्रोत्र पयाने ॥  
 हे धन दिष्ट भाग को सोहीं । सुमिरन मोर चढे चित्त बोहीं ॥  
 रोवत दिन मोहिं वीता , अत्र हसि करेउं अनन्द ।  
 सोइ रोवाइ हसावै , चेइ कीन्हा रवि चंद ॥  
 तजा राज कह मधुकर राजा । तत्रल समान चलै को राजा ॥  
 पिंजर सों बाहेर भा सुआ । प्रेम आप मिलि अगुवा हूआ ॥  
 बहुत लोग राजा संग लागे । मानहुं सोवत कै सत्र जागे ॥  
 सोअत है जग मह सत्र कोई । जव मरि जाहिं जग तय होई ॥  
 यह जीवन कह छोटा जानहु । जीवन बड़ो अगम पहिचानहु ॥  
 जस जियहू तैसैं मरहू , उठहु मरहु जेहि भात ।  
 जग चाहत के ऊपर , काह दिहे हाँ दात ॥  
 बहुत देवस को करत पयाना । एक समुद्र आइल नियराना ॥  
 चढे पीत ऊपर सत्र कोई । गाढ़ी प्रेम नगर मगु होई ॥  
 बोड़य बूड भये सत्र कोऊ । सुवा उड़ा जनि बिछुड़न होऊ ॥  
 जाको राखत सिर्जनहार । जल सुखाई मगु लाइ उताप ॥  
 यह जनि जानहु नीर डुबावै । चाहै धरती बीच धसावै ॥  
 एक वार जल थल भवा , राखा चाहा जाहि ।  
 आगे कहि कै मेजेउ , नाव बनावै ताहि ॥  
 बड़े गरत्र कोप औ माया । भरमित और काम की माया ॥  
 एक दिस बहै बुद्ध औ बूझा । मधुकर प्रेम बहै नहि सूझा ॥  
 मन पछिताइ सुवा गा तहा । चित्तवत पंथ मालती जहा ॥  
 मिली कहा कहु कुमल पियारे । पथ निहारा नैन हमारे ॥  
 कहा कुसल का बूढ़ी पोता । होत कुसल जो जन मन होता ॥  
 मधुकर आवत तेहि दिस , बहा सिन्धु कै धार ।  
 बूड़े सकल सधाती , कोउ न लाग गोहार ॥  
 मुनि यह बात मालती रानी । मन पछितानी सोच सयानी ॥  
 धन लेखैं जनु परलै आई । यह परलै केहि दिसतैं धाई ॥  
 काहै यह परलै परगटे । आयो द्वाय ब्रम्हा के छुटे ॥



की बिरंच को एक दिन बीता । सोयेउ मै परलै की रीता ॥  
 नहि सिसरे वै हुइ बरियारा । जाकर अवध लिखा करतारा ॥  
 बीचहि देखउ परलै , धरती भयउ असिष्ट ।  
 की मन मोर फिरा है , उलटि विलोकन दिष्ट ॥  
 सुवा बुझावै बूझहु रानी । जीवन हार न चूड़ै पानी ॥  
 करै जो किछु करता कोई । अन्त काज वह सुदर होई ॥  
 भेद छिपा तोहि कारन माहीं । सो जानहि हम जानहि नाहीं ॥  
 ज्ञानी एक एक बालक मारा । औ एक नाव जलधि मो फारा ॥  
 माथी ताकर भेद न जाना । भेद रहा तेहि बीच छिपाना ॥  
 धर धीरज मन भीतरें । होइ जियत वह होइ ।  
 जो मति सों छूछा अहै , छाडै धीरज सोइ ॥  
 मालति कहा देहु तुम बोधू , मोहि पहरा पर आवत मोधू ॥  
 कहा करत पहरा कछु नाहीं । वह करता नाही जग माहीं ॥  
 जेई पहरा को करता जाना । सो मूरख जग बीच भुलाना ॥  
 सो करता जो सब पर बली । दीन्ह मनुष्य को काया भली ॥  
 वह पूरव सो सूर निसारै । को पच्छुम सो आनै पारै ॥  
 कोप न करु पहरा पर , धरु धीरज मन माह ।  
 देखु जगत मों करता , कस विस्तारा छाह ॥  
 धीरज बात कहत है सुवा । मोहि वियोग सो आस चुवा ॥  
 अब अस करहु बहोरह ताही । मन औ ध्यान बीच को आही ॥  
 कहा बहोरन हारा सोई । जेहि अज्ञा जीवै सब कोई ॥  
 पै तोहि लाग फेर उड़ि जाऊ । हेरों बन परबत सब ठाऊ ॥  
 जियत होई तो हेरि निसारउ । ना तो बैठ रहउ चुप मारउ ॥  
 जियत मिलत है एक दिन , सुवा मिलत है नाहि ।  
 मानुष्य सुवा मिलै तब , जब निर्मल होइ जाहि ॥  
 इडा नाउ लै उड़ा परेवा । हेरा इड़ा अड़ाह सेवा ॥  
 मधुकर वहि तट ऊपर भयऊ । चलि सैरगपुर मों गयऊ ॥  
 हेरत ताको सुवा सरेखा । तेहि सैरगपुर मह देखा ॥  
 रोये ऐसे दोउ हुख भरे । तेन रोवत कुज के दिल भरे ॥  
 जो दिल भरै अलख तेहि जानै । दूसर पत्र विछै मह जानै ॥  
 रोये मधुकर औ सुवा , बहुत मानि मन हान ।  
 साथी कारन भा बेकल , मधुकर निर्प सथान ॥  
 सुवा भयेउ अगुवा औ चला । पाछें चला बिरह कर जला ॥  
 मगु मों मिला प्रेम बगिजारा । और लोग जो रहा पियारा ॥  
 प्रेम नगर मों मधुकर गयऊ । जनु तप साधि सरग मों भयऊ ॥

हे तेहि नित बैकुण्ठ संवारा । जो भल काज कीन्ह मद जारा ॥  
 पहिरै कनक कडा औ बागा । वोठगै पाट उपर मनि लाग्गा ॥  
 मालनि फुलवारी रही, रहेउ सनेही नाउ ।  
 सुवा कहा मधुकर सौं, लेहुँ हहा तुक टाउ ॥  
 मधुकर लीन्ह बास फुलवारी । सुआ आप गवा जह प्यारी ॥  
 पूछा धन कहु कुसल पियारे । देखि जुड़ाने नैन हमारे ॥  
 कहा कुसल जव कुसल तुम्हारी । नीको भाग तेहारो बारी ॥  
 मधुकर राजा को मै जाना । फुलवारी मों दीन्हैउ धाना ॥  
 हे दरसन का भूखा राजा । अब तेहि दरस देखाउव छाजा ॥  
 तुम मालती वह मधुकर, दोऊ एक सजोग ।  
 रहसे देखी निरप को, प्रेम नगर के लोग ॥  
 दरस देखावै कह तुम कहा । मोहि वहि दरसन पर चित रहा ॥  
 दरसन जोग कियेहु वहि काजू । राजा रहा तजा सत्र राजू ॥  
 जो दरसन दाता को चाहै । काज करै भल सत्त निवाहै ॥  
 औ करता की सेवा माहीं । दूसर सार्थें मेरवे नाहीं ॥  
 वह सुमिरेउ है एकहि मोही । छाजत दरस दोवाहु वोही ॥  
 पै अबहीं नहीं उचित, परगट देउ देखाय ।  
 देखै मेरो छाया, ऐसो करहु उपाय ॥  
 कहा बात भाषा तुम भली । अबहीं लाज लिहै रहु लसी ॥  
 हे फुलवारी बीच अटारी । जाइ अटारी चढ़िये प्यारी ॥  
 मधुकर हाथ देउ मै दरपन । छाया डारि देखावहु दरसन ॥  
 तैं परगट तेहि लखु उरखसी । वह देखै तोहि ससि की ससी ॥  
 परगट दरसन को दिन औरै । है प्यारी केतो दिगं दवरे ॥  
 इहइ उपाय भलो है, यह दिन देहु चिताय ।  
 मोर होइ जब दूसर, दरसन दीजै आइ ॥  
 दुसरे देवस मालती प्यारी । सखियन सग आई फुलवारी ॥  
 चढिल अटारी सखियन साथ । दुइज चंद सोहा वह माथा ॥  
 आप दच्छु वह सुवा सयाना । अटा तरे मधुकर कह आना ॥  
 दरपन दीन्ह हाथ मह लीन्हा । मालति बदन भरोखहि कीना ॥  
 भाका दरपन मों परछाहीं । परी बदन की बिहुरी नाहीं ॥  
 देखि बदन की छाया, मधुकर भये अचेत ।  
 मालति कली 'भवर, लखि बिकसि रही संकेत ॥  
 जब सचेत भा मधुकर जानी । मन्दिर गइ तव मालति रानी ॥  
 दरसन दैकै गई पियारी । तेहि दोहाग भई अधिकारी ॥  
 मीलन लाग दोऊ दुख माहीं । परी हाथ सुख एकौ नाहीं ॥

सुवा संदेश दोऊ कर आनै । दोऊ सग सनेह बखानै ॥  
 कवहुं व पाती कवहुव नाते । आनै सुवा चतुर दिन रातैं ॥  
 प्रेम विरह वैराग मों , बहुत मास गा थीत ।  
 कवहुं दुख कवहुं सुख , कठिन प्रेम की रीति ॥  
 रूप जनि मालति बरजोगू । नेवता राज बंस के लोगू ॥  
 रचा सबम्बर ठौर बनाये । राजकुमार देश के आये ॥  
 एक एक सुन्दर राजकुमारा । कोऊ रवि कोऊ ससि तारा ॥  
 मधुकर विनु नेवते गा तहां । रहे राज बंसी सब जहां ॥  
 मधुकर देखि रूप सब लोभा । सोभा तहा सभा को सोभा ॥  
 मड़िमाला मालति लिहें , आई सभा मंफार ।  
 बहुत सहेली गोहने , भयेउ सभा उंजियार ॥  
 लगी आस सब के मन साथी । यह चंचला चढै केहि हाथा ॥  
 वह चंचला चंचला के समा । चहुँ दिसि फिरी लिहे मन छमा ॥  
 ताकर औठ डली वह माला । टारेउ जो मातेउ तेहि हाला ॥  
 गये सकल निर्पं अपने घर को । मालति व्याह गई मधुकर को ॥  
 दुख सहि के सुख पायन दोऊ । वस सुख तुम्हें पियारी होऊ ॥  
 सखी कहानी कहि गई । इन्द्रावति के लाग ।  
 कल ना परै प्यारी को , बाटै अधिक दोहाग ॥



## विरह अवस्था खंड

धन सो धन जेहि विरह भियोगू । प्रीतम लाग तज सुख भोगू ॥  
नेह बीज मन धरनिय बोवै । रैन न सोवै दिन कहँ रोवै ॥  
धन जेहि जोड होइ अनुरागी । वारे प्रान सो प्रीनम लागी ॥  
तजै भोग सुख सुमिरन नाही । जागँ निसि कहँ सोवइ नाही ॥

धन सो जन धन मन तेहिक, जागे मन ढोहाग ।  
परै दोह की आग मो, मानस भोसै दाग ॥

रोह दीप सुत डारै घोई । अभिलाषिन अनुरागिन होई ॥  
इद्रावति सुकुवार कुमारी । भार वियोग परा तेहि भारी ॥  
प्रेम सरीर वेयाध बढाया । दूवर पीत भयेउ धन काया ॥  
पान न खाय न पोवै पानी । भूख पियास भुलायेउ रानी ॥  
व्याकुल भई रात दिन रोवै । वदन करेज रक्त सो धोवै ॥  
प्रेम आग तन काठिय जारा । मारै चाहा मन को पारा ॥

भइउ दूवरी रानी, भै विवरन तन रग ।  
वैरिन होइकै लागेउ, व्याध अग के रग ॥

दुबल भइउ व्याध सो नारी । बल घटि गो भा जीवन भारी ॥  
चित्त ध्यान प्रीतम पर राखा । चाखा प्रेम बढेउ अभिलाखा ॥  
वैरागिन कीन्हा वैरागू । अनुरागिन कीन्हा अनुरागू ॥  
सुमिरै सोवत वैठी टाढी । मन असमर्थ अवस्था बाढी ॥  
प्रेम भुकोर भयऊ तेहि सीसू । वैरी बूर्फँ निस रजनीसू ॥

सुख भयउ दुख दायक, सुध मति रहेउ न साथ ।  
परी जगत प्रानेसरी, जइता केरी हाथ ॥

सुदर बाक मनाक न भावै । गगन चाक उदवेग सतावै ॥  
विरह आग सो भै उर दाहू । धन ससि कहँ भा मदिर राहू ॥  
भावर लाय न सिञ्छा मानी । छिन छिन कहँ आन की वानी ॥  
उन्नमाद सौं रोवइ हँसई । आसू धरती मोती खसई ॥  
जियत रहइ धेयान के बाहा । ना तो होत मरन पल माहां ॥

धन कहँ अतरपट भयेउ, गगन ऊँच महि नीच ।  
छाडि सकल धंधा कहँ, परि गुन कथन बीच ॥

वह रावला जग मित्र नवेला । मन परान कहँ कीन्हा चेला ॥  
 वह विदग्ध सुकुमार पियारा । रूप गगन सविता उँजियारा ॥  
 चिता कथन बीच धन परी । चिता करै घरी औ घरी ॥  
 केहि उपकार दरस वहि पावउं । केहि उपकारे के दिग धावहुँ ॥  
 होत भलो होतिउ जरि छारा । देह चढावत रावलु प्यारा ॥

बड़ो भाग सारगी, रहती प्रीतम पास ।  
 मोहि कलेस विछुड़न को, है प्रछन्न परकास ॥

## व्याह खंड

धन्य व्याह जासों धन प्यारी । होइ कत सँग खेलन हारी ॥  
 होइ सुहागिन प्रीतम पाये । पिय ढिग जाइ सीस निहुरायें ॥  
 माजें वडि सरीर बनावै । पिउ रस लेइ पीउ रस पावै ॥  
 निर्मल ' होइ होइ सुकुवारू । पानो फूल का करइ अहारू ॥  
 माजें मह' पर चिन्त नेवारै । नित प्रीतम को जाप सँवारै ॥  
 सत्त सहित धन जो धरै , प्रीतम को अनुराग ।  
 प्रीतम अपने हाथ सों , धन कह देइ सोहाग ॥  
 निर्प सयम्बर लगन धरावा । सव काहु कह नेवत पठावा ॥  
 भयेउ अनद अगमपुर नगरी । भइ सुद चरचा नगरी सगरी ॥  
 बाजै लाग बियाहुत बाजा । जन परजन मन परमद बाजा ॥  
 रचा चित्र सों मदिर द्वारा । लगेउ होन सो मंगल चारा ॥  
 सुभ मोंडव छायेन उपराहा । जासों होइ सुवर सिर छाहा ॥  
 ससि बदनी सव कामिनी , गावै' मंगल चार ।  
 लीन्ह अनद बसेरा , जगपत सदन मभार ॥  
 इंद्रावति माजे मँह मँह । चेता मालिन नियरें गई ॥  
 पूछा हियें लजानिय नाहीं । कैसें रहिये माजेय माहीं ॥  
 कहा रहो मन निर्मल कीहैं । चित प्रीतक प्यारे पर दीहैं ॥  
 मन सों दूसर चिन्त नेवारी । पिउ पर ध्यान लगावहु प्यारी ॥  
 निस दिन मन को खेत बनावहु । पिय की प्रीत को बीरौ लावहु ॥  
 अलप अहारिहु जीयै , सुमिरहु पिय को नाउ ।  
 रहौं अकेली रात दिन , प्यारी माजे ठाउ ॥  
 माजे मो इंद्रावति रानी । आइ असीसहिं सखिय सयानी ॥  
 देहि' असीस सखी हित प्यासी । रमा निरंत्र रहै तोहि दासी ॥  
 हो प्यारी बिलसहु पिय प्यारा । पिय मेरवत है सिर्जन हारा ॥  
 जो सजोग चहा तुम रानी । मँट तेहिक अब आइ तुलानी ॥  
 व्याहु नसेनी मिलन सदन को । मिलै सिधर अब मिलन सजन को ॥  
 सुख अनद सों रानी , बेलसहु पिया सजोग ।  
 भयें कत सजोगिनि , आवै कर सुख भोग ॥  
 सखिन असीस बचन सुनि रानी । कहा पिता घर रहिउ तुलानी ॥  
 खेलौं कोइ में देवस बितायेउ । कुलहुँ प्रीतम मरम न पायेउ ॥  
 खेलाहि' बीति गई लरिकाई । बाढेउ दरप होत तरुनाई ॥

भूलिउं खेल सखी के साथ। चढेउ गगुन कर मानिकहाथा ॥  
गुन नहि एक त्रास मोहि हियरे । कैसे होय कन्त के नियरे ॥

हैं अज्ञान औ निर्गुनी, जान रूप वह पीउ ।

हाथ छूछ गुन जान सों, सखी सोच मह जीउ ॥

मोहि गुन बुद्ध सखी है नाहीं । यह नित सोचत हौ मन माहीं ॥

जेहि गुन बुद्धि हाथ मह होई । तापर प्यार करै सब कोई ॥

रहत न बुद्धि पिये मद हाथा । या नित दोष लाग मन साथ ॥

सनु चतुर जो जित कर होई । है भल मूढ मित्र सो सोई ॥

गुन सों मानुष होत पियारा । गुन कर गाहक है ससारा ॥

विप कह अमिय करत है, है ज्ञानी जो कोह ।

मूरख जन के हाथ सों, अमृत विप सम होइ ॥

मानमती वह सखिय पियारी । बोली सुनिये राज दुलारी ॥

यह जग बीच अहो रूपवन्ती । पिय जेहि रीभा सो गुनवन्ती ॥

तुम पर अस रीभा पिय सोई । चाहा एक बार एक होई ॥

पै यह लट औ आख तुम्हारी । धरा वियोग बीच तेहि प्यारी ॥

गुनि मति कौत सहज औ रूपा । सब तोहि रीभ कत गुन भूपा ॥

प्रीतम मै का मै हिये, तोहि नित बाउर पीउ ।

तो लट औ अधरन मो, प्रीतम मन औ जीउ ॥

रतन जोत पुनि बात निसारा । भयउ रतन सों मम अवतारा ॥

एक सोच मोहि आवत सजनी । तासों सोचत हौं दिन रजनी ॥

पिय औगुन लावै मोहि रामा । मानुष जन मन तेरो बामा ॥

मानव मानुज उदर सों होई । मनुज उदर बिनु मनुज न कोई ॥

पितु के वरमद असु जब आजै । मात उदर तव नर भौ पावै ॥

जनम मोर अस नाहीं, सखी सोच मैं लेउ ।

पिय ऐगुन जो लावे, कौन उतर मे देउ ॥

कहा सखी कछु सोच न कीजे । ध्यान अमूरत ऊपर दीजे ॥

तेहि करतार रतन सो कीन्हा । कर मह रतन ज्ञान कर दीन्हा ॥

जो करता कह करवेह होई । हौ तेहि कहै होइ तब सोई ॥

बिर्ध पुरुष औ बन्ध्या नारी । तासों सुत पायन सत धारी ॥

बाज पिता सों बालक कीन्हा । अमृत बचन जीम मों दीन्हा ॥

कीन्ह बिमल माटी सो, बहुर बुद तेहि कीन्ह ।

तासों रक्त मास करि, हाड फेर जित दीन्ह ॥

अलख अमूरत मिर्जन द्वारा । मूरख जगत अलेख सवारा ॥

तेहि छाजत सिजै जस चाहे । देऊ जग आपुहि करता है ॥

जनक जननि बिन सिजै पारै । जाते चाहे जनम सँवारै ॥

आद पिता के पिता न माता । ऐसे सिर्जा वह जिउ दाता ॥  
प्रीतम तोहि गुन ऐसे लोभा । लखै न ऐगुन देखै सोसा ॥

मित्र मित्र को ऐगुन पहिचानत गुनमान ।

तेरो सकल अवस्था, गुन ब्रूमै पिय प्रान ॥

दायावत है कत तुम्हारा । है अपराध छिपावन हारा ॥

जो गुनवत अहै जग माहीं । सो ऐगुन हेरत है नाहीं ॥

जेहि गुन सो गाहक गुन केरा । जेहि ऐगुन सो ऐगुन हेरा ॥

आपुहिं बीच जो ऐगुन पावा । सो न कहा अपराध परावा ॥

जो अपराध छिपावइ कहा । जोग वसन ताके तन रहा ॥

जो मुख पर ऐगुन कहै, महा मित्र है सोइ ।

ताको मित्र न जानिये, ऐगुन राखै गोइ ॥

राजकुवर जब मोतिय पावा । सात सखा कहँ नेवत पठावा ॥

मिर्तक रहे जीउ उन पाये । धाये सकल अगमपुर आए ॥

सात मित्र राजा कह भेटा । दरसन गिल्लुरन सकट भेटा ॥

राजा के कालिजर टाऊ । मित्र पराक्मा प्रेम तेहि नाऊ ॥

रहा श्रुत दिन सो परदेसा । आये नगर धनी होइ भेसा ॥

देखि सून कालिजरै, मरम कुवर को पाइ ।

रहि न सका राजा विनु, लीन्ह जोग चित लाइ ॥

सुनि के राजकुवर के जोगू । भा जोगी त्यागा सुख भोगू ॥

प्रेम के साथ लगै सैसगी । राबल भेन लिहैं सारगी ॥

आगम सचर राखेन पाऊ । आगमपुर के भयेउ बटाऊ ॥

सीस जटा धरि खप्पर हाथा । आये मिले राज के साथ ॥

भेंटेन प्रेम राय कह राजा । भा मन मुदित मोद उपराजा ॥

भयेउ जोग को राजा, राजा वह गन माह ।

जगपत दाया दुर्म को, सब सिर आयेउ छाह ॥

सीतल छाहा पावइ सोई । जो तप किहैं जगत मह होई ॥

जेहि मन भरता की डर भारी । तेहि नित लागै दुइ फुलवारी ॥

दोऊ बीच दुइ भरना बहई । सब फल फले दोऊ मह रहई ॥

औ सूघर नारी तेहि टाई । वनी रतन मोती की नाई ॥

दूसर फल भल को है नाहीं । भल कोमल फल दोउ जग माहीं ॥

जो आवै करता दिशि, एक भलाई साथ ।

वोही भलाई के सम, दस आवै तेहि हाथ ॥

कुवर पास क्रीपा चलि आयेउ । जगपति दुकल समेत पढायेउ ॥

आइ कुवर सग क्रीपा बोला । क्रीपा रस भै भापित बोला ॥

अटो लला जत साधेउ जोगू । तत अब मानहु परमद भोगू ॥



धर सारंगी गहु क्रीपानू । उदित भयेउ मनोरथ भानू ॥  
 कथा काढहु पहिरहु बागा । जोग मुकुट धरि बाधहु पागा ॥  
 काढहु माला जोग को , पहिरहु मानिक हार ।  
 दैव दिष्ट सनमुख भयेउ , होहु तुरग सवार ॥  
 काढत माला कथा राजा । चकचूहत मन मों उपराजा ॥  
 माला गनि सुमिरेउ वह नाऊ । काढत छोह भवेउ तेहि ठाऊ ॥  
 जोग चिन्ह वह कथा पाया । कढत उपेजेउ करना माया ॥  
 क्रीपा बूझि कहा हो राजा । नन कथा मन माला छाजा ॥  
 जोग न पूजै तजै न जोगू । पूजा जोग लेहु अब भोगू ॥  
 जल में दूहद आप गा , मारै मोद तरग ।  
 दुख को सागर बीतेऊ , अब सुख दिन को रंग ॥  
 दुकुल अहै मानुष की सोभा । चीर बाज सोभाधर को भा ॥  
 बिनु गुन काया अबर घालें । काढ कि खरग अहै परयालें ॥  
 तत औ जोग के आहसि चेरा । कर पवित्र अबर तन केरा ॥  
 वस्तर लेहु भोग के जोगू । जोग जोग अब है भल भोगू ॥  
 सुमिरन पूजा है तब ताई । जब लग नहिं निश्चै मन ठाई ॥  
 है सब वस्तर मनिय , मन मों करहु अनंद ।  
 पहिरहु लखि के सोभा , लाजै रवि औ चद ॥  
 पहिरेउ असुक कुवर सयाना । सुना सीर लखि रूप लोभाना ॥  
 औ सो सुटर असुक सोहा । दूलह देख तजत मन मोहा ॥  
 जडिता सेहरा से छवि लहई । चौका चमकि चौंधि चखु रहई ॥  
 ऐसे रूप बिराजा राजा । देखि मयक अरज मा लाजा ॥  
 चेला पहिर सब चेला सोहै । अस्व सवार भये मन मोहै ॥  
 सब साथी राजा सँग , भयेउ तुरग सवार ।  
 तारन मों तारापती , भयेउ कुवर सुकुमार ॥  
 बाजन बाजै साजन साजै । लाजन लाजै काजन गाजै ॥  
 सग न सोहैं अंग न मोहैं । अंग न गोहैं भग न होहैं ॥  
 सत्रै रीझ देखै बर प्यारा । दृष्टि बिछावन मगु पर डारा ॥  
 बर के अधर बान रँग राता । लखि मानिक औ लाल लजाता ॥  
 रहसि कहै आगमपुर लोगू । धन धन बर इद्रावति जोगू ॥  
 जो देखा सोइ रीझा , धन धन सब मुख होइ ।  
 बिनु मोहैं बिनु रीझे , एको रहा न कोइ ॥  
 सखी एक चितवन तेहि नाऊ । कहा कुंवरि सों मैं बलि जाऊँ ॥  
 देखेउ हरबर बर मैं तेरा । तो बर देइ देव जिउ मेरा ॥  
 सुनि इद्रावति मन भा चाऊ । धवराहर दिस दारा पाऊ ॥

सखी सहित वह प्रान पियारी । चटि धनराहर दृष्टि पसारी ॥  
 कन्यापति सब लोगन माही । दृष्टि ताहि दिस आवहि जाहीं ॥  
 राजकुवर मुख ऊपर, रहेउ सकल छवि छाई ।  
 आगमपुर की दारा, देखि रहौ सुरभाई ॥  
 चितवन कहेउ कि देखहु रामा । वह तरो दूलह अभिरामा ॥  
 पूरन रूप सपदा जाको । करन रहे चित चितवन ताको ॥  
 आज निवेसन ते मुख पाया । सोभा अधिक चढी तेहि काया ॥  
 देखत प्रीतम मुख वह रानी । प्रेमा गोद गिरी मुरुछानी ॥  
 मान सखी को रहेउ न प्रानू । कन्यापति चखु मारेउ बानू ॥  
 - छोड़ेउ धीरज धीरजा, चेत न चेता देह ।

आप आप कह बोहीं, मारेउ प्रेम अनेह ॥  
 देखि अचेत भई सब बाला । अंचयन चोखा दरसन हाला ॥  
 सवन कहा यह मानुष नाही । अहै महादेवत जग माहीं ॥  
 रहा न चेत पाव औ माया । नीचू काटत काटेन हाथा ॥  
 मानुष रूप देखि अस होई । रहेउ न चेत बीच जव कोई ॥  
 करता जा दिन दरस देखावै । कैसी होइ नहीं कहि आवै ॥  
 कीन्ह रूप मानुष को, अपने रूप समान ।  
 यार्ते ज्ञान हरत है, मानुष रूप निदान ॥  
 प्रेमा जाप चेत जव पायेउ । इद्रावति कह तुरत जगायेउ ॥  
 पूछा मुरुछानी केहि लोले । कित कुम्हिलाइ कमल रवि देखे ॥  
 आज अनन्द रूप प्रगटाना । छाजै तुम्है कहा मुरुछाना ॥  
 प्रेम उतरि कुवरी तव दीन्हा । रवि सनेह अबुज मय लीन्हा ॥  
 मित्र बदन सोभा वर सोहै । नहीं अचर इद्री वर मोहै ॥  
 प्रीतम हित यह जग मों, जा धन के मन प्रान ।

दरस समै आनन्द सो, मुरुछै प्रिया निदान ॥  
 पाय दरस मुदुता भै रानी । तन न समाय चीर हुलसानी ॥  
 हुलसे नैन देखि पिय सोभा । हुलसे स्वात पाय छवि लोभा ॥  
 पिय को बदन जीउ अस पाया । हुलसे रतन जौत सब काया ॥  
 दिनमनि रूप गगन उपराहौ । देखि कमल निकसे जल माहौ ॥  
 पीउ बदन सोभा सो भावा । जिय दरसन इद्रावति पावा ॥  
 इद्रावति मन उपवन, आस कली विकसान ।  
 मन मो रहेउ न विसमो, आइ अनन्द समान ॥

सखि एक होइ सचेत पुकारा । धरती उवा मुरुज उजियारा ॥  
 एक कहा मानुष नहि होई । यह सुर भेस धरे है कोई ॥  
 एक कहा रजनीपति आही । मेडर अवहि न छेका ताही ॥

एक कहा यह साभा धारी । जगत कलेवर जिउ है प्यारी ॥  
 जेहि जम रहेउ दृष्टि औ जानू । तैसा देखा कीन्ह वखानू ॥  
 कुवर सनेह सकल मन , उपजेउ रूप बिलोकि ।  
 लोचन चितवन मगु सो , एक न पारै रोकि ॥  
 सखिन बचन सुनि कै वह रानी । समुझा आगम सोच विचारी ॥  
 कहा सखिन मों प्रीतम प्यारा । है मोहि सग लगावन हारा ॥  
 भये बियाह गवन पुनि होई । नइहर के बिलुडे सव कोई ॥  
 परदेसी की लालप अहई । कहा एक थल पर यिर रहई ॥  
 परदेसी है कन्त हमार । देस चलै को राखै पारा ॥  
 रहनो अन्त न होइ है , नइहर देस भँभार ।  
 परदेसी है सहचरी , लोना पीउ हमार ॥  
 कहेन सोच रानी केहि लागे । यहि दिन है हम सब के आगें ॥  
 हम रोये जनमत सनसारा । जनम देख कित रहन हमार ॥  
 नइहर नगर अन्त नहि रहना । मीखु सोइ जेहि सासुर लहना ॥  
 जनम निवाह भलो पिय पामा । विनु पीतम न लहै कविलासा ॥  
 मिलै नरक जो दरसन पीकों । नरक भलो बैकुण्ठ न नीको ॥  
 मिलै तहा हो प्यारी , नइहर देस पियार ।  
 जेहि अस्थान बसेरा , चाहे पीउ तोहार ॥  
 जब बनवास राम कहँ भयउ । सीता सती गोहेन मह गयऊ ॥  
 सदन नरक भा पिय बलुराते । बन बैकुण्ठ भयेउ तेहि जाते ॥  
 पिय विनु फीका सुखरग जीका । पिय गोहन नीका सुख तीका ॥  
 जो प्रीतम संग प्रीत लगावा । सो दोउ जगत बीच सुख पावा ॥  
 अज्ञा माये ऊपर लीन्हा । पिय कर अगा भेट न कीन्हा ॥  
 पीउ जहा है सुख तहाँ , जहा न प्रीतम होइ ।  
 तहा मुखद को दरसना , कहा विलोके कोइ ॥  
 बनि बरात द्वारे जब आयेउ । अमल टाउ बहटै कह पायेउ ॥  
 बहटैउ कुवर प्राट उपराहा । ऊपर सीतल साखी छाहा ॥  
 नुर नर देखि आसिपा देहीं । निरपे रूप रहसि फल लेहीं ॥  
 जे तो मुख तजि साधा जोगू । वे तो अलख दिहा सुख भोगू ॥  
 थोरे दिन का कुवर सलोना । लोना अम्बुक कीन्हेउ टोना ॥  
 रूपवन्त राजा कुवर , सकल बरातिन माह ।  
 सुन्दरता पति होइ रहा , मान पाट उपराह ॥  
 जेवन बने महस परकारा । जेवै नित भा निर्प हकारा ॥  
 बहटे लोग आइ सब तहा । कीन्ह टउर जेवै नित तहा ॥  
 भोजन केतो सुन्दर हाँई । उदर भरे पर खाय न कोई ॥

त्रिपा लुधा पर अन्वै खाई । तब जल जेवन करै भलाई ॥  
 छुवावन्त कह देहु अहारा । देह नाक फल सिरजन हारा ॥  
 कहत न पारै रसना , सब पकवान बखान ।  
 सै सेवाद एक कवर मों , मिलै खात पकवान ॥  
 बराबरी सों करइ न पारा । बराबरी सूरज ससि तारा ॥  
 जत जग बीच भले पकवानू । रहे सकल कित करउ बखानू ॥  
 बरनत रसना लोनी होई । जानै सो अच्छै जो कोई ॥  
 विनै किहेन राजा कै लोगू । है पकवान न तुम सब जोगू ॥  
 जो - पवित्र भोजन करतारा । दीन्ह तुम्हें सो कहहु अहारा ॥  
 जेवै लागे जेवनहि , ले दाता को नाउ ।  
 एक कवर मे पावे , सै सेवाद तेहि ठाउ ॥  
 भा अजा जव बाजन बाजा । राजित चला नियाहै राजा ॥  
 तू दमामा बाजै लागे । अम्बर गये सबद सुर जागे ॥  
 माझी के तर कुवर पहुँचा । रहा गगन लग माझी ऊँचा ॥  
 हरपि गीत नारी सब गावे । घर घर सों सब देखै आवे ॥  
 पर त्रिय दिष्ट परत भल नाहीं । तैसेइ पर पूरुष उपराहीं ॥  
 रहा उदित होइ रूप सों । दूलह भान समान ।  
 वोहि समय माझी तर , आयेउ चद्र छिपान ॥  
 उश्नरसम कह देखत नियरे । रहसा नीरज अपने हियरे ॥  
 लाज मयक देखि सक्काना । परगट होइ नाहि विकसाना ॥  
 तन तन सो तो रहा वियोगू । मन मन सों तो रहा सजोगू ॥  
 दुइ मन प्रीत रीत सो जानै । अपने नेह जो मन में आनै ॥  
 रवि दूलह मुख परगट कीन्हा । ससि दुलहिन मुख पर पट लीन्हा ॥  
 पढेन वेद वामन सब , बर कन्या के नाउँ ।  
 रहेउ पर्न नैरित जो , भयेउ सकल तेहि ठाउँ ॥  
 भा बियाह कन्या बर साथ । आयेउ सुख को मानिक हाथा ॥  
 भयेउ कुवर जगपत को प्यारा । सब काहू मिलि आई जोहारा ॥  
 दाया सों आगमपुर ईसू । डारा छाह कुवर के सीमू ॥  
 जैसे राज त्याग तप कीन्हा । वैसो अलख भोग सुख दीन्हा ॥  
 पायेउ बहुत दास औ दासी । सेवक भये अगमपुर वासी ॥  
 भयेउ नगर वासी कह , कुँवर प्रान को प्रान ।  
 सबते जोरेउ मित्रता , कुँवर सनेह निधान ॥  
 रहिन सखी सुन्दर जह ताई । इद्रावति के नियरे आई ॥  
 सकल सखी मिलि दीन्ह असीसा । प्रीतम छाह रहै तोहि सीसा ॥  
 इहइ लाभ व्याह सो होई । तोहि लाभ हरषित सब कोई ॥  
 १८

जुग जुग रहै सोहाग तुम्हारा । चाहे तुम कह' कन्त पियारा ॥  
 तोहि गुन ऊपर रीभा रहई । कोमल बात प्रीत की कहई ॥  
 सदा रहै तोहि वस मह', करता के परताप ।  
 तोहिं पिय के सुमिरन रहै, पियहिं तुम्हारो जाप ॥  
 अधरन मों मुसकानो रानी । होइ अभिमानी बौली रानी ॥  
 है मोहिं रूप विमल उजियारा । बस मह रहै सो प्रीतम प्यारा ॥  
 ऐगुन भये न रूठै देऊं । तनु मुसुकाय हाथ कै लेऊं ॥  
 अमन होइ करउ असमानू । प्रीतम देइ हाथ महं प्रानू ॥  
 पाहन समा कठोर जो होई । करउ सिंगार होइ जल सोई ॥  
 अब किछु चिन्ता है नही, प्रीतम भा मोहिं हाथ ।  
 अमन कबहुं न होइ है, नित रहि है मोहिं साथ ॥  
 सखियन अगुरी दातन दावा । प्यारी गरव न हम कहं भावा ॥  
 मैं न भली मैं भल जो भाषा । तेहि करतार दूर कै राखा ॥  
 अगिन सीस जो ऊपर करई । देखहु उनत नीच होइ परई ॥  
 माटिय सीस नीच कै परई । तबहिं अनेक लाभ सों भरई ॥  
 नयन आप कहं देखत नाही । सूक्ति परा तेहि सब जग माहीं ॥  
 सो दूबा जो भाषा, मैं जग सिर्जनहार ।  
 पार भयेउ जेइ जाना, है एकै करतार ॥  
 प्रीतम आपन नाहिय प्यारी । अहै समुद्र लहर सों भारी ॥  
 सेवा नाव चढै जो कोई । पार समुद्र सों उतरै सोई ॥  
 नाव चढ़त सुमिरै एक नाऊ । कहै उतारहु मोहिं सुभ ठाऊ ॥  
 करता आयसु बोहित पायेउ । तबहिं समुद्र के ऊपर धायेउ ॥  
 पिय सों गरव न कब हूं न कीजै । आये सुमाथे ऊपर लीजै ॥  
 गरव बात तुमत बोलिउ, करता करै न कोप ।  
 फिर प्यारी अभिमान सों, ऐगुन होइ न लोप ॥  
 कै घट काज फिरा जो कोई । मनु घट काज न कीन्हा सोई ॥  
 खुला दुवारा है तब ताई । रवि न उअै पच्छिम जब ताई ॥  
 आवहीं फिर मानै करतार । जब लग खोल फिरै को द्वारा ॥  
 हम मद पियब तियागा प्यारी । पै तुम्हरी अखिया मतवारी ॥  
 हम कहैं खोंच सुरा दिस आनै । चाहिं कहैं हम नैन न मानै ॥  
 इद्रावति समुभा वचन, धरती लायेउ भाल ।  
 तुम करतार जगत के, दाता दीनदयाल ॥  
 ए प्यारी सुमिरत हौं तौही । दरसन वेग देखावहु मोहीं ॥  
 धन आनन्द राज सुख आही । एकै दाया दरसन चाही ॥  
 बहुत वियोग सुरा में पीया । सजोगी मद चाहत हीया ॥

संजोगी प्याला अब दीजै । अधर सुधा सतवाला कीजै ॥  
 आज ठौर आखन मो देऊ । होइ निसंक अग भरि लेऊ ॥  
 मोहिं सजोग सलील को, है प्रीतिमा पियास ।  
 अनुकम्पा कै दीजै, पूजै मन की आस ॥  
 भइउ सपूरन आधी कया । मानहुं जान सिंधु मै मथा ॥  
 तीन सहस चौपाइय भई । देखु आइ फुलवारिय नई ॥  
 पुनि आगे जो सुख सों रहऊं । तीन सहस चौपाइय कहऊ ॥  
 हौ अबहीं थोरे दिन केरा । वात बहुत दिन- कर मैं हेरा ॥  
 विद्या ज्ञान बहुत जेहि होई । अर्थ छिपाने वृक्षै सोई ॥  
 नूर महम्मद यह कया, अहै प्रेम की बात ।  
 जेहि मन होई प्रेम रस, पढे सोइ दिन रात ॥



उसमानकृत  
चित्रावली





## चित्रदर्शन खंड

वै भूले तेहि कौतुक जाई । इहाँ कुँअर जागा अगिराइ ॥  
 नैन उचारि देखि चितसारी । रहा अचक उठि वैठ सँभारी ॥  
 देखा मँदिर एक बहु भौंती । चित्र सँवारे पौँतिन्ह पौँती ॥  
 कनक खभ औ कनक केवारा । लागे रतन करहि उँजियारा ॥  
 ऊपर छ्वात अनूप सँवारे । करि कटाव सभ कचन-ढारे ॥  
 कीन्ह उरेह सूर ससि जोती । और नपत सब मानिक मोनी ॥  
 हेठ अपूरव सब डासन डासा । जहँ तहँ आउ सुगोध की वासा ॥

भयो कुँअर चित अचक एक, मनहीं मोहि गुनाउ ।

काकर लोन मँदिर यह, औ मोहि को लै आउ ॥

बहुरि कुँअर जो पाछे देखा । अपुरुव रूप चित्र एक पेखा ॥  
 जानि सजीउ जीउ भरमाना । भयो ठाढ उठि कुँअर जुजाना ॥  
 देखि रूप मुख परचै खरा । विधि एह चुरइल कै अपछरा ॥  
 किए सिंगार सग नहिं कोई । धरे भेष भावन है सोई ॥  
 जग न होई मानुष अस रूपा । को पावै अस रूप सरूपा ॥  
 निहचै अहौ सरग पर आवा । सुरकन्या मौ दिष्टि मेरावा ॥  
 निहचै एह सुरपति अपछरा । देखत मोर चित्त जिन हरा ॥

हौ तो मडप देव के, सोवत अहा सुमाउँ ।

होइ परसन कोउ देवता, लै आवा एहि ठौँ ॥

भयो भाग्य मम दाहिन आजू । जेहि विधि दीन्ह आनि यह साजू ॥  
 कै वहि जन्म पुन्य कछु कीन्हा । तेहि परसाढ दरस इन्ह दीन्हा ॥  
 कै वेनी खिर करवट सारा । कै कासी तन तप महँ जारा ।  
 कै मथुरा बसि हरि जस गावा । ताहि पुन्य यह दरसन पावा ॥  
 कै काहू की इच्छा पूरी । बल बौसाउ कीन्ह दुख दूरी ॥  
 कै सुदिष्ट अपने विधि देखा । आनि देख वह रूप सुरेखा ॥  
 सुनत अहा कबिलास होहावा । सो विधि मोहि आन देखरावा ॥

मन रहसहि चितो चितहि, रहा मौन होइ भूप ।

रसना मरम न बोलाई, लाएन भूले रूप ॥

छिन एक गुनि मन महँ बहुभावा । पुनि ढाढस कै आगे आवा ॥  
 नियरे होइ जो बदन निहारा । रहे निहारि मीन जिम तारा ॥  
 तब जानेसि यह चित्र अनूपा । हस्यो चित्र लखि बदन सरूपा ॥  
 नैन लगाय रहेउ मुख वारा । चित्र चौँद भा कुँअर चकोरा ॥

सुधि बिसरी बुधि रही न हिये । गा बौराह प्रेम मद पीए ॥  
 कबहुँ सीस पाह तर धरही । कबहुँ टाढ होह विनती करई ॥  
 कबहुँ परै अचेत भुई, कबहुँ होइ सचेत ।  
 रूप अपार हिऐ समुभि, सुख जोवै करि हेत ॥  
 निरखत जोति नैन जौ पाई । परी डीढ आला पर जाई ॥  
 देखा आहि लिखै कर साजू । जाते होइ चित्रकर काजू ॥  
 सविर अरुन पीत औ हरा । जो रँग चाहिये सो सब धरा ॥  
 कहेसि विचारि बूझि मन माहीं । कालहि आजु अस होइ कि नाहीं ॥  
 आपन चित्र लिखौ एहि टाऊँ । मुकुरहि जोति जोति कछु पाऊँ ॥  
 अपनि जोति सूर उँजियारा । सूर कि जोति चद मनियारा ॥  
 हिऐ विचारि चित्र तव लिखा । वहि न चरन तर आपन सिखा ॥

साजि सो मूरति आपनी, ले सब रँग वहि केर ।

कै सुजान सो जानई, कै सुजान यह फेर ॥

चित्र लिखा पूजा पुनि धरी । निद्रा आइ कुँअर चखु भरी ॥  
 कुँअरक चाहत पलक न लावा । बरवस बैरिन नींद सो आवा ॥  
 रहै नींद जासौ धन खोवा । इहै नींद जो करै विछोवा ॥  
 इहै नींद मगु चलै न देई । इहै नींद सरवस हरि लेई ॥  
 इहै नींद जेहि नैन समानी । पलकन्ह भीतर दृष्टि समानी ॥  
 जो जग मोह नींद बस होई । रहै बीच मग सरवस खोई ॥  
 जे यहि नींद आपु बस कीन्हें । रहै नींद तोहि नौ निधि दीन्हें ॥

मान गवाए सोइ सब, जो सपति हुति साथ ।

अजहुँ जागु न घर बसे, भकुरे है कछु हाथ ॥

देवन्ह कौतुक अति जिय भाया । चित्रिनि दरस अमर भइ काया ॥  
 होत भोर आदित परगासा । उठी सभा औ नाच उडासा ॥  
 चित्रावलि कहँ निद्रा आई । ले पलग पर सखिन सोआई ॥  
 औ जहँ तहँ सब सोवन लागीं । सगरी रैनि अही सुख जागीं ॥  
 देवन्ह कहा होत है बारा । चित्रसारि जनु कोऊ उधारा ॥  
 चलहु कुँअर लै चलहि सवेरा । मगु कोई आइ मढी महँ हेरा ॥  
 एहि न पाउ औ तुरै जो पावा । जानइ कुँअर जन्तु कोउ खावा ॥

जन पुरजन माता पिता, जहँ लहु हित सुनि पाउ ।

मरिहहिँ छाती फाटि सब, तव कछु हाथ न आउ ॥

पुनि दोउ एक सग चित्तसारी । आइ उधोरन्हि पौरि के वारी ॥  
 सोवत कुँअर आन तहँ पावा । लीन्ह उठाइ बार नहिँ लावा ॥  
 निमिप माँह लै मढी उतारा । गए छाड़ि सोवत दुख मारा ॥

सुरज किरन जब कुँअरहि लागी । करवट लेत उठा तव जागी ॥  
 देखै कहां चहुँ दिसि हेरी । भई आनि रचना विधि केरी ॥  
 ना वह मंदिर नहि कविलासू । ना वह चित्र न वह सुख वासू ॥  
 सपन जान चित उठा मरोहू । औटि करेज पानि भा लोहू ॥  
 पुनि जो निहारे आपु तन , चिन्ह आह सो सग ।  
 वस्तर औ कर पर वही , लिखत लाग जो रग ॥

घन एक कुँअर अचक मन रहा । कौतुक सपना जाइ न कहा ॥  
 पुनि जो विरह लहरि तन आई । याँभि न सकेउ गिरेउ मुरभाई ॥  
 दोउ नैनन जनु समुँद्र अपारा । उमडि चले राखै को पारा ॥  
 फारै भोगा औ लोटे परा । बधुन कोऊ हाथ को घरा ॥  
 भरि गै खेह सीस औ देहा । सेवक नाहि जो भाँरै खेहा ॥  
 संग न कोऊ हिनु पियारा । जो उठाइ वैठाइ सँभारा ॥  
 पिन चेतै पिन होइ वेसँभारा । घरी घरी सिर मुँह दइ मारा ॥  
 विरह दहनि कोऊ किमि कहै , रसना कहि जरि जाइ ॥

सोह हिय माँहि सँभारै , जेहि तन लागै आइ ॥  
 कटक जो आइ नगर नियराना । देखिन्ह सग न कुँअर सुजाना ॥  
 वह औ कहँ वह औ कहँ पूँछा । कटक जानु विनु जिउ तन छूँछा ॥  
 सब मिलि कहा कुँअर जो नाहीं । राजा पास काह लै जाहीं ॥  
 पूछत उतर देव हम काहा । छूँछ लजाइ रहव मुँह चाहा ॥  
 जोहि विनु तव जाइहि मुँह गोवा । कसन अबहिँ जो खोजिअ खोवा ॥  
 सोवत जानु सवै सुनि जागे । आपु आपु कहँ हूँडन लागे ॥  
 जल जल थल थल मेरु पहारा । एक एक तर तर सौ सौ वारा ॥  
 स्याम रैन विनु पंथ पुनि , अगुवा सग न कोइ ।

दूरि दूरि सब धावाहि , नियर जाहि नहि कोइ ॥  
 खोजत खोजि कटक सब हारा । वीती रैनि भयो भिनुसारा ॥  
 सुरज उदै पय तव स्रभा । भयो दिवस पर आपन वृभा ॥  
 बाजी चरन खोज पुनि पाए । खोजत खोज मढी महँ आए ॥  
 देखहिँ कुँअर परा विकरारा । हाथ पाँव सिर कड्डु न सँभारा ॥  
 ऊम उसास लेइ औ रोवा । देखत सैन भान जुन खोवा ॥  
 खेह भाँरि ले वैसे कोहा । रोवै कटक देखि मुख ओरा ॥  
 पूछे वातन उतर न देई । पिन पिन ऊभ सँस पै लेई ॥  
 अरुन वदन पिराइगा , रुहिर सुखि गा गात ।

रहा भौँपि लोयन दोऊ , कहै न पूछे वात ॥  
 कोऊ कहै मृगी एहि आई । होइ अचेत परा मुरभाई ॥  
 कोऊ कह डमा साप एहि मढी । सुरज उदय लहरि है चढी ॥

कोउ कहे अहा राति का भूखा । तोंवरि आइ रहिर तन सूखा ॥  
 कोउ कह रैनि रहा एकसरा । कै दानौ कै चुरइलि छुरा ॥  
 इहवों घरी विलोव भल नाहीं । बेगहि होहु नगर लै जाहीं ॥  
 तत्खन राज सुखासन आना । लै पौंटाए कुंअर सुजाना ॥  
 नाउ सुखासन लै दुखवाहा । विरह क जरा दून कै डाहा ॥

जाइ सुखासन आसुभा, बाजु गीत औ नाद ।

चला पाछु सब आवै, कटक भरा बिसमाद ॥

केउ कहा जाइ जहँ राजा । कुंअर आव कछु औरै साजा ॥  
 संगन सुनिय गीत औ दाना । सिगरी कटक देखि बिसमाना ॥  
 सुनि औरगुन राजा उठि धावा । व्याकुल होइ भुँइ पावन लावा ॥  
 रानी सुनि सिर परी बिजागी । सुनतहि जरी कोष की आगी ॥  
 आई धाइ कुंअर जहाँ आवा । रोइ सुखासन लेइ कँठ लावा ॥  
 देख धीन तन मुख पियराना । राजा रानी तजहि पराना ॥  
 कठ लगावहि पूछहि वाता । उतर न देइ विरह मद माता ॥

पुनि ते पूछा बोलि कै, जे संग हुते सयान ।

जहँवा कुंअर बिछुरि मिला, तिन्ह सब कीन्ह बखान ॥

राजमंदिस् महुँ कुंअर उतारा । जानहु आनि अगिन मह डारा ॥  
 कल न परै पल अति बिकरारा । हाथ पोंव सिर दै दै मारा ॥  
 राजें तनखन जन दौराए । वैद सयान गुनी लै आए ॥  
 गइहि नाडिका बूझहि पीरा । नारि माँह निरदोष सरीरा ॥  
 ससि सूरज दोऊ निरदोषी । अपुने अपुने घर सतोषी ॥  
 अच नाडिका माँह नहि पीरा । प्रगट पियर मुख धीन सरीरा ॥  
 कहि न आव हुम दिए बिचार । ई जस विरह घाउ कर मारा ॥

पीर सोई जो नहीं कछु, औषद मूरि उपाय ।

एहि कर हित् जो होइ कोइ, सो पूछै फुसिलाय ॥

उठि अकुलाइ मात दुखभरी । कुंअर पास आई एकसरी ॥  
 सीस लाइ के बैठी कोरा । पूछै बात देखि मुख ओरा ॥  
 नैन उघार पूत कहु पीरा । केहि कारन भा धीन सरीरा ॥  
 काहे पीत भयो मुख राता । कहहु बात बलिहारी माता ॥  
 तहाँ एक दिनमनि, कुलकेरा । नैन मूँदि कस करहि अँधेरा ॥  
 हम सब घट तुम जीव सनेही । कस कुंभिलाइ देसि दुख देही ॥  
 पूत परि कहु कस जिउ तोरा । नैन खोलु कर जगत अँजोरा ॥

तोरे पीर कि औषद, जो एहि जग महुँ होइ ।

अर्थ हव्य जिउ दइ कै, बेगि, मँगवों सोइ ॥

कहुँ जो उपजी विथा सरीरा । करौं सोई जेहि नेवरइ पीरा ॥  
 जो है मदी देव कर भाऊ । लै पूजा सों दैव मानऊ ॥  
 जो काहू के दरसन भूला । मागौ होइ दुनों कर फूला ॥  
 और जो मन कछु हींछा होई । कहु सो बेगि लै पुरखों सोई ॥  
 दुहु जग माह तुहीं एक आसा । आस तोरि का करसि निरासा ॥  
 को काटै इह दुख दिन राती । अबहीं मरव फाटि मैं छाती ॥  
 सुन कै कुअर मातु कै बोला । ऊभि सोंस लीन मुख खोला ॥  
 माता पीर सो ऊपजा , ताहि न मूरि उपाइ ।  
 लोयन अटके तहाँ पै , मन न सकै जह जाइ ॥

कहि कै कुअर मौन भै रहा । लोयन दुहु गिरे जल बहा ॥  
 बहुत पूँछि रानी जव हारी । कहि न बात नहि पलक उधारी ॥  
 एहि मँह बिरह लहरि पुनि आई । थोंभि न सका परा मुरछाई ॥  
 घाह मेलि तब रानी रोई । सुनत लोग घावा सब कोई ॥  
 राजा रोवै डारि सिर पागा । जन परिजन सब रोवइ लागी ॥  
 राज मँदिर कर सुनत अँदोरा । घर घर परा नंगर मह रोरा ॥  
 जो जैसहि तैसहि उठि घावा । हाथ हाथ लै कुँअर उठावा ॥  
 कोई मेलै पानी मुख , काँऊ पूँदै नोंक ।  
 मेटे कैसेहु नहिं मिटै , माथ लिखा जो अँक ॥

विद्याधर गुरु पडित महा । तेहि कुल सुमति पूत एक अहा ॥  
 नाउ सुबुधि सकल गुन जाना । पढा पाठ संग कुँअर सुजाना ॥  
 विद्या जानुं जहाँ लागि गुनी । नाटक चेटक आखर धनी ॥  
 मानतं हेत कुँअर तेहि सेली । कहत सुनत जिय बार्ति जेती ॥  
 सुनि कै विथा कुँअर पहुँ आवा । कुँअर अचेत आइ तहँ पावौ ॥  
 नारी देखि विचारेसि पीरा । दोष न पाइसं कुँअर सरीरा ॥  
 बर्दन पियरं लोचन न उधारा । निहचै कहेसि बिरह कर मांरा ॥  
 प्रेय मंत्र बोला सुबुधि , श्रवनन लागि पुकारि ।  
 सोवत जागा कुँअर पुनि , देखिसि पलक उधारि ॥

तब एकसर भै पूछेसि बाता । कहहु कहीं कासो मन राता ॥  
 कौन रूप देखा तुम जाई । देखत जाहि परे मुरभाई ॥  
 मैं तोर हिदू जान सब कोई । कौन बात तुम मोसो गोई ॥  
 औ मै गुन आकरषन पढा । स्वर्ग बसै सोऊ कर चढ़ा ॥  
 नाउं ठाउ जाकर जौ होई । करि उपाउ पुनि आनउं सोई ॥  
 जो तुम्ह काज आज नहि आबौं । बुधि विद्या सब कुलहि लजावौं ॥  
 प्रम पहार स्वर्ग ते ऊचा । बिदु रेवे कोउ तहँ न पहुँचा ॥

कहु सो बात अब जीव की, बेगहि करौ उपाइ ।  
 ना तो बौरे कुंअर निज, सब मरिहैं बौराइ ॥  
 सुनि सुनि मन सब बात विचारी । रोइ रोइ कहन कथा अनुसारी ॥  
 जैसे खेलै गए अहेरा । ओंघि आइ औ भयो अंधेरा ॥  
 औ जैसें सब चले पराई । परयो आपु जस एकसर जाई ॥  
 औ जैसें बीती सो ओंघी । सोवा मढी तुरै तर बौंधी ॥  
 औ जैसें वह सपना देखा । अपुरख रूप चित्र जस पेखा ॥  
 औ जैसें मन गा बउराई । दिष्टि परत चित लीन्ह चोराई ॥  
 आपन चित्र लिखा रंग लागा । सोवत मढी मॉह जस जागा ॥  
 जैसे देखा सपन सब, सौमुह पाए चोन्ह ।  
 कुंअर कहा सब सुबुधि सों, जस कौतुक विष कीन्ह ॥  
 कहा कहाँ कलु कही न जाई । हिय सौरत बुधि जाइ हेराई ॥  
 कहत न बनै जो कलु मैं देखा । गूग क सपन भयो मोर लेखा ॥  
 नाउं न जानौ पूछौ काही । पटतर नाहिं देखावौं जाही ॥  
 देस न जानौं केहि दिसि आही । पथ न जानौं पूछौं काही ॥  
 मन चहुं दिसि धावै बैरागा । फिरि आवै बोहित ज्यों कागा ॥  
 करहु उपाय करै जो पारहु । नाहि तो कहा मुए कहुं मारहु ॥  
 गहिरे सिंधु जाइ जिउ खोवा । अब मैं हाथ आपु सो धोवा ॥  
 मोहि जियत नहिं सूझइ, पुनि वह रूप मिलाउ ।  
 मुए कबहुं सुरभौन महुं, हाथ आउ तौ आउ ॥  
 जबहि कुंवर यह बात सुनाई । सुबुधि-बुद्धि सब गई हेराई ॥  
 परेउ जाइ मन तेहि अबगाहो । तीर ने देखि पाव नहि थाहा ॥  
 कलु विचार हिए नहि आवै । कुंअर पीर जेहि औषद जावै ॥  
 कहेसि कुंअर यह पथ दुहेला । निराधार खेलैं तिन्ह खेला ॥  
 कहेसि उपाइ एक मति मोरी । मूंदिय और बाट चहुं औरी ॥  
 जहवौं सोइ सपन अस दीसा । ओही ठोव हनहुं पुनि सीसा ॥  
 मकु विधि सोवत कर्म लगावै । बहुरि सोई सपना सो पावै ॥  
 लेहु कुंअर उपदेस यह, चेतहु चेत सँभारि ।  
 आन पथ नहि दूसरा, दीख न दिऐं विचार ॥

## परैवा खंड

कै सिंघ साज निपुसक चारी । जिन्ह सों आहिं सों चित्र चिन्हारी ॥  
 बेगि चलाए चारिहुं ओरा । हूँढन चले सूर घति जोरा ॥  
 औ समुभाइ कौन्ह पुनिं वाता । जानत अहाँ जाहिं मन राता ॥  
 ताकर चाह कहै जो आई । जो माँगहिं सो देउँ बँधाई ॥  
 चारौ चले चारि दिस भए । आपु आपु कहँ हूँढन गए ॥  
 जल थल सागर मेरु सुमेरा । रन बन पुर पाटन सब हेरा ॥  
 जहँ तहँ भवहिं गेह बैरागा । दहुइन मह कोइ होइ सुभागा ॥

बन घन गिरि सायर पटन , जहाँ सुनहिं नर नाम ।

फिरि फिरि हेरहिं रैनि दिन , छिन न लेहि तिसराम ॥

तिन्ह मँह अहा जो नाम परैवा । हिण सँवरिं चित्रावलि सेवा ॥  
 उत्तर दिसा दीप अति भला । धौलागिरि पर्वत कहँ चला ॥  
 प्रथमहिं नगर कोट कर फेरी । काशमीर पुनि तिब्बत हेरी ॥  
 हरद्वार गै गग अन्हावा । मोंगी हींछा सिधु मनावा ॥  
 सिरीनगर गढ़ देखिं कुमाऊँ । खसिया लोग बसहिं तेहिं गाऊ ॥  
 पुनि बदरी केदार सिधारा । हूँडा फिरि फिरि सकल पहारा ॥  
 दुरगम देखि मगन कर देसा । चला ताकि नैगल नरेसा ॥  
 बाक कोट बसगित बहुत । औ चारिहुँ दिति ताल ॥

अमर पुरी जानहुँ बसी । नाउ धरा नैगल ॥

अतिहि अपूरव ताल सुहावा । इषिकदर झुलकरन खनावा ॥  
 घाट बँधाये गच चिनकाई । चहुँ दिसि फेर आरसी लाई ॥  
 तिरहिं होइ पानी कर बोखा । देखि पिआस पाव संतोखा ॥  
 पुनि दुइ नदी सुहावनि वहीं । उत्तम वेदन्यास जच कही ॥  
 नागमती अहिं मुख ते आई । वागमती नाहरमुख पाई ॥  
 तीरथ जानि जगत चलि आवा । अंग घोई सब पाप नसावा ॥  
 बारह मास पटन पुनि धिरी । बरहौ मास जातरा भिरी ॥  
 नर नारी सुदर सत्रै , ससि मुख अधर रसाल ।

नैन परैवा चकित रह , देखि नगर नैपाल ॥

धर धर नगर लीन्ह तहँ फेरी । राउ रंक देखे तहँ हेरी ॥  
 रूप सरूप लोग सब आहा । सोन मिलै जा कहँ चित चाहा ॥  
 जहँ न होइ सो प्रान पियारा । बसत देस सब जानु उजारा ॥  
 चला नगर तजि पर्वत ओटा । परी टिष्ट एक कंचन कोटा ॥



हीरा रत्न पदारथ मोती । जगमगाइ सब मानिक जोती ॥  
 कहैसि जाइ देखीं एहि ठाऊँ । लागत अतिहि सुहावन गाऊँ ॥  
 हिए चाउ भइ पाव न लावा, जोगी जाइ न नगर नियरावा ॥  
 आइ सीव दिन नयर भो, लीन्ह अतीथ बोलाइ ।  
 धरमसाल जहं हुत रचा, तह ले गए लिवाइ ॥

गै जोगी तह देखै काहा । अतिथि सहस एक बैठे आहा ॥  
 ठाढे सवै राउ औ राना । सेवा करहि जैसे मन माना ॥  
 भाँति भाँति पकवान जेवावहि । औ अपनै कर पान खिचावहि ॥  
 जो इच्छा मन माँगै कोई । वेगिहि आन पुरावै सोई ॥  
 देखि अतीथ सवै रहसाए । सेवा कहँ चलि आगे आए ॥  
 आदर सहित आनि बैमारा । पहिलेँ लै जल पाँव पखारा ॥  
 ता पाछेँ लाए पकवाना । जेउ गोसाईं जो मन माना ॥  
 जोगी कछू न जेवई, पूछेँ कहै न बैन ।  
 चरचै आनन चहुँ दिस, कीन्हें चचल नैन ॥

जोगि न जेवा रहे जेवाई । काहु कहा कुँअर पहुँ जाई ॥  
 धरमसाल एक जोगी आवा । चित चचल बैराग जनावा ॥  
 नहिँ जानहिँ डुहुँ का चित जानी । अन्न न खाइ पियै नहिँ पानी ॥  
 पूछेँ कहै न एकाँ वाता । पियर बदन जस काहुक राता ॥  
 चचल नैन चहुँ दिस हेरा । चरचै पुर आनन सब केरा ॥  
 पलक न लाउ जानु नहिँ सोवा । दूढत फिरै जानु कछु खोवा ॥  
 धरमसाल की नीत न होई । भूखा जाइ इहा हुत कोई ॥

भइ आयसु ऐसी कहा, वेगिहि आनहु सोह ।

मैं चूवधौं सेवा कछु, तातं रिसि जिय होइ ॥

कुँअर पास तव जोगी आना । जोगी कुँअर देखि पहिचाना ॥  
 चित रहसा जानहुँ निधि पाई । कथा महँ जोगी न समाई ॥  
 पीत वरन जु अहा भा राता । अति हुलास कपेउ सब गाता ॥  
 देखि कुँअर आदर बहु कीन्हा । निकट पाट बैठन कहँ दीन्हा ॥  
 विनती कीन्ह सुनौ हो देवा । कस न धरम कै मानहु सेवा ॥  
 हम सेवक तुम्ह देव गोसाईं । सेवक हुते चूक बहु टाई ॥  
 रिस तजि जेवहु जेवन देवा । होउँ सनाथ आज तुम्ह सेवा ॥

कहेसि कुँअर सुनु धरम तर, अस लगेउ तुअ भाग ।

जरि पताल पालो सरग, हींछा फल तेहि लाग ॥

जा दिन तें हम गुरु विछोवा । अन्न न जेवा नौद न सोवा ॥  
 भूख नाहिँ औ नाहिँ पियासा । नाउँ अधार रहइ घट साँसा ॥  
 दक्खिन देस जान जिन्ह देखा । रूपनगर कथिलास विसेखा ॥

बसे गुरू तेहि नगर सोहावा । चेला देस विदेस फिरावा ॥  
जोगा अग्नि जब हिए प्रचारी । पल महँ कीन्ह भसम रिसि जारी ॥  
काया जोग अहै रिसि रोगू । जो रिसि करै सो नासै जोगू ॥  
कुँअर कहा कस देस तुम्हारा । औ को देस बसावन हारा ॥

मो सौँ देस बखान कर, कैस नगर कस भूप ।

कौन लोग तहवाँ बसै, पुनि गुन कौन अनूप ॥

जोगी कथा कहन अनुसारी । सुनहुँ कुँअर यह बात रसारी ॥  
रूपतगर सेा उत्तिम देसा । चित्रसेन जहँ राउ नरेसा ॥  
ऊँच नीच घर ऊँच उँचाए । चित्र कटाउ अनेक बनाए ॥  
घन सेा नग्न घन उत्तिम देसा । चित्रसेन जहँ राउ नरेसा ॥  
राउ रंक घर जानि न जाई । एक ते एक चाह अलुवाई ॥  
बेल चंबेली कुद नेवारी । घर घर आँगन फुलि फुलवारी ॥  
लीपे चंदन मेद अवासा । भीत वैठि लेहिँ अलि वासा ॥

मृगमद चोवा कुमकुमा, खोरि खोरि महकाइ ।

सुर नर मुनि गधरव सब, रहे सुवास लुभाइ ॥

चित्रसेन अति राउ भुवारा । जस रवि तपै तेज मनियारा ॥  
जेहि घर विषम दिष्टि परि राई । वैरी तम जिमि जाइ बिलाई ॥  
बड़ परताप अखडित राजू । अगनिन हस्ति घोर दल साजू ॥  
गुन विद्या सरि भोज न पावा । पँडितन्ह हिएँ हेत बहु लावा ॥  
दुखी न कोई सब सुख राता । जहँ तहँ चलै धरम की बाता ॥  
सब सुखिया कोउ दुःख न जाना । हँडत फिरहिँ लेइ को दाना ॥  
देस देस के राजा आवहिँ । ठाढ तँवाहि बार नहिँ पावहि ॥

महथ गरव अति मान तहँ, रहै न एकौ अक ।

रूप नगर की खोरि महँ, राउ होहिँ सब रक ॥

तेहि घर पुनि चित्रावलि बारी । मात पिता की प्रान पियारी ॥  
रूप सरूप वरनि नहि जाई । तीनिहुँ लोक न उपमा पाई ॥  
दिनकर दिन पावै नहि जोरा । इद्र लजाइ देखि मुह ओरा ॥  
अमर कोष गीता पुनि जाना । चौदह विद्या करे निधाना ॥  
सतति आन न तेहि घर आवा । वाही एक ते सब चित, लावा ॥  
मौह चढाइ जो कबहुँ रिसाई । मात पिता कर जिउ निसराई ॥  
औ जो चाह करै पुनि सोई । लेत देत कछु बरज न कोई ॥

दखिन दिसा पुनि नगर कै, सखर एक खनाइ ।

सखिन साथ चित्रावली, तहँ नित जाइ नहाइ ॥

कहा सराहौँ सखर तोरा । प्राप्ति मोती तहँ काँकर हीरा ॥  
अति औगाह थाह नहि पाई । विमल नीर जहँ पुहुमि देखाई ॥

अति अमोघ औ अति विस्तारा । सूभ न जाइ वारहु त पारा ॥  
 घाट बँधाये कचन ई टा । सरग जाइ जनु लाग्यो भीटा ॥  
 ऊपर ताल पानि जहँ ताई । ठाँव ठाँव चौखडि बनाई ॥  
 औ जहँ तहँ चौरा कै लीन्हें । निसि दिन रहहिँ विछावन कीन्हें ॥  
 जहाँ एक छिन करै नवासा । सोई ठाँव होइ कविलासा ॥  
 सुख समूह सरवर सोई, जग दूसर कोउ नाहि ।  
 मानुष कर का पूछिये, देवता देखि लोभाहिँ ॥

भीतर सरवर पुरइन पूरी । देखत जाहिँ होइ दुख दूरी ।  
 फूले कँवल सेत औ राते । अलिमकरद पियहि रस माते ॥  
 बासर पदुम कुमुद रह फूला । सब निसि नषत चाँद रह भूला ॥  
 तोरि कँवल केसर भरराहीं । केसरि बास आव जल माहीं ॥  
 हंस भुंड कुरिलहि चहुँ ओरा । चकइ चकवा पौरहिँ जोरा ॥  
 सवरत ताहि सिरायो हीया । चातक आइ पाने सो पीया ॥  
 औ जित पछी जल के आए । केलि करत अति लाग सोहाए ॥

रहसहि क्रीड़ा बृन्द बस, भौर कँवल फहराहिँ ॥

निसि दिन होहिँ अनद तह, देखत नैन सिराहिँ ॥

सँवर तीर पछिम दिसि जहाँ । चित्रावलि की बारी तहाँ ॥  
 सीतल सधन सुहावन छाहीं । सूर किरिन तहँ सँचरै नाहीं ॥  
 मंजुल डार पात अति हरे । औ तहँ रहहिँ सदा कर फरे ॥  
 तुरँज जँ भीरी अति बहुताई । नेबू डारन गलगल जाई ॥  
 अमिरित फर औ दाड़िम दाखा । सतति जियै निमिष जो चाखा ॥  
 नरियर और सोपारी लाई । कटहर बडहर कोऊ न खाई ॥  
 आँव जमुनि लै एक दिसि लाए । नर पीपर तहँ गवन न आए ॥

मूर सजीवन कलपतरु, फल अमिरित मधु पान ॥

देउ दइत तेहि लागि भजहि, देखत पाइय प्रान ॥

कोकिल निकर अमिरित बोलहिँ । कुँज कुँज गुँजत बन डोलहिँ ॥  
 सारी सुआ पढै बहु भाषा । कुरलहिँ बैठि बैठि तर साखा ॥  
 पवई आपन आपन जोरी । छुकी फिरहि कुरलहि चहुँ ओरी ॥  
 खंजन जहँ तहँ फरकि देखावै । दहिअल मधुर बचन अति भावै ॥  
 मोर मोहनी निरतहिँ बहुताई । ठौर ठौर छुवि बहुत सोहाई ॥  
 चलहिँ तरहिँ तहँ ठमुकि परेवा । पडुक बोलहि मृदु सुख-देवा ॥  
 बहु करनास रहहिँ तेहि पासा । देखि सो सग भाग जेहि बासा ॥

भगराज औ भृगी, हारिल चानिक जूह ।

निसि बासर तेहि बारि महाँ, कुरलहि पछि समूह ॥

औ पुनि रहै माँझ जहँ बारी । चित्रावलि लाई फुलवारी ॥  
 सोन जरद नागसर फूले । देखि सुदर्शन दिष्ट जो भूले ॥  
 जाही जहूँ अति बहुताई । अनवन भाँति सेवती लाई ॥  
 बनबेला सतवर्ग चमेली । रायबेल फूली सुखबेली ॥  
 करना केतलि नास नेवारी । चपकली जनु कुँदि उतारी ॥  
 कदम गुलाब लाग बहु भाँती । औ वसाइ बकुचन की पौती ॥  
 मौलसिरी फूली औ मूँदी । जनु सिंगार हरावलि मूँदी ॥  
 पौन बसेरा लेहि निधि, तेहि फुलवारी पास ।

भोर भए जग प्रगटइ, तिन्ह फूलन्ह की नास ॥

ललित लवंग लता जहँ फूली । भौरा भौरि कुसुम तेहि भूली ॥  
 नगर नगर तहँ डगरै जूही । गंधराज फूलहिँ संबूही ॥  
 कस्तूरी सुगंध बिगसाहीं । ठौर ठौर सौ अधिक बसाहीं ॥  
 भुईँ चपा फूली बहु रगा । मानहु दरसा रूप अनंगा ॥  
 सूरज भाँति भाँति अति राते । देखत बनै बरनि नहिँ जाते ॥  
 उडहिँ पराग भौर लपटाहीं । जनु बिभूति जोगिनि लपटाहीं ॥  
 मरकडी भौरन संग खेली । जोगिन संग लागि जनु चेली ॥

केलि कदम नवमल्लिका, फुल चपा सुरतान ॥

छु ऋतु बारह मास तहँ, ऋतु वसत अस्थान ॥

औ पुनि जहाँ माँझ फुलवारी । तहँ चित्रावलि की चित सारी ॥  
 चदन मेद कपूर मिलावा । इन्ह तिहुँ मिलि कै कीन्ह गिलावा ॥  
 हीरा ईंट लगाइ उँचाई । देखत बनै बरनि नहिँ जाई ॥  
 चूनी चूरि कै कीन्हो खोहा । मोली चूरि गच्च जगमोहा ॥  
 अति निरमल जस दरपन कीन्हा । तहाँ जाइ पुनि आपु न चीन्हा ॥  
 मंदिर एक तँह चारि दुआरी । नगिन जरी पुनि लागु केवारी ॥  
 कनक खम तँह चारि बनाए । हीरा रतन पदारथ लाए ॥

ठौर ठौर सब नग जरित, अस होइ रहेउ अँजोर ।

जँह न रैन दिन जानिए, औ न सौँफ नहि भोर ॥

तेहि मँह चित्रावलि गुन ग्यानी । आपु न चित्र लिखै अस जानी ॥  
 जौ लौँ सखी दरस नहिँ पावहिँ । भोरहिँ आइ सीस तेहि नावहिँ ॥  
 और जो चित्र अहहिँ तेहि माहीं । सो चित्रावलि की परछाँहीं ॥  
 अस विचित्र केहि लावों जोरी । अस्तुति जोग जीअ नहिँ मोरी ॥  
 वही रंग अपने रँग माहीं । ओहि के रँग और कोउ नाहीं ॥  
 सौँह न जाइ चित्र मुख हेरा । धन सो चित्र औ धन सो चितेरा ॥  
 मानुष कहा सो देखै पावै । देवता जाहिँ जो हारे आव ॥

कोटि चित्र चित्तसारि मँहँ , देखत एकौ नाहिँ ।  
 जौँ दिनकर उहोत ही , नपत सबै छिपि जाहिँ ॥

लखो लिलाट दूजि कर चदा । दूजि छाड़ि जग वो कहँ बदा ॥  
 भौँह धनुष बरुनी बिषवाना । देखि मदन धनु गहत लजाना ॥  
 बरुनी वान गड़े जेहि हीये । बहुरि न निकसै जब लहुँ जीये ॥  
 लोचन विमल जानु सम जोवा । निमिख जो देख जनम भर रोवा ॥  
 अधर सुरंग जनु खाए तँबोला । अबहीं जनु चाहै हेसि बोला ॥  
 लक छीन जेहि भृग लजार्हीं । कोउ कह आहि कोऊ कह नार्हीं ॥  
 फौली चरन सराहौ काहा । अबहीं रहसि चलै जनु चाहा ॥

गुपुत रहै चित्त सारि मँहँ , जग जानै सब कोइ ।  
 सपने जो कोइ देखई , सौतुक जोगी होइ ॥

सुनी कुँअर जो चित्र की बाता । हिए हुलास कँपेउ सब गाता ॥  
 सचक भयौ चित्त औ मन गुना । सपन जो देखा सौँतुक सुना ॥  
 सोवत भाग अहे सो जागे । श्रवन भए सुनि जाहि सभागे ॥  
 मोहिँ परतीति करम की नाहीं । कहत आहि कोउ सपने माहीं ॥  
 जौ निहचय हौँ सोअत अहौँ । जनि जगाउ विधि हा हा कहौ ॥  
 कौन धरी यह आह सुभागी । देखेउँ सोइ सुनेउँ सो जागी ॥  
 कौन बार यह आह सरेखा । सखन सुना नैनन जो देखा ॥

यहि अतर जनु बिरह अहि , बधन देई छुड़ाइ ।  
 विथुरि गयौँ विष सकल तन , लहरि चढी-जनु आइ ॥

गुपत पीर परगट पुनि भई । सुलगत आगि फूकि जनु दई ॥  
 उढी आगि सिर पालहु जरा । धाइ कुँअर जोगी पग परा ॥  
 रहि न सकेउ हिय गह भरि रोआ । नैन नीर जोगी पग धोआ ॥  
 बिरह अनल जल मै चखु दरा । लोचन नीर जोगि तब जरा ॥  
 दुहँ हाथ गहि सीस उटावा । पूँछत बात बकुर नहिँ आवा ॥  
 सर्प डसा जनु विष छहराना । घूमत रहै सुनै नहिँ काना ॥  
 दिष्टी भुअंग बद जनु कीन्हौँ । ते पढ़ि मत्र खोलि जनु दीन्हौँ ॥

तब जोगी कर नीर लै , मुख छिरकेसि करि हेत ॥  
 पहर एक बीते भयौ , बहुरि कुँअर चित्त चेत ॥

बहुरि जो कुँअरख सोइ कै जागा । वैर सँभारि गहेसि सिर पागा ॥  
 तौ पुनि कहिस ऊभ लै सँसा । ए देनिहार निरासहि आसा ॥  
 बोह सो चित्र जो मोहि दुख दीन्हा । बरबस जीउ मोर हरि लीन्हा ॥  
 जीउ लेह तन दूरह डारा । हौ तो वही चित्र कर मारा ॥  
 वही चित्र मै सपने दीठा । चित्त माँहिँ वहि चित्र नईठा ॥

वही चित्र विनु जीउ विहीना । जिउ हरिलीन्ह कान्हतन सुना ॥  
वही चित्र जो नैन समाना । सोँ लुक समन जाइ नहिँ जाना ॥

वही चित्र हम हिप्र महँ , जो तँ कीन्ह बखान ।

हौँ अब रहा करीर होइ , वह भौ जीउ समान ॥

जेहि दिन ते नैनन भा लाहा । बहुरि न पावौ कन्हूँ चाहा ॥

पंथन पावउँ केहि दिशि जाऊँ । पूछौँ काहि न जानउँ नाऊँ ॥

मैं निरास औ विनु जिउ आहा । आव दई तैं जिउ षट बाहा ॥

आजु आज तैं पुरएति मोरी । तन मन धन नेबछावरि तोरी ॥

अब कहु पंथ गवन जेहि पावौँ । चलउं वेगि खिन बिलेवन लावौँ ॥

तुम्ह जहँ चहहु सिघारहु तहाँ । मोहि अब कहहु पंथ तो कहाँ ॥

कै अब जाइ चित्र सो पावौँ । कै अमान बहि पंथ लगवौँ ॥

जिउ चित्तसारी महँ रहा , देह रहौ हम साथ ।

देहु सोई उरदेस मोहिँ , जेहिँ जिउँ आवै हाथ ॥

जोगी कहा कुँअर सुनु बाता । अबहीं देखि चित्र दूँ राता ॥

वह सो चित्र तैं देखा नाहीं । जा कर ऐस चित्र परछाहीं ॥

चित्र देखि तैं चित्रै जाना । तामहँ अहा सो नहिँ पहिचाना ॥

चित्रहि महँ सो आहि चितेरा । निर्मल दिस्टि पाठ सो हेरा ॥

जैतैं बूँद माँह दधि होई । गुर लखाव तौ जानै कोई ॥

जा कहँ गुरु न पंथ देखाना । सो अंधा चारिहुँ दिशि घावा ॥

मूर्ख सो जो चित्र मन लावै । तेनर मुआ जैत पछुतावै ॥

यह मूर्खि औ चित्र जग , जो बिधि सर सुजान ।

परगट देखहि नैन यह , गुपुत जो पूजहि आन ॥

अति सरल चित्रावलि बारी । जनु विविनै कर चित्र सँवारी ॥

चित्रहिँ वहाँ जोति छवि ओती । वह सजीव यह विनु जिउ जेती ॥

चित्र अबोल होइ जनु गूँगा । बोहिक बोल जस मानिक गूँगा ॥

चित्र कटाच्छु भाव विनु नैना । बोहि क नैन सव मोहन तैना ॥

चित्र अबोल न बोल बोलावा । बोहि गौनत जनु हँद तोहावा ॥

सायक बरनि भौह धनु ताना । सौँस जाहि लागु उर बाना ॥

चंद बदन तन चंरक सारी । अलि सँग फिरहिँ जानि फुलवारी ॥

काहि लगावो उरन तेहि अच्छर पूज न छाहिँ ।

सुर नर मुनि गन पचिभरहिँ , दरसन पावहिँ नाहिँ ॥

बदन जोति केहि उपमा लावौँ । सचिहर पट्टर देत लजावौँ ॥

सचि कलंक पुनि खंडित होई । है निकलंक सँरुन सोई ॥

सचि बंदी जब कूजिक दीदा । ओहि बंदी निव देहिँ अलासा ॥

जो मुख खोलि करै उजियार । नयत छुनाहिँ होइ सचि तार ॥

नैन कुरंग कहे नहि पारौं । खंजन मीन ताहि पर वारौं ॥  
तीन रंग जा महे नित लहिए । तेहि कुरंग कहुं कैसे कहिये ॥  
जाकहँ नैन एकौ छुन हेरा । सो विष वान क भयौ अहेरा ॥

ऐसन चित्र अहेरिया, मारि न खोज करेइ ।

जेहि उर लागे वान सो, रहसि रहसि जिउ देइ ॥

औ तेहि संग अनेग सहेली । सबै सरूप अनूप नवेली ॥

उन्हक रूप विधि अपुखव कीन्हा । करि करि चित्र जानु जिउ दीन्हा ॥

कोउ कुमुदिगि कोउ पकज कली । एकत एक चाहे अति भली ॥

अबहीं सबै कली मुँह मूँदी । भौर चरन ते बेलिन खूँदी ॥

सब चित्रिन औ पदुमिनि जाती । सेवा करत रहत दिन राती ॥

अग्या होहि करहिँ वै सोई । भेटि न सकैं रजायसु कोई ॥

औ जिहि ठोव करहिँ बिसरामा । जपत रहहिँ चित्रावलि नामा ॥

निसि धासर ठाढ़ी रहहिँ, लीन्हें आपन साज ।

जौ पठवहि सिध एक कहँ, धाइ करहिँ दस काज ॥

पुनि सो चित्र लिखे भल जाना । उनसौं जगत न कोऊ सयाना ॥

आपन चित्र आपु पै लीखा । और को लिखै जान नहिँ सीखा ॥

जगत चितेर रहे पचि हारी । ओकर चित्र न सकैं सँवारी ॥

जौ कोइ आपन चित अनै । अंतरजामी तबहीं जानै ॥

आपन चित्र छीन के लेई । औ तेहिँ देस निकारा देई ॥

आपन चित्र जाहि लिख दीन्हा । ते सो धालि हिये मो लीन्हा ॥

एहि डर कोऊ न बीसरै, अह निसि आठौ जाम ।

लिये रजायसु नित रहहिँ, जपत फिरहिँ सो नाम ॥

औ तेहिँ सग निपुसक जाती । पठवै जहाँ जाहिँ ले पाती ॥

गुन बिधा सब जाना बूझा । निरमल दिष्टि पथ भल धरुआ ॥

अन्न न खाहिँ पानि नहि पीयहिँ । नाउँ अधार रैन दिन जीयहिँ ॥

काम क्रोध तिसना मन माया । पंच भूत सौं तिन्ह की काया ॥

अग्या काज विलेख न लावा । करहिँ सोइ जेहिँ दोष न पावा ॥

सब की बात जनावहिँ जाई । अग्या होई कहहिँ सो आई ॥

अग्या बिना पैग जो धरहीं । अनल तेज सिखा लहि जरहीं ॥

दूर रहहिँ तैहिँ गमत नहिँ, निकट रहहिँ ते चारि

रचना सिरजनहार की, नावै पुरुष न नारि ॥

हौं तेहि माहँ परेवा नाऊ । सेव करौं चित्रावलि ठाऊँ ॥

वहँ सो गुरू हौं आकर चेला । वहिक नाउ हम मुँदरा मेला ॥

वही पंथ मोहि दीन्ह दिखाई । वेहि के वचन सिद्धि मै पाई ॥

औ सुमिरन दीन्ही वोहि कैरी । वेहि क नाउँ सुमिरौ हरि फेरी ॥

भूख नाहिँ औ नीद पियासा । चित्रिनि मुरति ध्यान घट आसा ॥  
 भा अग्या करि साज महेसू । दिन दस फिरहुँ देस परदेसू ॥  
 जो लीगु फिरत होइ नहिँ रोगी । ती लीगि सिद्ध होइ नहिँ जोगी ॥  
 भसम अंग पग पाँवरी, सीस कलपि करि केस ।  
 कथ पहिरि लै दड कर, देखन निसरखौँ देस ॥  
 सुनत कुँअर जोगी के बैना । उघरे दोऊ, हिये के नैना ॥  
 मन महेँ कहैसि सोंचु यह साजा । वह सो कौन जा कर उपराजा ॥  
 जेहि क चित्र अस जिउ लेनिहारा । दुहुँ कस होइहि सिरजनहारा ॥  
 साजा होई मेटि पुनि जाई । सिंभू सरीर न कोऊ मिटाई ॥  
 जो न आपु आपहि पहिचाना । आन क पेम कहाँ हुत जाना ॥  
 जैसे कुडुध जानि कै देवा । बहुत करहिँ पाहन धी सेवा ॥  
 पाहन पूजि सिद्धि किन पाई । से मर सेइ सुआ पछिताई ॥  
 कंस न वृष्णि खोजौँ सोई, जेहि क चित्र सब कौन्ह ।  
 जोउ देई जो चाहई, लौह जो चाहै लीन्ह ॥  
 कुँअर कहा अब सुनहुँ परेवा । मैं तोर सीख मोर तैं देवा ॥  
 मैं तजि पथ जात वौराना । तैं गहि बाँह पथ पर आना ॥  
 बूड़त मोर नाउ मँभ नीरा । तू खेवक होइ लाइसि तीरा ॥  
 सोअत हौँ जो अहा सो जागा । मन तजि चित्र चितेरहिँ लागा ॥  
 चित्र देखि न चितेर जाना । विनु चितेर अथ दिष्टि न आना ॥  
 अब फिरि कहु चित्रावलि बाता । जेहि के रूप आशु मन राता ॥  
 सुनतहि नाम दूरि भइ दाहा । दहुँ मुख देखत होइहै काहा ॥  
 मरत जियाए जोइ कहि, फिरि फिरि कहुँ सो वात ।  
 सुनिवे कहँ अमिरित कथा, अवन भए सव गात ॥  
 जोगी सँवरि कहै पुनि बाता । वह चित्रावलि जेहि रँगराता ॥  
 बदन भयंक मलयगिरि अंग । बदन वास फिरहिँ अलि सगा ॥  
 जो अलि अंग वास वह पाई । सो तजि आन फूल नहिँ जाई ॥  
 बहुतन्ह सिर करवट गहि सारा । हिँछा करि लधुकर औतारा ॥  
 बहुत नाउँ सुनि जोगी भए । सुद्ध मुँडाइ देसतर गए ॥  
 ससि सूरज औ नषतन पाँती । बरने होहिँ दिवस औ राती ॥  
 भूषन सोभ पाव तेहि अंग । ताते निसि दिन छाड न सगा ॥  
 चाँद न सरवर पावई, रूप न पूजै भानु ।  
 अथ सुनु तन मन कान दै, नख सिख करौँ बखानु ॥  
 प्रथमहिँ कहौँ वेस की सोभा । पन्नग जनौँ मलयगिर लोभा ॥  
 दीरघ विमल पीठि पर परे । लहर लेहि विषधर विष भरे ॥  
 कच अहिँ डसा जनम नहिँ जागा । मंत्र न मानै मूरि न लाग़ा ॥



बिथुरी अलक मुअगिनि कारी । कै जनु अलि लुबुधे फुलवारी ॥  
 कै जनु बदन तरनि जौ तपा । सिमिटि सुमेरु पाछु तन छुपा ॥  
 किमि कच बरनौ राजकुमारा । मति न समाइ देखि अंधियारा ॥  
 मृग मदवास आव तेहि केसा । पौन जाइ लइ देस बिदेसा ॥

सिरजी तब विधि स्यामता , जब जग सिरजै लीन्ह ।

ते कच सिरजे सार लै , सेष बाँटि के दीन्ह ॥

सीस सिंगार माँग बिधि कीन्ही । तातें ठाउँ मोंग पर दीन्ही ॥  
 सूर किरन करि बालहि धारा । स्याम रैनि कीन्ही दुइ फारा ॥  
 पथ अकास विकट जग जाना । को न जाइ वोहि पथ मुलाना ॥  
 तहाँ देखि अलकावरि फाँसा । पथिन्ह परा जीउ कर साँसा ॥  
 जिउ परतेजि चलहिं तेहि माही । और बाट नहिं केहि दिसि जाहीं ॥  
 वेनी सीस मलयगिरि सीसा । मोंग मोति मनि माथे दीसा ॥  
 सूर समान कीन्ह बिधि दीया । देखि तिमिर कर फाट्यो हीया ॥

स्याम रैनि मँह दीप सम , जेहि अँजोर जग होइ ।

अछ्छज मुअगम माँहि वसि, दिया मलीन न होइ ॥

पुनि लिलाट जस दूजि न चदा । दूजि छाडि जग वह कह बदा ॥  
 पटतर दूजि होति जौ होती । दूजि माँह पुन्यो कै जोती ॥  
 भाग भरा अस दीपै लिलारा । तीनहुँ भुवन होइ उजियारा ॥  
 होइ मयक खीन जेहि रीसा । सो लिलाट कामिनि पहुँ दीसा ॥  
 कुंदन तिलक सोभ कस पावा । मनहुँ दुइज मों जीउ मिलावा ॥  
 मुकुता पाँति चहुँ दिसि पाई । मानहुँ मिली किरतिका आई ॥  
 जाहि लिलाट भाग मनि होई । अस सँजोग सुभ देखै सोई ॥

सुभ सँजोग वहि एक छिन , जा कहँ सनमुख होइ ।

जौ जग लागै गरह जिमि , बार न बाँकै कोइ ॥

कुटिल भौह जानों धनु ताना । इद्रधनुष तेहि देखि लजाना ॥  
 जानहु काल जगत कहँ कड़ा । निसि दिन रहै पथच जनु चढ़ा ॥  
 भौह फिराइ जाहि तन हेरा । देखत काल होइ तेहि केरा ॥  
 एही धनुष जुध मनमथ लीता । कै परनाम काम तन जीता ॥  
 भौह धनुष लखि इद्र सँकाना । सब जग जीति सरग कहँ ताना ॥  
 कौन सो बली जो न गै मारा । तिनहुँ लोक एक हुकारा ॥  
 देस धनुष जग और न दूजा । देवतन्ह आइ बाहुबल पूजा ॥  
 अहिपुर नरपुर जीति कै , सुरपुर जीतो जाइ ।

अब दहु कछु न जानिये , का कहँ घरे चढाइ ॥

बाँके नैन तीष अति दोऊ । जगत जाहि सर पूजि न कोऊ  
 राते कौल मधुप तेहि माँहीं । कहत लजाउ तेउ सर नाहीं ॥

कौल देखि ससिहर कुम्हिलाने । ए ससि संग सदा विगसाने ॥  
 स्याम सेत अति दोऊ सोहाए । खजन जानु सरद रिनु आए ॥  
 कै दुह मिरिग लरत सिर नीचे । काजर रेल डोर गहि धीचे ॥  
 दोउ समुद्र जन उठहि हलोरा । वह मह चहत जगत सब वोरा ॥  
 तीछे हेर जाहि चषु आछे । चली मीन जनु आगें पाछे ॥

वर कामिनि चषु मीन सम , निमिष हेर तन जाहि ।

बहुरि जनम भरर मीन जिमि , पलक न लागै ताहि ॥

बरुनी बान तीख अरु घने । सोई जानु जाहि उर हने ॥  
 मद सिराय ते भाल सवारे । जाके हने सवै मतवारे ॥  
 तापर त्रिष काजर साँ बाँधा । सोई मरै जाहि तन सोंधा ॥  
 लाग न बरु ने बान जेहि हीया । सो जग मोह अमिरथा जीया ॥  
 जेते अहँ जीव जग माहीं । साधन जाइ बान सो खाहीं ॥  
 जगत आइ होइ रहा निसाना । मकु हौँ सोह मारि तेहि बाना ॥  
 गलि गलि हाइ रहे जो आई । बैठ जो लागि जाइ तो जाई ॥  
 एक मूठ के छाड़ते , लागे बान अलेख ।

जग महँ ऐसन पारधी , दूसर काहु न देख ॥

सुभग सरूप सुरग अमोला । जनु नारंग बरनारि कपोला ॥  
 ई गुर केसर जानु पीसाए । दोऊ मिलाइ कपोल बनाए ॥  
 और सो देखि कपोल लुनाई । मती हीन कछु बरनि न जाई ॥  
 तेहि पर तिल सो देइ अस सोभा । मधुकर जानु पुहुप पर लोभा ॥  
 कै बिधि चित्र करत कर धरे । करत उरेह बूँद खसि परे ॥  
 बदन सिंगार सोभ जो पावा । रहेउ न दिन पुनि सो न उचावा ॥  
 वह तिल जाहि दिछि तल परा । भयो स्याम तस तिल तिल जरा ॥

नहि चीन्हत कोउ काहु कहँ , जो जग माहिं न होति ।

परछाहीं तिल एक की , सब नैनन्ह महँ जोति ॥

किमि बरनौ नासिका सोहाई । नासिक सुनि मति नियर न जाई ॥  
 खरग धार कहि आवै हौँसी । कौन खरग जेहि उपमा नासी ॥  
 तिलक फूल कबितन्ह चित धरा । उहौ लजाइ पुहुमि खस परा ॥  
 इह रुआर पुनि कीर कटोरा । उपम देत मन मान न मोरा ॥  
 उह सुर मौन जगत उपराई । ससि सूरज जहँ उदै कराई ।  
 तेहि पर हेरि रही मति मोरी । उपमा नहिँ कहि लावो जोरी ॥  
 वेसरि जो पहिरै रहसाई । नग कुंदन छवि पाउ सोहाई ॥

सुकुता डोलत निरखि मन , सुर नर इहै गुनाहिं ।

कहत सुहागिनि नासिका , तिहुँ पुर पटतर नाहिं ॥

अधर सुधा निधि बरनि न जाई । बरनत भति रसना पनियाई ॥

छुए न काहु अछूते राखे । प्रेम दिष्टि मुख अजहुँ न चाखे ॥  
 विद्रुम अति कठोर औ फीके । सुरंग मृदुल दुख दायक जीके ॥  
 शिब अरुन सो सरि न तुलाना । अति लजान बन जाइ दुराना ॥  
 वदन मयंक जगत उँजियारा । अमिरित अघर प्रान देनिहार ॥  
 का बरनौ का मति भइ मोरी । उत्तम अघम लगाएउं जोरी ॥  
 ससि अमिरित देवतन्ह कै जूठा । जगत जान यह अघर अनूठा ॥  
 लोयन जाहि कटाच्छ सर, मारि प्रान हरि लीन्ह ।

अघर वचन तत खिन दोऊ अमिय सींचि जिउ दीन्ह ॥

दसन जानु हीरा निरमरे । वदन आनि मुख सपुट घरे ॥  
 इक इक नग दुहुँ जग कर मोला । जो जिय देह कहै सो खोला ॥  
 पान खात कछु भए उघारे । दिष्टि परे मजुल रतनारे ॥  
 जनु दुइ लर मुकुता रँग भरे । मंजन लागि आइ मुँह घरे ॥  
 कै देवतन्ह ससि कीन्ह कियारी । अमिरित सानि वारि अनुसारी ॥  
 दाडिम बीज तहा लै वोए । रखवारे राखे अहि पोए ॥  
 निसि बासर तें निकट रहाहीं । मकु सुक पिक खजन चुरनि जाहीं ॥  
 इक दिन बिहँसी रहसि कै, जोति गई जग छुह ।

अवहुँ सौरत वह चमक, चौंधि चौंधि जिय जाइ ॥

तेहि भीतर रसना रस भरी । कौल पौखुरी अमिरित भरी ॥  
 दसन पाँति मँह रही छियानी । बोलत सो जनु अमिरित बानी ॥  
 बोलत बैन अमी जनु चूआ । सुनत जिये बरषन कर मूआ ॥  
 जे मन अहि कुंतल के खाए । बोलि बोलि धन सबै जियाए ॥  
 जाके सवन वचन उन डारा । ताकर वचन जीउ देनिहारा ॥  
 उकतिन बोलत रतन अमोली । श्राव चढी जनु कोइल बोली ॥  
 व्याकरनौ जानै सगीता । पिगल अमर पढ़हि पुनि गीता ॥

रहहि रैन दिन बाद मँह, चिचिनि चखु औ बैन ।

त्योँ त्योँ रस न जियावई, ज्योँ ज्योँ मारहिँ नैन ॥

श्राव सुल सम ठाढ़ी भई । वह आमिल यह अमिरित भई ॥  
 तेहि तर गाइ अपूरब जोवा । पाक श्राव जनु श्रंगुरी टोवा ॥  
 पाका श्राव गात पियराना । वह कुमुकुम जनु ई गुर साना ॥  
 चिबुक कूप अति नीर गँभीरा । शिब अघर सँजीव जेहि नीरा ॥  
 अमिरित कुड अगम श्रौगाहा । जो तहँ परा निकास न चाहा ॥  
 ताहि कूप ढिग रहस न जाहीं । बूडन कहँ मुनि लाल कराहीं ॥  
 परहिँ जाइ मन रहइ न देई । कुतल कौट काटि कै लेई ॥  
 नैन पियासे रूप जल, पावत जेहि न अषाहिँ ।

कूप चिबुक जो मन परै, बूड़ि बूड़ि रहसाहिँ ॥

सिंधुसुता सम सवन अमोला । जलसुत वचन लागि विधि खोला ॥  
 जे अमोल नग जगत बखाने । नारि सवन मह सवै समाने ॥  
 ग्यान वात विनु आन न सुना । सुनत मोति तबही सिर धुना ॥  
 निसि दिन मुकता इहै गुनाही । खंजन भाँकि भाँकि जिमि जाही ॥  
 कचन खुटिला जा न बखाना । गुरु सिख देह लागि ससिकाना ॥  
 राहु बुद्ध कहँ सपरि निसका । दुहुँ कर लीन्है सेलि मयका ॥  
 श्री पुनि सोमै खुमी सोहाई । अथही तरिचन चढा न जाई ॥  
 कलभ दसन खंभिया दोऊ, सोऊ पट तर नाहिँ  
 एक छिन देखे जनम भरि, खुभी रहै जिउ माहिँ ॥

अथ सुनु बरनौ गीब सुहाई । विधि कर चाक भँवाइ चढाई ॥  
 अँगुरिन बीच रही जो रेखा । सोइ चीन्ह रेखा तहाँ जो देखा ॥  
 केलि समै कौतर की रीसा । तत धिन चलो लाइ सुई मीसा ॥  
 नाचत, मोर गीब सर जोवा । तबही सीस पाइ धरि रोवा ॥  
 सख न सम भा सँभ सँकारा । तातें जहँ तहँ करे पुकारा ॥  
 तब ही छुरन जान अपछुरा । भूषन लाग न बाँधै छुरा ॥  
 वोही कठ जानु जिन्ह दीठी । अमिरित चाहि न पूरै मीठी ॥  
 सोहत हाँस जराउ गर, बदन हेठ निकलंक ।  
 सर न मयक सर जनु, दुरत राहु के संक ॥

दीरघ वाहु कलाई लोनी । अति सुन्दर जग भई न होनी ॥  
 दुहु पौनाल सोऊ सर नाहीं । ताते रंघ कलेजे माहीं ॥  
 सुभ्र मुजन पर टोंड सोहाई । टोंड तहाँ छवि पाव सबाई ॥  
 देखि धुनहि गन गभ्रव माथा । एक सो इद्र वज्र पुनि हाथा ॥  
 देखि सो मज्जलि सुभ्र कलाई । को न गयो बनफलै सिघाई ॥  
 वहि संग देखु जो लुरा हथोरी । कौल पाखुरी ई गुर बोरी ॥  
 विद्रुम वेलि सो अँगुरी दीसी । वह कठोर यह मंगफली सी ॥

अँगुरिन मुँदरी जरित की, सोह छला प्रति पोर ।  
 अमीकरण नग आँखि जनु, गाँठि कनक कै जोर ॥

होत उत्तंग सिहन निरमरे । एक डारि दोइ नारंगि फरे ॥  
 कनक कठोरा दुइ गुन भरी । संकर पूजि उलटि जनु घरी ॥  
 भीने पट महँ भलकत दीसी । जनु भीतर दूवै कँवल कली सी ॥  
 मुकुताहल विच सोभा कैसी । चकवा छुवा विछुरि जनु वैसी ॥  
 होत उत्तग दोऊ अति लोने । जनु दूवै वीर छत्रपति होने ॥  
 अथहीं छत्र सीस नहिँ छाजू । छनिन जहा तहाँ कर साजू ॥  
 दान दुद जोरी गुन भरी । दुई जनु डंका उलटि कै घरी ॥

गढ़पति हयपति दुरदपति , सुनि कुच कथा अकाथ ।

होइ भिखारी सब चहहिं , जाइ पसारन हाथ ॥

रोमावलि अबहीं उर छोनी । बरनि न सकै दिष्टि मति हीनी ॥

सधि सुमेरु लही अहि पोवा । सीतल ठाव पाइ जनु सोवा ॥

अभिरित अघर वास सुनि माती । उर जनु चढी पपील क पोती ॥

द्वै नृप सोव लागि रिस बाढी । रतिपति आनि लीक जनु काढ़ी ॥

सौरत रोमावली सोहाई । हेवर जाइ दरलि सी खाई ॥

पाहन हिए जोरि बहि दीसी । होइ लीक बह पाहन कीसी ॥

नींद न परी जनम भरि जागा । जिन्ह नैनन्ह होइ रही सरागा ॥

खैची लीक हदीस की , विधिना हिए विचार ।

तिहुँपुर रोमावलि सरी , आन न दूजी नार ॥

नाभि कुड पुनि अति गहिराई । जब चित चढै बूढ़ि जिउ जाई ॥

सिधु भौर जहं पानि फिरावा । तह परि जनम निकास न पावा ॥

बिगसत पकज कली सोहाई । अजहूँ भौर वास नहि पाई ॥

छीर सिधु मथनी जब काढ़ी । नाभि भौर आहो जह ठाढी ॥

नैनु ते कोमल सो ठाऊं । जीम कठोर लेउं का नाऊ ॥

रोमावलि सोभा तेहि पासा । नैनु ते जनु बारि विकासा ॥

जालौ ग्यान हाथ मा हीना । जनमत धाइ नार किमि छोनीा ॥

नारि पेट जेहि अत नहि , बारिधि गहिर गँभीर ।

नाभिकुड मन जो परै , बहुरि न निकसे तीर ॥

पातर पेट कहै का कोई । जनु बाधी ईगुर की लोई ॥

मनहु महाउर दूध सौ पागा । सतत रहै पीठि सौ लागा ॥

छीर न पिचै अतिहि सुकुवारा । कै तबोल कै फूल अघारा ॥

बिनु रस पान आन नहि खाई । सोऊ विकल करै अधिकाई ॥

तेहि तर त्रिबली अति सुख देई । गढ़ी विधातै काम पसेई ॥

सोभित तीनौ रेख सोहाई । तीन भुवन नहि उपमा पाई ॥

सिधुता जानि तरुनता मिली । तीनौ रेख खाचि कै चली ॥

सिरजत भार नितब के , मिलत न कीन्ह संबधि ।

मनु कटि राखे बाधि के , त्रिबली बघन वधि ॥

अति सुकुवारि लक पुनि छोनी । दिष्टि न परै बारहु तब खीनी ॥

देखत सकुचै देखनहारा । दृष्टि न परै दिष्टि कै भारा ॥

काम कला दुइ साचै भरी । सकत सोहाग जोरि जनु घरी ॥

विधिन तोरि जोरि पुनि लीन्है । तातें नाउ निगम कटि कीन्है ॥

अपने थल भूखे केहरी । कोऊ कहै कटि तिन्ह की हरी ॥

देखि लंक भृगी कटि दूटी। भँवति फिरै जनु संपति छूटी ॥  
तह सोहै किंकिनि कटि कसी। काछे जनु आहै उरवसी ॥

सोभित किंकिन निकट कटि, मान उपम जी आइ।

हस पाति तजि मान सर, परवत वैठे जाइ ॥

सुभ्र नितव नितंबनि केरे। गए हेराइ सोई जनु हेरे ॥

जनु संगम दुइ परवत अहहौं। एक वार के बाधे रहहौं ॥

तेहि पर कटि सोभित निरभरी। जनु सिहिनि गिरि ऊपर धरी ॥

दुइ गिरि सम दोउ मगु जह नाहीं। चित के चरन चढत विछलाहीं ॥

मति नितंब वरनत भिभ्रकाई। मति की दिष्टि न आगे जाई ॥

परगट सो कवि कीन्ह बखाना। गुप्त सो अतरजामी जाना ॥

जहा जात मन पिंडुरी कापी। तह की वात रहो सब भौंपी ॥

गुप्त जो रचना विधि रची, परगट नहि होनिहार।

ग्यान तहां नहि संचरै, जानै सिरजनिहार ॥

पुनि जंवा अति सुंदर साजी। जुगल जव तिहुं लोक विराजी ॥

केरा खंभ कलभ कर हेरी। जंघ निकट वे दोऊ करेरी ॥

अति सुंदर सम दूल सुहाए। जनु विधि अपने कर चिकनाए ॥

सुरति करत सुख सपति हरी। मन की दिष्टि थलकि तह परी ॥

गौन समै जनु चमकत चूरा। हंस गयद गरव धरि चूरा ॥

सीस धुनै गज लज्जित भए। हंस मानसर बूड़न गए ॥

छ्वाछ्हीन भूषन छवि हरी। पायल आइ पाय लै परी ॥

चकइ जराऊ जेहरी, जेहरि जिउ लै जाइ।

सुर नर हैं भौंभर भए, देखि सो भौंभरि पाइ ॥

चरन कँवल पर मन बलि गये। जेहि मगु चलै तहा रज भए ॥

मकु तेहि पंथ गौन पुन करई। भूलि पाव इन्ह नैनन धरई ॥

तरवा ऊधरेख सुभ वाची। सुरनर हिये लीक जनु खाची ॥

जेहि जेहि पंथ चरन तैं चले। लेते हिये पाय तर मले ॥

रक्त लाग रह पायन सगा। जानहि लोग महाउर रंगा ॥

चलत चरन भुई परै न देहीं। सुर नर मुनि नैनन पर लेहीं ॥

अनवट विछिया अंगुरिन भरे। मैन सोनार रतन नग जरे ॥

जेहि चित्र चित्रावलि चरन, चित्र किये विधि आनि।

ते चपु मगु वाहर कियो, हियें सरोवर पानि ॥

बह चित्रावलि आहै सोई। तीन लोक बंदै सब कोई ॥

सुर पुर सवै ध्यान ओहि धरहीं। अहिपुर सवै सेव तेहि करहीं ॥

मृतुमंडल जो देखा हेरी। धर धर चलै वात तेहि केरी ॥

पंछी वहि लागि फिरहि उदासा। जल के सुत ओहि नाउं पियासा ॥

परवत जपहि मौन होइ नार्ज । आसन मारि बैठि एक ठाऊं ।  
 पुहुमी दहु जो सरग लहु बढी । सेवा करतहि एक पग ढाढी ॥  
 जानि बूमिल जो ताहि विसारा । सो मनु जियतहि मरा अडार ॥  
 अति सुरूप चित्रावली , रवि ससि सर न करेइ ।  
 धन सो पुदंध औ धन हिया , ओहि कै पंथ जिउ देई ॥  
 भए सुनत चित्रावलि बरना । कुअर नैन परवत के भरना ॥  
 गयो चेत चित रहयो न ग्याना । जनु एहि सागर लच्छु हेराना ॥  
 मायें चढी लहर जनु आई । विसम्हरि परा पुहुमि मुरभाई ॥  
 गहि जोगी पुनि कुअर उठावा । खेह भारि सन्मुख बैठावा ॥  
 कहेसि कुअर कस भए अचेता । बैठु सम्हारि हिये कच चेता ॥  
 एकौ वात कहै नहि पूछी । जनु गा जीउ देह भर छूछी ॥  
 मूंदे नैन सास पुनि लोई । सुनै न कछु उत्तर नहि देई ॥  
 प्रेम मत्र जोगी कहै , कुअर खवन महं तव्व ।  
 सुनत नाउ चित्रावली , निजन गयो विष सब्ब ॥  
 जबहि कुअर जागा पुनि सोई । गहिसि पाउ जोगी कर रोई ॥  
 सो तुम रूप बखाना देवा । भइ मनसा होइ उड़उ परेवा ॥  
 पुनि मन मंह अस होइ गियाना । जाऊं कहा जो पथ न जाना ॥  
 कहु सो केहि दिसि नगर अनूपा । जहा वसै वह नारि सुरूपा ॥  
 चलौ न करौ विलंब एक धरी । निहफल जाइ धरी जो टरी ॥  
 और न मोरे हिये विचारा । सीस मोर औ चरन तुम्हार ॥  
 किंचित रैन जाइ तहं ताई । चरन लाइ लै चलहु गोसाई ॥  
 लोचन रहै चकोर होइ , हिया सकल उनमद ।  
 मकु ससि मुख चित्रावली , देखौं तुव परसाद ॥  
 कहेसि कुअर यह पंथ दुहेला । अस जनि जानु हंसी औ खेला ॥  
 अगम पहार विषम गढ घाटी । पखि न जाइ चढै नहिं चोंटी ॥  
 खोह भराट जाइ नहिं लाधी । देखि पतार काँपि नर जांधी ॥  
 जाइ सोई जो जिउ पर तेजा । सार पासुली लोह करेजा ॥  
 तैं अथर्ही घट आप न भूभा । बार देखि पिछवार न सुभा ॥  
 बैठे देइ न सेंघ पिछ्वारे । मूसहिं तसकर धर अंधियारे ॥  
 तैं दै बार रहा गहि कुजी । रही न एकौ घर मह पूजी ॥  
 निसिवासर सोबहि परा , जागेसि नहि पल आष ।  
 धर न सभारसि आपना , का लेवे एहि साष ॥  
 एहि पगु केर करै जो साषा । चलत निचित न होइ पल आषा ॥  
 चाहै चरन जुभै जो काटा । चलै बराइ मारग नहिं छाटा ॥  
 जो पल एक फोक विलंभावै । साथ जाइ पुनि पथ न पावै ॥

एहि मगु माह चारि पुनि देसा । जस जस देस करै तस भेसा ॥  
चारिहुँ देस नगर है चारी । पथ जाइ तेहि नगर मेंभारी ॥  
चारिहु नगर चारि पुनि कोटा । रहहि छिपे एक एक के ओटा ॥  
जो कोऊ जान न चार बिचारा । बीचहि मार लेहि बटमारा ॥

चारि देस बिच पथ सों, अथ सुनु राजकुमार ।

वेगर वेगर बरन गुन, जस कहु तहं व्यवहार ॥

प्रथम भोगपुर नग सोहाया । भोग विलास पाउ जहं काया ॥  
दुइ दुआर कर कोट सवारा । आवागमन यही दुइ बारा ॥  
पुनि दूनहुँ दिसि अपुरुब हाटा । अनबन भाति पटन सथ पाटा ॥  
जो बछु चाहिय सवै बिकाई । मिरतक देखि जीभ ललचाई ॥  
कहुँ पंच अमिरित जेवनारा । कहुँ सुगधि करै महकारा ॥  
कहुँ नाच कहुँ कथा अनूपा । कहुँ मिरदुल अति ससिहर रूपा ॥  
इंद्रपुरी जनु चहुँ दिसि छाई । जो आवा सो रहा लुभाई ॥

घर घर मोहन जानहीं, पथहिं बस कै लेहि ॥

माया रूप देखाइ कै, आगे चलै न देहिं ॥

बसै सोई ओहि नगर मेंभारी । लेखा जानि हाइ वेपारी ॥  
सूखें मारग आवैं जाई । माटी लेखैं विषै पराई ॥  
सौं देखै जेहि दोष न पावा । सुनै सोई जो पंडित सुनावा ॥  
मिलि कै पाच देहि जेउनारी । भुगतै ताहि सोइ वैपारी ॥  
आपन अस मागि कै लेई । राज अस विनु मागे देई ॥  
पाच जूनि कै राज जो हारू । करत रहै जस जग व्यवहारू ॥  
घरै छोह चित नेह सौं, रिस की डौर रिसाइ ॥

ऐसी चलन चलावहि, तेहि भल पाच कहाइ ॥

पंथी जेहि आगे है जाना । सो व्यवहार कहौं कर आना ॥  
अथ होइ तस मूदै नैना । बहिर होइ तस सुनै न बैना ॥  
रसना मौन होइ नहिं भाषा । घट रस अमी न पावै चाषा ॥  
मूदै नास सास नहिं आवै । काम क्रोध कै छार जरावै ॥  
दुष्ट के इनत न पाछे टरई । पगु जो उठाइ आगु मन धरई ॥  
बिलंब न लावै मन जग मदा । निसरै तारि मौन जिमि फंदा ॥  
पंथी जो ओहि वार लहु जाई । आपु केवार उधारि कै जाई ॥

चित रहसत पट ऊपरत, मिटै नैन अंधियार ।

जैसे बीतै स्वाम निसि, होइ बिमल मिनुसार ॥

आगे गोरखपुर भल देस । निबहै सोई जो गोरख भेसू ॥  
जह तह मठी गुफा बहु अहहीं । जोगी जती सनासी रहहीं ॥  
चारिहु ओर जाप नित होई । चरचा आन करै नहिं कोई ॥



• कोऊ दुहुँ दिसि डोलै विकरारा । कोऊ बैठि रह आसन मारा ॥  
 काहु पचअग्नि तप सारा । कोऊ लटकइ रुखन डारा ॥  
 कोऊ बैठि धूम तन डाढे । कोऊ विपरीत रहै होइ डाढे ॥  
 फल उठि खाहि पियहिं चलि पानी । जाचहि एक विधाता दानी ॥  
 परम सबद गुरु देइ तह , जेहि चेला सिर भाग ।  
 नित जेहिं ब्योढीं लावई , रहै सो ब्योढी लाग ॥  
 ताहि देस विच आहि सो पथा । चलै सोई जो पहिरै कथा ॥  
 तेल नाहि सिर जटा बरावै । रजक नासि जे बसन रगावै ॥  
 भसम देह पग पांवरि होई । एहि मग विकट चलै पै सोई ॥  
 मेखलि सिंगी चक्र अधारी । जो गौटा रुद्राष धंधारी ॥  
 भल मँद बसै तहा इक मेसा । होइ विचार न रोक नरेसा ॥  
 एही भेष सिद्ध बहु अहहीं । एही भेष बहुत ठग रहहीं ॥  
 एही भेष सों बहु ठग आए । एही भेष सों बहुत ठगाए ॥  
 जो भूले एहि भेष जग , खुले न तेहि हिय आछ ।  
 आगे चलै न तह रहै , वर फिरि आवै पाछ ॥  
 जो कोऊ आगे चाहै चला । परगट देह भेष सो भला ॥  
 पै अंतर सब जानै धधा । भेष पत्याइ सोई जग अधा ॥  
 घटही माहि भेष सो लेखै । हिय के लोचन मारग देखै ॥  
 काया कथा ध्यान अधारी । सींगो सबद जगत धंधारी ॥  
 लोचन चक्र सुमिरनी सासा । माया जारि भसम कै नासा ॥  
 हिय जो गोटा मनसा पावरी । प्रेम बार लै फिरि भावरी ॥  
 परगट भेष तहा दइ डारै । आगे चलै सो पवरि उधारै ॥  
 रहहि नैन जो जोति विनु , खीपक पहिल मिलानु ।  
 पुनि ससिहर सम दूसरे , होहि तीसरे भानु ॥  
 आगे नेह नगर भल देख । राक होइ जह जाइ नरेस ॥  
 भूलै देखि देस की सोभा । जह वह देखतही चित लोभा ॥  
 जाह तहहि जह कोइ लै जाई । जंच खाल सम एक देखाई ॥  
 खाइ सोई जो कोई खियावै । विष अमिरित एक स्वाद जनावै ॥  
 भल औ मद दोऊ एक लेखा । दुइ न जान सब एक कै देखा ॥  
 मारि मारि जिय राख न कोऊ । रहस न होउ किए कछु छोऊ ॥  
 उतरन देइ जो कोऊ कछु कहा । ऐसैं रहै तहा सो रहा ॥  
 पथ नाहि पुनि पथ सो , ताहि देस निज पथ ॥  
 विनु गुरु कोऊ न जानई , औ पुनि पढ़ै गरथ ॥  
 आगे पथ चलै पै सोई । जाके सग कछु भार न होई ॥  
 डारै कथा चक्र धंधारी । करै मया जिय काया सारी ॥

ऐसन जिय जेहि लोभ न होई । रूपनगर मगु देखै सोई ॥  
 हेरत तहा पथ नहि पावा । हेरन चहै जो आपु हेरावा ॥  
 पथिक तहा जो जाइ भुलाना । बिमल पंथ तेहीं पहिचाना ॥  
 आवहि रूपनगर के लोगा । परषत फिरहि कौन तेहि जोगा ॥  
 जो तेहि जोग लषहि जिय माही । आगे होइ नगर लै जाहीं ॥

रूप भेष उतहि क सजहि, औ सिखवहि सब भाव ।

ऐस न जानहि तेहि कोऊ, आन कहूँ ते आव ॥

रूप नगर अति आह सोहावा ; जेहि सिर भाग सो देखै पावा ॥  
 अतिहि डेरवन अतिहि सो ऊँचा । कोटि माह कोउ एक पहुँचा ॥  
 बहुतक कीन्ह जोगि कर मेसा । चले छाँडि घर मन ओहि देसा ॥  
 तैं सुखिया सुख कौतुक राता । का जानसि दुख पथ कि वाता ॥  
 भोजन बिनु मुख जाइ सुखाई । पानी बाजु कँवल कुम्हिलाई ॥  
 छीन बसन जेहि अँग न सोहाई । कथा कैसे सकै उठाई ॥  
 सौरि माह जिन बनउर टोवा । कुस साथरी सो कैलै सोवा ॥

बसन अपूरव पहिरि तन, लावहु मोद सुवास ।

अहहि नारि अछरी सरस, मानहु भोग बिलास ॥

## अजगर खंड

कुञ्जर अंधेरें हा जहं परा । विधिना कह बिनवै भाखरा ॥  
 ए गुसाइ जगरच्छ विधाता । तोहि विनु और न दुख सघाता  
 अह निसि जगत कीन्ह सब तोरा । तैं सिरजा अधियार अंजोरा ॥  
 तहीं सरग ससि सूर बनावा । तहीं कीन्ह दधि अत न पावा ॥  
 तहीं सकल गिरि मेरु संवारा । तैं सब्र कीन्ह नदी औ नारा ॥  
 तुहीं पताल कीन्ह बलि वासू । तैं पति और सबै तोर दासू ॥  
 तुहीं सोई जो सब जग पूजा । सुमिरौं काहि और नहिं दूजा ॥  
 तैं मुख दायक दुहूँ जग , दुख भंजन जेहि नाउ ।

तहीं विछोवसि दुइ मिलै , तहीं करसि एक ठाउ ॥  
 मैं जबहीं जिय सौरा तोहीं । तहीं मया करि काढ़े मोही ॥  
 कूप माहि जे सुमिरन साजा । काढ़ि किये तै देस के राजा ॥  
 प्रेम विछोह अध जेहि कीन्हे । बहुरि मिनाइ जोति तेहि दीन्हे ॥  
 अगिन जरत जे तहीं संभारा । किये ताहि फुलवारि अंगारा ॥  
 मैं अब परा आइ तेहि ठाऊ । अपनी सकति निकास न पाऊं ॥  
 मकु तैं होइ दयाल बिधाता । तोरे निकट कहा यह बाता ॥  
 मैं जस हा तस कीन्ह गोसाई । अब तू कर जस चाहसि साई ॥  
 हेरु गोसाई आप कह , मोरे का जनि हेरु ।

आपन नाउं दयाल गुनि , हो दयाल एहि बेरु ॥  
 जहा कुञ्जर चित सुमिरन ठाना । अजगर आइ एक नियराना ॥  
 ओदर खोह जाहि नहि अतू । लीलै हस्ति और को जदू ॥  
 सिखर डग तस आवै चला । बन बीहर सब का दलमला ॥  
 ओ तह पाइस मानुष बासा । खोह लाइ मुख जेचिस सासा ॥  
 पाहन रूख डार भरमना । सास सग पुनि कुंअर समाना ॥  
 गयो कुंअरे पुनि सौंसहि लाग । उठी खात ओहि ओदर आगी ॥  
 परयो उलटि भा उदर दुहेला । डारिसि उगिलि जेत हुत लीला ॥

भागा अजगर जीउ लै , परा कुंअर विसंभार ।  
 जे तापे बिरहा अगिन , तेहिं को निजवै पार ॥  
 कु अर संभारि बैठु पुनि तहा । नैन न जोति जाइ उठि कहा ॥  
 टोइ टोइ तह ठाव संवारा । टारे पाहन औ दुम डारा ॥  
 बनमानुष एक तेहि बन अहा । कुअर चरित सब देखत रहा ॥  
 कहेसि जाहि विधि चहै न मारा । अस अहि ओदरहु ते निसारा ॥

जौ जम सों विधि जीउ उबारा । रहे न नैन जाति विप भारा ॥  
 कौन जिअन जो नैन न जोती । सोत न लहै पानि विनु मोती ॥  
 हाथ पॉव वर बुधि सब आही । एक विनु नैन करै का काही ॥  
 मान न वारतैं इमि करै , जौ लहु घट महुँ पौन ॥  
 विधिना एतना राखु थिर , नैन वैन औ सौन ॥  
 विधि तेहि हिये दया उपजाई । नियरे होइ पुनि देखेसि आई ॥  
 देखि रूप मन किहिसि विचारी । यह सुरपुर हुत दिर्ये अँडारी ॥  
 जग न होइ अस कोई मानवा । निहचै यह गन गप्रव छवा ॥  
 अब पूछौ एहि की सब वाता । कौन जाति कस लीन्ह विधाता ॥  
 केहि अभाग के दीन्ह सरापा । अस कारन दहु भौ केहि पापा ॥  
 कहेसि रे अघ विधाताद्रोही । कहु सो सत सत पूछौ तोही ॥  
 जो सतसग साथ लष गोती । हियै सत्त लोचन सिर जोती ॥  
 सती भरै जो सत चढै . सत्त सहस दस आउ ।  
 तन मन धन वरु जीउ किन , जाउ सत्त जनि जाउ ॥  
 सत्य सपत दै पूछौ तोका । का तोर जाति जन्म केहि लोका ॥  
 का तोर सरग देव औतारा । इद्र सराप लहे महि डारा ॥  
 कै रे जनम बल वासुकि देसा । कै तपि मही आइ परवेसा ॥  
 केहि गुन एकति इहां तैं आवा । मानुष इहा न आवै पावा ॥  
 जो मानुष तौ गुन कहु मोहीं । जेहि तैं सोंप न निजवै तोहीं ॥  
 कै तैं जनम अंध चखु पाए । कै अबहीं भौ अहि के खाए ॥  
 देखौ सब मानुष कै भावा । कहु सत इहा कौन लै आवा ॥  
 देखत लोना रूप तोर , छोइ उटै जिय मोहि ।  
 कहेसि सत्त सत पूछौ , सपथ सिंधु दै तोहि ॥



## हस्ती खंड

बीते चलत पाख दुइ चारी । परा दिष्टि एक कुजर भारी ॥  
 ऊँच सीस जनु मेरु देखावा । सूँड जानु अजगर लरकावा ॥  
 तस्वर जनु च्वाइ दुइ दाता । डारत आउ खेह मदमाता ।  
 धावत जाइ पुहुमि जनु धेंसी । आवै पीठ सरग सों खसी ॥  
 भागहि और हस्ति मद वासा । कुँअर देखि जिय भयो तरासा ॥  
 कहेसि मीनु अब पहुँची आई । एहि आगे कहँ जाव पराई ॥  
 अन्न नाहि जो सम्मुख धाऊँ । मारौँ एहि जैपत्र जौ पाऊँ ॥

जनम अकारथ जगत भा , गई अमिरथा आउ ।

चित्रावलि के दरस कर , रहा हिऐँ पछताउ ॥

अन्न न जो सनमुख होइ लरौँ । जो निज मरन भागि का मरौ ॥  
 कुजर धाइ कुँअर पर परा । रहा ठाढ़ ही नेक न डरा ॥  
 धाइ लपेटि सूँड सों लीन्हा । चाहेसि मूँड डाढ़ तर दीन्हा ।  
 कुँअर हिए बिधि खँवरा तथा । जो बिधि केर मीनु तेहि कहा ॥  
 ततखन राजपंछि एक आवा । परबत डोल जो डैन डोलावा ॥  
 ओहि हस्ती पर दूटा आई । गहि ते उड़ा सरग कहँ जाई ॥  
 सूँड समेटि जो कुजर रहा । कुँअर न छूट डरन्ह सुठि गहा ॥  
 उड़ा जाय अंतरिख महँ , दीखै जैस पहार ॥

धरी चार मँह लै गयो , सात सुसुदर पार ॥

बारिध तीर जहा हुत रेवू । पप तथा छुटि कुँअर अचेतू ॥  
 भरि गये सीस देह सब खेहा । जेहि तन नेहा गति देहि एहा ॥  
 जेहि के हिए बस प्रान पियारा । संतत देह चढ़ावै छारा ॥  
 जिमि जिमि छार देह पर चढ़ा । तिमि तिमि रूप सुकुर जिमि बढा ॥  
 छार चढावैँ बहु गुनि जोगी । छार मरम का जानै भोगी ॥  
 मानुस देह छार हुत कीन्हा । छार बुद्धि जिन छार न चीन्हा ॥  
 कवन जनम केहि तप करतारा । मूँठी छार अमित विस्तारा ॥

देखि बड़ाई छार की , बसेउ आई करतार ।

छारहि ते कीन्हेसि सवै , अन्त कीन्ह पुनि छार ॥

पहर एक गहि उठा जो चेती । देखा परा समुँद की रेती ॥  
 ना सो हस्ति जेहि के बस अहा । ना सो पंछि जो कुँजर गहा ॥  
 सौरिस हिए विधाता सोई । जेहि के करत खेल सब होई ॥  
 ऐ गुसाइँ तै दुहुँ जुग राजा । ए सब चरित तोहि पै छाजा ॥

जियतेहि मारि मिलावसि छारा । चहसि तो देखि फेरि औतारा ॥  
 गिरि परवत कै पानि बहावसि । पानिहि साजि सुमेरु देखावसि ॥  
 छत्रिन अछत रौंक सम करई । चहइ तु छत्र रौंक सिर धरई ॥  
 मंजन गठन समस्त तू, और न दूजा कोई ।  
 तही अहा अरु है तही, औ पुनि आगे होइ ॥  
 कुँअर संवरी चित्रावलि नेहा । उठि के चला भारि तन खेहा ॥  
 गिरि परवत औ कानन घना । प्रेम प्रसाद न लेखे घना ॥  
 निडर जाहि तेहि बनखँड माहीं । जम सौं बाच मीच अच नाहीं ॥  
 नीता चलत मास एक साप । बन ओरान औ भा उजियाप ॥  
 रहसा सिये देस जव पावा । दिष्टि परा एक नगर सोहावा ॥  
 कहेसि जाउं अच नगर मेभारी । मकु मिलि जाय कोऊ पैपारी ॥  
 पूछि लेहुँ तेहि नगर की बाटा । चित विकान है जेहि की हाटा ॥  
 देखेसि पुनि फूलवारि एक, फूले फूल अमोल ।  
 अलि गुजारहि जहाँ तहँ, करहिँ मजेर कलोल ॥  
 देखि अपूरव ठाउँ सोहाई । कुँअर तहा छिनु बैठेउ जाई ॥  
 सपति कुसुम देखि चित लावा । लोचन जरे निहारि सिरावा ॥  
 जूही फूल दिष्टि भरि हेरा । लखै भाव चित्रावलि केरा ॥  
 देखि गुलाल अधर चित चढा । दारिम दसन रहसि हिय बढा ॥  
 चंपक माँहि सरीर की शोभा । नारंगि लखि उरोज मन लोभा ॥  
 अली माल फूलन पर हेरी । होइ सुरति अलकावलि केरी ॥  
 गीव मजेरि देखि मन आवा । लोचन खंजन आइ देखावा ॥  
 जाहि होइ चित को लगनि, मूरख सौं सो दूरि ।  
 जान सुजान चहँ दिसि, वोहि रहा भरि पूरि ॥

## चित्रावली विरह खंड

चित्रावलि चित भएउ उदासा । पिउ न गए दै अबधि की आसा ॥  
 विरह समुंद अति अगम अपारा । बाज अधार बूड़ मँभ धारा ॥  
 चहुँ दिसि हेरहुँ हित कोउ नाहीं । बूडत काह उँचावै वाहीं ॥  
 निसि दिन बरै अगिन की ज्वाला । दुरगा मँदिल भयो है बाला ॥  
 बुभै न लूम सगर लहु बाढा । पथी गयो लाइ हिय डाढा ॥  
 जोगी सुरति रहै चखु माहीं । ज्यों जल महँ दीपक परछाहीं ॥  
 भलभल जेति होइ उजियारा । पानी पौन बुभाव न पाप ॥

विरह अगिन उर महँ बरै , एहि तन जानै सोइ ।

सुलगै काठ विलूत ज्यों , धुआँ न परगट होइ ॥

एक दिन कहिसि कि ऐ रँगमाती । करिया भयो रूप रँगराती ॥  
 रूप रग सब लै गा जोगी । लोग कुटुंब जानै यह रोगी ॥  
 जोगी गयो छाड़ि तजि माया । भोर कि धुई भई मम काया ॥  
 जोगी करत कहा दहुँ फेरी । आसन परी छार की ढेरी ॥  
 विरह पवन जे करै भँकैरा । विशुरे छार न कोऊ बटोरा ॥  
 जोवन गज अपसर मद कीन्हें । अब न रहै अंधियारी दीन्हें ॥  
 निसि बासर तन कानन गाहा । जाकी साल हिये तेहि चाहा ॥

जोवन सखी मतग गज , तौ लहुँ लाग गुहार ।

जौलहुँ अपसर होइ कै , सीम न डारेसि छार ॥

सुनि रँगमती कहा सुनु बारी । जोवन भैगल मद दिन चारी ॥  
 अपसर होइ देइ नहि कोई । जौ तिय आपु महाउत होई ॥  
 अंकुस सकुच गहै कर नारी । दै अँखिन्ह धूँधुट अंधियारी ॥  
 औ कुलकानि महादिठ अदू । निसि दिन राखै मेलि के फदू ॥  
 जौ हठि कै अरि पाँच-निकारा । हटक बुद्धि चरचा गडदारा ॥  
 एह ससार रीति अस अहई । जे जेहि लाग दुःख जिय सहई ॥  
 जे तजि ठाउँ सकै नहि जाई । आपुहि तहाँ मिले सो जाई ॥

आजु बदन तोर कौल सम , औरै रंग सुभाउ ।

सब तन लागै मधुप पुनि , मझु कोउ चाह सुनाउ ॥

एहि महँ सखी एक हितकारी । आई हँसति भई रतनारी ॥  
 कहिसि कुँअरि सुनु वचन सुहाये । गये विदेस नपुसक आये ॥  
 बदन अरुन हिय हुलसत अहहीं । जानहुँ वचन कछुक सुभ कहहीं ॥  
 सुनतहि चलि धाई बरनारी । गिरी रही पै सखिन्ह सँभारी ॥

जोगी आइ मनावत नाथा । दरस पाइ भुइं लायउ माथा ॥  
 कहिन कि हम पुहमी सब घाए । चित्र सरूप चीन्हि अब आय ॥  
 सुनि रहसी चित्रावलि हीया । चित्रहिं जानु फेरि रंग दीया ।  
 हिय हुलास विहंते अघर , औ कपोल रंग होइ ।  
 पुनि उपजै उर घक घकी , होइ न औरै कोइ ॥  
 पूछिसि कौन रूप सो देखा । केहि दिन कौन भांति केहि लेखा ॥  
 जोगिनि रहसि रहसि जस जानी । आदि अन्त लहुँ कया बखानी ॥  
 सुनि चित्रावलि हिय संतोखा । निहचै जानि गयो जिय घोखा ॥  
 कहिसि कि हौ तुम्ह ऊपर वारी । मोरै दुख बहु भए दुखारी ॥  
 अब सुख करहु त्रैठि एहि ठाजे । करिहौं सेव जगत अब ताई ॥  
 मैं सब इच्छु तुम्हार पुराई । तुम जग इच्छा पुरवहु जाई ॥  
 सेवक सेव तजौ जिन कोई । तेवा ठाकुर आपन होई ॥  
 मान सेव सोइ कीजिये , जानौं पति पहिचानु ।  
 ठाकुर आपन जो भयो . सब जग आपन जानु ॥





## कौलावती गवन खंड

देखि कटक जिमि बादल छाहां । परी हूल सागर गढ़ माहा ॥  
 यह अत्र को अस सोहिख राऊ । कटक साजि भुई चापे आऊ ॥  
 वह हुत कौलावति अनुरागी । एह अत्र दहुँ आवै केहि लागी ॥  
 ओ कह हुत सुजान संघारा । अत्र कह पाउव तस बरिआरा ॥  
 सागर मन पुनि चिंता भई । साहस बाँधि मीजु पुनि भई ॥  
 जहँ तहँ सजग वीर हित बासे । सूर बदन जनु कैल विगासे ॥  
 एहि महुँ हस पहुँचा आई । कहिसि करहु अत्र अनंद बधाई ॥  
 जो जोगी सोहिल हना , श्री राखा तुम प्रान ।

आयो बहुरि नरेस होइ , चलहु करहु सनमान ॥  
 हंस वचन जब सागर सुना । भा जिअ सोच हिआ महुँ गुना ॥  
 अत्र लहु कौल आस जल अहा । अत्र जो राखिय कारन कहा ॥  
 लोग कुटुम मिलि कै मत ठाना । कौल न काज आउ विनु भाना ॥  
 जस बर कै ओहि दीन्ह विआही । अत्र बर कै पुनि सौंपहु ताही ॥  
 दुहिता केर कठिन है भारा । तवहीं पति जो जाइ ससुरारा ॥  
 जनम पिता माता घर लेई । दुख सुख माथे विधि लिखि देई ॥  
 यह विचारि कै डोँडी फोँदी । गौन जान कौलावति सोँदी ॥  
 समदी गगा गोद गहि , औ कुमुदिनि कँठ लाइ ।

पुनि समदेउ परिवार सब , लोगन आँगन आइ ॥  
 कौलावति चढ़ि चली विमाना । जेहि अँवराउ सुरेस सुजाना ॥  
 सागर साजि कटक पुनि चला । कौल गौन दुख जग कलमला ॥  
 औ जहँ लहु हुत दायज दीन्हा । सो सब लाइ पुरोहित लीन्हा ॥  
 सागर आइ सुजानहिँ भेंटा । मुख देखत सब दुख गा भेंटा ॥  
 कठ लाय हिय सीतल कीन्हा । भुजा जोरि अँकवारी दीन्हा ॥  
 औ जहँ लहु पर आपन अहै । छुइ छुइ पाँउ दूरि तकि रहै ॥  
 सागर तत्र विनती औघारी । कस घर तजि के उतरेउ बारी ॥

जो राखहु नीरज चरन , सोभ पाउ हम माथ ।  
 चलउ आप घर जानि कै , कीजै हमहिँ सनाथ ॥  
 तव सुजान बोला सुनु राऊ । एहि मारग हम लोग बटाऊ ॥  
 पथिक पथ जो छाड़े केई । भूलै अत महा दुख होई ॥  
 सूख पंथ तजि उत्तर केरा । कौल बचा आपउ एहि फेरा ॥  
 कौलावति कर विदा करीजै । अगुआ एक सग पुनि दीजै ॥

तुम परसाद जाउ अब देसा । मकु भेटउ के जियत नरेसा ॥  
राय कहा कछु श्राहि न खोंगा । केा राखै जो आपन मांगा ॥  
सुख पंथ बहु दुख जग जाना । पानी पानी बहुत मिलाना ॥

अज्ञा देहु तो जाइ घर , साजो बेहित साज ।

लीजै सभै लदाय जो , आउ तुम्हारे काज ॥

कुँअर गहे सागर के चरना । कहिसि बेगि कीजै जो करना ॥

सागर राउ पलटि घर आवा । चित्रावलि पहेँ कुँअर दिधावा ॥

कहिसि कि सुदरि प्रान पिथारी । तोहि विनु प्रान हाइ षट भारी ॥

एही नगर जहवा हौ कहा । पाँच मास पग साँकर रहा ॥

एही नगर हम कहँ दुख बीता । इहा हॉकि सोहिल रन जीता ॥

मों कहँ तुगह विनुआन न भावा । वै मोहि विरह बहुत दुख पावा ॥

ओहि के दूसर आन नहिँ , मोहिँ विनु एहि ससार ।

तजि आपन घर बार सब , आई कै अभिसार ॥

अब लहुँ रही इहा औडेरी । आजु अश्वधि पूजी ओहि केरी ॥

जो जेहि कारन तन मन जरई । सो पुनि ताकर चिंता करई ॥

सौति जानि जनि होहु दुखारी । वह तुम्हारि जस आज्ञाकारी ॥

सुनि चित्रावलि हिए सताई । नैन दुराइ कहिसि विलखाई ॥

तुम साईँ अपने सुख राजा । तिरियहि नाउं सौति सिर गाजा ॥

जो विधि ससी करावत देई । सहे न तौ अब काह करेई ॥

निसि आयो तहँ कुँअर सुजाना । कौला जहा कीन्ह अस्थाना ॥

कत बचा परतीति पर , सोरह साजि सिंगार ।

बासक-सेजा होइ रही , लाइ नैन दुइ वार ॥

पटुम कोस अलि लीन्ह वसेरा । हिये सोच भइ मालति केरा ।

नीरज लोयन रूप अतिसाए । दिन कर देखि नीर भरि आए ॥

विहंसि कत कामिनि कँठ लाई । विरह दगधि उर लाइ बुझाई ॥

मनमथ दाब जाव पुनि काँपी । रावन वार लक गहि चाँपी ॥

दीन्हीं चार नखच्छत छाती । फूट सिंधोर सेज भइ राती ॥

होइगा अंग भंग नच साता । अति परसेद सिथल भइ गाता ॥

भयो प्रभात गयो उठि साईँ । कौल पास कुई चलि आई ॥

हँसि हँसि पूछहि रैनिसुख , रहसि करहिँ परिहास ।

लाजन गोवै कौल मुख , सखियन अघर विगास ॥

चित्रावलि कहँ विनु ससि साईँ । गई रैनि सब गनत तराई ॥

सौति संग साँलै जनु कोंटा । अंग अंग लागै जनु चाँटा ॥

सुलगी उरध आगि सन सेजा । औटि होइ जल रकत करेजा ॥

करम करम कै सो निसि गई । पिअ देखत तिअ खडित भई ॥

रही सोह मिसि बदन छिपाई । नायक सकुचत आनि जगाई ॥  
 परी चाँकि लागै कर सीरा । दञ्छिन नाहिँ नायक धीरा ॥  
 कहिसि अहिउँ सुद सपने माहीं । कहा जगाइ लीन्ह गहि वाहीं ॥  
 अहिउँ महा सुखसपन मई, तुम कर लागे अंग ।  
 गए नैन पट उषरि कै, भयो सकल दुख भग ॥  
 जानहुँ तुम एक सुंदरि संग । मानत अहै केलि रति रंग ॥  
 मोहि देखि नौ सात बनाए । तजि सो नारि आनि कंठ लाए ॥  
 हिचे लागि हिय मोर सिराना । पाएउं अषर अमिय कै पाना ॥  
 और सकल सुख कहे न जाहीं । उठै आगि संवरत मन माहीं ॥  
 भई दोहागिन विकल सरीरा । जनु गिरि गयो हाथ ते हीरा ॥  
 वह रौवै परि सेज अकेली । हौँ हंसि हंसि मानों रस केली ॥  
 मोरे छुरै कुसुम जनु गाथा । वह लागि रहै हाथ सो माथा ॥  
 सेज अकेली रैन सत्र, सहेउ सकल उत्तपात ।  
 चतुर नारि चित्रावली, रस काढै रस बात ॥

## सिद्धसमागम खंड

भयो सोर सब नगर मँझारी । करहिं बखान सकल नर नारी ॥  
सागर गाँव सिद्ध एक आवा । मुख देखत मन इच्छु पुरावा ॥  
कुण्ठी कया बाँझ सुत पावै । अंधहि चखु दै जग देखरावै ॥  
कहै चाह परदेसी केरी । विछुरेहि आनि मिलावै फेरी ॥  
सुनि के धाए सब नर नारी । वार बूढ तरनी औ बारी ॥  
जेहि निहचै ते निधि लै आए । निहचै बिना वादि सब धाए ॥  
निहचै नग जनि डारो काई । निहचै सिद्धि परापति होई ॥

निहचै इच्छा सरग हुत , आनि मिटावै दुद ।

जैसे नैन चकोर कहं , अमी पियावै चंद ॥

सुना कुँअर पुनि सिद्ध बखाना । अकसमात चित रहस समाना ॥  
कहिसि कि भाग जोर समुहाई । तब अस सिद्ध मिलै कोउ आई ॥  
करुं जाइ मन बच कै सेवा । मकु तो नहि होइ जाइ परेवा ॥  
चित्रावलि करि कुसल सुनावै । रूप नगर कर पंथ दिखावै ॥  
चला कुँअर निहचै थक हाथा । सेवक पाँचन न छोड़िहि साथथा ॥  
महत गरव दोऊ तहँ त्यागे । मन बच कर्म तिनो सँग लागे ॥  
सनमुख आइ दरस जब कीन्हा । वै ओकहं वै ओकहं चीन्हों ॥

देखत दुहुँ आनन्द भा , रहसत आगेँ आय ॥

परेउ परेवा कुँअर पग , कुँअर परेवा पाय ॥

कहै कुँअर सुनु हनिवँत बीरा । लागु कंडु ज्यों सीत समीरा ॥  
कहु कुसलात वैगि सिय केरी । निसरत प्रान राखु घट फेरी ॥  
हौं जिमि राम भयो वैरागी । नख सिख परी विरह की आगी ॥  
राम सग हुत लछिमन भाई । हौं अकेल दुख पुनि अधिकाई ॥  
हनिवँत कहा सीय कुसलाता । राषव बदन सुनत भा राता ॥  
औ पुनि थिया कहिसि ओहि केरी । जेहि दिन ते तुम ओहि औडैरी ॥  
तहँही दिवस देखि अकसरी । रावन विरह नारि से हरी ॥

सीता रावन बस परी , करौ न कोटि उपाइ ।

तौ लहुं नाहि उधार निछु , जो लहुं राम न जाइ ॥

पुनि दीन्हैसि चित्रावलि पाती । खोलि कुँअर लाई लै छाती ॥  
सुलगत काठ लागु जनु लूका । दुहुँ आगि मिलि उठा भभूका ॥  
हिया जरत जो लिहिसि उसासा । धूम बरन होइ गयो अकासा ॥  
अभिरित बचन भरी हुत छाली । ता सों अगिन मुख बाँची पाती ॥

पाती पावस सलिता भई । दूनहुँ कँवल दुःख जल भई ॥  
आखर मगर गोह घरिआरा । अरथ भँवर परि कठिन निसारा ॥  
भँवर अनेक पैठि मन तरा । एक तँ निकसि ऐक मँह परा ॥

पाती जनु पावस नदी, मन तकि पार तराइ ।

चिन्नावलि दुख अगम जल, बूडि बूडि तह जाइ ॥

पाती पढी समापति भई । विरह भुकोर कुँअर सुधि गई ॥

हीवर जिमि ग्रीषम रवि जरा । जिउ जनु पात बवडर परा ॥

बर कै उठा चला लै चाहा । पाइ फिरा जैसे उतसाहा ॥

पुनि जो चेत होइ देखा हेरी । पायन परी बचा की बेरी ॥

कहिसि कहौ का दुःख बखानो । जनम सिराइ न कहत कहानी ॥

हौ पंछी भूला हुत आवा । जाल मेलि एहि गाँव फँदावा ॥

चार लोभ वैसेउ एहि आडा । अचक आइ खोंचा उर गड़ा ॥

पॉखन लासा प्रेम का, बाचा बधन पाइ ।

द्वै द्वै मारौ मूँड बहु, निकस न केहु उपाइ ॥

अब तोहि मिले भयो संतोखा । आसा मिली गयो जिउ धोखा ॥

करहु उपाइ गवन जेहि होई । मै आपन बुधि मनि सब खोई ॥

चोरी चलै धरम की हानी । परगट चहुँ दिसि रोकिह रानी ॥

सुनि कै बिधा परेवै कहा । अब दुख सब बीता जित अहा ॥

परगट जाइ सँवारहु कथा । अजन लाइ गुपत चलु पथा ॥

रहसि कुँअर मदिर महुँ आए । कौलावति कहँ निअर बुलाए ॥

कहेसि सुनहु अब राजदुलारी । हौँ परदेसी आदि भिखारी ॥

आउ न हमरे काज यह, राज पाट सुख भोग ।

चिन्नावलि हियरे बसी, जाकर विरह वियोग ॥

अब लहु मिला न अगुआ कोई । जेहि परचय ओहि दिस कै होई ॥

अगुआ मिला चल्यो उठि सगा । तुम जनि करहु कौल मन मंगा ॥

जौ बिधि आस पुरावै मोरी । तौ मै चेत करब पुनि तोरी ॥

सुनतहि गवन धसकि उर गयऊ । कचन अग राग पुनि भयऊ ॥

कहिसि कि ऐ जग जीवन साई । मोर जिअन तुअ दरसन ताई ॥

जो तुम होब विदेसी राजा । इहवा मोर कौन अब काजा ॥

पाळें महा दुःख पुनि कीता । जहवों राम तहाँ पुनि सीता ॥

जैसे पनही पाव की, तैसे तिया सुभाउ ।

पुरुष पथ चलु आपने, पनहीं तजै न पाउ ॥

कहै सुजान सुनहु बर नारी । तुम सयानि औ बूझनिहारी ॥

मेहरिहि, कहँ लोग सब देहरी । धरै असन अस्थिर सोइ मेहरी ॥

औ पुनि धरनि कहै सब कोई । धरहिँ सँभारै धरनी सोई ॥

राघव जै लाई सँग सीता । विछुरें जनम दुःख सब बीता ॥  
 तुम कछु चित चिंता जनि करहु । जो हम कहा सोई चित भरहु ॥  
 इतना कहि कथा गिवें डारा । औ पुनि अग चढ़ाएउ छारा ॥  
 लुकअजन लै आखिन दीन्हा । गा छिपाइ चटेक जनु कीन्हा ॥

कौला देखि अचक रही , जनु ठग लाव देखाए ।

पुनि लागें बिरहा घका , गिरी पुहुमि मुरछाए ॥  
 देखि सखी सब कीन्ह अदोरा । गहि उठाइ बैठौ लै कोरा ॥  
 पुनि कौलावति मदिर कूका । परी अचल गगा जिय हूका ॥  
 राजा पुनि बिसंभर होइ धावा । नगे पाँव तहाँ चलि आवा ॥  
 देखि अवस्था धिय कर रोवा । दूनहुँ बदन नैन जल घोवा ॥  
 पूछहि बिथा सुनावहि ईटा । गुर गूंगा कर तीत न मीठा ॥  
 रानी पूछि हारि जब रही । कौल बिथा तब फूजन कही ॥  
 प्रति उत्तर जस दूनहुँ बीता । औ सुजान चेटक पुनि कीता ॥

आदि अत बहु सखिन सब , एक एक कीन्ह बखान ।

सुनत आगि दुहुँ उर परी , ओ ओहि पारा प्रान ॥

राजकुँअर कर सुनत विछोहा । घाह मेलि पुनि राजा रोआ ॥  
 कौलावति दुख दीरघ जानी । उमड़ि चली गंगा चखु पानी ॥  
 सखी सहेली पुनि सब रोई । सखि अथई जानहुँ सर कोई ॥  
 पर आपन जन परिजन लोगा । सगरे नगर परा सुनि सोगा ॥  
 नर नारी बुवती औ जरा । सब के सीस गाज जनु परा ॥  
 मलि मलि हाथ कहैं सब कोई । अस परजापति आन न होई ॥  
 पहर एक बीता होइ रोरा । कोऊ सोंच कोउ भूँठ नीहोरा ॥

कुमा कराए सब जना , पडितन्ह शान बुझाइ ।

मारे बिरह बयारि के , कौल रही कुम्हिलाइ ॥

जोगी खेल जो चेटक खेला । छाड़ि मँदिल होइ चला अकेला ॥  
 आवा बार जहाँ जग रोका । भार लागि पै काहु न टोका ॥  
 देखि भीर जिय कौतुक होई । सब सगी पै चीन्ह न कोई ॥  
 आदि पथ सो आगे कीता । यह कौतुक जनु सपना बीता ॥  
 वेगिहि आइ परेवहि मिला । सगिहि देखि कौल जनु मिला ॥  
 पंथ चले तजि सागर गाऊ । जपत चले चित्रावलि नाऊ ॥  
 सूष पथ अगुवा लै आवा । वेगहि रूपनगर निअरावा ॥

कहिसि कि एही ठाँव तुम , बैठि रहहु लौ लाइ ।

हौ चित्रावलि निअर होइ , चाह सुनावो जाइ ॥

## परेवा बंधन खंड

चेरी एक अहित जो आही । ते छिपाइ हीरा सों कही ॥  
 एक दिन देखत अहेउ छिपानी । चित्रावलि निकसी कुम्हिलानी ॥  
 रोइ परेवा सों कहु कहा । पाती दीन्ह पाव पुनि गहा ॥  
 गयो परेवा लै कहु चीठी । तेहि दिन सों पुनि परा न डीठी ॥  
 पेम बाउ जो बाउर करही । सेवक पाय तचहि पति धरही ॥  
 देखा अहा कहा मैं सोई । अब तुम करौ वो करवै होई ॥  
 सुनि के हीरा दिएं संकानी । धसकि गयो हिय अशुगुति जानी ॥  
 केहि अधरम केहि पाप विधि, हस कोखि भा काग ।  
 अपने जान न बिसतुरेउ, चित्र परेउ कहँ दाग ॥  
 पुनि मन कहु गियान उपराजा । जोष उघारे मरिये लाजा ॥  
 अधिक उदगरी काठी झूरी । राखौं आगि मेलि सिर धूरी ॥  
 बाट बाट सब लाई भूता । रोकहि राह परेवा दूता ॥  
 आवइ कहुं पूछे बिनु नाही । आनि बाँधि राखहु बँद माँही ॥  
 जो जहँ तहाँ रोकि मगु रहा । आवत पथ परेवा गहा ॥  
 बाँधि आनिके बढ मँह राखा । अचक रहा कहु आव न भाखा ॥  
 मन मँह कहिसि रहा पछतावा । कुंअर न आवन कहन न पावा ॥  
 वह पुनि रहिहँ रैन दिन, मारग लाए आखि ।  
 वह परदेसी बापुरा, मरिहि अकेला भाँखि ॥  
 रहा सुजान नैन मगु लाई । का दहु कहै परेवा आई ॥  
 सो पुनि अज्ञा काह करेई । कौन भाँति दरसन पुनि देई ॥  
 सगर दिवस एहि सोच गँवावा । सोभ परी न परेवा आवा ॥  
 ज्यों ज्यों छिन छिन रैन बिहाई । त्यों त्यों बिरह आगि अधिकारी ॥  
 लोयन दोऊ रहँ मगु लागे । आहट कह सरवन पुनि जागे ॥  
 सकल रैन पुनि ऐसेहि बीती । जानु कँवल जिय मानु कि पीती ॥  
 दिनकर उठत उठै हिय आगी । बिरह बथारि सरग गै लागी ॥  
 कहिसि कि प्रीतम हिया सिर, सुखि गयो जल नेह ।  
 फाट न हिया तडाक जेउ, हंस चलेउ तजि देह ॥  
 जो वै मो सौं निज मुख फेरा । तौ काया परान केहि केरा ॥  
 जीउ लेइ जो जम बरिआरा । छुटै प्रान यह दुःख अपारा ॥  
 जो अब मारौं होइ अपघाती । जगत नसाइ जनम औ जाती ॥  
 मैं बिरही मोहिं नाँच नचावा । अंत सो यह कौतुक देखरावा ॥

अन्न नाचौं किन परगट होई । ओहि कै पथ लै मारौ कोई ॥  
 निसरा कुँअर डारि मिर छारा । चित्रावलि चितरवलि पुकारा ॥  
 कोऊ आदि अस पर उपकारी । आनि देखावै राजकुँआरी ॥  
 खनक देखाउ सरूप मुप , लिहिसि चोर जिय मोर ।  
 यह राजा हत्यार बढ , घर मह राखै चोर ॥  
 सुनि कै लोग अचभौ रहा । जोई सुना सोई मुख गहा ॥  
 चिरह उसास अग्नि कर ज्वाला । लागत परै हाय महँ छाला ।  
 दूरहि हटकि रहै सब कोई । कोउ मुख मूदै नियरे होई ॥  
 होइ गा सगरै नगर चवावा । रूपनगर एक वाउर आवा ॥  
 कहै सोई जां कहा न जाई । भरै लागि एह बुद्धि उपाई ॥  
 राजसभा सब काहू सुना । सुनतहि चित्रसेन सिर धुना ॥  
 बदन सुखान अग दुति छाड़ी । लाजन सीस पुहुमि गा गाड़ी ॥  
 कहिसि कि जा कह जिय डरत , सबरि सुहात न राज ।  
 मोडे आनि हम सिर परी , अचक कहँ हुत गाज ॥

---



## दलगंजन खंड

पुनि सँभारि कै बैसेउ राजा । कहिसि कि भल नाहीं यह काजा ॥  
 किन भिखारि पर कीन्ह अगासा । जिन अस बचन अमुभ परगासा ॥  
 काडि जिमि जिय मारहु सोई । जो अस सुनै कहै नहिं कोई ॥  
 राजनीति एक मत्री अहा । तिन उठि सीस नाइ के कहा ॥  
 यहि ससार वेद अनुमाना । बाउर बचन न कोऊ माना ॥  
 जाकर बचन नाहिं परतीता । ताके मारे होइ अनीता ॥  
 लाज लाग जो मारै कोई । अस मारे भल कहै न कोई ॥

गहि जो भिखारी मारई, दुइ घट यहि जग होइ ।

एक हत्या काषे चढै, पुनि भल कहै न कोइ ॥

यह चरचा पुनि मंदिर भई । रानी सुनत सुखि जिय गई ॥  
 कहिसि कि भुई न ऐसन शरी । जे अपने कुल लाइसि गारी ॥  
 आपनि जानि बिसारेउ नाहीं । पीन न पाउ छुवै परछाहीं ॥  
 एहि क रूप कहँ काहु न तेखा । मिटी न सीस करम की रेखा ॥  
 कुमुद यह भेद परेवा जाना । पूछहुँ बोलि कहै अनुमाना ॥  
 बहुरि कहिसि यह पावक जरई । ज्यो ज्यो खुदी त्यो उदगरई ॥  
 बाहर नगर परा जन कूका । कहुँ घर लागि जाइ जनु लूका ॥  
 तब कुछ हाथ न आवई, होइ आन की आन ।

ताते बरजे सकल जन, परै न चिचिनि कान

राजें मते महाउत लावा । पान दीन औ कहि समुझावा ॥  
 जहा कहुँ वह बाउर होई । अस जस दूसर जान न कोई ॥  
 अपसर गज दलगजन नाऊ । छलि मकुलाइ देहि तेहि ठाऊ ॥  
 मकु गज धाइ इनै सो जीगी । बिनु औषधि जिय होइ निरोगी ॥  
 लै सो पान महाउत लावा । मुरी दइ गज अतिहि मतावा ॥  
 खोलि गयद ओहि दिसु लावा । कोऊ न जानत गुप्त की कला ॥  
 जह बाउर सिर डारत छारा । उतरि महाउत भयो निसीरा ॥

कूटि चला मैमत गज, चहुँ दिसि परी पुकार ।

जग लै भाजो जीउ सब कूटा जम बरिआर ॥

भा अंदोर मैगल मकुलाना । सुनि चारिहुँ दिसि पारा बसाना ॥  
 देखि देखि लोग हीय सब कूटा । भा अजुगुत दलगजन कूटा ॥  
 एहि सौं जिअत बँचा जो आजू । ताकर नवा जनम कर साजू ॥  
 आपु आपु कहं परजा रा । जहँहुँ सुना सोजूजिउ लै भाजा ॥

पूतहि बाप सँभारे नाहीं । कुटुम्ब लोग केहि लेखें माहीं ॥  
जेहि सग अहा बटम हय हाथी । अकसर जाइ न कोई साथी ॥  
जाकर अंग न छुअत समीरा । गहै आनि अनचीन्ह शरीरा ॥

जेहि तन लाग रैन दिन , चोआ चन्दन सार ।

तिन्ह तन बन मह सग विनु, निभरम लागै छार ॥

चले छाड़ि बनिया नैपारी । रही जहा तहा हाट पसारी ॥  
छाड़ि चले जित मदिर लोना । जहवा लाग रूप औ सोना ॥  
छाड़ि तिया जासों रंग कीन्हा । चले जोहि जानहुँ अनचीन्हा ॥  
छाड़हि अन घन घोर घोरसारा । छाड़हि दरब भूठ ससारा ॥  
छाड़हि अगार कुमकुमा चेवा । छाड़हि रतन जो माल परोवा ॥  
छाड़हि कस्तूरी घन सारा । अत आइ तन लागी छारा ॥  
सगरे जनम सैति दुःख पावा । छिन एक मह सब भयेउ परवा ॥

यहि विचार कै मान कवि , महापुरुष जग माहि ।

तासों जोउ न लवहीं अत जो साथी नाहि ॥

कुँवर देखि हस्ती मतवारा । मरन जानि जित कीन्ह विचारा ॥  
जा कह अत मरन जित य माहीं । मीचु देखि सो भागै नाहीं ॥  
मोहि एहि मारग निजुजो मरना । भागि रहौ लै का की सरना ॥  
विनु साहस जो तजउ सरीरा । कोउ कहै यह छत्री बीरा ॥  
वाजौ आजु भीम की नाई । मारों जो नय देइ गोसाई ॥  
मारौ तौ लोग कहै यहि देसा । छत्री कहा जोगि के भेसा ॥  
पुनि चित्रावलि सुनि यह वाता । जूक्ति मुवा जोगी रंगराता ॥

बौधि काछ दढ होइ रहा , मन महँ मरन विचारि ।

जेहि जिय डाढ प्रेम कर सब जग जीतनि हार ॥

आवत हस्ति चुवत मदगधा । तोरत तचवर धावत कधा ॥  
गज बाजो कहँ फरलो कोपा । अगद पाव पुहुमि जस रोपा ॥  
कुँअरहि देखि धाइ अस परा । वीर पँवार न पाछे टरा ॥  
कधा डारि गयद रुकावा । आपु सजग होइ पाछु आवा ॥  
गहि कै पूँछि गयद बुमाइसि । येही भौति धरी एक लाइसि ॥  
जनु चकई गहि डोर फिराइसि । पुहुमि परा गज ताँवरि खाई ॥  
मस्तक आइ मूँक तब मारा । सीस फोरि गजमोति निकारा ॥

पुहुमी परा गयद दहि , जानहुँ परा पहार ।

देखि अचभित जग भवो , चहुँदिस परी पुकार ॥

कहँ लोग यह को बरिआरा । जिन गयद दलगजन मारा ॥  
बह राजा कर हस्ती सोई । जेहि ते वली आनि नहिँ होई ॥  
यह जोगी भल कीन्ह न काजा । परलै करहि आजु सुनि राजा ॥

राज दुआरे भई पुकारा । जोगि बली दलगजन मारा ॥  
 एहि जोगी कह सिव परसना । नाहिं तो अस परबल को हना ॥  
 मानुष अस बल करै न पारा । निज यह पुहुमि भौम औतारा ॥  
 औरी हस्ति सभारहु नाहीं । मति कह भटकीसिर कह जाहीं ॥  
 सुनिकै राजा थकि रहा , रुधिर सूखि गा गात ।  
 हिये थरथरी पे टडर , मुख नहि आवै वात ॥

---

## सुजान बंधन खंड

पुनि सँभारि के बोला राजा । साजहु बेगि जूझि करू साजा ॥  
 हनुमत जस लका हुत आवा । तस छलि कै यहि काहु पठावा ॥  
 काहु केर पठावन होई । जिअत न जाइ करहु अब सोई ॥  
 बाजन बार जूझि कर बाजा । जानहु सरग मेघ दल गाजा ॥  
 साजे हस्ता सिंघलदीपी । चीता माथ छीट जनु छोपी ॥  
 साजे तुरै समुद जलगाहा । पखरै राउत पहिरि सिनाहा ॥  
 राजा सपरि भयो असवारा । चलै वीर चहि तुरी तुखारा ॥  
 बाजे बाजुन जूझि के, धुका दमामा मेरि ।  
 छेका जोगी कटक लै, मडल चहुँ दिस फेरि ॥

जुझि साज जौ कुँअरहि सूझा । कै विचार अपने मन बूझा ॥  
 जाकर दोष करै जो कोई । का बसाइ जो मारै सोई ॥  
 मोहि नहि इहा जूझि सौं काजा । मारौ लै पुहुमीपति राजा ॥  
 एह गुन, वैश्यो आसन मारी । जैसे निरगुन जोगि भिखारी ॥  
 सीस नाइ सुहमी तिन हेरा । कटक आउ सब करत करेरा ॥  
 मची राज-बाग तब गही । सीस नाइ के बिनती कही ॥  
 जूझि केर जग अस वेवहारा । मारिय सोह जो गहै हथियारा ॥

जोगी बाँधिय जिअत गहि, मारि न करी अनीत ।

पूछि भेद पुनि लीजिये, को वैरी को मीत ॥

बेरत बेरत आए राँधा । पाँच जने मिलि जोगी बाँधा ॥  
 अस के ढील दीन्ह दुइ बाँही । जानहुँ एक रती बल नाही ॥  
 राजा सनमुख जोगी आना । देखि रूप सब कटक भुलाना ॥  
 पूछै को हसि कह तें आवा । केहि कारन केहि केर पठावा ॥  
 कुँअर न बोल मोन मुख गहा । सीस नवाइ औधि चखु रहा ॥  
 एहि अतर एक चतुर चितेरा । सागर नगर कीन्ह जे फेरा ॥  
 कुँअर चित्रलिखि अति मतिमाना । सोहिल जूझि भेद पुनि जाना ॥

आइ पहुँचा राज ढिग, देखि नवाइसि माथ ।

लान्हे चित्र अनेक जे, देस देस के नाथ ॥

बै कुँअरहि देखा पहिचाना । कहिसि कि यह जस कुँअर सुजाना ॥  
 वह उहवा पुहुमी पति भारी । राज छाडि कत होत भिखारी ॥  
 पुनि वह अस कुकरम कत करई । जेहि कोइ बाँधि चोर कै धरई ॥  
 चित्र काडि जो पटतर देखा । सोई कुँअर सुजान सरखा ॥

कहिसि कि यह पुहुमीपति राजा । पुहुमी रहो सदा ओहि साजा ॥  
 यह पँवार छत्री बरिआरा । यही हाँकि रन सोहिल मारा ॥  
 यह पुहुमी पति देस क राजा । अचरज मोहि देखि यह साजा ॥  
 कुँअर चित्र लैकर दिहिसि , कहिसि कि अचरज होय ।  
 बोधा सिंह सियार ज्यौं , का कौतुक विधि कीय ॥  
 इहाँ नरेस जूझि कहँ आवा । रानी उहाँ अँदोर बढावा ॥  
 जे मारा दलगजन सोई । तेहि के जूझि आबु कस होई ॥  
 हिचे सोच करि हीरा रानी । पूँछौ बोलि परे वा ज्ञानी ॥  
 वह पडित औ चतुर परेवा । आमगन चलै जानिपति सेवा ॥  
 जिन मारा दलगजन हाथी । मकु वह होइ परेवा साथी ॥  
 खोलि मँगावा सीध परेवा । आइ देखाइसि कन्तहि सेवा ॥  
 होइ अकसर लै मत बईठी । कहिसि कहाँ लै गवनेहु चीठी ॥  
 चिनु पूँछे किछु ना कहै , तै पडित सहदेव ।  
 को जन यह हस्ती हना, कछु जानसि यह भेव ॥  
 कहिसि कि सदा सोहागिनि रानी । तुम सयान पडित औ ज्ञानी ॥  
 मैं यह सुफल सुआ सो खोजा । चीन्हहु होइ सो राजा भोजा ॥  
 जो कहँ भोर सदा सिर नाई । चहै मारि तो कहा बसाई ॥  
 कथा कहत लागिहि बड़ि नारा । उहाँ न हँइ जाइ सपारा ॥  
 थोर कहौ जौ विलंब न होई । सोहिल जिन मारा वह सोई ॥  
 धरनीधर नैपाल सुआरा । एह सुबस औ बीर पँवारा ॥  
 चित्र मोह चित्रावलि जानी । भा जोगी मुनि रूप कहानी ॥  
 एहि सो रतन जेहि कीजिये, कुन्दन घालि जराउ ।  
 जनि गहि डारहु समुँद महँ, ननु रहिहै पछताउ ॥  
 रानी कहा बेगि चलि जाहू । लगै न पाउ मयंकहि राऊ ॥  
 जाइ जनाउ नरेस रिसाना । जौ लहुँ छुटै पाव नहिँ बोना ॥  
 दसरथ बोखे सरवन मारा । पाइ सराप भयो हत्यारा ॥  
 अज्ञा मिली परेवा धावा । निमखि मोह राजा पँह आवा ॥  
 देखिसि राजहि रिसि मन नाहीं । हाथ चित्र चित चिता माहीं ॥  
 औ पुनि कुँअर बाँधि कै आना । कीन्ही जल चछु जानि सुजाना ॥  
 आइ नवाइस पति कहँ माथा । कहिसि हे पुहुमीपति नाथा ॥  
 एह सोई जिन बैरी हना , सोहिल अस बारि आर ।  
 जब्दीप नरेस सोई , निरमल जाति पँवार ॥  
 एह जस विक्रम राजा भोजा । मैं चित्रावलि कहँ बर खोजा ॥  
 चित्रावलि कर रूप सुनाई । कै जोगी आनेउँ बौराई ॥  
 मैं राजा सो कहै न पावा । बीचहि बैरी मोहि बँधावा ॥

तौ एह कौतुक सब विधिकीन्हा । रतन खेह मँहँ काहु न चीन्हा ॥  
 राजा हिय सुनि कुँअर बखाना । तजि चिता चित रहस समाना ॥  
 जो जहँ चित्र मूँदि वै राखी । तब भा आनि परेवा साखी ॥  
 एह पडित औ विधि सो डरई । पडित काज बूझि कै करई ॥  
 छोरे बधन दुःख के, महाबीर पहिचानि ।

राजा उतरि तुखार सों, अक मिलायो आनि ॥  
 ततखन तहा कुँअर अन्हवावा । राज साज सब आनि पन्हावा ॥  
 औ पुनि लीन्ह चढाइ अँवारी । दूलाँह जानि बरात सँवारी ॥  
 रहसत चला तुरै चढि राजा । बाजत अनँद बधावा बाजा ॥  
 एकै बाजन जेहि जग जाना । आवत आन जात भा आना ॥  
 गह गह बाजन बाजत आवा । नगर लोग सब देखै घावा ॥  
 जिन देखा तिन धनि धनि कहा । रूप निहारि चित्र होइ रहा ॥  
 धनि सो चित्र धनि सोई चतेरा । कहहि जोर चित्रावलि केरा ॥  
 निकसा हाट मभार होइ, चहुँ दिसि रहस अनद ।  
 देखै आई उतरि जनु, सूर तराई चद ॥

चढि अँटारि देखहि रनवोंसा । जनु ससि नखत सरग परगासा ॥  
 देखि कुँअर मुख हर्षाई रानी । हिए अनद अघर बिहसानी ॥  
 कहिसि कि जानु आहि एह सोई । जेहिक चित्र चितसारी धोई ॥  
 पुनि तिन्ह साथिन्ह आनि देखावा । जे अपने कर चित्र नसावा ॥  
 जिन देखा तिन मुख अनुसारा । यह सोई गँधरब औतारा ॥  
 जब तें हम वह चित्र नसाई । नैन हिए जानहुँ लिखि लाई ॥  
 धनि यह दिन धनि घरी सरेखा । हिया इछु इन्ह नैनन्ह देखा ॥  
 मान न मन्त निसारहिँ, सिंह पुरुख मुख नैन ।  
 जो मूरति हिअरै बसो, सो निजु देखी नैन ॥

रानिहिँ यह सुनि भयो अनदा । सोस पुहुमि धरि विघना बंदा ॥  
 जिन्ह काहु यह मेद न जाना । सो विधि कौतुक देखि भुलाना ॥  
 कहै कि यह कस बैरी होई । आदर चाह करै सब कोई ॥  
 सखी एक चित्रावलि केरी । चढि मदिर पुनि देखिसि हेरी ॥  
 कौतुक लखि चित कीन्ह हुलासा । गई धाइ चित्रावलि पास ॥  
 कहिसि कि ऐ कुल मनि मनिआरी । तोरी जोति पुहुमि उजिआरी ॥  
 फिरेउ नीति समाम भुआरा । गहि आना बैरी बरिआरा ॥  
 देखौ सोइ हस्ती चढा, नहिँ जानौँ केहि काज ।

पुहुमी आवै इद्र जनु, तजि इन्द्रासन राज ॥  
 मेहरिन्ह मह पुनि चरन्वा होई । चित्र जो मेटा जनु यह सोई ॥  
 सुनतहि चित्र चाउ चित बाढी । होइ व्याकुल घौराहर ठाढी ॥

देखत मुख सुधि बुधि सब हरी । होय अचेत पुहुमी खसि परी ॥  
 सखी सो हाथन हाथ उतारी । सेज सुवाह ओढ़ाहन्ह सारी ॥  
 बरहि कहहि विधि का भा आई । गीर मोह काहू डिटि लाई ॥  
 सुनै पाउ जनि राजा रानी । हम जिय करहि घरी महँ हानी ॥  
 ततखन मँदिर परेवा आवा । सखियन्ह कहं सब भेद सुनावा ॥

कहिमि कि ऐपति कलपजुग, हम माये तुम छौँह ॥

अब किमि जरिण धूप दुख, छुत्र आउ घर मोह ।

सुनत बैन चित्रावलि जागी । देखि परेवा के पौ लागी ॥  
 कहिसि कि ऐ हीरामन सुआ । रतन लागि फस कौतुक हूआ ॥  
 कैसे जाह भोराएहु साई । कैसे आनेहु इहवा ताई ॥  
 का कहि चित्रसेन समुझावा । काहि लागि मँदिर लैआवा ॥  
 नैसि परेवा प्रेम कहानी । आदि अत लौ कहिसि बखानी ॥  
 चित्रावलि चित भयो संतोषा । गा सो सोच अद्वा जो घोखा ॥  
 बर निआह सुनि मनहि लजानी । धूँषट ओट दिये सुसुकानी ॥

कहिसि परेवा सुमति तैं, पूरन सेवा कीय ।

जो चित भावै सोइ कर, मै तुअ आज्ञा दीय ॥

## बोहित खंड

उहवा सागर बोहित साजा इहवा दुद गौन कर बाजा ॥  
 पखरे घोर पलाने हाथी । सँभरि चले पुनि अत के साथी ॥  
 चली दोऊ घनि करत कलोला । अपने अपने चढि चडोला ॥  
 एक बाएँ एक दहिने जाई । एकहिँ एक न पास सुहाई ॥  
 कुँअर साजि पुनि कटक सुहावा । रहसत जाह समुँद लहु आवा ॥  
 बोहित साज देखि मन भावा । चित्रिनि कर चंडोल चढावा ॥  
 पुनि कौलावति समदि भुआरा । चढी जाह तजि सब परिवारा ॥  
 अगिनित दायज दरव जेहि, देखि हिया हरखंत  
 एक एक सवै चढाइ के, कुँअर चढा पुनि अत ॥  
 बोहिते चढेउ कुँअर लै भारा । समदि चले पहुँचावनहारा ॥  
 समदे लोग कुटुंब ह्य हाथी । सोई साथ अंत जो साथी ॥  
 लोकाचार तीर लहुँ आए । नाव चढे सब भए पराए ॥  
 पीठ देत ही मित विसारा । सब काहू घर वार सँभारा ॥  
 कुँअर पेलि बोहित लै चला । भार देखि केवट कलमला ॥  
 कहिसि कीन्ह तुम दूर पयाना । बोहित नाहिँ भार अनुमाना ॥  
 बोहित चढे बहुत उतपाथा । ऊँचे भौर ऊठहिँ पुनि साथी ॥  
 भौर फेर जलजंतु डर, तेहि पर ओधी आउ ।  
 जिउ आवै तव पेट मँह, तीर लाग जब नाउ ॥  
 सोन रूप तुम कहा बटोरा । भार बहुत देखत पुनि थोरा ॥  
 गाढ परे पुनि होइहि भारी । अबहीं कस नहिँ देहु अडारी ॥  
 कुँअर कहा सुनु बोहित पती । दरव न डारि जाय एक रती ॥  
 बोहित साजा दरव हि लागी । का ले जाव संग यहि त्यागी ॥  
 जो मानै जिय अस डर भारी । चढै न कोऊ नाव नवारी ॥  
 तुम खेवहु जनि मानहु संका । मेटि न जाइ सीस कर अंका ॥  
 हँसि कै बोहित केवट पेला । चला जाइ जल माँह अकेला ॥  
 देखत वारिष अगम जल, प्रान न घीर धराइ ।  
 सोई चलै निश्चित होइ, जो कोउ आवै जाइ ॥  
 रैन एक बादर जुरि आवे । दुहुँ दिसि होइ रिखि सात छुपाये ॥  
 मारग भूला केवट डरा । बोहित जाइ भौर बिच परा ॥  
 भँवै लाग तहँ बोहित भारी । कुँअर कहा कछु देहु अडारी ॥  
 जाके अहा संग कछु भारा । पलिहिँ तँ सब रूप अडारा ॥



हरभ्रा होइ बोहित अगुसरा । दूजे भौर जाइ कै परा ॥  
 जह लहु अहा सोन कर नाऊं । सो सब डारि दीन्ह तेहि ठाऊ ॥  
 तीजे भौर जहा नग हीरा । चौथे अन जा कर नर कीरा ॥  
 पचए भौर भयो सेस नर, अंत जानि पुनि मीच ।

कुअर जिअन जिअ सौरिकै, परे कूदि जल बीच ॥  
 छुठए भौर मरन निज हेरी । साहस बाँधि गिरी सब चेरी ॥  
 सतए भौर जो आइ तुलाना । कौलावति कर जिउ अकुलाना ॥  
 कहिसि कि हौं बलि देउ सरीरा । मकु ए दोउ लागि लागै तीरा ॥  
 पुनि मन कहिमि रहा पछितावा । चित्रिन रूप न देखै पावा ॥  
 मरन बेरि मुख देखौं जाई । मकु अजहूँ तजि कोइ छोहाई ॥  
 चित्रिनि पहं आई गुन भरी । बदन बिलोकि पाउं लै परी ॥  
 कहिसि कि हौं अपराधिनि तोरी । करहु छोह सुनि बिनती मोरी ॥  
 रहै सदा तुअ सीस पर, सेंदूर भाग मुहाग ।

हौं समदति हौं चरन गहि, इहै मोर अनुराग ॥  
 चित्रावलि सुनि हिए छोहाई । कौलावति कह कठ लगाई ॥  
 कहिसि कि तजहु सौति कर नाता । मोरि तोरि एकै जनु माता ॥  
 हौं जिउ देउ रहउ तुम्ह दोऊ । मोरे मुए होउ सो होऊ ॥  
 मरन लागि दुहुँ बाद पसारा । सुनि सुजान घायो विकरारा ॥  
 कहिसि कि मेहरिन्ह बुद्धि न रती । हौं अन्न मरौं होहु तुम्ह सती ॥  
 तीनिहु गही मरन की टेका । मरन न पाउ एक तैं एका ॥  
 देवता सरग जो देखत अहे । इन्ह कर प्रेम देखि थकि रहे ॥

ससि सूरज कुज दोउ गुरु, राहु बुद्ध सनि केतु ।  
 कहहिं कि अन्न लहु भूमि मह, अस न कीन्ह कोउ हेतु ॥

# आलसकृत

साधवानल-कामकंदला



## आलमकृत.

### माधवानल-कामकंदला

प्रथमहि पारब्रह्म के सरने । पुनि कछु रीति जगतरस बरने ॥  
पारब्रह्म परमेस्वर स्वामी । घट घट रहे सो अतरजामी ॥  
घट घट रहे लखै नहि कोई । जल थल रह्यौ सब मय सोई ॥  
जाकौ आदि अत नही जानौ । पडित कथै ग्यान सोई मानौ ॥  
ग्यानी होइ सो गुर-मुख पावै । खोजी होइ सो खोज लगावै ॥

मन बच क्रम सोवत चलत, जागत चितवन चित्त ।

सग लागि डोलत फिरौ, सो करता धरु चित्त ॥

जग पति राज कोटि जुग कीजै । सहज लाल छाजे धिति कीजै ॥  
दिल्लिय पति अकबर सुरताना । सप्त दीप मैं जाकी आना ॥  
सिंहन पति जगनाथ सुहेला । आपनु गुरू जगत सब चेला ॥

जब धर भूमि पयानौ करई । वासुकि इन्द्र आसन धरधरई ॥  
गहि त्रिन दत सरन सो आवै । थापहि फेरि भूमि सो पावै ॥

दंड मरै सेवा करै, वासुक इन्द्र कुवेर ।

गनु गधव किन्नर सवै, जच्छु रहै होई चेर ॥

देस देस के भूपति आवै । द्वारे भीर वार नहि पावै ॥  
कपे बहुत त्रास जी लैहीं । लै अकोर पर द्वार न दैहीं ॥  
इक छत राजु बिधाता कीनी । कहुं दुर्जन कोउ रख्यो न चीन्हौ ॥  
धर्म राजु सब देस चलावा । हिदू तुरक पथ सखु लावा ॥  
आगैरेंडु महामति मडनु । नृप राजा तोडरमल डडनु ॥

जो मति विक्रम कीन, मनु करत मनु चैन ।

सुनत वेद सुमिरत सदा, पुन्य करत दिन रैन ॥

सन नौ सै इक्ष्यावन्नुवै आइ । करौ कथा अब वोलौ गाहि ॥  
कहौ वात सुनौ अब लोग । कथा कथा सिगार वियोग ॥  
कछु अपनी कछु परकति चोरौ । जथा सकति करि अच्छर जोरौ ॥  
सकल सिगार विरह की रीती । माधौ कामकदला प्रीती ॥

कथा ससकृत सुनि कछु थोरी । भाषा वीधि चौपही जोरी ॥

माधौनल सब गुन चतुर, कामकदला जोगु ।

करौ कथा आलम सुकवि, उतपति विरह वियोगु ॥

पहुपावति नम इक सुनौ । गोपीचद राज वह गुनौ ॥

धर्मपथु दिन प्रति पशु घरई । पदुमी पवित्र पापु नहि करई ॥  
 तिहिपुर बसै सदा सुख त्यागी । माघौ विप्र नाम वैरागी ॥  
 राजा पास प्रात उठि जावै । लै तुलसी दल देव पुजावै ॥  
 देव पुजाइ विप्र फिार आवै । प्रात भयें पुनि दरस दिखावै ॥  
 बाचै वेद पुरान , नौ ब्याकरन बखानई ।

जोतिक आगम जानि , सामुद्रिक सोंगीत सब ॥

विद्या सोइ बृहस्पति जानौ । रूपु सोइ मकरध्वज मानौ ॥  
 ताकौ रूप नारि जो देखै । पलक ओट जुग जुग भरि लेखै ॥  
 जे सब नारि वसैं पुर माहीं । तिहि के निरखि गर्भ गिरि जाहीं ॥  
 गावै सरस बजावैं बीना । नर नारी मोहे भ्रम बैना ॥

मनु लागै जिहि धाइ , सो पुनि मन ही मो बसै ।

जागत सोवत निच , देखहु आखिन मै लसैं ॥

बिन देखैं अकुलाइ , प्रान नहों धीरज रहहि ।

निसु दिन भीजहि चौर , नैना ही के नीर ही ॥

दिन एक प्रात भयो उजियारा । माघौनल अरुना न सिधारा ॥  
 करि मंजन पुनि तिलक सँवारै । नाद मधुर धुनि मुख उचारै ॥  
 सुनत नाद मोहीं पनिहारी । सोसहु ते गागर भुमि डारी ॥  
 सुनत नाद तिहि दीनै काना । रीझि रहैं सब चतुर सुजाना ॥  
 करै राग मोहन के वेसा । ज्यौ ठग मूर करै वर वेसा ॥

थके कुरगन जूथ , सुनत नाद मुग्धीन के ।

तब धाई करिहूय , काम कमान चढ़ाइ के ॥

इक त्रिय मोहि सुछित धर परही । इक त्रिय धरत सुदि नहि रहहीं ॥  
 इक नैनन सों नैन मिलावै । तजि सर एक निकट चलि आवै ॥  
 एकन परत न चीर सँभारा । ब्याकुल भई छूटि गये बारा ॥  
 एकनि भूषन दए उतारी । एकनि तजी कंचुकी सारी ॥  
 एकै नारि चली उठि सगा । जैस धुनि सुनि चले कुरंग ॥

काम धनुष सरपच लै , मारौ त्रिया सुनाइ ।

बे मृगगति मोहीं सकल , द्विज पारधी की नाइ ॥

एक नारि हँसि हँसि मुख जोवै । नैन नीर इक भरि भरि रोवै ॥  
 ढोलै एक पवन ज्यों दिया । छुटे केस उघरि गये हिया ॥  
 करै राग माघौनल रागी । ज्यों तन माँहि ठगौरी लागी ॥  
 माघौनल देख्यौ पनिहारी । ब्याकुल भई नगर की नारी ॥  
 तब उठि चल्थो नम्र कहँ सोइ । कहत चरित्र सप्र दिन सोइ ॥

गयौ मदन सर मारि , नारि डारियत हार सब ।

बिरह अनल तन जारि , तन मन द्व द उदेग दें ॥

नगर खारि माधौनल आवै । त्रिया पुरिख रह अन्न त्रिवावै ।  
सुनत नाद कर छीन संभारी । भूमि अहार दीन सब डारी ॥  
पूछै पुरिप नारि सुनु मोही । ऐने नेन दिये विधि तोही ।  
कत तैं भाजन दियौ सो डारी । वेगि कहौ नहि डारौ मारी ॥  
बोली वचन कन सुनि लीजै । स्वामी दामु मोहि नहि दीजै ।

माधौनल क्रियौ रागु, सुनि धुनि हौ विस्मै भई ।

तहा जाइ मनु लागु, ताते गिरथौ अहार भूइ ॥

तव सुनि कै उठि चलयौ रिसाई । नगर लोग मन्कवै बुलाई ।  
चलहु राइ के सनमुख होही । कहौ विप्र त्रिया सब मोही ॥  
नग्न लोग बूढे अरु वारे । राजा आर्गे जाइ पुकारे ।  
सुनौ राइ इक वचन हमारा । माधौनल मोही सब दारा ॥  
पूछै राइ कौन गुन कर ही । कैसैं विप्र त्रिया मनुहरही ।  
करै नाद सब त्रिया लुभाई । मृग गति मोहि यकित हौ जाही ॥

कहै प्रजा राजा सुनौ, हम न रहैं इहि गाँउ ।

कै यह वेगि निकारिए, जिहि माधौनल नाउ ॥

सुनि राजा जिय चिता करही । कहा करौ जो परजा जाही ।  
पहिले पूछि लउ वेउहार । तव माधौ को देउ निकारा ॥  
तव राजा पठवा इक बारी । माधौनल को ल्हाउ हकारी ।  
गयौ पौरिया माधौ जहँ रहही । सीस नाइ विनती इक करही ॥  
चलौ वेगि तुम राज बुलाए । परजा पवन कहन कछु आए ॥

माधौनल चिता करी, मन में भयौ उदास ।

माधौ धारि बीना चलयौ, आयौ राजा पास ॥

अधिक मधुर धुनि वीनु बजावै । सरस राग गगिनि उपजावै ।

चेरी बीस कराइ हकारी । सब पहिराइ कुसुभी नारी ॥

तव राजा परतिज्ञा लेही । कमल पत्र पर बैठक टेही ।

माधौनल बीना कर गह्यो । खस्यौ काम धीरज नहि रखी ॥

माधौ विप्र नाद अस कहा । भीजे चीर मदन तव बहा ।

तव राजा आइसु दयौ, चेरी दई उठाइ ।

सब ही के पीछे रहे, कमल पत्र लपटाइ ॥

अचरज देखि राजा तव रहा । मिली प्रत्यग्या जो गुन कहा ।

उठि राजा गयौ पौरि पगारै । तुम को ठौर न विप्र हमारै ॥

तीनि पान कौ बीरा लयौ । राइ हाथ माधौ के दयौ ।

तव उठि वरन अठारह पती । चलयौ छुँडि च पुहुपावती ॥

बीना गहै बजावै रागा । छिन छिन उपजावै वैरागा ।

दिन दस मारग रहथौ सुजाना । कामावलि नगरी नियराना ॥

कामवती नगरी भली, कामसैनि नृप नाम ।  
 मन मैं माधोनल फड़े, इहाँ करौं विश्राम ॥  
 नगर लोग सब बसै सुकर्मा । ब्राह्मन छत्री बसै सुधर्मा ॥  
 तिहिं पुर मद गयद सो रहै । मदिरा नाम औरन सौं करै ॥  
 मार सोह सतरंज मैं होही । पुष्य पत्र लै बाधै कोही ॥  
 दब सोही जो जोगी लेही । और दब काहू नहिं देही ॥  
 चचल चोर कटाछु त्रिया के । जो नित चारै चित्त पिया के ।  
 दीपक वधिक बसै जहा, जो निशि बसै पतग ।  
 ऐसो नगर रच्यो बली, काम सैनि चतुरग ॥  
 तिहि पुर बसै चद्र की कला । पातुर सुनी कामकदला ।  
 ताकौ रूप वरनि को पारा । बरनत सहसजीभ पुनि हारा ॥  
 कुंतल चिहुर जुवहिं ज्यो घाला । अबुधार कैषो अलिमाला ॥  
 मध्य मांग चंदनु घसि भरै । दूध धार विषधर मुख परै ॥  
 कहुं कहु पुष्य कहुं कहुं मोती । जनु धन मैं तारागन जोती ।  
 मांग अग्र मानिक दिए, औ मुक्का गन संग ।  
 छिन छिन जोति धरै मनौं, मनि उछली जु अजग ॥  
 करनन करन फूल छवि भारी । मन्द मयक की कोटिन नारी ॥  
 मनि मुक्का लागै बैद्वरज । मानौ धन मह दिए दोह सरज ॥  
 कर कुकुम लै तिलक सवारे । चैन चैन जनु बान सुधारै ॥  
 भृकुटी चाप चचल जब मोरै । चितवन चारु चतुर चित चोरै ॥  
 मीन मधुर पजर मृग हारै । निरखत लोचन जुगम डारै ॥  
 पलक ओट अकुलाह, चलच नैकु न थिर रहै ।  
 अवन फोर लौ जाइ, निरखौं त्रिया कटाछु जब ॥  
 नासा अग्र बेसर कौ मोती । घट बीब रोहिन की जोती ॥  
 तिल प्रसहि बीब तुषारा । छिनु छिनु दारिजनु माछिनि हारा ॥  
 नासा अग्र मोती इमि रहहीं । दीपक पुष्य करन कौ चहहीं ॥  
 भृगमद तिलक रहै अति मानौ । निखत अलिबिंदु नीयर जानौ ॥  
 रस विनोद लागै अहिछौना । लालच लुबुध लोभ जनु गौना ॥  
 आलम अलकें छुटि रहीं, बेसरि सौं अरुभाह ।  
 मानहु चारा चोच तें, अहि सुत लेत छुडाह ॥  
 पल्लव विंब वंधूक लजाहीं । आस्वास रस भौर लुभाहीं ॥  
 दामिन दत दिए जनु हीरा । सेत असेत अरुन के धीरा ॥  
 सखि ह्यौं हास करहि जब कामिनी । कमल पत्र कैषौं जनु दामिनी ॥  
 सरस्यौं बचन जु बोलि सुनावै । सहज मनहुं बोंसुरी बजावै ॥  
 लोग कहुं कोकिल कल नाकी । ताकी धुनि सुनि लागति फीकी ॥

अबला बचन अमोल , प्रान धरन चिता हरन ॥

अचन सुनत वे बोल , मुनि मनसा नहि धिर रहैं ॥

हरे पीत मनि लाल विसाला । रतन जटित सोहति कँठमाला ॥

मुक्ताहल दोउ कुच बिच रहहीं । दुहुँ सुर मध्य जु सुरसरि बहहीं ॥

कुच कचन भरि सा सर्वारे । सुर सरि भरि जुग ससी दुधारे ॥

चक्रवाक सरिता की धारा । मानहुँ मुनि मन वारहि पारा ॥

कनक वेलि श्रीफल जुग लागे । किधौ पुष्प गुधि अति अनुरागे ॥

अति कठोर कुच तन उठे , सबलै समेत सुभाइ ।

मनुहु मैन को भस्म करि , धैठै ईस चढ़ाइ ॥

कनक बरन दुइ बोंह सुहाही । देखे नीत सँगीत सुहाई ॥

कनक टाह कर ककन चलिया । फुद जू चामहि मुद्रिक पलिया ॥

भुज सत्ल अरु सीन कटाही । लगी फूली सुघरी जु सुहाही ॥

सहज हस तष्यौ कमल दिखावे । नखन अग्र किलरी बजावै ॥

पलत्र पल्ल सोभी नख भारे । त्रिद्रुम विच कटक मनौ दारे ॥

भुज चदे की मजुरी , मिलति एक के रूप ।

मानहु कचन खभ ते , द्वादस लता अनूप ॥

उदर छीन रोमावलि देखा । कनक खभ मृगमद की रेखा ॥

नाभि निकट स्थौ नागिनि चली । जनु कुच कमल नलिन इक भली ॥

नाभि पात सौ उठी सुहाही । कँवलहु तैं अति अरवली भ्राई ॥

हृद कर सख ब्रह्म दै काढी । खभ वेलि कचन मनौ बाढी ॥

कै उलटी कालिंद्री बहही । गिरि गगा परसन कौ चहही ॥

इत तैं गगा सुर चलयौ , उत तैं जमुना अमु ।

कुकुम चग तुरग भरि , मिलि परसै इक समु ॥

मृग अरु ससा सिध बन भागे । देखि मध्य उदि उपमा लागे ॥

मध्य भीन बोलैं ज्यौ आघे । कसनी कसी कुच नीके बाँधे ॥

जंघ जुगल कदली के खभा । तिहि छवि को पूजै नहि रभा ॥

चूपुर चूरा जे हरि वाजैं । छुद्रावलि घटिका विराजैं ॥

षसि चदन इक चोली कीनी । कंचुकि पहिरि पटोरी लीनी ॥

कुँडुभी सारी पहिरि कै , बेनी गुही संवारि ।

राजा के मंदिर चली , कामकदला नारि ॥

अँसर चली कामकदला । नगर लोग सब देखन चला ॥

माधौ विप्र वात या सुनी । कहियतु कामकदला गुनी ॥

तब उठि माधौनल सँग लागा । काँधे बीन धरे बैरागा ॥

मंदिर मध्य गयो सब लोगा । माधौ विप्र पवरियन रोका ॥

माधौ कहै जानदे मोही । हौ नहि जाने दैं द्विज तोही ॥



राजमंदिर कैलास सम, जान देउं नहिं तोहि ।  
 तुहि बाम्हन देखत कछु, कहै राज जुलावे मोहि ॥  
 पूछि राय उत्तर कह ऐसी । जब तुहि पहिचानै परदेसी ॥  
 उहिटा माधौ पेंवरि दुवारा । राजा मंदिर होइ अरवारा ॥  
 तत गिरा गाइन बहु गोवहि । द्वादस तहा मृदंग बजावहि ॥  
 द्वादस माभ्र इक तुरिया दीना । दहिनै हाथ अंगुरिया हीना ॥  
 दूटै तार भंग सुर होई । मूरख सभा न जानै कोई ॥  
 ऐसो को सुर शानि, राज सभा मूरख सकल ।  
 ताल भंग को जानि, द्वादस तहा मृदंग धुनि ॥  
 ताल भंग माधवनल सुनही । द्वारे वैठि सीस बहु धुनहो ॥  
 ताल कुताल सप्त सुर जानै । सब पुरान संगीत बखानै ॥  
 माधव कहै पौरिया आवहु । राजा आगैं जाइ सुनावहु ॥  
 द्वारे वैठि विप्र इक आही । सकल सभा सौ मूरख कहही ॥  
 द्वादस माहिं तुरिया अनारी । दहिनै हाथ अंगुरिया चारी ॥  
 सात चारि के मद्धि है । उठिकै देखौं ताहि ।  
 चूकै तार जो पावमिसि, पातुर दोस न आहि ॥  
 सुनत पेंवरिया उठि किन धावैही । राजा आगैं जाइ सुनावहि ॥  
 विप्र एक है पेंवरि दुवारा । निरत ताल सब कहै विचारा ॥  
 कर मीजै सिर धुनि धुनि रहई । सकल सभा सौं मूरख कहई ॥  
 कहै जु तुरिया द्वादस माही । दच्छिन हाथ अंगुरिया नाही ॥  
 सात चारि के अंतर रहै । ऐसी बात विप्र इकु कहै ॥  
 ताही ठौर को तुरिया, राजा लियौ हकारि ।  
 हतौ अगूठा मैन को, तरस अंगूरिया चारि ॥  
 मिली बात माधौ जो कहौ । सभा सकल चकत हूँ रही ॥  
 कहै राज सुनि रे दरबारी । वेगि जाइ कै ल्याउ हँकारी ॥  
 द्यौ पौरिया माधव ठाई । पाउ धारिये विप्र गुमाई ॥  
 राजा मंदिर माधौ चला । सुदर विप्र मदन की कला ॥  
 कंठ सोहै मौतिन की माला । कानन कुडिल मैन विसाला ॥  
 भीने पट की धोवती, उपर उपरनी भीन ।  
 सीस पाग वैना धरे, राज-मंदिर पगु दोन ॥  
 सभा मध्य माधौनल गयो वेगि लोगु सब ठाढ़ो भयो ॥  
 आवत माधौनलहि निहारा । सिंहासन तजि भयें निवारा ॥  
 माधौ विप्र चिरंजी कीन्हो । आसिर्वाद नृपति कहै दीन्हो ॥  
 राजा दियौ सिंघासन टारी । ता पर बैठे रूत मुरारी ॥  
 वैठ्यौ विप्र सिंहासन जाई । देखि लोग सब रहे भुलाई ॥

कै रे इंद्र कै चंद्र है, कै कान्हर कै काम ।

कै जुवेर के जच्छ हैं, कै किन्नर कै राम ॥

कनिक मुकट मुद्रिक मनि माला । माधौनल कौ दोन सुनाला ॥

मुद्रिक टोडर दये उतारी । पहिरये भूपन सब भारी ॥

टका कोटि द्वै दक्षिना दीनी । स्वस्ति बोलि माधौनल लीनी ॥

चंदन खौरि तिलक सरसाखै । पोथी काँख उपरना काधै ॥

बैठि सिंघासन बहुत सुख पायो । दुख सँताप लै गय बहायो ॥

गुन देखे गुनिजन सुखी, निर्गुन होइ जनु कोइ ।

राय रक सब बीच लै, जौ रंपेट गुन होइ ॥

ऊंच नीच पूछहि नहि कोई । बैठहि सभा जौर गुनु होइ ॥

गुनी पुरिष जौ परभुमि जाई । त्यों त्यों मँहग मोल चिन्नाई ॥

जैसे पुत्रहि पालै माई । त्यों गुनु रहै सदा सुख दाई ॥

गुन विन पुरिष पख विन पखी । गुन विन पुरिष अंध ज्यो अखी ॥

गुन विन पुरिष पत्र ज्यो ... .. ॥

सगति गति उठत, तत कृनी तिहि काल ।

बहुरि अलापै राग पट, पच पच सँग बाल ॥

एक राग सँग पाच रागिनी । सग अलापै आठौ नंदनि ॥

प्रथम राग भैरव उच्चरही । पाचौ कामिनि सग सुहाही ॥

प्रथम भैरवी पुनि त्रिलावली । पुनि जाकी गावै बगाली ॥

पुनि असावरी औ वैरारी । ये भैरो की पाचौ नारी ॥

पचम हर्ष दे साथ सुनावै । पीगाली मधु माधौ गावै ॥

ललित विलावलि गावही, अपनी अरनी भोंति ।

अस्ट पुत्र भैरो कहै, गाइनि गावै पाँति ॥

हूर्ती मालकौस अलापै, पच कामिनी सगति थापै ॥

गौंडी काटी औ देवगंधारी । गंधारी सी हुती उचारी ॥

धनासिरी ये पाँचौ कामिनि । मालकौस के सग सुभामिनि ॥

मारु मस्तक अंग मेवारा । प्रबल चंद्र कौसिक औ भारा ॥

धूषट और भौरन दग गाए । मालकौस आठौ सुत भाए ॥

पुनि आगे हिंडोल, पच कामिनी अस्ट सुत ।

उठै सो तान कलोल, गाइन ताल मिलावही ॥

तेलंगी पुनि देव गिराइ । वारंती सिंधुरी सुहाई ॥

सा अहेरि लै आया राजा । सग अलापहि पंच भारजा ॥

सुर मा नंद भस्म करि आई । चंद्र विंघ मंगली सुहाई ॥

सरसवान औ आहि विनोदा । गावै सरस वसंतक मोदा ॥

अस्ट पुत्र मैं कहे सवारी । पुनि आई दीपक की बारी ॥

काछाली पट मजरी, टोडी कही अलापि ।  
 कामोदी औ गूजरी, सँग दीपकें थापि ॥  
 काल काल औ छुंतल रामा । कमल कुसम चपक के नामा ॥  
 गौड़ी कान्हरिय कल्याना । अस्ट पुत्र दीपक के जाना ॥  
 सब मिलि वहि श्री रागहि गावैं । पचौ सग वरग अलापै ॥  
 बैराटी करनाटी धरी । गौरी गावैं आसावरी ॥  
 पुनि पाछैं सिधवी अलापी । सिरी राग संग पाचौ थापी ॥  
 सावा सारंग सागरा, औ गधारी भीर ।  
 अस्ट पुत्र श्री राग के, गोल बुड गमीर ॥  
 अष्ट मेघ राज वै गावैं । पाचौ सग वरगनि ल्यावैं ॥  
 सौर गौड़मल्लारी धुनी । पुनि गावै आसा गुन गुनी ॥  
 ऊचे सुर सों सूहैं कीनी । मेघ राग सँग पचौ चीन्ही ॥  
 बीरा धर गज अरु केदारा । चडोली घर नित उजियारा ॥  
 पुनि गावै बासकर औ स्यामा । मेघराग पुनि तिन के नामा ॥  
 अस्ट राग ये सकल सँग, रागिनीय गनि तीस ।  
 सब सुत राग न के कहे, अठारह दस बीस ॥  
 गयौ राग रागनि सगीता । अथ वरनों सभा सगीता ॥  
 रगभूमि बहु भाँति सँवारी । ताल मिलाइ करैं पतिहारी ॥  
 दीपक दीवती चले चहुँ भाँती । बहुत मसाल मैन की बाती ॥  
 अंतर बोट पिछौरी दीन्हीं । पहुप अँजुली दुहुँ कर लीन्हीं ॥  
 सब मिलि श्री राग वै गावैं । सकर गौरि गनेस मनावैं ॥  
 षरज रिषभ गधार, मध्यम पचम धैवतो ।  
 औ निषाद उच्चार, ये कवि गाये सप्त सुर ॥  
 पनु मिलि संग एक सुर कीन्हा । रग भूमि पातुर पग दीन्हा ॥  
 सुर सुर मध मध धिपि धिपि बोलहिं । तार धार सँग लागे डोलहिं ॥  
 तथेइ तथेइ ताता थेइ करहीं । तनु थकत न थक मुख उच्चारहीं ॥  
 जभकत भभकत लाल तरगहि । . . .  
 भँक भँककत उठत तरंग रंग, अरी उच्चारहि दद दद मिरदग ॥  
 प्रथम ताल औहै भूप ताला । सकल ताल डोलैं इक ताला ॥  
 राग दाव नरपतिहि प्रधाना । प्रगटे सप्त मेद सुर ज्ञाना ॥  
 दुंदुर छुंद धुरपद सचारहि । ठही रीत जनु इद्र अखारहि ॥  
 धुनि देसी कदला दिखावै । अच्छर अर्थ हस्त पल्यावै ॥  
 थिरकी लीन तार जब तोरहि । नैन कोर माधो सो जोरहि ॥  
 सुर सुदर दोहा षटपदा, और विरमै पद गाइ ॥  
 ब्रुभै चतुर विलच्छन, माधौनल सब भाइ ॥

पुनि गुन काम कदला करई । जल भरि सीम कटोरा घरई ॥  
 मृकृटी चाप चलल मुख मोवहि । कर अंगुरी सौ चक्र फिरावहि ॥  
 दीप जोति इक भँवर उडाई । कुच के अग्र नो बैठा जाई ॥  
 जब लागै तब दै दुख डारहि । मनहु भवग ममै सरमावहि ॥  
 चदन वास लीन है रहा । बैठा भँवर प्रेम रस भरा ॥

छिन छिन काटहि मधुकरा , अस्तन वेदन होइ ।

माधौ नल सब बूझही और न धूमै कोइ ॥

भेंटै पवन सुख वासुन आवइ । अस्तन श्रोत समीर चलावहि ॥  
 ज्यो कर छुहा चक्र गिरि परई । कामकदला चौगुन धरही ॥  
 पवन तेज मधुकर उड़ि चला । माधौनल बूझी यह करा ॥  
 तब राजा के नैन निहारै । मूरखराज न कला विचारै ॥  
 रीभ्यौ माधव कला विचारी । मुद्रिक तोडर दए उतारी ॥

कनक मुकुत मनि माल सब , टोडर दए उतारि ।

टका कोटि दै दच्छिना , माधौ दिए सुकारि ॥

चदुर चदुर सो नैन मिलावहि । दुहुतन मदन उमगि बहु आवहि ॥  
 दुरि दुरि देखै मुरि

जब पारखी नाद मुख गावै । सुनतहि मृग हिय मोहित है आवै ॥  
 हरिनी कहै हरिन का कीजै । रीभि पारखी कौ का दीजै ॥  
 हमरै कहा दैन कौ दाना । कहै कुरग सो दीलै प्राना ॥  
 तब पारखो -धनुष संधाना । मृग हियरा आगे कै दीन्हा ॥

धनि कुरंग जिनि राग सुनि , रीभि न राखे प्रान ।

वैन करत बलि विक्रमा , दियौ न ऐमो दान ॥

धारा भोज लच्छ जिनि दीनौ । करन वैन बलि विक्रम कीने ॥  
 ये सब मुए मीचु के मारे । रीभि प्रान नहि दिए पियारे ।  
 लच्छ लच्छ जे त्यागहि दाना । तौ नहि पूजहि हिरन समाना ॥  
 कह राजा सुनु विप्र उदासी । कौन रीभि ते त्यागी रासी ॥  
 कहै विप्र हौ कला विचारी । औ मुग्धा सब सभा तुम्हारी ॥

नाचत त्रिय कुच अग्र पर , मधुकर बैल्यो आइ ।

अस्तन छोट समीर सौ , दीनौ भँवर उडाइ ॥

तू राजा अविवेकी आई । गुन औगुन बूझौ नहि ताही ॥  
 मै विद्या परवीन सुजाना । रीभि कला नहि राखौ प्राना ॥  
 क्रोधवत राजा उठि कहै । ढीठ विप्र चुप क्यों नहि रहै ॥  
 मारौ खड्ग टूक द्वे करौ । विप्रघात अपजस सौ डरौ ॥  
 ना राजा तू मारै मोही । कला रूप है व्यापौ तोही ॥

पतित करौं तुहि लोक महँ , स्वर्न लोक हरिद्वार ।  
 जग मै अपजसु पावही , सकल कहै हत्यार ॥  
 राजा ब्रह्म हत्या जो करै । कलि मै कुस्टी हूँ अवतारै ॥  
 तीरथ कोटि जग्य जो करै । तबहुँ न ब्रह्म दोष तैं तरै ॥  
 सुनि राजा कछु कहन न पारै । कोषवत मनही मै विचारै ॥  
 कह राजा जहँ लग मोर राजू । छाँडि जाहु तहँ लगि तुम आजू ॥  
 जो तोहि इहा बहुरि सुनि पाऊ । खाल खैचिकर भूस भराऊ ॥  
 बोलहि क्रोध न शाल , बेगि निकारहु नश तैं ।  
 भूस भराऊ खाल , जो कोउ राखै देस मैं ॥  
 तब सो वचन माधवनल कहै । तारे नश राइ को रहै ॥  
 मै गुनिवत भूमि पर बेसा । चरन घोई करि पियें नरेसा ॥  
 यह सुनि नृप मंदिर मैं जाई । नीच सीम करि सासैं लेही ॥  
 राजा मन मै चिता करदी । फिरि फिरि दोस कर्म को देई ॥  
 मैं दिन राति सभा सचारौ । त्यागहुँ लक्ष लोभ नहि करौं ॥  
 जो दक्षिन ध्रुव अस्तवै , तस अग्नि सिवराइ ।  
 पश्चिम भान उदै करै , तऊन कर्म गति जाइ ॥  
 सम दुग भीर होइ जौ थाहा । गगा पश्चिम करै प्रवाहा ॥  
 पख लागि कै सिला उडाही । पाहन फोरि कमल विहसाही ॥  
 जौ इतनी विपरीत चलावै । तऊन कर्म सौ छूटन पावै ॥  
 कर्म हेत हरिचंद जलु भरा । कर्म हेत वलि सर्वसु हारा ॥  
 कर्म हेत पाडव फल खाये । कर्म रेख रघुपति वन आये ॥  
 सोई कर्म मनुष्य मैं , कोटि करावहि भेख ।  
 सो कवि आलम ना मिटै , कठिन कर्म की रेख ॥  
 चित चिता माधव गहि रहा । तब उठि कामकदला कहा ॥  
 कवन सोच सोचहु सग्याना । विद्याधर तुम चतुर सुजाना ॥  
 तुम सुजान जाना गुन मेरा । मै कुछ गुन पहिचानहुँ तोरा ॥  
 मधुकर अहि कमलन गुन जानै । दादुर कहा पीउ पहिचानै ॥  
 नाच कूद कछु अंध न देखै । रूप कुरूप एक सम लेखै ॥  
 बहिरौ आगे जो कोऊ , सख बजावै आइ ।  
 वह अपने मन जानहीं , कछु अमृत फल खाइ ॥  
 चलहु विप्र घर बैठहु मेरे । चरन धाई सेवहुँ कर जोरै ॥  
 प्रेम कथा कछु मोहि सुनावहु । काम अग्नि की तपनि बुझावहु ॥  
 मैं रोगी तुम वैद गुनानी । सोहि सजीवनि देहु सो आनी ॥  
 काहे गोरिख फिरहि अकेला । अब संग लाइ करहु मोहि चेला ॥  
 मैं भई धूपल तू दरज मेरा । तू चदा हौं भई चकोरा ॥

तू मधुकर हौं कमलिनी, वैस वास रसलोहि ।  
 भरै बूदते स्वाति जल, ऐस बूद भरि देहि ।  
 सुनहु वारि माधौनल कहई । इहि जग नेहुं नहौं थिर रहई ॥  
 जो थिर रहे तो कीजै नेहू । बिछुरि संताप देह को देही ॥  
 नेह लगाइ जो विछुरै कोई । निस दिन रोम रोम दुख होई ॥  
 × ऐसो खडग की धारा × × ×  
 × सेज पर बैठहु जाई × × ×  
 उठि माधौनल बैठे सेजा । देखत काम तजै तन तेजा ॥  
 कुसुम मुकट सिर केसर सोहै निरखत मकरध्वज मन मोहै ॥  
 उठि फूलन की माल, रतनजतित कुडल दियै,  
 मृगमद तिलक सो भाल, कर बीना माधौ गहै ॥  
 कामकदला करयो सिगारा । अरुन फूल के पहिरे हारा ॥  
 तापर पहिरि कंचुकी भीनी । सांधै छिरकि बेल सौ भीनी ॥  
 पुष्प गूथे वैनी बनवाई । चचल गात प्रवीन सुहाई ॥  
 दियो लिलाट चदन के टीका । मध्य विटुं विटुंन कौ नीका ॥  
 दये न लेह दग ओर करि अजन । पलौ आंठ जनु फरकहि खजन ॥  
 कुसुमी सारी पहिरि सुजान, अंग अंग भूषन किये ।  
 सुख भरि खाये पान, दाड़िम दसन विराज ही ॥  
 कहै कदला सुनौ सहेली । मोहि सिखावहु प्रेम पहेली ॥  
 अब लौं सुरभाहति अलवेली । सिखवहु रसकी रीत सहेली ॥  
 पुष्प सग रचि सेज न जानहुं । प्रथम समागम जिय पहिचानहुं ॥  
 वह सुजान माधवनल आही । सब अंग कोक बखानहु ताही ॥  
 चौदह विद्या कोक बखानै । अंग बास मनमथ कौ जानै ॥  
 कोक कला हौं ही कहौं । सब विधि अरच बखानि ।  
 और सिखावहु मोहि कछु, पूंछहु गुन जन मान ॥  
 कहै सखी सुन हो कंदला । तो तै रस जानै को भला ॥  
 जहां वासु मनमथ को जानौ । तिहि टोहरि सुनिकट जनि आनौ ॥  
 जहा अंग मनमथ रह तहा । छिपन कियौ रहियो पै तहा ॥  
 कोक रीति कदला सिखाई । माधौनल पै सखी पठाई ॥  
 माधौ निरखि रीति कै रहा । तिहि छिन आइ मदन तन दहा ॥  
 मदन धनुष सरपच लै, माधौ सनमुख आइ ।  
 कामकदला निरखि कै, सरन सरन गुहिराइ ॥  
 मिलि प्रजक पर जुगल किलोलहिं । बचन चातुरी दोऊ बोलहिं ॥  
 सखी सिखाइ कंदला गई । आवर मंदिर ढाढ़ी भई ॥  
 बैठि कदला माधव पासा । सूर संग जनु चन्द प्रकासा ॥

जोई कछु कोकिल की रीती । तैसिय रीत रची विपरीती ॥  
 दोउ कामवत भरि जोवन । सुदर सुधर सुजान विलच्छन ॥  
 परसन लालन वै पतन , त्रिया पुरुष सुख लीन ।  
 फुटक बदन उमगे रहै । भये पचसर हीन ॥  
 कलकत बोलत लोक कहानी । भयौ भोर प्रगाख्यो जु विहानी ॥  
 कामकदला परिहरि सेजा । मह विहाल तन रह्यौ न तेजा ॥  
 भलकै पलक उनीदे नैना । अति जम्हुआई आवहि नहि वैना  
 कबल प्रवेस भवर जो किया । कोस भकोर सकल रस लिया ॥  
 सिथिल गात कसुकि पहिरि , विछुरि माँग लट छूटि ।  
 अषर निरखि औ नख निरखि , गये कचकै बंध फूटि ॥  
 पुन्यो जोति ज्यो कामकदला । हूँ प्रगटी परिवा की कला ॥  
 बोलति चलति मनहुँ मतवारी । पीत वसन मुख भयो सवारी ॥  
 सखी आनि छिरकहि मुख पानी । सुरति रीति औ सब पहिचानी ॥  
 उरके बार हारनि न निवारहि । सब अँग भूषन सखी सुधारहि ॥  
 मुख पखारि पुनि पान खवावहि । नखछत मह कुमकुमा लगावहि ॥  
 भँवर बास रस लेइ कै , मौर रहे लपटाइ ।  
 सूर तेज तैं कुमुदनी , रही अतिहि कुम्हिलाइ ॥  
 बोलहि सखी चलहु मगु रजन । सरवर जाइ करहि हम मज्जन ॥  
 माधव विप्र धाम करि धीरा । गई सकल सरवर के तीरा ॥  
 गई कदला सरवर पासा । चकही जान्यौ चंद्र प्रकाश ॥  
 चकही विछुरि गई भुमि भूली । बाधे कमल कुमुदनी फूली ॥  
 चक्रवाक उड़ि चले अकासा । अथवा चद सूर परगासा ॥  
 सखी तरायन सग , कामकदला विधुवदन ।  
 चकई मन भयो मग । कमल देखि सपुत गह्यौ ॥  
 तेल सुगन्ध अरगजा कीन्हा । अग उवटना मज्जन कीन्हा ॥  
 करि मज्जन सब बाहिर आई । चपक बदन सुदेस सुहाई ॥  
 कहुँ कहुँ बूँद एक छुत्रि बनी । चपक लता ओस की कनी ॥  
 सजल ओस अलकै धुंधराली । ऊपर दलति कंदला डारी ॥  
 अगन बूँद चुवहिं घर जोती । जनहु भुवराम उगिलहि मोती ॥  
 कुटिल स्याम चिहुरा बुँधरारे । डालै मधुय जनहु मतवारे ॥  
 नीर चुवहिं चिहुरा सजल , बदन निरखि छुत्रि माल ॥  
 मनहु पान मकरद पर , पवन करत अलि जाल ॥  
 डोलहि कामकदला बाला । चिहुर चुवहिं मोतिन की माला ॥  
 निरखत अलक उलटि धुंधरारी । अमृत लगी नागिन ज्यो कारी ॥  
 कै सावक अलिरस अब डोलहि । सखी सवहिं उपमा कौं बोलहि ॥

कुटिल कुटिल दोड छवि लान्हें । कहूं रसिक मन प्यासे दीन्हें ॥  
सो जेहि फँदयो सो निकस नहि पारै । जो जिय सकल जन्म पचि हारे ॥

मूलन चिहुर चुवाहि, सखी कहैं कदल सुनहु ।

बधन सुरत डराहि, उचे लुट्यौ चिहुरा मजल ॥

सुनि कदला धाम कह चली । नखसिख बरन चपे की कली ॥

कहैं सखी सो चलै अवासा । माघौनल जनि होइ उदासा ॥

गवनम राज मद की नाई । छिन एक मॉभ मँदिर मै आई ॥

सखी गई सब अरने धामा । माघौनल मै आई वामा ॥

कहै कदला माघौ ठाऊँ । अत्र सरवर मजन नहि जाऊँ ॥

कँवल देखि सपट गह्यौ, चकही सग विछोह ।

मो मुख पुरन चद सम, निरखत दुख अति होइ ॥

वह कलक की कला दिखावहि । पून्यो चन्दस सवानहि आवहि ॥

तु गभीर सहन रस काला । समता लै ऊपर कै पाला ॥

तव मुख रूप रैन दिन नीको । सूरज होइ देखि कै फीको ॥

रोस बचन जय माधव कहई । भुज भरि कामकदला गहई ॥

वैठि सेज पुनि करहु विलासा । महकत जेहि ठा सकल सुवासा ॥

मधु कुरल त्रिध्यौ मदनरस, को ये पवन मदनेसु ।

नैन प्रान तन मन फट्यौ, छिन न प्रेम कै प्रेम ॥

ऐसे बचन जौ राजा कहई । माधव सूर चेत जिय धरई ॥

पुंछहु कामकदला तोही । अत्र मै चलहुँ विदा दै मोही ॥

राजा बात सुनै मग पावहि । मोहि तोहि लै भार फुकावहि ॥

कहै कदला वूमै नहि तोही । ऐसे बचन सुनावहु मोही ॥

तोहि चलत मोरे प्रान चलाहीं । पलक अंठ अँखिनि अकुलाहीं ॥

चलन कहत है मित्र, सवन सुनत प्रानहि चलहि ।

अनि व्याकुल मन चित्त, सजल नैन भरि भरि डरहि ॥

तुम सुजान माधव सब जानहु । राज कहे कर विलग न मानहु ॥

राज सिद्ध धनमद जिहि होई । सकल बीच बस करै जु कोई ॥

कहि माघो सुनि तेरी चिन्ता । राज अपनी होइ न मिता ॥

राजा त्रिया सुनारि, विटिया रोकष आगि जल ।

पाँवा साँपिनि हारि, ए दस होइ न आपने ॥

यह जिय जानि सोचि करि कहौ । दिन दस जाइ और पुर रहौ ॥

यह जग में विधि कियो सँनोगु । जिहि मिलना तिहि होइ वियोगु ॥

कर्म रेख सौं कछु न वसाइ । जो विधि लिख्यो सो नेटिन जाइ ॥

मिलन विछोह विधाता कौन्हा । दमदती नल को दुख दीन्हा ॥

मिलि विछुरै जानहि दुख सोई । विछुरि मिलन दुहु तन सुख होई ॥



आलम मिलन बिछोह , तीछ्ण सकल सँताप ते ।  
 तपत अग जनु' लोह , बिरह अग्नि इमि पर जरहि ॥  
 बोलहि नारि बचन अन चैनी । माधव रहहु आबु की रैनी ॥  
 ललित कुसुम भरि सेज बिछावहु । भुज भरि अकम भरि लपटावहु ॥  
 परी सौंभ भइ निशि अधियारी । सखी पहुप भरि सेज सँवारी ॥  
 बहुरि सिंगार कदला कीन्है । अग अग लै भूखन दीन्है ॥  
 करि सिंगार माधौ पै आई । जुगल सेज पर बैठे जाई ॥  
 आगम बिरह वियोग , बिछुरन मूल जु रहत जिय ।  
 मिलत मैन सजोग , बचन वियोगिनि उच्चरै ॥  
 ... .. न कदला कहई । रजनी बीति अल्प हूँ रहई ॥  
 ऐसा कछु कौजै .. ... । बाढै रैनि न होइ सकारा ॥  
 तब माधौ वीना कर लीन्है । . ... नयननि सुविलीन्है ॥  
 सरस बजावहि वीन सुरगा । टिक्यौ चद थकि रहे तुरगा ॥  
 .. . कुलानै । बाढी रैनि न हाइ बिहानै ॥  
 स ... , राहुजाइ सरज गिलहु ।  
 चलन कहत पिय प्रात , रैनि न निधि ॥  
 बढी रैनि नहि होइ उँजियारा । तब माधव धरि वीन बिहारा ॥  
 थक्यौ नाद मृग चलयौ उदासा । अथयों चद सूरज परकासा ॥  
 वीती रजनी पृथ्वी जागी । माधवनल उठि भयौ विरागी ॥  
 पुनि कामा सो अग्या लेई । आग्या लै मारग परु देई ॥  
 कहै नारि हौं ही तुम थाहूँ । हौं न कहौ माधोनल जाहूँ ॥  
 रसना पाकौ सोइ , चलन कहत जो मित्र को ।  
 मद द्विस्टि मति होइ , जो निरखै बिछुरन सजन ॥  
 करि धोती पोथी करि बाँधै । उठ्यो विप्र वीना धरि काँधै ॥  
 गहि रही कामकदला बाही । हौं तोहि जान दैउ जो नाही ॥  
 कहति काम ये मीत वताउ । कै जु चले मन मोर लुभाउ ॥  
 अहो मीत सजन परदेसी । विद्याधर मनमोहन वेसी ॥  
 मारि कहा रिनि मेटौं दाहू । ता पाछै तुम पर भुमि जाहूँ ॥  
 नैन भरत जिमि मेह , गरव देह भीजत सकल ।  
 बिछुरत नयौ सनेह , मन ब्याकुल तन थकित भय ॥  
 कहै त्रिया पूजै आस तिहारी । कर अजुल मुहि दीजौ वारी ॥  
 प्राननाथ अब क्यो इच्छा आवै । ताके आसु भरि भरि आवै ॥  
 रति गति मति लै गवनहु मोरी । लै सुखु दै दुखु सघहु जोरी ॥  
 नेहु नाव तवगुन करि लीना । छौंढि वियोग समुद महुँ दीना ॥  
 बिन गुन नाउ लगहि नहि तीरा । करि हा हीन भूकोरहि तीरा ॥

नैन समुद तारंग , प्रीतम विनु उमगे फिरहि ।  
 विनु गुन वोहित अग , धूडहि सो त्रिय कत विन ॥  
 तजि समीप जिनि करहु वियोगिनि । तुम बिलुरत हैहौं हम जोगिन ॥  
 कथा पहिरि जटा सिर केसा । घर घर फिरहु तपस्विनि मेसा ॥  
 मुद्रा पहिरि भस्म सिर लाऊ । मुख माधौ माधौ गुहिराऊं ॥  
 किगरिय गहि दिन रैन बजैहौं । जोगिनि है माधौ गुन गैहौं ॥  
 घर घर वन वन डूढौं तोही । सो कछु करौ मिलौ जो मोही ॥  
 खड खड तीरथ करौं , कामी करवत लेहुं ।  
 मन रक्षया करि मरि जियौं , हूडि मित्र को लेउ ॥  
 जिन दै जाहु बिरह के हाथा । पाइन परहु लेहु सुहि साथा ॥  
 ये हो मीत पडित पइडोही । वाट मरिभ जिनि छाडहु मोही ॥  
 मोहि मारि जाहु पिय नाहा । छोंडहु प्रान न छाडहु बाँहा ॥  
 चद विलोकत सकल चकोरा । चकवी सती होई जो भोरा ॥  
 नैन सकल निरखत भावता । जिय दूखत सुनि बिलुरि भवता ॥  
 आलम प्रीतम के मिले , अग अंग सुख होइ ।  
 पलक ओट जग लाज तैं , रहीं सकल सुख होइ ॥  
 कइ नारि सुनि विप्र उदासी । मेरे गृह जो करहु निवासी ॥  
 जिहि मुख सुखद वचन सुनावहु । तेहि मुख काहे चलन कहावहु ॥  
 माधो नैन नीर भरि आये । कामकदला वचन सुनाये ॥  
 बोलै विप्र नैन वरसाहीं । सुनहुं नारिय छाडहु बाहीं ॥  
 तव मुख निरखि नैन सुख पाऊं । बिलुरि जानि कै वहि मरि जाहुं ॥  
 भावता के बिलुरनै , नैन उमगि जल धार ।  
 मन अधीर तन पीर अति , बिरह उदेग अपार ॥

## माधव-कामकंदलावियोग

सखी आइ कर वाह लुझाई । चलथो विप्र त्रिय गई मुरभाई ॥  
 काम मूर्छित धरनि मह परी । सखी आइ करि अकन भरी ॥  
 लै करि सखी सेज पर धाई । तन व्याकुल जनु मिरगी आई ॥  
 अधर सूक जिय रहै निरासा । सखि जीवन की छाड़ी आसा ॥  
 मूदि नासिका छिरकहिं पानी । पुहुप मूरि औषध बहु आनी ॥  
 करि उपचार सखी थकी, रहीं विसुरि विसुरि ।

विरह भुवगम वा डँसी, ताकी मत्र न मूरि ॥

पुनि इकु मत्र सखी मिलि थापहिं । कान लागि माधवनल जापहिं ॥  
 माधौ माधौ उहिं गुहिरावौ । जागि नारि विप्र जनु आयौ ॥  
 सुनत नाउ जब नैन उघारे । श्रवन नैन जल मानहु नारे ॥  
 सूनौ भवन देखि विनु मित्रा । भई पीत तन व्यापी चिता ॥  
 विन कौदव जिमि कमल सुखाई । निना सूर्ज ज्यो तेज मुरभाई ॥

जैसे जल स्थौ मीन, घरी एक ज्यो बिल्लुरई ॥

सदा रहे तन छीन, छिन ही छिन दुख संचरै ॥

यह हिय वज्र वज तैं गाढा । पाल्यौ वज्र वज्र में बाढा ॥  
 जा दिन मीत विछोहा भयऊ । तँवकि निखड खड हूँ गयऊ ॥  
 बिल्लुरन जस भा ताल तरकै । पापी हियौ नेक नहिं फरकै ॥  
 औसे निलज रहत नहिं प्राना । मीत विछोह सुनत किमि काना ॥  
 गये न प्रान मीत के सगा । औसे निलज रहत गहिं अगा ॥

आलम मीत विदेसिया, लै गयो सपति सुष्प ।

नैन प्रान तन विरह बसि, रहे सहन को दुष्प ॥

गयो विप्र चित्त उचाटउ । अब कह पाऊ मीत बतावउ ॥  
 तीन्या अपने होई न कोई । छिन इक बिल्लुरै नैन दुख होई ॥

चदन जान नहिं पोर, तादिन भरहिं चकोर दूख ।

व्याकुल रहे सरीर, निसि अधियारी सीस धुनि ॥

तजि सनेह हम धौन लगायौ । कामकदला बहु दुख भयौ ॥  
 दिन बीतै रजनी ज्यो आवै । भरै नैन जल पल्लु न लगावै ॥  
 खिन माधौ माधौ गुहिरावै । खिन भीतर खिन बाहिर आवै ॥  
 विरह ताप निसि सेजन सावै । कर मीजै सिरु धुनि धुनि रोवै ॥  
 ऐसे दुख करि रैन विहावै । कोटि जतन बासर नहिं पावै ॥

जो दिन होइ तो निसि रटै, जो निसि होइ तो प्रात ॥  
 भा दिन सातिन रैनि सुख, विरह सतावत गात ॥  
 कामवत विरहा बसि भई । विद्याबुद्धि सकल नसि गई ॥  
 नृत्य गीत गुन की चतुराई । गति मति आनि विरह घौराई ॥  
 जिहि तन मन विरहा सचरै । सो जिउ जीवै नहि पुनि मरै ॥  
 विरह अनल सोइ तै सुख जाइ । रोम रोम वेदनि सचरई ॥  
 पाउ हर्ष सुख रहै न कोइ । जिहि सरीर विरहानल होइ ॥  
 बुधि विद्या गुन ग्यान, प्रेम चाव धुनि हर्ष बल ।

सब तजि होइ अग्रान जा घट विरहा सचरै ॥  
 कामकदला भई वियोगिनि । दुर्वल जन् वस की रोगिनि ॥  
 अजन मजन भोग विसारे । नजल नेन वहै जल के नारे ॥  
 बल मलान सीस नहि घोवे । लक टेक माघी मग जोवै ॥  
 नीद न भूख न भावै पानी । काया छीन दीन मुख बानी ॥  
 हा हा आइ स्वास के गाढे । छिन छिन विरह अनल तन बाढे ॥  
 हा हा प्रान न संग गय, जव विछुरे भावत ।  
 कर मीजे वस्तर धुनै, गहै अंगुरिया दत ॥  
 पलक वाह नहि रहहि नियारे । मगन भये नैन के तारे ॥  
 माधौ पीर कदलाहि व्यापी । मनमथ अग तपति त्रिय तापी ॥  
 तोरै तनु मनु डारै रहही । हृदै पीर नहि का है कहही ॥  
 छिन अचेत छिन चेतहि आवहि । पुनि पुनि विरह विया तन तावहि ॥  
 स्वास लेत पिंजर ज्यो डोलहि । हाहा सजनी मुख नहि खोलहि ॥  
 रक्त न रहै सरीर, पीत पत्र के बरन तन ।

डोलत अतिहि अघोर, पवन तेज नहि सहि सकत ॥  
 सखी आनि मुख नीर चुवाहीं । हिदै तयत घसि चदन लगावहि ।  
 कुसुम सेज पर जो परु धरई । तिहि छिन काम अग्नि पर जरई ॥  
 त्रिविध पवन त्रिय सहै न पारै । चदन चंद अधिक तन जारै ॥  
 पीक मधुर धुनि बोल सुनावै । मदन घाउ पर जन् विष लावै ॥  
 गीत नाद रस कवित कहानी । श्रवन सुनत ये विष सम वानी ॥  
 अकुलाई तन विरह के, रस संजोग रसुलीन ।  
 ते सब काम वियोगि, निसि वासर दुख दीन ॥

## माधव विरह वर्णन

बिछुरै कामकदला नारी । माधौनल मन भय दुख भारी ॥  
 विरह के सोंस जु हिरदैं बाढ़ैं । गहि गहि आहि आहि कै काढैं ॥  
 बन बन फिरै नैन जल घोवै । विरह सँताप नीद नहि सोवै ॥  
 छिन बैरागी बीनु बजावै । सुखे गात अगिनि जनु लावै ॥  
 मन चिंता करि त्रिया वियोगी । गोरख ध्यान रहै जिमि जोगी ॥

अगम अथाह अलोल अति, विरह समुद्र अगाध ।

प्रीति हिरानी बुद्धि जनु, भूले ब्रह्म समाध ॥

विरह समुद्र अगम अति आही । बूढ़ि मरै नहिं पावै याही ॥  
 बुधि बल स्वै कोउ पार न पावै । जौ नर सप्रँग गुन चाँद धावै ॥  
 विरह डसत नर जिऐ न कोई । जौ जीवहि तौ बौरा होई ॥  
 विरह चिनग जिहि तन पर जाँरै । छिन छिन विरह अगिनि विस्तारै ॥  
 सोइ अगिनि माधौनल लागी । बीनु बजाइ रहे बैरागी ॥

हिऐ हूक भरि नैनजल, विरह अनल अति हूम ।

अतर घर सवर बरै, स्वास प्रगट भइ धूम ॥

जिय विनु सूक पत्र ज्यौं डोलै । सूल सहित माधौनल वोलै ॥  
 निसि दिन विप्र पीर करि रोवहि । वन पछी निसि नीद न सोवहि ॥  
 बाध सिह कोइ निकट न आवहि । चहुँ दिस विरह अमि अति धावहि ॥  
 विरहो नैन सजल मुख भरे । सीतल होत तपत जिहि हरे ॥  
 स्वासा वेग नैन भरि पानी । सानल गत विरहा की जानी ॥

बल्ल मलीन उदास तन, उभय स्वास बहु लेह ।

नीदं भूख लजा तजै, विरही लच्छन एइ ॥

माधौ नैन रहे भरि आँसू । सूखो चर्म रुधिर अरु मॉसू ॥  
 तब माधौ मन माहि विचारहि । विरह वासु मन आपु सँभारहि ॥  
 अहो वन विरह जोर मरि जाँहू । कामकंदलहि हौं न मिलाऊ ॥  
 अब खोजहु कोउ जग उपकारी । मिलवहि मोहि कंदला नारी ॥  
 ढँडौ पर वेदनि जिहि होई । दुखखडन नर जौ कहूँ होई ॥

लक्ष दैन सकट हरन, जीवन प्रन मति धीर ।

तिहि के कलि उत्तम करम, ते खडहि पर पीर ॥

## विक्रम सहायता खंड

यहै मत्र माघवनल लागा । बल सँभारि बन तजि मग लागा ॥  
कोइ न भयउ कलि त्रिया वियोगी । माघौनल जो भरथरि जोगी ॥  
जग्य विचारि माघौनल कहै । चलयौ जहाँ नृप विक्रम रहै ॥  
पर दुख हरन दसौ दिसि दैनी । सुनियतु विक्रम नम उजैनी ॥

मुष सगति बहु करत है , जो मन उत्तम होइ ।

पर दुख खडन तौ गनै , नेह दान मुहि देइ ॥

काम के बस माघौनल चला । किहि विधि मिलै कामकदला ॥  
बीना विरह साथ जो लीन्हे । नींद भूख प्यास बस कीन्हें ॥  
मारग चलं सकल दुख लैनै । पहुँच्यौ जाइ नगर उजैनै ॥  
धर्मपुरी सब नगर सुहावा । हाट पटन बहु देखि बनावा ॥  
कहुँ दिसि नगर बाग फुलवारी । ताल कूप सलिता बहु भारी ॥

कनक खचित मनि मदिरनि , कलस धुजा फुहरति ।

राब रक नहिं चीन्हिए , पूरन पुर जिहि भौंति ॥

अति वियोग माघौ कौ भयऊ । ततखिन चलि मदिर में गपऊ ॥  
पुनि पुनि हाट पटन फिरि देखै । आनद पुरी बराबरि लेखै ॥  
छत्तिस पुरी नगर बैपारी । बैठे हाट महाजन भारी ॥  
कहुँ नाच कहुँ पेखन हौंई । कहुँ पवारा गावत कोई ॥  
कहुँ रामायन भारय होई । कहुँ गीता कहुँ भागवत होई ॥

कहुँ पंडित द्रै सहस हैं , कहुँ करहिं कवि वाद ।

कहुँ मल्ल विहल मिरहिं , कहुँ गीत कहुँ नाद ॥

अति उदास माघौनल भयऊ । तब राजा के मदिल गयऊ ॥  
राजमंदिर मनिगन उंजियारा । कै विघना कैलास सुधारा ॥  
द्वारें पडित तापस ज्ञानी । देस देस के भूपति जानी ॥  
द्वार भीर नरपति कैं होई । नैकु जुहार न पावहि कोई ॥  
देखि विप्र मन भयउ उदासा । राज मँट की तजि जिय आसा ॥

दिन उदास दहुँ दिसि फिरहिं , नैन दगन के नीर ।

बेक न काहू सौं कहै , अतर गति की पीर ॥

दिवस व्याधि माघौ कौं लागी । मन महुँ कामकदला जागी ॥  
विप्र एक सग करि लीन्हां । करि अहार माघौ मो दीन्हां ॥  
करि अहार माघौनल गयो । नदी तीरक उदक जो भयो ॥

हाटक यह घारे सकल, भरहि वारि पनिहारि ।  
 येक नारि मञ्जन करहि, अग मलाइ सुधारि ॥  
 कनक कलस भरि सबरी नारी । धरि धरि सीस चलहि ते वारी ॥  
 मारग छौडि चलहि ते नारी । तोरहि फल औ फूल उपहारी ॥  
 येकै चलै घूँघट पट डारै । चदन वदन तप अगारै ॥  
 लखि चरित्र माधौ मुख फेरा । दुख व्यापौ तहँ कामा केरा ॥  
 निसु दिन रहै तहा चिट्टु लाई । पाहन रेख न मेठी जाई ॥

द्रग पुरन की तारिका, मूरति रही समाइ ।  
 जित देखौ तित सो त्रिया, पलक न इत उत जाइ ॥  
 दिन इक माधौ गयौ सुजाना । मडप महादेव कौ जाना ॥  
 मडप देखि भेख मन भावै । तहा राइ विक्रम नित आवै ॥  
 तिहि मडप माधौनल गयौ । विरह ताप व्याकुल मनु भयौ ॥  
 जामै विरह व्यापै सोइ जानै । अन जानत मुख कहा बखानै ॥  
 मन उदास माधौनल भयऊ । दोहा लिखि मदिर महँ गयऊ ॥

कहा करौ कित जाऊँ हौं, राजा रासु न आहि ।  
 सिय वियोग सताप बस, राधौ जानत ताहि ॥  
 रामचद्र नहि जग महँ आहीं । सिया वियोग किधौं दुख जाहीं ॥  
 राजा नल पृथिवी सौं गयऊ । जिहि बिछोह दमयती भयऊ ॥  
 वनवासी अरु भेद संजोगी । राजा फूहर वाचर भोगी ॥  
 विछुरत त्रिया भयउ सो जोगी । भरत राज पिंगला वियोगी ॥  
 राजा रतनसेनि नहि भयऊ । पदभावति लगि सिषल गयऊ ॥

मधुकर कमलहि आहि, कोजि मालती वियोगु ।  
 ये सब गये जगत्र मैं, विरही करि करि जोगु ॥  
 दोहा लिखि माधौ वैरागी । गयौ नगर कामा अनुरागी ॥  
 तिहि मडप राजा पगु धरई । महादेव की पूजा करई ॥  
 पूजा करि प्रदच्छिना देई । राज हृष्टि देहा पर गई ॥  
 दोहा बौचि राज यह कहई । विरह अग्नि किहि व्यापति अहई ॥  
 मोरै पुर विरही केउ आवा । विरह वियोग सताप सतावा ॥

आलम ते नर तुच्छ मति । जे पर हँथ मनु देहि ।  
 सुख संपति लब्धा तजै, दुख विरहा सोइ लौहि ॥  
 राजा कहै सुनौ सब कोई । देखहु नर विरही सो होई ॥  
 मोरे नग दुखी जो रहई । सकवसी मोसौं को कहई ॥  
 अब जो सौं विरही नर पाउ । सुनि वेदनि सब दुरत नसाउ ॥  
 कोइ वह पुरुष हँडि सो ल्यावइ । राजा कहै अछि सो पावइ ॥

दुख खडन नृप दयानिधि, तन पीरे पर पीर ।  
 पुनि पुनि चितचिता करहि, यह विक्रम मति धीर ॥  
 राजा अन्न पान नहि भावहि । मन बच जव लग जो नहि आवहि ॥  
 नर नारी सब हूँडन धाई । विरही लच्छिन सकल बुभाई ॥  
 हूँडहि हाट पटन फुलवारी । हूँडत वन महँ भूलत वारी ॥  
 ज्ञानवती दूती इक आई । विरह वियोग खेल सब रहई ॥  
 सो चलि जिहि मंडप मह जाई । माधौनल ता छन गया आई ॥  
 तन दुर्वल अस्त्रियाँ सजल, भरि भरि लेत उसास ।  
 चित उचात मन चटपटी विरह उदोग उदाम ॥  
 मन उचाट छिन चीन वजावहि । जोरे तुनहिं तिहिं विरह सतावहि ॥  
 खिन खिन कामकदला रटई । स्वाति बूद को चातक चहई ॥  
 ज्ञानवती त्रिय सुनि मुख वानी । मन मह कही यहै सुग्यानी ॥  
 विरही पुदप आई यह सोई । जाकर दुखु राजा काँ होई ॥  
 कामकदला त्रिया वियोगी । तन मन छीन भयो सो जोगी ॥  
 मन मारै बस्तर मलिन, द्रग भरि ऊँचे सॉम ।  
 तन दुर्वल पिजर भूलक रचक रक्त न मास ॥  
 ज्ञानवती छिन इक कहि वानी । सखी चीन दस आनि तुलानी ॥  
 कहै सखी सौ सो यह वह आही । नरनारी हूँडत सब जाही ॥  
 अब लै चलहु बेगि गहि बाहीं । सखु पावइ विक्रम नर नाही ॥  
 पूछहि बात न नल मुख बोलहि । दुर्वल गात पवन ज्यौ डोलहि ॥  
 जो बहू बोलहि उत्तर नहि देई । नीचे नैन स्वाम भरि लेई ॥  
 रहै ताहि को ध्यानु, मन माला हित मत्र जपि ।  
 ज्यो जोगी करि ज्ञान, खवन सुनत नवगति मुखहि ॥  
 बोलहि सखी सुनहु वैरागी । विरह ताप सुख सपति त्यागी ।  
 बोलहु बचन पीर सब कहहु । काहे दीन छीन तन रहहु ॥  
 ताकी सपति मानि मन बोलौ । जिहि वियोग विरहा बस डोलौ ॥  
 छिन एक बचन कहै छिन रोवहि । नीरख नैन कमल मुख घोवहि ॥  
 दुख को बात दुखिया कहै, दुख वेदनि सुख त्यागि ।  
 दुख समुद्र सोइ परथो जो, रहयो अग दुख लागि ॥  
 विछुरत कामकदला नारी । माधौनलहि भयो दुख भारी ॥  
 पुनि मुख कहै विरह की रीती । अपनी कामकदला प्रीती ॥  
 अति उचाट मुख विरह बखानै । जिहि यह ब्याप्यौ सोई जानै ॥  
 माधौ पीर सखी कौ ब्यापी । विरही बात सखी सब थापी ॥  
 सुनत बचन त्रिय अग पतीज्यौ । नैननीर कचुकि तन भीज्यौ ॥



हों बलि बलि जिहि जीव , पर वेदनि जिहि वेधियौ ॥  
 धुक ते पाहन हीय , नीदन भिदहि पणन मैं ॥  
 बोलहि ज्ञानवती गुन नारी । चलहु विप्र अथ नगर मेंभारी ॥  
 हम राजा विक्रम ज्ये दासी । तुम वेदनि मन माहि उदासी ॥  
 हम पठई राजा तुम पासा । चलहु वेगि मन पूजै आसा ॥  
 चल्यौ विप्र माधौ उहि संग । त्रिय त्रियेग तनु रह्यौ न अगा ॥  
 जहं सकवधी हतौ नरेचा । राजा मंदिर कियौ प्रवेसा ॥  
 ज्ञानवती इमि उचरहि , जो विरही है आह ।  
 विप्र देखि राजा उज्यौ , कौन्हौं आदर भाउ ॥  
 राजा वरन देखि कै कहैं । नख तिख विरह अनल तनु दहैं ॥  
 मूरति नयन रोइ जल धारै । कूंदन देह नेह बस मारै ॥  
 पूछहि राह सुनहु द्विज देवा । अज्ञा होइ करहुँ तो सेवा ॥  
 कवन देस जासौं पग धारै । दरसन देख्यौ भाग हमारे ॥  
 अपना नौठ कहौ बैरागी । किहि के नेह फिरहु सुख त्यागी ॥  
 किहि कारन भये विरह बस , दुख सँग फिरहु उदान ।  
 कहौ विया हिय पीर सम , विधि पुजहि सब आन ॥  
 राजा मो माघवनल नामा । उत्तम संग करहुं विद्यामा ॥  
 विद्या पढ़ेउं करन संगीता । समुद्रिक जातिक गुन गीता ॥  
 काव्य कोक आ गमहे बलानहुं । पिंगल पढ़ेउं सकल गुन जानहुं ॥  
 कर मृदग गति वीन बजाऊं । पट रस राग रागिनि सँग गाऊ ॥  
 नृत्य चतुर्गन वेद विनानी । केलि चातुरी उकति कहानी ॥  
 पशु भाषा औ जज्ञ तरन , धातु रसाइन जानु ।  
 रतन परख औ चातुरी , सकल अंग सग्यानु ॥  
 पुहुपावति नगरी मो ठाऊं । गोविंद चंद राज को नाऊ ॥  
 कर्म रेख सन विगहुं भयऊ । तिहिं मोहि देस निकारौ दयऊ ॥  
 तब मैं आन उदास मनु कौन्हा । कामावति नगरी पगु दोन्हा ॥  
 कामसैनि राजा तहँ आही । सुरनर सकल सराहैं तारी ॥  
 तिहि पुर कामकदला नारी । रूप राग विद्या दस चारी ॥  
 नैन लगे तिहि रूप , तजि गुनहुधि बल चातुरी ।  
 ज्यो दादुर बस रूप , निकसत परहिं जु विरह बस ॥  
 जा दिन मोर जन्म जग भयऊ । चित परि जहां ब्रह्म लिखि गयऊ ॥  
 मो त्रिय निरख न विसरहि काहू । चित कर ध्यान रहैं द्विग बाहू ॥  
 अंपन रही ते अंपन लागीं । जिहि निरखत सुख सँपति त्यागी ॥  
 अनुपम रूप विधाता दीन्हा । आँखिनि निरखि जीउ हरि लीन्हा ॥  
 जिय विनु सदा रहैं नहि आसा । हिरदै नाहिं जु कियौ निवासा ॥

भावंता के मिलन कौं, हा हा पंख न कीन ।  
 नैन तपत हैं दरस कौं, तन परसन को जीय ॥  
 पडित गुनी सकल बुधि श्यानी । देखि विप्र मुख रह्यो विनानी ॥  
 राजा देखि अचंभौ रहई । कुछुवक उतर माधव कहं देई ॥  
 हौं पडित तुम जगत गुसाई । सय गुन पूरन काम की नाहीं ॥  
 तुम देखत त्रिभुवन वन होई । तुम ही वस्य करहि जो कोई ॥  
 यह मन मानिक वस करन, वाति अत लै देहु ।  
 विरह बल सुख त्यागि कै, दुख विदोग सब लेहु ॥  
 सुनि राजा माधौनल कहई । यह मनु जौ अपनै वस रहई ॥  
 नैन बसीठ डीठ अति आहीं । आपहि मनु दै फिर अजुलाहौं ॥  
 निरखत नैन कंदला नारी । लाग्यो मनु दीन्हौं तनु डारी ॥  
 तिहि विहुरत सन अंडु न भावहि । छिन छिन प्रेम अधिक मन आवहि ॥  
 मिश्र वियोग दिरह दुख होई । जिहि दुख रहै जानै पै सोई ॥  
 विहुरत ऐस वियोगु, स्वास उर्दसी लै रहै ।  
 अब विधि करत सैजोगु, नातर प्राण विमुक्त है ॥  
 राजा कहै सुनहु गुनरासी । गनिका सौं नहि प्रीति गनासी ॥  
 राजा पूछहि विप्र सुजाना । कहियौ उदासी पुनि श्याना ॥  
 जब लागि माडो की नहि रीती । तब लौहीं गनिका सौं प्रीति ॥  
 गनिका प्रीति न सदा चलाई । धन सौं प्रीत बिन धन चलि जाई ॥  
 केलि फूल दासी कौ हेतु । रूप रंग अतरगति सेतु ॥  
 नैन अनन चैना अनत, अनतै चित्र निवास ।  
 जनि पातर परतीत करि, विस्वा विनु विस्वास ॥  
 बालहि विप्र सुनहु नर भारी । अँखिन बीच सुदेखेहु नारी ॥  
 जो जेहि राता सो तिहि भावहि । तेहि विनु सून छिटि जगु आवहि ॥  
 जो जाके मन माह बसाई । तलि वंदन चालहि गज पाई ॥  
 सस समुद्र सलिता जलु वहई । चातक स्वावि बूद कौं चहई ॥  
 तारा गगन भरे दुति मंदा । दुखित चकोर रहे विनु चंदा ॥  
 जो जिहि राता होइ, निशि वासर सो मन बसहि ।  
 ता विनु जियै न कोइ, विहुरत हर जल मीन ज्यौं ॥  
 जो चाहौ सो हम पर लेहू । तजौ विप्र गनिका सौं नेहू ॥  
 हौं तो तजौ नेह कर घरई । यह मन जौ अपनै वस होई ॥  
 गुन धन जीव कंदला लीन्हों । दुदं उदेग मोहि कर दीन्हों ॥  
 रक्त मांस कञ्जु रहथो न चीन्हों । आँसु सधिर हिदैं करि लीन्हा ॥  
 जब लागि जीवहुं मरि जियहुँ, सुर्ग नर्क विस्वाम ।  
 तब लागि रटौं विहंग ज्यौं, काम कंदला नाम ॥

सो मतिहीन वज्र तनु होई । सग्रह नेहु न जीवै कोई ॥  
 पूरव जन्म कोटि जौ करई । तब सो नैकु पथ पशु धरई ॥  
 मानुस पसु अतरु यह अहई । मानव सोइ नेहु जो बहई ॥  
 ब्रह्म ग्यान पावै पुनि सोई । जिहि तन तेज नेह कौ होई ॥  
 अध कूप वरि देहु , गुप्त प्रगट कोइ नहि लखहि ॥  
 जानै दीपक नेहु , तब सब देखैं रूप गुन ॥  
 माधौ वचन सुनै जो कोई । सकल सभा को आवै रोई ॥  
 जो रे सुनै सो देखन धावै । जो देखै तेहि विरह सतावै ॥  
 नारि बैठहीं है इक सगा । करै बात तब दहैं अनगा ॥  
 नगर एक आयौ बैरागी । अति सुदर रस जान सुखत्यागी ॥  
 प्रेम नैम करि रैन दिन , अग चढायौ राखि ।  
 सुनि धुनि सोई सीत कौं , दुदं विरह अस भाव ॥  
 एक समै विक्रम नर नाहा । गहि लीनी माधव नल बाहा ॥  
 विप्र सग लै धाम सिधारा । दीप मसाल मनिगन उजियारा ॥  
 मंदिर जोति मानौ कविलासा । चदन मिली अनूपम बासा ॥  
 कनक भूमि पाटवर बासी । कुकुम छिरकत केसरिरासी ॥  
 तिहि मंदिर सिंहासन छाजा । तिहि पर बैठि विप्र अरु राजा ॥  
 कवित नाद गुन चातुरी , अर्थ ज्ञान सिंगार ।  
 जो राजा मुखउच्चरहि , सो माधौ करै विचार ॥  
 जो बूझै विद्या नर नाहा । सो सपूरन माधौ माहा ॥  
 तब राजा उठि चरन पखारे । अहो विप्र तुम ईस हमारे ॥  
 मोंगहु मन इच्छा जो होई । अर्थ द्रव्य हम पुजवहि सोई ॥  
 मागो यहई बात सुनि लीजै । मों कह' कामकदला दीजै ॥  
 जिहि कारन हम तन मन खोदव । रक्त धार निसि वासर रोयव ॥  
 वेगि देहु करतार , विव अंखियन पुनि पख बलु ।  
 उड़ि देखौं इक बार , भावता के दरस कौ ॥  
 राजा कहै सुनु विप्र गुसाई । दिन दस रहौ नलन की नाहीं ॥  
 दल पैदल सैन सँग लेऊ । लै तुहि कामकदला देऊ ॥  
 बर बर बूझि जीति मुह मागैं । राजा बाधि दैऊ तुहि आग ॥  
 दिवस दिवस राजा वौरावहि । मों गि विप्र इहिढा चित लावहि ॥  
 यह मन दियौ प्रेम चित मोहा । रह्यो लागि चुबक जनु लोहा ॥  
 मोहन मूरति चित्र लखि , चित पर धरी सुधारि ।  
 सो पलु भूलै महि कहू , जो भीतैं जुग चारि ॥  
 विप्र सग विक्रम नल भारी । गयौ सग लै भूमि सेवारी ॥  
 प्रभव गुनी आये बहुभारी । राजा करहि विप्र मनुहारी ॥

ताल पखावज बोलि मँगाये । गाइन गुनी कपरिया आये ॥  
 कमल बदन मृग नैन सुहाई । पातुर बीच काळिके आई ॥  
 मध्य छीन औ भूखन सोहै । नैन निकट करि सब मन मोहै ॥

एक भूमि वैहारिये , दामिनि ज्यों छिपि जाइ ।

पुष्प लता जिमि पायन , धुनि अति चञ्चल फहराइ ॥

नर विक्रम औ विप्र उदामा । देखहु नैन करहु मन हामा ॥  
 करन कपोल विपै धरि हाथा । नैना भरि नीचै करिमाथा ॥  
 बोला राउ नैन कत भरहु । देखौ नाचर हस जिय करहु ॥  
 मै माग्यौ कित सावक साजू । देखौ विप्र नृत्य तुम आजू ॥  
 माषौनल आगु करि लीन्हा । जिहि जहँ नेह पसारा कीन्हा ॥

धनि विक्रम सक बधिया , पर दुख हरन नरेस ।

विप्र काज कौ उठि चल्यौ , छोंडि धाम धन देन ॥



## कंदलाप्रेम-परीक्षा खंड

जोजन दस नगरी जब रही । राजा सीव आनि पुनि गही ॥  
 राजा मत्र एक जिय धरै ! इक रन बीच सैन दुह करै ॥  
 सँग खवास राजा असवारा । आयो नम्र लगी नहि बारा ॥  
 जाके नम्र विप्र हैं दुखी । सो त्रिय देखहु सुखी कि दुखी ॥

राजा पूछै नम्र मैं , कामकदला नाम ।  
 कहियत गुनी विचित्र है , सो किहि दिसि ताको धाम ॥  
 मंदिर पूछि सो लियौ नरेसा । उत्तर पौरि महँ क्रियौ प्रवेसा ॥  
 भीतर मंदिर पौरिया जाई । कामकदला बात जनाई ॥  
 उत्तम पुरिष पौरि इक आया । राजबस कोह रूप दिखावा ॥  
 सुनि कै दासी पौरहि आई । राह मंदिर लै गई लिवाई ॥  
 चित्रसार राजा वैसारा । बहुत दीप दीपक उजियारा ॥

कामकदला बिरहवसि , वस्तर गात मलीन ।  
 मुख माधौ माधौ रटै , होइ सो छिन छिन छीन ॥  
 नृत्य गीत विद्या चतुराह । गई विसरि गुन की अतुराई ॥  
 बदन मलीन पीत रँग भयऊ । रक्त मोंस सखि सब गयऊ ॥  
 राजा बोलहि मीठे त्रैना । बिरहिनि नारि न जोरहि नैना ॥  
 राजा बोलहि उत्तर नहि देई । वरुनी छूटि नैन भरि लेई ॥

गनिका गृध सौं काज , ऊँच नीच चीन्हैं नहीं ।  
 बोलहि वचन जै लाज , बस करि राखैं पर पुरिष ॥  
 ऐसे वचन ना कहौं भुवाला । बिरह बसी जनु खाई काला ॥  
 मुनु विप्रहिं दषिन करि दीन्हा । देषत ताहि नैन हरि लीन्हा ॥  
 देखौं ताहि जौरे मन माई । तिहिं देखत दौड नैन सिराई ॥  
 मन धन जीउ विप्र लै गयऊ । तिहि बिनु सून द्रिस्टि जग भयऊ ॥  
 सो प्रीतम दै गयौ ठगौरी । तजि गुन रूप भई हौं वौरी ॥

जेहि मारग प्रीतम गये , नैन गये तेहि मग्ग ।  
 दै दूनौ हुखु विरकौ , करि सूनौ सब जग्ग ॥  
 तब बल पग परसै वरनारी । रोसवत कीन्हौं सुख वारी ॥  
 कहे कदला मुनु नृप भारी । जक्त पूज्य तुहि लाज हमारी ॥  
 ज्यो हिय मोंभ गुप्त जिउ रहई । त्यो द्विज रहै सदा मुख दाई ॥  
 दुज मन माहि निवास जो कीन्हा । बोलनि तजि रसना हरि लीन्हा ॥

आलम प्रान पयान अब , करत हिए अन आस ।

निसि वासर द्रग तारका , प्रीतम कियो निवास ॥

राजा बूझि देखु इमि वाता । यह बेहि राती वह एहि राता ॥

इहि के विरह विप्र दुख लीना । विप्र के विरह त्रिया तन छीना ॥

दुहुं की प्रीत रही दुहु छाई । दोऊ मन तन रहे भुलाई ॥

इन में अधिक विरह कौ टीका । जिमि आखिनि कौ मारग नीका ॥

ज्यौं सरवर मह कमल रहाई । विछुरत नौद रहे कुम्हिलाई ॥

मालति लुवधी अलिरसहि , अलि मालति मकरद ।

विछुरन विरहा सूल सम , दही विरह के द्वद ॥

नर के प्रान नारि के सगहि । नारि के प्रान पुरिष के सगहि ॥

राजा निरखि रीझि मन माहीं । इन महे प्रीति कपट कछु नाहीं ॥

इहि जिय प्रीति रीति कौ गहई । त्रिया विरह लागि अति दुख दहई ॥

चाहौं नैन नौद नहि आवहि । दुहु तन अन्न पान नहि खावहि ॥

ब्रह्म लोक अमोरस जानहु । गुन गधर्वहि प्रीति बखानहु ॥

आलम ऐसी प्रीत , परतन मन दीजे धाई ।

गुप्त प्रगट अखिया मिलौं , दिथौ कपट पट जाइ ॥

राजा निरखि वियोगिनि नारी । पूछहि गुनजन सखी हँकारी ॥

किहि लागि इहि की सुधि बुधि गई । किहि के हेत नेह बस भई ॥

कहै सखी सब कामिनि पीरा । सुनत नैन भरि आवहि नीरा ॥

विप्र एक माघौनल नामा । तिहि के विरह यहि यह कामा ॥

सो प्रीतम दै गयउ ठगौरी । तन मन लाइ प्रेम की ठौरी ॥

यह पपीह पिउ पिउ करै , छिनु अचेत छिनु चेत ।

औरन मुख विरहा अनल , भयौ बरन तन सेत ॥

रूपवंत अति काम के भेसा । सो दुज छाडि गयौ परदेसा ॥

कैधो चहइ इंदु ठगि गयऊ । कैधो बरस मदन कौ भयऊ ॥

मोहन रूप विप्र वह आवा । नैन लगाइ तिहि मन बौरावा ॥

ताकि चाह कोइ नहि कहई । तिहि विनु त्रिया विरह बस भई ॥

अन्न नीर एहि नौदन आवहि । दिन उदेग निसि रोइ गवावहि ॥

मिन्न वियोगिनि नारि , धारावरि सहि नैन जल ।

रही रोइ पचि हारि , तन तन दुद उदेग करि ॥

कपट बचन राजा उच्चरई । दुहुं की प्रीति रीझि कै रहई ॥

मैं देख्यौ माघौनल जोगी । पुर उजैन रह त्रिया वियोगी ॥

नारि वियोगु ताहि दुख भयऊ । विरह के सूल विप्र मरि गयऊ ॥

ऐसे बचन जब राज सुनाए । त्रिया बचन कहँ जम उठि जाए ॥

सुनत कदला विस भरि गयऊ । धरिन पछार खाइ मरि गयऊ ॥

आलम मीत वियोग को , सबद परथौ जब कान ।  
 लोभ न कीनौ स्वास कौ , गए आहि सँग प्रान ॥  
 सुनत पिंगला जैसो कीन्हा । ऐसे जोउ कदला दीन्हां ॥  
 सखी आनि करि नारी रिखाई । मानहु काल बासुकी खाई ॥  
 बैठे दसन जीभ भइकारी । किलकै नहि छुटि गइ जब नारी ॥  
 रोवै सखो छोरि कै केसा । राजा जिय मह करहि अँदेसा ॥  
 जिहि लागि विप्र इतो दुख लीना । सो त्रिय वचन कहत जिय दीना ॥  
 अति वियोग मालति सुनत, सूखे पल्लव मूल ।  
 दुखित साल भये कलित बस, कलह सकत त्रिय सुल ॥  
 गये प्रान छिन में मरि गई । राजा के मन चिंता भई ॥  
 सीस धुनै राजा पछिताई । कइ अपराध कियो मैं आई ॥  
 प्रथमै तिरिया बध मैं कीन्हा । घोलि हलाहल देखत दीन्हा ॥  
 जो जनतेउँ त्रिय देइ पराना । कत हौँ वचन सुनाएउँ काना ॥  
 उत्तर कवनु विप्र कौँ देऊँ । वह मरि जाइ दोष द्रौ लेऊँ ॥  
 गात सरोवर पंच वग, प्रान हस उहिं वारि ।  
 पिपुन वचन किये व्याधि विधि, दीनौ सकल विडारि ॥  
 राजा कहे सखी सुनु नैना । विरह दुखित भइ मूँदे नैना ॥  
 विरह तेज मुछित तन नारी । लै आयउ गर रुधि हकारी ॥  
 यह के प्रान स्वर्ग नहि गयऊ । पच भूत आत्मा मूछित भयऊ ॥  
 यह त्रिय करे काल नहिं आयउ । आहि के सग प्रान उठि धायउ ॥  
 जा तन मैं विरहा नल रहई । सो तनु आइ काछु नहिं दहई ॥  
 गये प्रान तन फिरयो न जिहि, इहा गगन जिमि दूरि ।  
 हौँ पारस जिहि कर छुवौँ , सीतल जीवन मूरि ॥  
 इहि विधि विक्रम भयो उदासा । नारि उठि चलयौ निरासा ॥  
 कर मीजे पछिताइ नरेसा । नीच माथ कै करै अदेसा ॥  
 ग्रंथ गँवाइ न्यौँ चलै छुवारी । तैसे चलयौ राजा मनु भारी ॥  
 जाम तीन जामिन के भयऊ । राजा उत्तरि कटक मैं गयऊ ॥  
 जहँ तँबुआ साजै सै वारा । तिहिं तँबुआ राजा पशुघारा ॥  
 राजा नैननि नींद नहि , अन्न न भावहि पान ।  
 मन महँ भीतय जुरत ही, सोचत भयो विहान ॥

## माधव-प्रेमपरीक्षा

भयौ प्रात वैश्व्यौ दरवारा । राजा माघौनलहि हँ कारा ॥  
सभा मँभ नल बैठे आई । राजा विप्रहि बात सुनाई ॥  
जत्र लागि विप्र कथा यह भई । सो त्रिय विरह ताप मरि गई ॥  
सुनि बात माघौनल काना । सुम पर दिये कदला प्राना ॥  
सुनत बात दिज विस भरि गयऊ । धरनि पछार खाइ मरि गयऊ ॥  
देव दाधी मालति सुनत, अति दाश्व्यौ तिहि ठई ।  
अलि मालति विनु नहि जिण, अलि विनु मालति नाहि ॥  
राजा वचन सुनत दिज काना । इहि के सग दिये सुहि प्राना ॥  
माघौ सकल सभा उठि घाई । स्वास नासिका मूदै जाई ॥  
पडित गुनी वैद उठि घाए । जोगी मत्र गारहू आए ॥  
ओषधि मूर मत्र करि थाके । फरे न एक जियहि गुन ताके ॥  
सीतल गात विप्र कौ भयऊ । मन धन जीउ स्वास सग गयऊ ॥  
आलम ऐसी प्रीति कर, ज्यौ वारिज अर वारि ।  
वह सखे वह ना रहै, रहै मूल दल जारि ॥



## विक्रमचितारोहन खंड

करि उपचार लोग सब हारे । राजहि देखि आँसु भरि डारे ॥  
 प्रथमहि तिरिया वध मैं कीन्हा । पुनहि विप्रहि जानत विष दीन्हा ॥  
 नर मारत कोइ मोखु न पावै । मरुन वध नर्क उठि धावै ॥  
 दोनों वध कीने मैं आई । चिहुरधि अग्नि जरौ मैं जाई ॥  
 मैं विस्वास गुप्त जिय धारा । छलु करि जीउ दोउ कर हारा ॥  
 प्रेम नैम निरखत रहत, यह नर नाहिन दोष ।  
 भगत करत जिहि प्रीतमहि, तिहि नर नाहिन मोष ॥  
 सकल कटक मै परथौ हिरोर । छूटैं फिरैं हाँथि औ घोरा ॥  
 रिध्या नाजु कोइ नहिं खाई । सैना उठी सकल अकुलाई ॥  
 जिहि कै कारन हतनौ कीन्हो । तिहि द्विज वचन सुनत जिउ दीन्हो ॥  
 उठि राजा विक्रम बल वीरा । वैठ्यौ जाह नदी के तीरा ॥  
 मलयागिरि के काठ उठाए । चदन अगार बहुत लै आए ॥  
 कियौ हेम सकल्प लै राजा, कर लै वारि ।  
 धीउ कलस जहँ डारि कै, साजी चिता संवारि ॥  
 लोग वैठि राजा समुभावै । नेगी नेह लोग सब आवै ॥  
 कहै लोग राजा तुम जरहू । योरी बात लागि तुम मरहू ॥  
 राजा येतौ दुख जिनि करही । कोतिक नारि पुरुष जो मरही ॥  
 उठि कै चलहु कटक कौ जाही । नातर जरै सैना सग याही ॥  
 पर भर लोग कटक मै मरई । उठि किन चलहु साति जब परही ॥  
 जग समुद्र सुख दुख करम, नातिहि मेटन पार ।  
 राज मरन व्यापहि सकल, जिहिं पृथिवी को भार ।  
 राजा कहै सुनहु सब कोई । जिहि विधि हानि धर्म की होई ॥  
 इहि जग मोह मरन सब आये । राजा रंक काल सब खाये ॥  
 जाके सब जग अपजस करई । जीवत मुयौ पाछै का मरई ॥  
 शिक्षा दई सब ही गहि रहे । आप आप को चित गहि रहै ॥  
 उठि राजा कीन्है अस्नाना । धोती पहिरि दिये बहु दाना ॥  
 गगा जल अस्नान करि, द्वादस तिलक बनाइ ।  
 नमस्कार करि भानु को, वैठि चिता मै जाइ ॥

## बैताल खंड

स्वर्ग लोक महुँ बात चलाई । जीवत जरत है विक्रमराई ॥  
 देवी देवता सब उठि धाये । चढ़ि विवान सब देखन आये ॥  
 गन गधर्व किन्नर सब गुनी । तब बैताल बात यह सुनी ॥  
 जाकों मित्र वीर वेताला । सुनत वचन आयौ ततकाला ॥  
 राजा अग्नि दैन कौ चहई । तिहि छिन आइ माहँ पुनि गहई ॥  
 तू सकवधी चकवै, सिंह सूरपति सेस ।

किहि कारन तू जरत है, पर दुख हरन नरेस ॥

राजा कहै सुनहु बैताला । मैं बड पाप आय कौ घाला ॥  
 पहिले तिरिया वध मैं कीन्हा । पुनि मैं जीउ विप्र को लीन्हा ॥  
 जिहि कारन पावक मैं जरहुँ । जम के त्रास नकं तैं डरहु ॥  
 कह बैताल राजा जनि जरहु । ऐसी बात लागि जनि मरहु ॥  
 खिन मै अमृत ल्याऊँ जाही । विप्र नारि तुम देहु जियाही ॥  
 आलाम उंचम सोइ, अपजस तैंकर का करहि ।

रहत न लज्जा होइ, आपु बुराई कान सुनि ॥

कहि बैताल सुनहुँ वलवीरा । मैं लाऊँ जीवन कौ नीरा ॥  
 वेगहि गयो वीर वेताला । सुघाकुंड तहँ हेते ब्याला ॥  
 परकत नयन बिलब न लावा । तुरत वीर अमृत लै आवा ॥  
 पहिले लै माधौ कौ दीन्हा । तिहि यह प्रेम पसारा कीन्हा ॥  
 सुधा पियत माधौनल जागा । आये प्रात सुंन भ्रम जागा ॥  
 नैन उघरि स्वासा चली, कियो प्रान विन्नाम ।

‘कामकदला कदला, लेत उठ्यो मुख नाम ॥

उठ्यो विप्र राजा सुखु पावा । तिहि छिन उतरि चिता स्वयँ आवा ॥  
 तब बैताल के चरन पखारे । प्रान जात तुम रखे हमारे ॥  
 कियो अनद बाजा बहु बाजहि । अर्ध खर्व अति द्रव्य लुटावहि ॥  
 सुनि सुख सकल कलक महुँ होई । नर नारी की चिता जाई ॥  
 राज कहै हौ तब सुख पाऊँ । लै अमृत कदला जियाऊँ ॥  
 भूसुर दीन असीस, जुग जुग जीउ नरेस बहु ।  
 लोभ न करथौ सरीर, प्रेम काल यौ चाहिये ॥

## राजा-वैद खंड

कनक कलस अमृत भरि लीन्हा । राजा भेप वैद को कीन्हा ॥  
 काम कदला के घर आवा । पौरि दार सों बात जनावा ॥  
 सुनि कै वैदु पौरिया जाई । सखियन आगें बात जनाई ॥  
 सुनि कै वैदु सखी इक आई । मदिर में लै गई बुलाई ॥  
 सुदर वैद सुमूरति कामा । यह की मूरि जियहि यह वामा ॥  
 पडित मीत विदेसिया, सुदर गुनी सु आहि ।  
 सनसुख आवत देखि कै, सखी रही सब चाहि ॥  
 सखी बहुत कै आदर कीन्हा । पातवर वैठन को दीन्हा ॥  
 जहा कदला मृतक पराई । वैदहि जाह से नारि गहाई ॥  
 सीतल गात देखि कै नारी । तब कछु वैद करहि उपचारी ॥  
 बैठि सखी सों बोलहि गाता । नाहिन स्वास भूँठि सनिपाता ॥  
 नहिन रोग वेदन जिहि हरई । भित्तक परा वैद कह करई ॥  
 स्वर्ग गये तेऊ फिरैं, प्रान जिये जम जाल ।  
 ताकौ मत्र न मूरि कछु, इसी विरह कै ब्याल ॥  
 सुनहु वैद जो नारि जियावहु । मुख मागौ सोई तुम पावहु ॥  
 मृतक पर्यौ जौ वैद जियावहि । से आपन को ब्रह्म कहावहि ॥  
 वैद रोग को औषध करई । ताकौ कहा अचर्ज नर करई ॥  
 वचन निरास जब वैद सुनाये । सब के नैन नीर भरि आये ॥  
 साचहु मरी कदला नारी । परी खेह महँ खाह पछारी ॥  
 गुन सुदरता चातुरी, जब लागि तब लागि प्रान ।  
 स्वास गहैं इहि अग तें, सब कोइ कहै समान ॥  
 निरखि वैद जिय आस कराई । जिन कोउ सखी और मरिजाई ॥  
 कहै वैद जिनि तोरौ वारा । देखौं कछु करौं उपचारा ॥  
 सकल सखिनु कौ धीरखु दीन्हा । अमत वैद हाथ करि लीन्हा ॥  
 जहा हती कदला नारी । सीन्धौ अमृत वदन उधारी ॥  
 अमृत धूद जब मुख पर्यौ, आयौ चलि घर स्वास ।  
 बोली नारी कदला, भई सखी मन आस ॥  
 प्रगटे प्रान कदला जागी । उधरि नैन चित्त सब भागी ॥  
 लेत उठी मुख माघौ नामा । पचभूत मै किय विश्रामा ॥  
 कहै सखिन सौ सखी सुहाई । केती बार नोद मुहि आई ॥  
 तब यह उतरु दीन्हौं वाला । तू तौ मुई विरह के काला ॥  
 यह विषहर धन्वतरि आयौ । मूर मत्र पडिं तोहि जियायौ ॥

यह हनुमंत महावली, पर स्वारथ चलयो दूरि ।

लक्ष्मण को सकट परबौ, आनि सजीवन मूरि ॥

जब सुख काम कदला भई । सबरी सखिनि की चिता गई ॥  
तब उठि वैद के चरन परवारे । गये प्रान तुम दये हमार ॥  
कहे वैद हौं दान न लेऊँ । मागै और सुमागै देऊँ ॥  
जौ जिय लोभ तौ गुनी न कहिये । गुन सकर वैगुन तै रहिये ॥

जौ जिय लोभ तौ गुन कहा, जौ गुन लोभ तौ काइ ।

गुन बिन रूपहि ना गुनौ, गुन बिन पुरिष अपाइ ॥

कहे कदला वैद सुनु मोही । वैद रूप नहि देखौं तोही ॥  
कै तुम देउ रूप चलि आये । मुख अमृत दै मोहि जिवाये ॥  
मन बच बोलहु अपनी वाता । कहिये सौँचु सप्त मै साता ॥  
हौं सकबधी विक्रम राजा । पर की पीर हरहुँ करि काजा ॥  
नगर उजैन राज तहँ करऊँ । दुखिया देखि सकल दुख हरऊँ ॥  
माधौनल द्विज कारनै, चलि आयौ इहि देस ।  
तुम तन मितक देखि कै, कियौ वैद कर वेस ॥

तोहिं मरन जब माधव सुनिऊँ । वह मरि गयउ सीस मै धुनिऊँ ॥  
मैं छल रूप दाइ सिर लीन्हा । तब उपचार जरन का कीन्हा ॥  
जरतैं सुनि कै वीर वेताला । से अमृत लायउ ततकाला ॥  
प्रथमहि माधौनलहि जियायौ । तिहि पाछेँ हम तुम घर आयौ ॥  
अब सब साजि सैनि लै अऊँ । युद्ध जीति तोहि विप्र मिलाऊँ ॥

उपकारन दुख हरन जे, अगीकरन अमार ।

सुरपुर तिहि कीरति करे, जग मैं जस विस्तार ॥

ऐसे बचन जब राजा कहई । उठि चरन कदला गहई ॥  
दया निधान तुम रूप सुरारी । राजनि के राजा बुधि भारी ॥  
यह ससार समुद्र अथाई । तहँ तुम तारन तरन गुसाईं ॥  
विरह धाव जे वीषधि करई । ते नर दुहुँ लोक जसु लहई ॥  
बूडत नाव जे पार लगावहि । ते नर दुहुँ लोक जस पावहि ॥  
विरला नर पडित गुनी, विरला बूझन हार ।

दुख खडन विरला पुरिष, ते उत्तम संसार ॥

ऐसे चरित तुमहिं पर आवहि । यह बुधि लोक वैद कहँ पावहिं ॥  
पर उपकार करहु बलवीरा । बूडत नाव लगावहु तीरा ॥  
कीरति कहिय न जाइ तुम्हारी । धर्म कर्म वलि वीर सुरारी ॥  
तुम समर्थ करि हौ सब काजा । हम ससार नरनि के राजा ॥

जो बुधिवत महावली, नरसिर जे करतार ।

पर उपकार नर दुख हरन, जे अगवत पर भार ॥

## कंदला-संदेस खंड

पायन लागौं सुनहु नरेसा । माधौनल सो कहउ संदेसा ॥  
 गये प्रान लैगये उपाऊ । अब के गये न बहुरै आऊ ॥  
 तुम सन भई विपति की पीरा । जोगी मेष न कीन्हौं फेरा ॥  
 अब विधि मोहि आनि दिखरावो । निरखि विरह की पीर बुझावो ॥  
 पख होइ जो नैनन माहीं । छिन एक देखन को उड़ि जाहीं ॥  
 दृग पुतरिन की तारिका , निरखि मूरती मैंन ।

तव गुन माला कर लियै , जपौं सु वासर रैन ॥

बिति की बात कहौ सब मेरी । नृपति कह कहहुं विनती कर जोरी ॥  
 निसि दिन वहाँ विरह दव देवा । हीयो तरकत सुनि जिय नेहा ॥  
 करि भर सेज नीद भरि होई । रजनी सकल सिराऊ रोई ॥  
 निसि दिन अग्नि गात ज्यों जरई । रोम रोम वेदनि सचरई ॥  
 सोचति रहौं निसि वासर जागी । नैम रहै तव मारग लागी ॥  
 कर कपोल औ करन ये , सदा रहत इक सग ।

रोइ रकत ये नयन मग , सेत बरन भयो अग ॥

रितु बसत मोहि कोकिल दहई । मलय समीर आगि जिमि बहई ॥  
 पावस रितु बरसै जब मेहा । भुक्ति मरौं हौं सुमिरि सनेहा ॥  
 चातक मोदनि धरिय सताई । दामिनि दमकि प्रान लै जाई ॥  
 दूर चद्र सीतल सब कहई । मिलि समीर आगि जिमि बहई ॥  
 जे जे सीतल सुखद सहायक । ते सब मोहि भये दुख दायक ॥  
 चदन चद कँवलन कली , पिक चातक जु समीर ।

ये सब वैरी मोहि तन , हौं क्यों राखौं धीर ॥

विरह बनावल सीतल रहई । उठत अग्नि नख सिख तन दहई ॥  
 मंजन अजन कौन सिंगारा । सुनत न भावै नाद विस्तारा ॥  
 माधौनल सो कहौं बुझाई । जो आपनी विपत्ति जनाई ॥  
 विनवति हौं सकबंधी राई । विरह द्विष्टि सौं लेउ बुझाई ॥  
 सो उपकार करौ जिय माई । दमवती ज्यों नलहि मिलाई ॥

मालति अस सपति मिलै , पूरन ससिहि चकोर ।

चकवी कौ चकवा मिलै , कँवल विगसि भये भोर ॥

जिया विरह दुख राजा सुनिहू । देखत सुनत सीस कर धुनिहू ॥  
 काम कदलहि धीरज दीन्हा । राजा जीव कटक पर कीन्हा ॥  
 सखी सकल मिलि देई असीसा । चिरजीव राजा शुग चीसा ॥

दुरिय सिगारि भये असवारा । आये कटक न लागी वारा ॥  
सिधासन पर बैठे जाई । लोक सभा सब लई जुलाई ॥

विरह कथा राजा कहै , निरखत बुधिजन लोग ।

सुनत सकल सब थकिन मे, प्रगट्यो विरह वियोग ॥

राजा कहै सुनौ सब लोई । यह जग ऐमे और न होई ॥

इहि की प्रीति इही जग जानी । जग में जुग जुग चलै कहानी ॥

कलि में अमर भयो यह नेहा । विरह की अग्नि देहें जिय देहा ॥

पुनि राजा मंत्री सौं कहई । सो कळु कहौं कथा निरवहई ॥

काम सैनि पहेँ पठ्यौ वसीठा । बुधिजन चतुर सभा महा डीठा ॥

उत्तम वंस स्वरूप , गुनन बुद्धि परवीन ।

वरि धरि वंजन चतुर सो , पठ्यौ दै कर पान ॥



## दूत-खंड

येहिलैं राजा पात जनाई । कामकंदला मांगि पठाई ॥

जो कछु मांगै दर्वि सु देऊ । नातर जुद्ध जीति कर लेऊ ॥

रघुवसी इकु श्री पति नाऊ । पठ्यौ काम सैनि के ठाऊं ॥

चतुर दूत श्री पति चलि गयऊ । राजा द्वार सु ठाढ़ो भयऊ ॥

दूत सुनत आगे भएँ, लेउ वेगि हँकारि ।

आदर सो तिहि लैन को, उठि धाये जन चारि ॥

आयौ सभा वैठि तिहि ठाऊं । राजा कीन्हौ आदर भाऊ ॥

राजा दूतहि मुखै लगायौ । कहौ बचन तुम कौन पढायौ ॥

बोल्ह्यो दूत सुनौ बलवीरा । हौं पठ्यौ नृप विक्रम धीरा ॥

सकवधी बल विक्रम राई । सो तुम देस पहुँच्यौ आई ॥

माँगत देउ कंदलानारी । विप्र काज आयौ बुधि भोरी ॥

माघौनल के कारनै, नृप आयौ इहि देस ।

कामकंदला विप्र को, मांगै देउ नरेस ॥

काम सैनि राजा तव कहई । रिस करि रूखे बचन न सहई ॥

निडुर बचन कस कहै बसीठा । बोलैं और सभा की दीठा ॥

जो तुम कामकंदला देऊं । सब दानिन मैं अपजस लेऊं ॥

देस देस के कहैं नरेसा । दीन्हौ दंड बचायौ देसा ॥

जब लग स्वास जीउ भरि लेउं । तब लग दंड न मांगे देउ ॥

बल करि आयौ राज अब, सूत्रीर सँग लाइ ।

मद गयंद दल साजि कै, उठि रन मंडौ जाइ ॥

कहै बसीठ राजा सुनि लीजै । येते लघु विग्रह नहि कीजै ॥

देस गुरु राजा चलि आयौ । जाको सीस नरेस नवायौ ॥

आयौ विक्रमचंद नरेसा । जा कहं कपै सुपति सेसा ॥

हय दल गज दल गवत न, आवै ही औसरः विचारि ॥

दुर्जन हूँसि उठि मिलह, बोलहि रोस निवारि ॥

रानी कहै बसीठ सुनु वैना । भौंह चढ़ाइ रोस करि नैना ॥

काम सैनि नै पठ्यौ नेगी । कहौ राइ सौ आवै वेगी ॥

लै संदेस बसीठ उठि चलई । गयौ जहा नृप विक्रम रहई ॥

कहै बसीठ मांगे नहि देई । क्रोधवत मनु लै मनुलेई ॥

कहै बसीठ राजा सुनहु, उठि रन मंडहु जाई ।

सिंह रूप गाजैं सुभट, वे मृग चलैं पराइ ॥

## युद्ध-खंड

सुनि राजा तब बोलहि वैना । गयद पैदल साजौ सैना ॥  
 साजौ मेघवरन गज कारे । चुवहि गयद धुमै मतवारे ॥  
 पर्वत से आगै दै चलिऊ । धरनी धँसी दिक्पति सब हलेऊ ॥  
 धूमर धूलि आन रथ जोती । छूटे सिह रूप जिव होती ॥  
 जवर जग गोला जब भारे । अस्तघात साचै सौ ठारे ॥

हयदल पयदल गज दल , जोतिहि जोति सुरग ।

सुरवीर वानै वनै , चली चूम चतुरग ।

दुहु दिसि ते उमगे असवारा । लोह लपेटै अगम अपारा ॥  
 कूदहिं बाजी नाना रगा । नाचै यो ज्यो डह डहहिं कुरगा ॥  
 उत्तिम जाति पछिम के ताजी । तिहि पर चढे समट सब साजी ॥  
 बाधे विष करि धनुक कर लीन्है । लौकहि कूटि सीस पर लीन्है ॥  
 सोंग सेल फरसा चमकारा । चमकत लोह अगिनि की भारा ॥

रन मंडन खंडन दघन , आनदै सब सुर ।

चलेति चचल चाउ करी , डरै ठकाहर क्रूर ॥

मेष सबद जिमि बजै निसाना । उठै अकूट अंबर बहराना ॥  
 भरे भाभ्र धुनि सुनै अडारू । सुर समूह अर बाजहिं मारू ॥  
 मारू सबद सुनिहिं जिमि बीरा । पुलकत रोम रोम अर घीरा ॥  
 इक दिसि तैं रथ जोरि चलाये । इक दिसि गज ढाढ़े सत भाये ॥  
 बीचहि लैकर पैदल भारा । तिहिं पाछे आवै असवारा ॥

सेल सोध कर रंग भिनु , पाये भडन जूद ।

बहुरि सुभट जे सुभट सौं , सिंह रूप है कूद ॥

विच विक्रम हस्ती असवारा । रन अभरन सब पहिरै सारा ॥  
 जामन चलत सेत सिर दती । स्याम घटा मानहु बगपती ॥  
 घटक धुनि दिगपति थरहरइ । कर तजारत इद्रासन डरई ॥  
 चहुं दिसि वीर परवरिया चले । दोनौं जूझ इहुं विधि भले ॥  
 मुड कूट सुरन के सीनै । गज सिपाह आंगे करि लीने ॥  
 सिंहनि ऐसो पूत जनि , पर रन मडहिं जाइ ।

कुम पिदारन गज दलन , अब रन मडै जाइ ॥

जुद्ध राग प्रगटी सुनि काना । कामावति पुर सुन्यौ निसाना ॥  
 परी रोह नगरी उकताइ । प्रजा पवन सब चले पराइ ॥  
 कामसैनि राजा तब बोला । चहुं दिसि देहु जुद्ध कह दोला ॥



ततखन सूर समिति सब आये । करि सकूट चहुँ दिसि धाये ॥  
 अब राजा आग्या जौ देई । सब रन जाइ आगे है लेई ॥  
 जौ जगपतिहुँ को सुनिय , मृग गन पुटि सब जाई ।  
 सो हरजन की धाक सुनि , रहे न मंदिर माहि ॥  
 यके साज साजै रजपूता । दुर्जन को लागै है भूता ॥  
 तूं वर चढ़े बाधि कै वानै । मिलि औ चले राव सब रानै ॥  
 काम सैनि राजा दल साजा । चले लरन मारु जब बाजा ॥  
 चले बजाइ राव औ बानी । चढ़ी धौरहर देखति रानी ॥  
 अचरज सूरमा देखि कै , वली अनद करेइ ।  
 दुहुँ बिधि मांग सिदुर भरि , हाथ नारियर लेइ ॥  
 इत तैं कामसैनि चढ़ि गयौ । राजा बिक्रम सनमुख भयौ ॥  
 एक खेत जब दो दल भये । एक एक सों सनमुख भये ॥  
 हिसहिं तुरग चिकरै हाथी । सोभै हक हंक मिलि साथी ॥  
 दुहु दिसि युद्ध राज भल बाजा । कायर डरै सूरमा गाजा ॥  
 बान बाधिजु बिरद सुगावहिं । सुनि सुनि सुभट उमगि करि आवहिं ॥  
 सुनि मारु कौ रागु , भुज फरकै रन वीर के ।  
 युद्ध जाइ मन लाइ , 'मारु' 'मारु' मुख उचरै ॥  
 अग्नि बान छुटै दुहु ओरा । चकित बिलुकित हाथी घोड़ा ॥  
 धनुषहि धनुष वीर जो नाहा । अटकै पच बान सों काहा ॥  
 चलै चक्र जो लै हथि नाला । पसरहि धूम होइ अंधकाला ॥  
 छिन इक धनुष बान सौ लरई । हमकत बाहिर पग मेह परई ॥  
 भीर बान तैं सहेँ न पारै । दुहुँ दिसि तुरी भीरन को मारै ॥  
 सूर गरजि काहर डरहि , सुनि गज सिंह सदूर ।  
 षड्ग खोल तैं जानियै , कोइ कायर कोइ सूर ॥  
 रावत पर रावत चढ़ि धाये । धानष पर धानष चढ़ि आये ॥  
 पाइक सौं पाइक भये जोरा । लरत वार यौ सुष नहिं मोरा ॥  
 गज सौं गज कीन्हे चौ दता । चिकरै कुंजर मैमत मता ॥  
 बाजै लोह उटै टकारा । तापर फिरै खड्ग की धारा ॥  
 फूटै फूट मुड कटि जाहीं । बाजै सार सार छन जाहीं ॥  
 सेज खड्ग नेजै सहेँ , खाय खड्ग की मार ।  
 सूर वीर पैते गनौ , सहेँ लोह की मार ॥  
 रावत सौं रावत जो भिरइ । एकहि मारि एक पग धरई ॥  
 हाँके सूर सूर सौं भिरही । धायल भूमि एक गिरि परही ॥  
 मारै खड्ग उतरि गये मुडा । फिरै राति घरती पर वंडा ॥  
 सूर जूफि धर तेजे परही । रडौ मार मार उचरही ॥

कर न करें विस्वाम, धाव जे सन्मुख सहि सकहि ।  
 जे जूझै समाम, ते अपछुर वर है रहहि ॥  
 सकर मुड बीनि करि लीन्है । गूथि गूथि कर माला कीन्है ॥  
 सन्मुख होइ जो देह परना । तिन कहँ स्वर्ग ते आवैं विमाना ॥  
 सग निसगनि करै उवारा । दुहु दिसि चलै रघिर की धारा ॥  
 परहि खड्ग टूटै तरवारा । तब कर काढ़ी कमर कटारा ॥  
 सुभट वीर खालि कैं लरहीं । दोनौ आनि भूमि मह परही ॥  
 गमि मारैं सनमुख लरैं, जे मारहि तजि छोह ।  
 लोभी सूर लहरि मरै, जो अपछुर चरनै मोहि ॥  
 कपै सूर वीर ते भारी । गज कपै सहि सकैं कटारी ॥  
 लागै खड्ग गिरहि ते दता । टूटे सँड रोवै मैमता ॥  
 टूटै मुड होइ मुख भगा । पर्वत सै जनु परे भुवगा ॥  
 गन गयद रन जह तह परे । जनु धरनी मह पर्वत डरे ॥  
 लरि लरि सकल थमित हँ दरै । इक जूझै रन कानि न करै ॥  
 सिहनि ऐसो पूत जनि, सिह विदारन जोग ।  
 घर सूर रन भागना, जिन न हँसैये लोग ॥  
 बोलै धाव 'मारू' उचरहीं । जह तह रकत के नारे ढरहीं ॥  
 फूटै मुड चलै रन लोहुव । सुभटै सुभय फिरै जन कुहुसव ॥  
 जोगिनी फिरै भूतनी साना । वैठि करै लोहुअ कर पाना ॥  
 भिरहि धाह लोथि लै जाहीं । लोहू पियै मासु मिलि खाहीं ॥  
 जोवन जाल कराँलै करोलै । लोयहि काटि सरो महि बोलै ॥  
 जोगनि फोरै खोपरी, जवुक भलै जु मास ।  
 सूरन की गति देखि कै, सूरज होई उदास ॥  
 लोहू भरे छूटै सिर वारा । सूते सूर वीर विकारा ॥  
 सुन्यौ सरन उमड़े ते भलै । दहनै जुवहि रघिर के चलै ॥  
 चिहुरो हाथ आव नहि मेरै । गुन ज्यो सिह देखि डहि मरै ॥  
 कहु कहुँ गावैं बरछा लै कोऊ । कहुँ दौर रागन गुन दोऊ ॥  
 पर दल खडहि लरि मरै, खाय जु सन्मुख धाव ।  
 स्वामी संग ते ना तजे, छत्री कुलहि सुभाव ॥  
 पहर चारि लौ विग्रह भयऊ । दुहुँ दिसि लोग जूझि सब गयऊ ॥  
 सुभट सूर विक्रम के वाचे । जूके सुभट सूरमा साँचे ॥  
 कामलैनि सब सैनि जुझाई । जूझि गिरे सब रावत राई ॥  
 जूके सुभट जे चढ़े विवाना । गेये सकल रवि के अस्थाना ॥  
 स्वामि काज जे कटि कटि मरहीं । ते सब सूर अन्तरा बरहीं ॥  
 जूझता सूर भलै, धाव जै सन्मुख खाँहि ।  
 जीवत मै मुख भागहीं, मरै त सुरपुर जाँहि ॥

## माधव-कंदला मिलन खंड

कामसैनि राजा जो हारा । जाइ मिल्यो तजि के हथियारा ॥  
हाथ जोरि के सनमुख आयो । विक्रम आगे सीस नवायौ ॥  
सुनहु राज मैं दीन्ह्यौ देसा । सकवधी पर हरौ कलेसा  
चढ़तै थहराई सिर सेसा । विक्रम जा दिन करै प्रवेसा ॥  
कामसैनि जब मिल्यौ जु जाई । फिरि पछितानौ सैन जुभाई ॥  
मिलकरि राज नगर महुँ चला । दीनी आनि कामकदला ॥  
मिली कदला बहु सुख पावा । राजा माधौनलहि बुलावा ॥  
कलि मह विरह बियोगिनी , भरि भरि लोहि उसास ।

सीसु ढगौरी भोर भय , कीनौ सूर प्रकास ॥

माधौनल औ कदला मिलेउ । मिलि बिरही दोनौ दुख दलिऊ ॥  
मिलि कै अधिक सुख तनि पावा । दुउ सँताप लै गग बहावा ॥  
मिल्यौ सोइ भावत भावती । राजा नल रानी दमवती ॥  
मिले भूथरो अरु पिगला । माधौनल औ कामकदला ॥  
पूरन ससि जिमि दुखित चकोरा । कुमुदिन चक्रवाक जिमि मोरा ॥  
नित प्रति केलि करहि सुख रहहीं । दिन दिन प्रीत अधिक मन करहीं ॥

भावता जा दिन मिलै , ता दिन होइ अनद ।

सपति हिण्डुलास अति , कटि विरहा दुख फद ॥

माधौकाम कदला मिलाई । पुनि राजा उज्जैनै जाई ॥  
सग विप्र माधौनल लीन्हा । जिहि कारन इतनौ जस कीन्हा ॥  
राज नगर उज्जैनै गयऊ । तबही अत कथा कर भयऊ ॥  
माधौ कामकदला नारी । जानौ विधि रचि दई सँवारी ॥

अपनौ सुख तजि दुख लहैं , पर दुख खडन जाइ ।

वार निवाहै एक सम , धनि सकवधी राइ ॥

कथा चौपही आलम कीन्हों । पहिले कथा खवन सुनि लीन्हों ॥  
कहु कहु बीच दोहरा परै । कहु आनि सोरठा धरें ॥  
सुनत खवन यह कथा सुहाई । अति रसाल पडित मन भाई ॥  
प्रीतिवंत है सुनै सो कोई । बाढै प्रीति हिण्डु सुख होई ॥  
कामो पुरिष रसिक जे सुनही । ते या कथा रैन दिन सुनहीं ॥

पडित बुधिवता गुनी , कविजन अञ्छर टेक ।

नाम नमित गुन उच्चरहि , कहि कहि कथा अनेक ॥

# कवि निसार-कृत

यूसुफ़-जुलेखा



## आदि खंड

मुमिरौं प्रथम स्वरूप सुहावा । आदि प्रेम निज तन उपजावा ॥  
 उतपति प्रेम अग्नि उपजावा । बहुरि पवन अबुअ उपजावा ॥  
 आग्नि तें पवन पवन ते पानी । पुनि पानी ते खेह उडानी ॥  
 यहि सब में उपज्यो ससारा । धरती सरग सूर समि तारा ॥  
 चारि तत में सब कुल्लु साजा । पंचवे सन आकास विराजा ॥  
 मुनि रिष गंधरव दूत बिठाये । जगम अस्थावर उपजाए ॥  
 प्रेम अग्नि तेहि काहुँ सँभारा । रचा मनुष बहु विधि बिस्तारा ॥  
 तेंहि सौंपा वह प्रेमक थानी । दीपक माँह धरा जस नाती ॥  
 तेहि बाती मँह आय छिपाए । होय परछिन पुन देह जराए ॥

प्रभुताई के बीच ते , को गत लीखन पार ।

कहा स उत्तम अस वह , कहँ निकसत तेहि भार ॥

रचा मनुष तेहि रूप सोहावा । प्रेम अस तेहि हिए छिपावा ॥  
 अस गुनवत दयाल सयाना । तेहि निरगुन नर सब अग्याना ॥  
 जाकै रूप न रंग न रेखा । ताकिय रचना आव न लेखा ॥  
 वहै रूप वपु प्रेम क साना । दीन्ह भार कहि अलख सुजाना ॥  
 यहि विधि सब जग परगट कीन्हा । एक ते एक उदित कर दीन्हा ॥  
 जब वह नेस्त करै पुनि सोई । एक ते एक अलोपित होई ॥  
 पानी खाइ खेह का लेई । पुन पानी कँह अग्नि हेरेई ॥  
 पवन अग्नि कहँ करे सँधारा । मिले आन तेहि अस अपारा ॥  
 वह के सग जगत कर लेखा । नेस्त हेस्त सभ करे सरेखा ॥

अलख अमर अविनासी , घट घट व्यापक होय ।

सरव मई सुखदायक , दुख भजन है सोय ॥

वह पूरन चौदह खंड माही । वह विन जिया जतु कोउ नाहीं ॥  
 सब मँह आप सु खेले खेला । नट नाटक चाटक जस मेला ॥  
 ना वह मरे न मिटे न होई । अपरम मरम न जाने कोई ॥  
 जाकी रति से सुख नित साजा । तन तिरिया मँह आय विराजा ॥  
 कहँ रसना तेहि अस्तुति जोगू । रचा ताहि जो चन्हे भोगू ॥  
 गुजत ज्ञान ओ भेद अपारा । अगम आव घट तिन दहुँ सारा ॥  
 कबहुँ आय अकेला रहई । कबहुँ यह रचना चित चहई ॥  
 नाटक खेल रच्यो संसारा । जा कहँ देख जान बल हारा ॥  
 एक रूप चारिहुँ दिस देखा । दूसर अवर न जाय वितेषा ॥

अगनित बार सँवारा , तेहि जग अगम अपार ।

जहा अलख संसार सब , जह जग तिन्ह करतार ॥

वहि कर दरस दुओ जग पूरा । नर बाउर सो गिनहि अधूरा ॥

वह निर्गुन सौगुन सोउ रूपा । परघट गुपत सो दुओ अनूपा ॥

जो निर्गुन कहँ चाहिय देखा । अलख अमूरत जाय न देखा ॥

चौसर गगन तो रूप विसेषे । रूप अपार हिये जग देखे ॥

पै जब आप देखावै चाहिय । दिव्य दिष्ट निरभावै ताहिय ॥

पूरन चहुँ दिस जोत अपारा । बिना दिष्ट कोउ लिखे न पारा ॥

जो यह जग वह रूप न लेखा । वह जग केहि विध जाय विसेखा ॥

अनहद सब्द सुने सब कोई । का नहि दरस दिये तिन्ह सोई ॥

कत सरवन सुन बचन हुलासा । काहँ ते नयन सो रहँ निरासा ॥

सुने सब्द सब कोऊ , अनहद दस परकार ।

ताकर रूप देखँ , कारन कवन बिचार ॥

तँ दयाल सुखदायक राजा । जिन अस मोहिं गरीब निवाजा ॥

हतेउ नेस्ति आधीन मिले ना । तँ करतार रहे मोहिं कीन्हा ॥

मूरख हतेउ कीन्ह सजाना । गुन विद्या सब कीन्ह निधाना ॥

गौरी सहन बंस अतवारा । दीन्ह स्वरूप भाउ उँजियारा ॥

तिन मोहिं दीन्ह सदा सुख भोगू । तिन्ह का वेहुँ अहहुँ केहि जोगू ॥

संकट गाढ बड़े जब सहहीं । तिन पल मँह हर लोहि गुसाई ॥

मैं तो अधम पातकी आहा । तँ निरभान कीन्ह जस चाहा ॥

गुजत ज्ञान गिरा अनेक , दीरघ दया अपार ।

तोरे गुन केहि लोहि कहे , तँ दाता करतार ॥

बरनौ ताहि आदि बेहि साजा । तेहि के जोति जगत उपराजा ॥

आदि साज तेहि अनत पठावा । बोहित साज सो पार लगावा ॥

तेहि के जोति सब सिष्ट सँवारा । जिया जंतु जोहि वार न पारा ॥

जो अस पुरुष न जग मँह आवत । ऊँच नीच को पार नप आवत ॥

जग बोहित वह सेवक देवा । केहि गुन पार उतारे खेवा ॥

जिन अवतार सो सबहि सरेखा । कोउ निर्गुन कोउ सर्गुन देखा ॥

अस अवतार काहु नहिं लीन्हा । जिन निर्गुन सरगुन दोउ चीन्हा ॥

कोट कलौत करे जो भावे । बिन वह नाम भुगत नहिं पावे ॥

वह कर नाम लिए एक बारा । पावे मोख भुगति मिस्तारा ॥

आदि जोति जाके रचे , तेहि तँ सब कुछ कीन्ह ।

मोख भुगत गुन पावे , जब नाम मोहम्मद लीन्ह ॥

चार मीत जस चार गरथा , चारिउ सभा चारि सो पंथा ॥

पहिले अबूबकर मग चीन्हा । नबी परापत राज जेहि कीन्हा ॥

दूजे उमर खिताब सोहाये । लिख सपथ इबलीस पुराए ॥  
तीजे उसमान पूरन लाजू । आदि करी चदि कीन्हेउ राजू ॥  
अली बली गुन कीरत मारी । आद इमाम जो पर उपकारी ॥  
खड खड जेहि खड अखडा । लीन्हा दड मड भुज दडा ॥  
दीन नबी कर प्रोहित कीन्हा । मारि सन्न कहँ सब जग कीन्हा ॥  
तिन इमाम जग खेवक आये । पाप हरे गुन पाप लगाये ॥  
हसन हुसेन महा जग तारन । दीन्ह सीस उम्मत के कारन ॥

होय असहाब सो करि चढ़े , वहि दीन सो प्रोहित कीन्ह ।

आद अत लहि जगत सब , अगम निगम करि दीन्ह ॥

आलम शाह हिन्दू सुलताना । तेहि के राज यह कथा बखाना ॥  
देहली राज करे औ नीता । उमरावन तेहि कीन्ह अनीता ॥  
कादिर खान सो अधम रहैला । सो अपराध कीन्ह बद फेला ॥  
पादशाह कहँ आधर कीन्हा । सुत उतारि सब दुख तेहि दोन्हा ॥  
कीन्ह अपत तैमूर घराना । राज प्रताप अधम तेहि माना ॥  
वह चडाल अधम अन्याई । पातशाह तैं कीन्ह बुराई ॥  
जस वै कीन्ह नेक फल पावा । देख्य चरित खेल दिखरावा ॥  
नेह विटप पुन जहर मिलाये । पातशाह सर चन्न भराए ॥  
अधधुध सभ जग करि दीन्हा । तस आपुन देहलीपति कीन्हा ॥

कीन्हीं राज प्रताप जुत , रहिअ उतै कछु नाहँ ।

तब सेवक साई भये , साई दुखित जग मोह ॥

चहुं दिस अवधुध सब छावा । अवध देस का दियो बहावा ॥  
येहिया खा आसफुद्दौला । जासु सहाय अहइ नित मौला ॥  
हिन्दू सचिव वह बाली नरेसा । तेहि के धरम सुखी सब देसा ॥  
दुआ गुन ताह सो धर्म विधाना । धरम नीत जग इहु समाना ॥  
करै नीत कुछ और न भावे । धरम दान को सरवर पावे ॥  
तेहि के राज नीत जग छाये । सूर सुजान न सकै सताये ॥  
करै न नीत धरम सुन्दि होई । मनुष समान सो परगट होई ॥

धरम नीत सब जग करे , परजा सुखी सरीर ।

जुग जेग रहे सुदेस भी , यहि नब्बाव उज़ीर ॥

सेख पुरा उत गाव सुहावा । सेख निसार जनम तहँ पावा ॥  
चारिउ ओर सुघन अमराई । अगम अथाह चहुँ दिस खाई ॥  
सेख हबीबुल्लाह सोहाये । सेख पूर जिन आन बसाये ॥  
बादशाह अकबर सुलताना । तेहि के राज कर जगत बखाना ॥  
अवध देस सूवा होय आये । बीस बरस लहि रहे सुहाये ॥  
तेहि के शेख मुहम्मद नाऊँ । सो हम पिता सो ताकर गाऊँ ॥



तेहि घर हौ बिधने अवतारा । चारि दीप जस चौमुख बारा ॥  
 समै बलो सुपुरुष सुजाना । रूपवत औ विद्यामाना ॥  
 वस मौलवी रूम कै, सेख हबीमुस्लाह ।  
 जेहि के मसनवी जगत मह, अग्रम निगम अवगाह ॥

अब आपन गुन करौ बखाना । हौं निरगुन कुछ भेद न जाना ॥  
 सबहे गुरु कर गुरु सुहावा । सो हम गुरु वह जग महँ आवा ॥  
 जेहि सो गुरु कि दोउ जग आसा । अबर गुरु की भूख न प्यासा ॥  
 चहै गुरु वह पार लगावै । चहै तो बार बार भटकावै ॥  
 वह कर प्रेम हिँएँ महँ गोवा । अबर प्रेम सभ चित तन खोवा ॥  
 अञ्छर एक पठावा सोई । बहुर गुरु वह कियो विछोई ॥  
 भयो हिया जस समुद अपारा । किये गरथ अनूप सँवारा ॥  
 भूँट कथक कहि रैन विहाये । अब यह समै भौर कै आये ॥

वस मौलवी रूम कै, मौलौँ लावा पथ ।

होथ सिद्ध बुध मसनवी, निरगम अग्रम गरथ ॥

सात गरथ अनूप सोहाये । हिंदी और पारसी सोहाये ॥  
 ससकिरत तुरकी मन भाये । अरबी और फारसी सोहाये ॥  
 हीर निकारि के गेहूँ खाने । रस मनोज रस गीत बखाने ॥  
 औ दिवान मसनवी भाखा । कर दोह नसर पारसी राखा ॥  
 वार वेस महँ कथा बनाये । हीर निकारि अनूप सोहाये ॥  
 रस मनोज रस गीत सोहावा । समै वात कार भेद बतावा ॥  
 हंस जवाहिर प्रेम कहानी । कहा मसनवी अमृत बानी ॥  
 इशा कहे जहाँ लह भेदू । ओ सत्र कथा जहाँ लह वेदू ॥  
 भूँठि जानि सब ते मन भाना । अब यह सौँच कथा चित लागा ॥

तीन नसर एक मसनवी, औ निसाब दीवान ।

सर दुई हीर निकार तिन, रस मनोज रस खान ॥

हिजरी सन बारह से पाँचा । बरनेउ प्रेम कथा यह साँचा ॥  
 अठारह सँ सताईसा । संवत विक्रम सेन नरेसा ॥  
 सतरह सँ बारह पुनि साका । सतरह सँ नब्बे ईसा का ॥  
 सत्तावन बरख बीते आयू । तब उपज्यो यह कथा बँचाऊ ॥  
 सात दिवस महँ कथा समापत । दुरमति नाम रहे सो सम्मत ॥  
 गयो तरुन को तेज उमंगा । साथी गये छाँड़ि सब सगा ॥  
 बाएँ अँस उठि के जग माहीं । विरिध दिवस अब कुँछ रस नाहीं ॥  
 बना जनम को गोरख धधा । अबहुँ न समके यह मन अंधा ॥  
 बार वस औ वरुन सोहावा । गयो बीत तीसर पन आवा ॥

बजे नगारा कून्च का , करहु सुचेत सेभार ।

अगम पंथ साथी नहीं , केहि विधि उतरख पार ॥

विरिध वैस महँ कीन्ह विचारा । केहि विधि होय मोर उद्धारा ॥

कहयो तो तत्र कथा उत सोँचा । जो कुरान मा सुना ओ बॉँचा ॥

सभ भाषा महँ कथा सोहाई । बरनन भाँति भाँति करवाई ॥

इबरी औ अरबी सुर बानी । पारम औ तुरकी मिमरानी ॥

मापा मा काहू ना भाखा । मंरै अस दइव लिखि राखा ॥

सो अत्र कथा कहौ चित लाई । जेहि तन मोख मुगति होइ जाई ॥

यूसुफ नबी विदित जग आवा । तारा गन्ह महँ चद सोहावा ॥

जहँ लहि महा सिद्ध अवतारा । सब महँ रूप दीन्ह उँजियारा ॥

कथा अनूप जगत महँ सोई । प्रेम भगति सत धरम समोई ॥

यूसुफ नबी अनूप जग , प्रगट भये ससार ।

जाकी कथा तत अत्र , बरनऊँ भजि करतार ॥

जो यह कथा सुनै चित लाई । नासै पाप पुत्र अधिकारी ॥

बॉँभिन सुनै सो सतति पावे । अकट तरुनि मॉँभहि फरिआवे ॥

निरधन होय , होय धन आकर । निरगुन सुने होय गुन सागर ॥

दुःखी सुने सुख अधिकारी । बदी सुने तो मोख होइ जाई ॥

बिछुरे परे सो देय मिलाई । रोगी सुने रोग हरि जाई ॥

निरदायी कहँ दाय़ा आवे । जोगी सुने जोग अधिकारवे ॥

कैसेउ' विपति गाढ जो होई । सुनै कथा बुध डारै खेई ॥

सुने सती दिन दिन सत बाढै । विरही विरह दीन दुख दाढै ॥

प्रेमी सुने प्रेम अधिकारवे । पडित सुने महा रस पावे ॥

जो कोइ सुनै पढै लिखै , होय सिद्ध ससार ।

बस सुनत सुख पावे , देइ असीस निसार ॥

कथा अनूप अहै जग माहीं । दूसर कथा सो यह सँप नाही ॥

नबी लागि यह कथा सुहाई । सरग लोक तिन दैव पढाई ॥

एक दिवस जबरैल जो आये । हसन हुसेन को दुःख सुनाये ॥

मारिन्ह तिन बैरिन निरदाई । पानी बूँद न दीन्ह कसाई ॥

सुनि के मरन नबी दुख माना । रोवै लाग दुखित होइ प्राना ॥

तब जबरैल कथा यह लाये । आन अरथ यह बॉँच सुनाये ॥

जो इमाम कहँ उम्मत मारिन्ह । यूसुफ बधु कूप महँ डारिन्ह ॥

कथा सत्त अन कहौ सुहाई । जेहि विधि सरग लोक तेहि आई ॥

चूक होय तो सेहु सँभारी । सुद्ध असुद्ध सो लिखहुँ विचारी ॥

बरनौ कथा अनूप अत्र , प्रेम भरी ओ साँच ।

मोख मुगति गति पावहि , जो रे सुनावै पाँच ॥

किनाँ नगर जो 'नूह' बसावा । तहाँ नबी याकूब सोहावा ॥  
 जग महँ महा सिद्ध अवतारा । पूजै ताहि सकल ससारा ॥  
 लूत नबी की सुता सुहाई । सो बियाहि इसहाक के आई ॥  
 भय इसहाक के दुइ सुत सगा । एक उदर दुइ रवि ससि रगा ॥  
 एक ईस याकूब सो दूजा । तप जप विद्या कोउ न पूजा ॥  
 महा सिद्ध ता कहँ विधि कीन्हा । इसरार्डल नाम तिन्ह कीन्हा ॥  
 उपजे श्याम देस दोउ भाई । रहे किनाँ याकूब सोहाई ॥  
 भेजै ताह अलख सदेसा । लावै निगम पथ सब देसा ॥  
 नीच ऊच कहिं मारग लावै । औ गुरु सुख सब भेद बतावै ॥  
 कने तपस्या रैन दिन , जप तप बरत औ नेम ।  
 जबराल आवहि तहाँ , आन बढ़ावै प्रेम ॥  
 सात इस्तरी सुखद सोहाई । बारह पुत्र दई अधिकाई ॥  
 रुबिया औ राहेल सुहाये । दोउ दुहिता सुत लूत के जाये ॥  
 दौहित विधने नारि कुलीना । पाँच सहेली सुधर नगीना ॥  
 दुइ दुइ पुत्र दुहँ के भये । आठ पुत्र दासी सन कहे ॥  
 बहुत गरथ मोह अस हेरी । दोइ नागर तेहि के दुइ चेरी ॥  
 धरम दीन्ह राहेल स्वरूपा । महा सती ओ जान अनूग ॥  
 तेहि के कोख कीन्ह अवतारा । यूसुफ इबन अमीन दोइ बारा ॥  
 प्रथम दुहिता दुनियौ नाऊँ । पुनि यूसुफ मानै तेहि ठाऊँ ॥  
 यूसुफ नबी जनम जब नीन्हा । परगट जोग जगत महँ कीन्हा ॥  
 दुइ असा यूसुफ नबी , पायो रूप अपार ।  
 एक अस विधि रूप मह , दीन्ह सबै ससार ॥  
 बुधि सरूप जब उतपति कीन्हा । दोइ असा यूसुफ कहँ दीन्हा ॥  
 एक अस महँ सब जग पावा । धन वह रूप जो दइय बनावा ॥  
 यूसुफ नबी लीन्ह अवतारा । घर बाहर होइगा उँजियारा ॥  
 जो उपमा कवि दीन्ह बखानी । रूपवन्त जस यूसुफ सानी ॥  
 तेहि स्वरूप कर कहौ बखाना । जेहि कर रूप सो कीन्ह बखाना ॥  
 जब तिन जन्म सो यूसुफ लीन्हा । अलख सबहि सुख तिन्ह सो दीन्हा ॥  
 सत्रु अनेक भये जरि छारा । जो इमलाक यहूदा मारा ॥  
 बड़े बस सब बली सोहाये । एक ते एक सरिस अधिकाये ॥  
 सैन धनी गहि गदा पवारहि । बन महँ सौह सिह कहँ मारहि ॥  
 दस दिग्गज दस बहुवै , दल गजन बलवान ।  
 सेवा करै सु तात कै , जगत काज सुचान ।  
 दस भाई जो तरुन जुभारा । दुइ भाई लखि बालक बारा ॥  
 इबन अमीन जब लीन्ह अवतारा । माता मुई छाँड़ि दुइ बारा ॥

निस दिन रखै नबी निज पासा । छिन बिछुड़े जत्र होय उदासा ॥  
 बहु विद्या औ ज्ञान सोहावा । पितैं पुत्र का समै पढावा ॥  
 और पुत्र जो एक छिन आवै । वेद पढाय सोकाज बढ़ावै ॥  
 यूसुफ कहँ दिन रात पढ़ावै । छिन नैनन नहि ओट करावै ॥  
 जबराईल प्रान तजि दीन्हा । तब यूसुफ कहँ फूफहि लीन्हा ॥  
 प्रान ते अधिक रखै दिन राती । निम दिन रखै लगाये छाती ॥  
 औ याकूब चहै मन माहीं । फूफहि एक छिन छाँड़हि नाहीं ॥  
 बहुत समय यूसुफ लिए , जयै भूलि तप जाग ।

तेहि कारन बिधि कोप कै , दीन्हा पुत्र वियोग ॥

भगिनी बधु रहै अस रीती । देउ बाउर सम यूसुफ प्रीती ॥  
 बसन एक इसहाक सोहावा । बंधहि फोट सो लीन्हा कडावा ॥  
 एक दिन सोवत माँह छिपाये । यूसुफ फोट सो फेट बंधाये ॥  
 ऊपर और दुकूल पिन्हावा । ओ याकूब के पास बिठावा ॥  
 लाय सो भूलि फेट कै चोरी । बसन बधु ते बरवस छोरी ॥  
 भूलहिं तेहि बहु सुख ते पाला । नैन ओट छिन होय वेहाला ॥  
 एक दिन यूसुफ बैठ्यौ पाटा । रूप तेज मनु बरै लिलाटा ॥  
 काहू केर मुकुरनी लीन्हा । तब अभिमान हिये महँ कीन्हा ॥  
 जो मोहि का बेचै लै जाई । को लै सकै दरब कह पाई ॥  
 उदय अस्त लहि दरब पटोरा । मोरै मोल जोग सब थोरा ॥  
 यूसुफ कहँ निस दिन पिता , रखै प्रान समान ।

आन ते अधिक सपूत सुत , सुदर सुधर सुजान ॥

नीक न लाग दइअ कहँ वाता । काहुक गरब न रखै बिधाता ॥  
 एक दिन यूसुफ रिस अधिकारा । कोपित भयो दास कह मारा ॥  
 औ मातहि मारा तिन दासा । भयो हिये वह दास निरासा ॥  
 औ याकूब मियाँ के मारे । बोध न कीन्हा सो दास पुकारे ॥  
 करता कोप हिणँ महँ आने । दास होय तब यूसुफ जाने ॥  
 आयो एक सुरेख भिखारी । आन बार याकूब पुकारी ॥  
 कहा नबी तुम्ह आसन करहू । पावहु भोग छुधा कहँ हरहू ॥  
 कहि यह बात सो गयो भुलाई । यूसुफ प्यार मत्तैं बिसराई ॥  
 ताके भूख रहै सुष नाहीं । दीन्हा सराप तपा हिय मोंहीं ॥

बरस चारि महँ भूलहि , जब कीन्हा सरग पवान ।

तब पावा याकूब तेहि , हिया अधिक हुलसान ।

वह मन भावन रूप सोहावा । ओ जेहि दीन्हा रूप जग पावा ॥  
 आन स्वरूप हेत जो लाये । वह मन भावन ताहि सुहाये ॥  
 औ याकूब सिद्ध अवतारा । निस दिन यूसुफ रूप निहारा ॥

अलख सहाय क्रोध तब कीन्हा । यूसुफ बिरह सोग तेहि दीन्हा ॥  
 आँखी ओट पिता नहिं करई । छुधा त्रिषा मुख देखत रहई ॥  
 निस दिन रखै प्रान सम पासा । और पुत्र मन रहै उदासा ॥  
 आवहिं पुत्र करहिं सब सेवा । काहु के ओर न देखै देवा ॥  
 चालिस सहस मेप जुन लीन्हा । तिर तिर सहस सब्हन कहँ दीन्हा ॥  
 सात सहस यूसुफ कहँ दीन्हा । सौ दुबे सब महँ चुनि लीन्हा ॥  
 सब्हन हिये लखि क्रोध भा , देखि पिता कर प्यार ।

लघु बालक कहँ दून तिन , दीन्ह अस अधिकार ॥

नबी के अँगन एक द्रुम्म सुहावा । कलपवृक्ष सम ताकर छाया ॥  
 जब याकूब नबी सुत पावे । सुदर सुता वृक्ष उपजावे ॥  
 ज्यों ज्यों पुत्र होय वहि बारा । त्यो त्यो बड़े वृक्षे के डारा ॥  
 बालक तरुन होय सुख पावै । काट डार वह छडी बनानै ॥  
 यहि त्रिधि तेहि निकसे दस साखा । दसौ पुत्र पाये ब्रैसाखा ॥  
 यूसुफ जन्म लीन्ह जग माहीं । लोना द्रुम महँ निकसे नाहीं ॥  
 कछो तात तिन पुत्र सोहाये । सबहि बधु कहँ छडी सोहाये ॥  
 कस न दहव मोहिं आसा दीन्हा । तब अरदास दई ते कीन्हा ॥  
 आये जबराइल कै आसा । हरिहर रतन शाख कैलासा ॥

सो आसा यूसुफ नबी , पावा अभय हुलास ।

लखि भाइन्ह कहँ क्रोध भा , जरै हिये आभास ॥

हृत्यो जो बधु यहूदा नाऊँ । गये बधु सब तेहि के ठाऊँ ॥  
 हम सब पितैँ करहिं बड काजू । दिन दिन बडे सो ओकर राजू ॥  
 दिन भर रहै सघन बन माहीं । भूख प्यास कुल्ल जानहि नाहीं ॥  
 यह बालक कुल्ल करे न काजू । इन्हे दीन्ह दून कर साजू ॥  
 कछु दिन महँ सौपे घर बारा । हमहिं रहहि सेवक तिन्ह हारा ॥  
 बालक कुटिल पितैँ बौरावा । तेहिं ते करन्ह सो बैग उपावा ॥  
 अबहिं विरिद्ध ना मूल सभारे । डारहिं उत्पत ताहि उखारे ॥  
 जब वह मूल बरै विस्तारा । कैसेऊँ कहै न चूक कुल्हारा ॥  
 देख अनुज कहँ कोपित ताता । बोला मरद यहूदा बाता ॥  
 वह बालक वै विरिध मै , वै सौँ पिता वह भाय ।

दोऊ कै दुख हिये महँ , दोऊ जगत नसाय ॥

यूसुफ रैन सपन एक देखा । बहुर पिता तिन कहा मरेखा ॥  
 जानहु गरह एकादस आए । रवि ससि मिल मोहि सीस नवाये ॥  
 सुन याकूब सु कीन्ह हुलासा । राज पाट सुख भोग विलासा ॥  
 जग महँ होहु महीधर राजा । सुद्ध बुद्ध नित आगर साजा ॥  
 पै यह सपन सुनै नहि भाई । नाहिन होहि शत्रु दुखदाई ॥

मुख तिन बात निसारे चेई । अनत भेद वह परगट होई ॥  
का रोनार अनुज सो कहा । करहु विचार समन कम अहा ॥  
बधुन कहा खोट यह वारा । पितैं ताह मुहें लाय बिगारा ।  
रवि समि मान पिता निरभाई । नखत एग्यारह हम सब भाई ॥

कीन्ह मता दस बधु मिल , डारहि ना कह मार ।

नाहि तो हम सब दाम सम, वह ठाकुर घर वाग ॥

पिता आदि हम सब मिर नावहि । नमन भेंट कहि नेह बडावहि ॥  
हत्थे निरिप हमनाक हठीला । देव कदाये सुधर नबोला ॥  
पिता मदा मो तामें लडहीं । ओ कहहु मरव न चरहीं ॥  
ताहि बहूदे छिन महें माग । घर कोपहि महें सिला पवारा ॥  
जो अम बज्र न टारे टरई । नाहि मारि निदृच्छिन मो बरई ॥  
ताहि सो पुत्र कर आदर नार्ही । यूसुफ हित राखै हिन मारही ॥  
धमीकरण जो पिनहि पडावा । सोह पिना पर मन चलावा ॥  
जो वह भेंट कहत है वाता । जानिं माँव मो ताकई ताना ॥  
हम कोटिन जो बात नुनावैं । उनहीं कृ परतीन न आवैं ॥  
तेहि यूसुफ कहें मागिये , जहा न पावै नीर ।

रक्त निए मिट जाय रिम , जो कुछ क्रोध सरीर ॥

करिकै मत आपम महें सारा । पिता पाम आए भिनसारा ॥  
जो राउर हम आजा पावहि । लै यूसुफ कहें बने मिधावहि ॥  
जेहि बन मेंह नित भेग चगवैं । यूसुफ देखि हिये सुत्र पावहि ॥  
बालक देख सो मन हुलसाहीं । वे खेलहि हम भेग चगवहि ॥  
कहा जाउ हम भेट चरावैं । यूसुफ का कहें विक लै जावैं ॥  
भोर हिये उपजै यह ससा । जिन लैहि जाहु सग यह मसा ।  
तब सबह मिलि यूसुफ पहें आए । खेल कूद कै बात नुनाये ॥  
यूसुफ जाय पिता तिन कहा । हम हिन बहुत लालसा अहा ॥  
सब भाइन्ह सँग बनहि मिधावैं । दिन भर खेल कूद घर आवैं ॥

औ यूसुफ याकूब स्न , बालक सम हठ कीन्ह ।

दसो बधु दस और नित . उत अँदोर चरि लोन्ह ॥

हम बक चक अम बल बरबडा । हें गयंद बली भुज दडा ॥  
भागै सिह होंक एक मारै । दसो बधु दस दिग्गज टारै ॥  
मैंमत गयद न आनहि लेखै । काँपहि गैडा सिह विसेलै ॥  
का हम सौहें जो करै सु आना । बृथा सोच तुम हिये समाना ॥  
यूसुफ तात सों बहुत हठ कीन्हा । होय ब्याकुल तब आशा दीन्हा ॥  
अपने हाथ सो वेस बनाए , और पितैं वागा पहिराए ॥  
बार बार लै हिये लगाना । माया ते चख जल भरि आवा ॥

चले तात यूसुफ के सगा । जस दीपक सँग फिरै पतिगा ॥  
करै विदा तेहि हिये लगावै । विछुडे प्रान महा दुख पावै ॥

केहि बन महेँ लै जाहि तोहिं, मन न धरै अब धीर ।

कोमल गात गुलान सम, सहै सो घाम सरीर ॥

लागहि लुधा जो बन के माहीं । तिरखा तें तुम अघर सुखावहिं ॥  
तुम बालक वह बन अधियारा । बिक जंबुक हैं भूत बैतारा ॥  
पवन तेज ते तन कुम्हिलाई । धूप देख काया मुरभाई ॥  
लागहि प्यास जो बारम्बारा । होय घाम देखि बिकरारा ॥  
खडे खड़े मुहेँ दूभर भारी । होय कठ सो प्रान दुखारी ॥  
आयहु बेग न लावहु बारा । होइहि तात सो दुखित तुम्हारा ॥  
चारि याम होय जुग चारी । सौंभ परै सुठ होव दुखारी ॥  
कहा पुत्र उपदेस हमारे । गाढ़ परे जिन दिहेऊ बिसारे ॥  
मन सु सतै कछु होय जु ताता । सँवरहु एक निरजन दाता ॥

कहा पिता रुबैल ते, सौपहुँ तुम्हें परान ।

दिन आछत लै आयहु, कियहु न सौंभ निदान ॥

जो विधि लिखा आन सो पूजा । करि न सकै कोऊ अब दूजा ॥  
महा सिद्ध अब भए अधीरा । भूला अलख दयाल गंभीरा ॥  
नीर छीर दुओ भा जनु भरा । सभउं कहँ दीन्हों चित हर ॥  
जब वह प्यास लगे तब दीन्हो । ओ आरत बहु भाँति सो कीन्हो ॥  
बाहर नगर बिरिछु एक आहा । दुम विछोह नाम तेहि काहा ॥  
परदेसी जो कहूँ सिधारे । कुटुंब हिरू तेहि लग पग धारे ॥  
रोय रोय समधै तेहि लोगू । चख जल सींचहि बिरिछु बियोगू ॥  
तह याकूब जो रोदन कीन्हा । ओ यूसुफ जल मारग लीन्हा ॥  
बहुत बेर लागि ठाढे रहै । तरवर बिरह बात जस कहै ॥

आगम बिरह विछोह का, दीन्हा बिरिछु जनाय ।

रोम रोम दुख व्याप्यो, लाग हिये पछताय ॥

डारहि डार ओ पातहि पाता । सुना वृक्ष तिन बिरहक बाता ॥  
जब लहि पिता दिष्टि भर हेरे । आरत कीन्ह भूँठ बहुतेरे ॥  
काहू अनुज सीस पर लीन्हा । काहू आप कहँ पाहन कीन्हा ॥  
कोउ चूमै कोउ हिये लगावै । कोउ चूमै कोउ कोंध लगावै ॥  
काहुन पीठ पर ताह चढावा । जस तुरग लै चहुँ दिस छावा ॥  
कोई कहै सिरताज हमारा । कोउ कहै सम प्रान अधारा ॥  
जब लै गये दिष्ट के ओटा । सिर से डार दीन्ह जस मोटा ॥  
कोउ मारै कोउ बाँधै हाथा । कोउ सौँसै बहु कोप कै सौँसा ॥

तुम्ह बालक अम निडर भए , रचि रचि बचन अनेक ।

हम ते पिता त्रिमुख रहैं , यह तुम कीन्ह न नेक ॥

रचि रचि बचन पितै बौरावा । तुम बालक अस विख विखरावा ॥

मै मै मरहि करहि सव काजू । औ बैठे जुम बिलसहु राजू ॥

अब सु कहौ का करौ उपाई । टूक टूक ऋरि दै हियेँ भाई ॥

जब मारहिं चहुँ दिसि निरदाइय । रोय रोय एक एक पहुँ जाइय ॥

मरतहिं लात परहि तेहि दूरी । धाबहिं लै निकासि कै कूरी ॥

लै पौवरि उन काटि बहावा । नागे पाँव नविय दौडावा ॥

कँवल चरन महँ परै फफोला । प्यास ते जीभ भई जस ओला ।

यूसुफ नबी बधु के आगे । सँसत देख मो रावन लागे ॥

बधु तुम्हार अहैं लघु भ्राता । तुम्ह सो तात सन्ह सौपेहु ताता ॥

मोहि मारे तुम दुख है , पिता मरहि तेहि रोय ।

तेहिं से अथ दाया करहु , धरहु क्षमा रिमि खोय ॥

चहुँ दिमि तिन भाइन्ह तेहि मारा । भयो पियाम ते बहु त्रिकरारा ॥

यूसुफ तबहि पाय के आसा । गया भागि रोहेल के पास ॥

मोहिं पिते सौपि तुम्ह दीन्हा । कौने दोख क्रोध तुम कँन्हा ॥

मारि लात उठि दूर पवारा । कहा बोलावहु एकादस तारा ॥

चद सूरज जिन तोहि सिर नाए । तेहि सँवरहु जो होहि सहाए ॥

तब समयू ते मागा पानी । रोय दिखवा जीभ सुखानी ॥

भाजन दीन्ह भूमि भँह डारे । क्रोधवत हाय मुख महँ मारे ॥

गात गुलान सल्लत करि डारा । क्रोधवत होइ मुख महँ मारा ॥

छुप काठि सिर काटन लागा । तब यूसुफ लादे पहुँ भागा ॥

हाय तरास लाग्यो कहै , जिन काटहु तुम सीस ।

देहु डारि मोहि कूप मह , करै जो कछु जगदीम ।

लातैं मारि जो दीन्ह पवारी । गयो पान कह ठाठ पुकारी ॥

तुम्ह पानी कर अहौ पियासा । हम प्यासे तुम खून के आसा ॥

वे निरदाइ- न दाया करहीं । जीना सत्रै सपन करि देहीं ॥

गुफतालून जाद कै पास । कहै बधु मै अहौ पियासा ॥

कहे बधु मोहि पानी देहु । मरौ पियाउ से धरम सो लेहु ॥

चाहा देहि यहूदा पानी । डरकावा समयू रिस मानी ॥

सबहि बधु बोलहिं विख बानी । चद्र सूरज ते मोंगहु पानी ॥

गरह एकादस लेहु बोलाई । जो तोहि पानी देहिं पिलाई ॥

नौ भाई कोपित भये , कहै बधु सन बात ।

बैरी छोठ न जानिये , ना छोटे दिन रात ॥

कौउ कहै यहि डारहु मारी । पियहिं रक्त रिस मिटै हमारी ॥



कोउ कहै निप घोरि पिलावहिँ । कोउ कहै बन छाडि सिधावहिँ ॥  
 कहा यहूदा बधु के मारे । होय बिनास नरसहिँ कुल सारे ॥  
 पुनि मत कीन्ह सो होइ इकठाई । डारहिँ कूप माई नरियाई ॥  
 बन मा कूप अहै अंधियारा । चला जाय जो परै पतारा ॥  
 कुरता काडि रक्त महँ भरही । पिता पास चलि रोदन करही ॥  
 कहहि कि बिक यूसुफ कहँ खावा । कहा तुम्हार सो आगेहि आवा ॥  
 यह कुरता लोहू कर भग । हेरा बहुत सो पावा परा ॥  
 दिन दस पिता करहि दुख सोचू । पुनि मिटि जाय पुत्र कर सोचू ॥

बन जारा कोउ आइहि, लोइह ताहि निसार ।

लोइ जाइहि परदेस कहँ, मिटै अँदेस हमार ॥

यही मता आपुस महँ कीन्हा । कुरता काडि अग तिन लीन्हा ॥  
 यूसुफ नबी जो रोदन करहीं । निरदाई कुछ दया न करहीं ॥  
 मोहि कहँ नगन करहु जिन भाई । बसन समेत मोहि देहु बहाई ॥  
 मृतक देइ बसन सब केई । मोहि नगन मारे का होई ॥  
 रस्सी तासु गले महँ पिई । बहु मिनती माना नहिँ केई ॥  
 आधे कूप जो पहुँचा बारा । समयू काट गुनी वहि डारा ॥  
 भाई सनु कूप महँ डारी । चलै सुचित होय काज बिगारी ॥  
 दीन्ह काटि जब गुन निरदाई । तब जबरैल सँभारेहु आई ॥  
 लै सो कूप महँ ताहि उतारा । भये जबरैल पिता अनुहारा ॥

कहा कि जिन चिता करहु, धरहु हिये सतोष ।

सिद्ध कीन्ह करतार तोहि, करिय स (हि बिधि पोष ॥

किये प्रबोध भोग फल धरै । बसन पिन्हाय सोच सब हरै ॥  
 यूसुफ नबी पिता कहँ देखै । रुदन कीन्ह ओ पिता बिसेखै ॥  
 करुना कीन्ह पिता हिय लाये । तब जबरैल सो उख्यो छोहाये ॥  
 जो निस दिन तुम्ह जोयहु गाता । सो अब कीन्ह रक्त रंग राता ॥  
 अधर पीत जामुन सम किये । गात लोग बदमेल सो भये ॥  
 नोंगे चरन धरमि दौरावा । रस्सी बोंध कूप लटकावा ॥  
 जेहि भाई पहुँ रोवै जाई । मारि लात वह दूर पराई ॥  
 आधे कूप जो पहुँच्यो जाई । दीन्हा काट गुनी निरदाई ॥  
 जस दुख दीन्ह सो बंधु मोहि, बैरिहु नाहीं टय ।

गात सछत गये डारि, प्यास प्राण हरि लेय ॥

सुनि जबरैल न कियो सँभारा । लागे बहै नैन जल धारा ॥  
 मै न होहुँ याकूब सोहावा । हौँ जबरैल सरग तँ आवा ॥  
 बोंधहु सत्त हिएँ औ धीरा । एक दिन दैव लगावहि तीरा ॥  
 दुख बैराग नीत सब जाई । ओँ याकूब तेँ देह मिलाई ॥

करहि बधु तोरिय सेवकाई । होहु नवी जग राज कराई ॥  
सब दुख हरै करै तोहि राजा । बधु दास होय करिहैं काजा ॥  
जो करतार करहि निन दाया । का नो करै वैरिय निरमाया ॥  
कोटि सनु जो कीन्ह उपाइय । इनाहिम कहँ लीन्ह बचाइय ॥  
बैरी मयहि किये सहारा । भगहु ताह फुलवर्ग अंगारा ॥  
दिये बहुन दुख मन कहँ , करै बहुत उदार ।

जैमे कचन कानियै , खरा अग्नि महँ डार ॥

कगिँ नगन अग्नि महँ तावा । इनाहिम कहँ कुरता आवा ॥  
सो कुरना न याकूब सुहावा । चिन ममान सो बसन बनावा ॥  
जंत्र ममान सुजा महँ बोंधा । भूत बयारि न आवै राँधा ॥  
तब जवरैल नगन तेहि देखा । भये दुखिन लखि नगन सरेखा ॥  
तब कुरना बाजू तन खोला । पहिरायौ सो बसन अमोला ॥  
चौकी एक अनूर लै आवा । तेहि पर यूसुफ कहँ बैठावा ॥  
जो अमरिन ना सुना न देखा । सो यूसुफ कहँ दीन्ह नरेखा ॥  
कहहु भोग सँबरहु करतारा । हरै दुख सो बेग बुम्हारा ॥  
करि परबोध नो सरग निधारा । यूसुफ तिन सो कहयो कै वारा ॥

महा सिद्ध तुम होहु कै महाराज जग माँह ।

मोत पिता हत बधु कुल करहु तो सब पर छोँह ॥

अचया मार रक्त रँग धारै । कुरता लै सो चलै हत्यारै ॥  
बिरह विछोए जो नगर निमारा । तहाँ ठाढ़ याकूब दुखारा ॥  
ओ यूसुफ कै भगिनी दीना । पिता सग वहि हती मलीना ॥  
भइय सोंभ नहि यूसुफ आये । केहि कारन तेहि विलंब लगाये ॥  
बार बार वहि बाट निहारी । ओ यूसुफ कहँ पिता पुकारी ॥  
यही समय आये हत्यारे । रोदन करत भूठ वै सारे ॥  
सुनि रोदन यह भा विकारा । हिरदै मनहुँ वान अस मारा ॥  
दुनिया कहै कुसल है नाहीं । बिरन मोर नाहीं उन्ह माहीं ॥

बिन वीरन यह नगर सब , भयो सून अँधियार ।

पिता मुए घर ऊजरा , काह कीन्ह करतार ॥

लखि दुनिया सो छार चढ़ाई । कहा छाँडि आये मोर भाई ॥  
रोय रोय दुनियो गाहरावा । आवहु यहा पिता दुख पावा ॥  
रोवै लाग देखि कै ताहा । सव्ह आये मोर वीरन काहों ॥  
रोवत गये पिता के पास । बहु विलाप वै किय परयासा ॥  
काह कहै कछु कहा न जाई । हम सब गये सो छाँडि चराइय ॥  
पसुन पास यह खेलत अहा । तहा सो आन मेडहि वह गहा ॥  
दुँदत फिरै सभै बन झारा । तब लहि बिक तेहि कीन्ह अहारा ॥  
३२

रकन भरा कुरता वह पावा । देख दिये करना होइ आवा ॥  
तेहि ते पिता करो सतोखू । हम काहू कर आह न दोखू ॥  
वात तुम्हारे जीभ के, कैसे अविर्था जाय ।

विधि कर लिखा कां मेटे, यूसुफ कहँ विक खाय ॥  
सुनि याकूब सो मुरछित भयऊ । मानहु प्रान काल लै गयऊ ॥  
जवराइल धरथो मुख हाथा । हरे सँस लखि धूमिल माथा ॥  
खाय पछाड यहूदा रोवा । वृथा प्रान पिता कर खोवा ॥  
का अस मरम बंधु तुम कीन्हा । पिता सिद्ध कै हत्या लीन्हा ॥  
रोय रोय दुनियन सिग फोरा । भयो कठिन दुख रोज अँदोरा ॥  
दिन भर बाट विलोकत हारे । गये बार खिज बार सिधारे ॥  
ब्याकुल पिता पुत्र कै काजा । सिर पर पडे अचानक गाजा ॥  
दिन भर रहै विलोकत बाटा । सँभ भये तेहि आयो घाटा ॥  
भये सँभ यह दुख कै कारी । कां मेटे यह निस अँधियारी ॥  
बीरन मोर कहा पहुँ गयऊ । जेहि विन घर अँधेर सब भयऊ ॥

वह बीरन जेहि विन भयो, घर बाहर अँधियार ।

वहुँ आये तजि सुघन बन, कै दहुँ कुप महँ डार ॥

अस अशान न कुता मारा । लहू लाय ते आये सारा ॥  
शानी लोग जो कुरता देखै । करहिँ विचार ओ भूँड विसेखहि ॥  
जो विक खात रहत कत सारा । टूक टूक होय जात नियारा ॥  
निस भर रहै विकल विसँभारा । आयो प्रान होत भिनसारा ॥  
जव जागै तव यूसुफ कहा । कहँ लोग कत यूसुफ कहा ॥  
तव रोवहि अस छोट डफारा । सरग दूत रोवहिँ एक बारा ॥  
तव जवरैल भूमि पै आये । तो याकूब नवी समभाये ॥  
अव सतोप किये बनि आवे । रोदन किहँ काऊ न पावै ॥  
तुम्ह अवतार सिद्ध कर लीन्हा । सही दुख जो साई दीन्हा ॥  
पुत्र गये सतोप करि, प्रान देहु जिन रोय ।

रादन कहु सटा हिण, पुत्र जो कियो बिछोह ॥

तव याकूब सु चित्त सँभारा । रोवै लाग सँवर करतारा ॥  
कहा कि कही पुत्र का भयऊ । प्रान न गयो प्रान कत गयऊ ॥  
तुम्ह कछु मरम दुखी कर जाना । करहु बोध कर सिष्ट बखाना ॥  
जीयत अहै कि मिरतक भयऊ । जेहि विन घर अँधियर होय गयऊ ॥  
कहा कि मै कछु भेद न जाना । विन अशा का करहुँ बखाना ॥  
मरन जियन जानै जमराजू । कै जानै जिन जग उपराजू ॥  
तव याकूब कहा सिर नाई । पूँछहु तुम यमराज ते जाई ॥  
कही जाय याकूब सँदेसा । जहा होय यमराज नरेसा ॥

बोला जम यूसुफ कर प्राना । मोरे पास न दूतन आना ॥

तब जबरैल सुनावा, वै सदेस अपार ।

जेहि सौंपा तुम्ह पुत्र कहँ, तेहि सौँ माँगहु बार ॥

सुनि याकूब डरै मन माहीं । अलख त्राम ते सुठि विलखाही ॥

डरै हिणँ सिर दै मुह मारा । मोहि ते चूक भई करतारा ॥

मै बाउर बह अवगुन कीन्हा । चहौ दुःख जो उत दुःख दीन्हा ॥

कहा कि अब कीजै सतोषा । समरहु ताह करहि जो मोषा ॥

तब याकूब सो कुटी बनावा । बाहर नगर तहाँ चलि आवा ॥

षर औ बार छाँड़ि सब लोगू । निस दिन करै कुटी महि जोगू ॥

काहू दरस ना देय सोहावा । ओ कोऊ तहँ जाय न पावा ॥

रोदन भवन नाम तेहि राखा । यूसुफ नाम करै नित भाखा ॥

जो सोए तो यूसुफ कहै । जो जागै यूसुफ मुख छहै ॥

यूसुफ कहै भूख जब लागै । यूसुफ कहै प्यास तन भागै ॥

नींद भूख औ प्यास महँ, यूसुफ नाम अपार ।

सँवर सँवर मुख पुत्र का, रोदन करै अपार ॥

नींद भूख तज साधहि जोगू । करहि तपस्या बिरह बियोगू ॥

नित कुरता वह नैन लगावै । औ यूसुफ कहि कहि गोहरावै ॥

रोवत नयन भये दोउ अधा । फाट न हिया सँवर चित बधा ॥

गये नैन दोउ पुत्र बियोगू । जोगउ तँ साधा तब जोगू ॥

यह विध देख पिता कर हाला । भयै पुत्र सब हिणँ बेहाला ॥

रोदन जब याकूब करेई । सरग दूत कर जाय हरेई ॥

जब याकूब रोय जिव खोवहि । जाय भुलाय दूत सब रोवहि ॥

कहाँ प्रान तोहि भाइन्ह डारे । कहाँ छाँड़ि आये हत्यारे ॥

केहि दिस जाऊँ कहाँ तेहि हेरी । कौने बाट नाम कहि टेरी ॥

निस दिन हिये लगाये, मै तोहि सोचत पास ।

सब निम जाग भयावन, रहौ विचारत मॉस ॥

मुख तुम्हार अब देखत नाहीं । ताते प्रान रखै घट माहीं ॥

एक घडी जो दरम न पाऊँ । रोवत फिरौँ चहँ दिस धावहुँ ॥

जब लहि नाव लिये ना कोई । तब लहि जीवन दूभर होई ॥

अब तोर कौन सुनाइय नाऊ । तोहि विन सून भयो सब ठाऊ ॥

भयो भवन तोहि विन अंधियारा । काटेब खाय सबहिं घर बारा ॥

केहि बन महँ तुम्ह काँ परहेले । तुम्ह बालक कत फिरहु अकेले ॥

मोरे साथ रहे मन माहीं । सुख तुम्हार कुछ देख्यो नाहीं ॥

केहि बस करौँ सो खोज तुम्हारी । कवन देस होय जाऊँ भिखारी ॥

अब केहि विधि दिन वीतहि मोरा । केहि विधि रैन विहायहि मोरा ॥

यूसुफ नाम रैन दिन, लेत रहै याकूब ।

दिन भर पलक न लावे, पुत्र विछोह अनूप ॥

केहि सो सौग लै हिये लगाउब । भोर होत केहि लाल जगाउब ॥

केहि के सुनब मधुर रस बाता । केहि कर हिये लगाउब गाता ॥

केहि के देखब चाल सोहाई । केहि को देखि हस मुरभाई ॥

केहि तें भेंट करब दिन राती । केहि काँ देखि सिराइह छाती ॥

जब याकूब सो होहि अभीरा । आवहि जबराइल तिन्ह तीरा ॥

कहहि कि तुम रोउब जिय खोवहि । काँपे मरग दूत सब रोवहि ॥

तुम अबतार कि सिद्ध सरीरा । ऐसे दुख जनि होहु अभीरा ॥

तब याकूब सो छाँडि डफारा । कहा कि काह करूँ करतारा ॥

ऐसे पुत्र काहे कहँ दीन्हा । मनहरिया फिर कस हर लीन्हा ॥

दाया कीन्ह अनेक विधि, दीन्ह पुत्र अस मोहि ।

देखि रूप गुन बिसुध भयो, तब मोहि दीन्ह विछोह ॥

तब काहें का अस चित लावा । जो अब हाथ रहा पछुतावा ॥

अलख ठाढ़ चित उन सो लावे । ताकर फल मानुम अस पावे ॥

दीन दयाल करै अस दाया । दिये अनूप सुखी करि साया ॥

तेहि दयाल कँह दइय बिसारे । देखे निस दिन नस्ट बिचारे ॥

फुलवारी बहु फूल बनाये । एक तें एक सुरग बनाये ॥

जो मन पुहुप एक तिन लावे । जाय सूख कुछ हाथ न आवे ॥

चित्र अनेक जो रच्यो चितेरे । मोहित होय रूप रँग हेरे ॥

आवे चित्र काज कुछ नाहीं । चित्र काज सँवरहु मन माहीं ॥

काहे न चित्र चितेरे लावहु । चित्र विचित्र रूप निरमावहु ॥

जो कुछ रहे न हाथ मँह, तेहि चित दीजिय काउ ।

जो न मरे नहि बीछुड़े, तेहि ते प्रीत लगाउ ॥

भोर होत फिर बन कहँ गये । अनुज सँघार सुचित मन भये ॥

यूसुफ मया मीत मन भयऊ । चोरिय एक यहूदा गयऊ ॥

जाय कूप मँह ताहि पुकारा । कहूयो नीर का हाल तुम्हारा ॥

यूसुफ नबी कहा बिकरारी । कहा यहूदा रोय पुकारी ॥

का पूँछो अब हाल हमारा । परे अकेल कूप अँधियारा ॥

बिच्छू सॉप भरे तिन मोही । दिन एक जियन भरोसा नाहीं ॥

जब लग सुदिन न दीपक बारा । जाय न देइ पिता तिन बारा ॥

का अबगुन अस कीन्ह तुम्हारा । जो अस कूप अध मँहँ डारा

कूप अध दुख भयो सँघाता । का पूँछो दुखिया कर बाता ॥

परे अँधेरे कूप मँहँ, कोऊ न संघी भाय ।

बिच्छू सॉप भरे तहा, केहि विधि कुसल कराय ॥

मात पिता केहि सुख ते पाला । भाई अघ कूप महँ डाला ॥  
 कह्यौ पिता तें जाय सँदेसा । पुत्र तुम्हार गयो परदेसा ॥  
 मरत नाम जिन कह्यौ सुनाई । मरैं पिता निज प्रान नसाई ॥  
 कियो पिता की बहु विधि सेवा । जेहि ते पार लगे लुम खेवा ॥  
 छुधा तृखा जब लागे भाई । भूख हमार न दिहयो भुलाई ॥  
 जब दुख पड़े विपत अत्रगाहा । संवरहु बधु मोर दुख दाहा ॥  
 नमन दीन तन नगन हमारा । संवरहु बधु ओ किहयो विचारा ॥  
 सेवा किहेउ पिता कै भाई । जेहिते हम दुख जाइ भुलाई ॥  
 जब मिरतक कोई देख्यो भाई । मँवरहु मूरत मोर सुहाई ॥

सुन यूसुफ उपदेश यहु, गेय यहूदा भाय ।

कहा कि संवरहु अलाख कहँ, जो दुख माँह सहाय ॥

समय बहुरि पकरि विक लावा । करि मुख बिकते रक्त लगावा ॥  
 लैके ठाढ पिता पहाँ कीन्हा । यूसुफ खाइ यही विक लीन्हा ॥  
 आयो आज फेरि वहि ठाऊँ । लायो ताहि पकरि कै पाऊँ ॥  
 तब याकूब सु छाँडि दफारा । कहँ लाग का तोर बिगारा ॥  
 यूसुफ मुख लखि दया न आई । वेहि विधि लीन्ह सो तेहि कहँ खाई ॥  
 कैसे मन पतिआयो तोरा । लीन्हसु खाय परान तुम्ह मोग ॥  
 थौ याकूब सीस भुइ लावा । अय दयाल सुखदायक रावा ॥  
 अज्ञा होय कहे विक बाता । यूसुफ रक्त अहै मुख राता ॥  
 पूँछि लेहुँ सम अरिन्ह अयारा । तिन्ह यूसुफ कहँ कीन्ह अहारा ॥

भय आजॉ जगदीस कै, बोला विक धरि सीस ।

कह्यो अरथ यूसुफ कर, लेहु हमार अमीस ॥

यूसुफ कहँ खायीं केहि ठाऊँ । देहु अतायै तहाँ चलि जाऊँ ॥  
 यूसुफ केम तहाँ एक पाऊँ । लेऊँ सुदान बैन महँ लाऊँ ॥  
 लाखन अजा मेख हमारै । का तोहि गिला प्रान के मारे ॥  
 वह मुख देख टया नहि लागे । उठे न घात मया के आगे ॥  
 कहै लाग सुन विक नरनाहा । दोस न लाग कछू हम मोहा ॥  
 जहँ लै सिद्ध ओ साध सरीरा । तेहि मानुस दुःखित हम पीरा ॥  
 तुम अजाँ तिन सघ न देखै । वहै पुत्र परान विसेखै ॥  
 यूसुफ रूप देख सर नावहि । तेहि कैसे हम खाय उड़वहि ॥  
 हम ते घाट भये कछु नाही । देहु असीस घरहु अब जाही ॥  
 सावक मोर बिछुड गयो, दूढत फिरौ बे हाल ।

पुत्र तुम्हार पकरि कै, लाय कीन्ह मुख लान ॥

तब याकूब संवरन लागे । विक ते पूँछन लाग सुभागे ॥  
 तुम यूसुफ कर खोज बत, वहु : कहौ सत्त सदेह मिटावहु ॥

लाल हमार कहाँ लै डारा । जीयत अहै कि मारि सँघारा ॥  
 सावक तोर दई तोहि दिये । यूसुफ सुधि कहै जस लिये ॥  
 तब बोला बिक भुँई धरि माथा । का हम से पूछहु नरनाहा ॥  
 पिमुन सरूप धरे मुख रहहीं । हम काहु कर दोख न करहीं ॥  
 दोस होय आवगुन के लाये । पाप परावा परें सुनाए ॥  
 आन उपाय कहै जो कोई । पातक तासु ताहि सिर होई ॥  
 औ हम का जाने फिर भेदा । जानै सोह रच्यो जिन भेदा ॥

तुम्ह सुअस करतार के, आवहिं दूत तोहि पास ।

का पूँछहु हम से बिधा, पूछों दइय जो आस ॥

बिक टिले चढि जाय पुकारा । किन यूसुफ कहँ कीन्ह अहारा ॥  
 यूसुफ बधु सो हत्या लावा । कहहिं कि बिक यूसुफ कहँ खावा ॥  
 हैं याकूब नबी रिस मोंहा । रोदन करै मरै नरनाहा ॥  
 जो वह सराप देह करतारा । सब बिक मरहिं होहिं जरि छारा ॥  
 मै करिया देह भयौं अदोखा । अब दूँदहु तुम आपन मोखा ॥  
 सुनि सारे बिक आरन केरे । आन वार याकूब सुषेरे ॥  
 कहा कि तुम नाहिंय कछु दोखा । करै अलख तुम सब कर मोखा ॥  
 कुटिय के आस पास चहुँ ओरा । मारहिं कूक ओ करहिं अँदोरा ॥  
 सुनि अँदोरा याकूब दुखारा । आयो निकसि विरह कै मारा ॥

चहुँ दिस बिक रोवत नले, देखि नबी कर रोज ।

कहै चलहु अब कीजिये, यूसुफ नबी कर खोज ॥

बिक अजया याकूब पहिँ आई । रोवै लाग सीस भुँई लाई ॥  
 सहस जंगम बन महँ आहे । हमे दोख केहि कारन कहे ॥  
 पुत्र तुम्हार हमें दुख दीन्हा । रक्त हमार सुदोखित कीन्हा ॥  
 सो कुरता लोहूकर भरा । तुम्ह अपने नैननन्ह पर घरा ॥  
 राउर नैन ज्योति हरि गई । यहि हत्या हम्ह सिर पर भई ॥  
 जनम जनम मैं औगुन दोखा । केहि बिधि करै देव हम मोखा ॥  
 तब याकूब बोध तेहि कीन्हा । तुम्ह कहँ दोष दइय नहि दीन्हा ॥  
 दोष ताँह जो तुमका मरा । यूसुफ बसन रक्त रँग धारा ॥  
 कत कुरता यूसुफ कर सारा । अजया मार रक्त सौ भारा ॥

तुम्हें दोख कछु नाहिन, वै दोषी हत्यार ।

जिन्ह यूसुफ तैं मोहि कहँ, कीन्ह बिछोह निसार ॥

सात दिवस दुख भयो अपारा । उत्तरे तेहि बन मँ बन जारा ॥  
 मालिक नाम महा अस नायक । जात मिसर कहँ वहि सुखदायक ॥  
 आगे वै सपना महँ देखा । होय लाभ यह बन उन देखा ॥  
 मदा आप नायक यह बासा । करै सो वही वनै महँ बासा ॥

तोहि महँ आये एक बनजारा । जल हित डोल कूप महँ डारा ॥  
 यूसुफ नबी डोल गहि लीन्हा । रोखत ताहि हॉक पुनि दीन्हा ॥  
 डारि डोल भागा डर खावा । ओ नायक तँ जाइ जनावा ॥  
 जतु एक है कूप के माहीं । डोल अडोल है डोलत नाहीं ॥  
 तब नायक वहँ आपसि धावा । तेहि के सघ मानुस बहु आवा ॥  
 अघ कूप ते ताह निसारा । होयगा बन सगरो उँजियारा ॥  
 पानी खोज जो कूप मँह , डारा डोल 'निसार' ।

तँह यूसुफ कहँ पावा , धन नायक व्योपार ॥  
 नायक देख परान अस पावा । होय मोहित लै चला सोहावा ॥  
 लै यूसुफ कहँ चल्यौ चलाई । तब लहि पहुँचे धँ दस भाई ॥  
 घाय आन सब कीन्ह पुकारा । कहाँ जाँव लै दास हमारा ॥  
 दिन पॉचक तँ भाग परावा । खोजत फिरौ कहुँ नहि पावा ॥  
 यूसुफ चहा कहै निज वाता । नायक ते वरनै दुख भ्राता ॥  
 तब समथूँ इवगी महँ कहा । बोल न वचन जो जीवन चहा ॥  
 यूसुफ नबी मौन तब साधा । लाग्यौ कहै वँसु दुख वाधा ॥  
 भागे सदा दास तिन मारे । करे न काज भये हम कारे ॥  
 भोग न करै रहै नित रूसा । कब लहि रखें सो घाल भँजूमा ॥

दास हमार जो चोर हँ , सुन नायक निज वात ।  
 मोल देहु लै जाहु तुम , मिटै कैप दिन रात ॥  
 मन महँ कहै लाख लहि देहु । यह बालक कहँ पुत्र करेऊँ ॥  
 मालिक कहा कहौ सो देहीं । यह सुदास दोली कहँ लेहीं ॥  
 वह यूसुफ कर मोल न जाना । धोर दाम माँगा अज्ञाना ॥  
 तीन दोख यह मँह वड़ मारे । भाये चोर रोय बढ कारे ॥  
 कहा लेउँ मैं दोपी दासा । जाय तो जाय रहे तो पासा ॥  
 मोरे पास रोकट है धोरा । बिसह्यौ मोल हस्ति औ धोरा ॥  
 बसन अतर ओ पाट पटवर । मृग कस्तूरी केसर अंबर ॥  
 कहा कि रोककर होय सो देऊ । यह सु दास दोपी कहँ लेहु ॥  
 तीन दरभ रोककर हम पासा । सो तुम लेहु देहु यह दासा ॥  
 अस कोरे हम दास ते , भय नायक दिन रात ।

जो तुम देउ सो लेव हम , अवर न अरव कहु वात ॥  
 कहा कि जो कुछ देहु सो लेहीं । का दोपित कर मोल करेहीं ॥  
 तुरतेहि दीन्ह न लायसि वारा । तब यूसुफ पुनि कीन्ह जोहारा ॥  
 मालिक कहा दाम भर लेहु । लै मोहि कहँ कागद लिखि देहु ॥  
 तब समथूँ कागद लिख दीन्हा । मालिक मोल यूसुफ कहँ लीन्हा ॥  
 हम सब मोल दाम पर पावा । दास चोर कहँ वँचि अढावा ॥



लै कागद यूसुफ कहँ चला । कहा कि करम हत्यो मोर भला ॥  
 लागे कहै कि भागे दासा । रखियो बंद मैह निसि दिन प्यासा ॥  
 जो यह भागि जाय कहुँ नायक । हमें न दोख दियो सुख दायक ॥  
 तेहि ते डारि देहु पग बेरी । ऊँट चढाय फिरहुँ चहुँ फेरी ॥  
 गयऊ सँकर पग बेरी , हाय हयकडी नाय ।

टाट भूल पहिराय के , फिरहु सो ऊँट चढाय ॥  
 कँवल चरन महँ बेरी नवावा । कुसुम्ह बाँह हतकरी पिन्हावा ॥  
 टाट भूल यूसुफ कहँ दीन्हा । बसन अनूप काट तिन्ह लीन्हा ॥  
 जब वह बैचि चले निर्दाई । यूसुफ रोय उटा अकुलाई ॥  
 आजा देहु जाउँ उन्ह पासा । आवै समुद सो अस सो आसा ॥  
 नायक कहा मया तोहि आई । वे जस सत्रु अहँ निरदाई ॥  
 कहा कि करत केटि अनरीती । मोरें हियते जाय न प्रीती ॥  
 पहने टाट भोल अस भारी । बेरी पकरि चला बनवारी ॥  
 यूसुफ विदा रोय तहँ कीन्हा । एक एक कहँ अक्रम दीन्हा ॥  
 वह रोवै वे हँसै निर्दाये । टाट भूल लखि मन रहसाए ॥

भूख प्यास दुख मृत्यु मँह , भूलि न जायहु मोह ।

सँवरैहु सदा हिये मोहि , हम दुख विरह विछेहाइ ॥

अनुज दास कहँ सँवरैहु भाई । तुमहि सपथ जनि दिहेहु मुलाई ॥  
 अब हम जाहि कहों किन देसा । कते रे मिलन कत जियन अँदेसा ॥  
 दास चोर वैधुआन बनावा । दहुँ आगे का चहिय दिखावा ॥  
 अब हम कहों, कहाँ तुम्ह भाई । जनम सब देह विधि बिलगाई ॥  
 तात चरन सिर लायहु भाई । मोरे और ते कहेउ सुनाई ॥  
 पिता न दिहेउ प्रान तुम्ह रोई । देहु असीस भेट जेहि होई ॥  
 मोर मृत्यु जिन्ह ताह सुनायहु । फिर फिर सिर चरनन्ह लै लायहु ॥  
 मरहिँ न पिता करेउ अस काजू । नाहित होय दुआो जग लाजू ॥  
 रोय रोय सब बरन सुनावा । तब नायक तेहि बोलि भेजावा ॥

मात पिता जन परिजन , लोक कुटुंब परिवार ।

यूसुफ चला विदेस कहँ , किनआ नगर जोहार ॥

रोवत चला ऊभ लै साँसा । रहे न पिता मिलन की आसा ॥  
 चलै फेर देखहि उन औरा । मकु भाई पूछहि दुख मोरा ॥  
 भाइन्ह कहा बिलम्ब जिन लावहु । नायक संघ विदेस सिधावहु ॥  
 यूसुफ नैन मघा भर लाये । नायक पास गयो बिलखाये ॥  
 यूसुफ हिये सँवर यह याता । मुकुर देख मुख आपन राता ॥  
 ऐस रतन संपत उन्ह पावा । चला बेगि नहिँ बर लगावा ॥  
 मन मई जस कीन्हे अभिमाना । तस सुमेल आपन हम जाना ॥

तेहि अरवगुन यह दुरगत भयऊ । दास चोर खँधुवा होय गयऊ ॥

चला संगहि लै नायक, यूसुफ ऊँट चढाय ।

फिरि फिरि करै जुहार वह, किनअरौँ देम सिर नाय ॥

नायक पथ मिसर का लीन्हौँ । चहै दास यूसुफ सँग कीन्हौँ ॥

लियै जात सँग वै निरदाई । मात गोर पर पहुँचा जाई ॥

यूसुफ नवी नैन भरि हेरा । रोय रोय माता कहँ टेरा ॥

लाखि माता की कवर सुहाई । होय विकरार गिरा मुरभाई ॥

पुत्र तुम्हार जात परदेसा । भएहुँ दास देखयो नहिँ मेसा ॥

वै चरनन महँ देखहु बेरी । टाट भूल जो कवहुँ न हेरी ॥

लोटै पडा कवर पर रोई । खाय पछार जीव कत खोई ॥

देखि कवर पर दाम अभागा । क्रोधवत होइ मारन्ह लाग ॥

यहि अरवगुन यह मोल बिकाने । अरवहुँ त्रास हिये नहिँ माने ॥

वेचनहारन्ह सत कहा, भागि जाय यह दास ।

मस्तक मारि सो लैचला, पकरि सो नायक पास ॥

जब सो दास यूसुफ कहँ मारा । मता कवर कौँपै एक वारा ॥

प्राण हमार भयो तुम दासा । मारि तुम्हेँ करि दास निरासा ॥

पकुम बरन जो चरन तुम्हारा । तेहि चरनन महँ बेरी डारा ॥

कौन देस तोहि कहँ लै जाहीँ । जहाँ सुमात पिता केउ नाहीँ ॥

कौँपै कवर ओ यूसुफ रोवा । दास पुत्र तेँ मात विछोहा ॥

अँधी उठी भयो अँधियारा । सूँझि परै नहिँ हाथ पसारा ॥

घन गरजै बादर चढि आए । दामिनि कौँध चमक दिखराए ॥

आवै चमक जो नायक पासा । लखि मालिक मन भयो तपसा ॥

मैं तो दोष कीन्ह कुछु नाहीँ । केहि कारन दामिनि डरपाहीँ ॥

वार वार जो आवै जाई । मलिक देखि हिए डर खाई ॥

कौन पाप मोहि परगट्यो, कीन्ह दइय अस कोप ।

जानि परै अँधकार महँ, सब मिलि होय अलोप ॥

तब एक दास आगे चलि आवा । औ मालिक तेँ भेद जतावा ॥

दास जो मोल लीन्ह तुम आजू । भयो कोप विधि तेहि के काजू ॥

जैसे तेहि मारा बिन दोखू । तेहि सुदास तेँ मँगहु मोखू ॥

हत्यौ कवर पर रोवत दासा । तेहि मारत अँधेर चहुँ वासा ॥

तब मालिक यूसुफ पहुँ आवा । नाय सीस कर जोरि मनावा ॥

करहु ज़मा औ देहु अमीसा । जेहि तेँ ज़िमा करै जगदीसा ॥

तब यूसुफ दोउ हाथ पसारा । मिटि गा गरज कौँध अँधियारा ॥

कीन्ह बहुत हठ वेचन हारे । तेहि कारन बेरी पग डारे ॥

बैरी पाँव ते काटि बहावा । करि अशनान बसन पहिरावा ॥

मालिक देखि अधीन भा, कीन्ह बहुत अरदास ।

जैसे पकरि मँगाय कै, सौँपि दीन्ह मो दास ॥

लैआए यूसुफ कै पासा । कहा कि है दोषी यह दासा ॥

जो तुम कहौ सो सौँमति करही । जेहि तेँ सवहि दास तौहि डरही ॥

यूसुफ नवी बोल यह चेरा । निज बाहुन तेहि आनन फेरा ॥

हत्यो जो रग स्याम अंधियारा । चोँदी सम होयगा उँजियारा ॥

मलिक देखि मो अचरज कीन्ह । वह सुदास यूसुफ कहँ दीन्ह ॥

पुत्र समान रखै तेहि लागा । कहै कि भाग मोर अय जागा ॥

नित नवीन बागा पहिरावै । अपने सग सो भोग खवावै ॥

यूसुफ नवी करै नित रोवा । सँवर सँवर याकुव विछोहा ॥

मलिक भेद बहुत निरभावे । छुटि सुदास नहिँ और बतावे ॥

मालिक साज समाज के, चला मिसिर के देस ।

कहँ बिरह दुख ताकर, कीन्ह जो मिसिर परवेस ॥

## जुलेखा बरनन खंड

अब बरनौ यह कथा सुनावा । जासु विरह तेहिं मिसर लैआवा ॥  
 मगरिब देस सो नगर बखाना । तहँ तैमूस शाह सुलताना ॥  
 सब्ह कल्लु ताहि दीन्ह करतारा । राज पाट सब कटक सँवारा ॥  
 संतति और न दीन्ह गोसाईं । सुता एक अछुरी कै नाईं ॥  
 सो कन्या हुन बार कुमारी । नाम जुलेखा दर्ई सँवारी ॥  
 भई तरुनि जग वास बसानी । रूप अनूप जगत सब जानी ॥  
 देस देस के नृप सुलताना । कीन्ह चाह सुलतान न माना ॥  
 दुहिता जोग रूप कहँ पावा । जेहि तें होय सँजोग मरावा ॥  
 कहँ यह जोग जगत महँ कोई । जो यह कन्या कर बर होई ॥

सात दीप से चाह उत , लागे आवे जाय ।

काहु देय न उत्तर नृप , तौ लै गरब सुभाय ॥

अब नख सिख बरनौ तेहि केरा । बाउर होय जो दरसन हेरा ॥  
 प्रथम कहौ मोंग कै रेखा । सूरसती जमुना बिच देखा ॥  
 खरग धार वह मोंग सोहाई । सेदुर तहाँ न रक्त लगाई ॥  
 औ ता महँ रूये गज मोती । राहु केत महँ नखत के जोती ॥  
 दुओ दस घन वादर जस छावा । भय कौ ध चमकै दिखरावा ॥  
 दामिन अस वह मोंग सोहाई । केस घमंड घटा जस छाई ॥  
 जस जमुना के नदी अपारा । मोंग बाँध तिन्ह सुघर सँवारा ॥  
 सेत बध तस मोंग सोहाई । विरही नैन बार जनु पाई ॥  
 जो न होत वह मोंग अनूप । इबत नैन स्वरूप अनूप ।

मोंग सुहाई सुख बंधी , भाग अधिक तेहि दीन्ह ।

राहु केत दोड दस तहाँ , मनहु किरन रव कीन्ह ॥

केस सीस का करौ बखाना । तच्छक देखि सो ताहि लजाना ॥  
 मुख पर लरहिं जो होइ बेकरारा । तथ सदेह करै सभारा ॥  
 कोउ कहै अहै तम राजा । सोहै तहवाँ जोत विराजा ॥  
 कोउ कहै अहै दिनेस सोहावा । बरत हेत कालिदी आवा ॥  
 कोऊ कहै कि नागिन कारी । दीन्ह छॉड़ि मन सो उँजियारी ॥  
 कोऊ कहै श्याम अलि मोहा । पुहुप पराग आय तेहि सोहा ॥  
 पुहुप चित्र महँ मृग मद बारा । खींची चित्र चिनेरह मापा ॥  
 केस सीस मानो निसि कारी । प्रात काल मुख कै उँजियारी ॥

केस रचत तज आस न पासा । केा तेहि जाय सो पावै वासा ॥  
 सिरिस फूल तहँ सोभा देखै । ओ चोटी लखि मन हरि लोई ॥  
 वेनो गूँधी लरी से , जग नागिन बन लीन्ह ।  
 मूँगा चौकी पीठ पर . भान छाँड़ि तेहि दीन्ह ॥  
 अत्र लिल्लाट बरनौ सुखकारी । राका ससि तासों उँजियारी ॥  
 कनक खोर सो टीका दीन्हौ । ससि गुरु कमल अंध ब्रह्म कीन्हौ ॥  
 मंगल बूँद सुरंग सोहावा । ससि गुरु मुम्म एक ग्रह पावा ॥  
 राहु केत गज दोउ दस कारे । मध्य सोम पूरन उँजियारे ॥  
 तहाँ सो भलक किनारी देखा । जस ससि महँ दामिनि परबेसा ॥  
 इत अवरोध उधुध सुहावा । दुओ दस राहु गुपुत दिखरावा ॥  
 गुर सुर कुज ससि कै यक ठाई । सोहँ सदा लिल्लाट सोहाई ॥  
 गिरवर गढ़ सोहै तिन्ह सारा । होय विकल तेहि देखन हारा ॥  
 जोत कहिय मन भूँठि कै जाना । उन कै अग विकल मै आना ॥  
 चद लिल्लाट न सोहै , पूरन जोत अपार ।  
 वह कलक विकलक नहिँ , वह षट बुध लहि सार ॥  
 भौँह धनुक का बरनै कोई । जाय सो ग्यान तहाँ लखि खोई ॥  
 बरनै सर वह धनुख समाना । ताहि देख जग डरपै प्रांना ॥  
 भौँह कमान चढै नित रहै । सर सधान सो मारन्ह चहै ॥  
 गाल्ल गाल्लनै सुन्दर सोहै । लखि भृकुटी सो सर मन मोहै ॥  
 इन्द्र धनुक तेहि देखि लजाना । खीन बान होइ वेगि बिलाना ॥  
 धनु महँ जीव आप परबेसा । दुओ दस केस सोहावन केसा ॥  
 भौँह सरासन भृकुटी बाना । नैन बान इत बौँघहिँ बाना ॥  
 देखि ताह थिर रहै न ग्याना । जाय भूलि सब सुद्धि पराना ॥  
 तिन्ह बेँदा कोटिन छबि देखै । धनि मानहु जीवन हरि लोई ॥  
 धनु भौँहें विघनै रच्यौ , भृकुटी सनमुख बान ।  
 देखि सरासन सिर चढै , कपि जगत परान ॥  
 नैन देखि मन होय बेहाला । जासु कटाछु हिए महँ साला ॥  
 सेत साम ओ अरुन सोहावा । बिख अमिरित मधु घोर दिखावा ॥  
 जाकहँ लाखै भये चख राता । मरि मरि जियै रहै मटमाता ॥  
 अंबुज बरन दिधिग अरुनाई । भानु बरन होय गया लुभाई ॥  
 अखन जोर सदाँ मतबारे । भूमहिँ निस दिन प्रेम अखारे ॥  
 दौ बोहित दोउ नैन सँचारा । लाज सनेह बोझ दोउ भार ॥  
 दुअ अँबिरित कै सुभग कटोरी । ता महँ सरव हलाहल घोरी ॥  
 लहर कटाछु न जाय बखाना । जिन देखा तिन निश्चय माना ॥  
 दोइ खजग सारद रिनु माही । राका ससि निरभरै लडाही ॥

दुआं सुनै न जग में किए , जाल सितासित साज ।

लाय विछावा मधुर विश्व , मन मोहन के काज ॥

दोउ सरवन दुह सीप सुहाये । मोती भरा सदा दिखराए ॥

करनफूल औ पात सुहाए । वाली तेहों अधिक छवि आए ॥

बरनि न जाय मरव रस ताके । प्रेम बचन सुनि निसि दिन जाके ॥

प्रथम प्रेम कर सरवन वासा । बिन नैनन कर करहिँ पियासा ॥

बहुरि हिए महँ करि बर वेमा । करहिँ ताहि वाउर कै वेसा ॥

पुनि सरूप सरवन सुख दाई । करन करन का बरन सोहाई ॥

कान अनूप से प्रेम नगीना । कानन ते उपज्यो नित हीना ॥

कान न करहिँ से कान सोहाए । सुनहिँ बचन से वह मन भाए ॥

मरवन अधिक सोहाने , दुआ दम रूप अनूप ।

बिन कटाक्ष करतार कई , दुआ दस रतन सरूप ॥

नामिक रसिक सदा रस गाहक । वास सुवास लिए जेहि लाहक ॥

नथ बेसर छवि खेल कराए । मोती डोलत हिया डोलाए ॥

मानहु हाथ सिकन्दर केरा । रूप भँवर ते लहरन फेरा ॥

मोती पडसि अघर पर आई । चिनगी मनो चकेर जुलाई ॥

सब्ह मुख कै सोभा वह नासिक । सब रम लीन्ह औरहिँ से नासिक ॥

जस चपै की कली सोहाई । खड्ग धार तेहि मन विकसाई ॥

नासिक रसिक महा सुकुमारा । निरखहिँ मनुस अनेक अपारा ॥

धन नासिक की रीत सोहाई । गुन अवगुन सब्ह दीन बताई ॥

समै वदन कर अहै सिँगारा । बंधै काम खरग कै धारा ॥

नासिक सोभा का कई सब मुख सोह बढाय ।

तापर ऊँच मुहाए , उत समुद्र अधिकाय ॥

अब कपोल वरनौ सुख दाई । गात गुलाब देखि मुरझाई ॥

सबहिँ कपोल सुरंग सुहावा । देखत काम ताहि छवि आवा ॥

कँवल कपोल न जाइ बखाना । कहँ ससि पर जग ताहि समाना ॥

बेसर देख से जान लजाए । कहँ तेहि सम जेहि उपमा लाए ॥

ता मे दसन अनूप सोहावा । तिल कपोल छविबरनि न आवा ॥

बिसुवरमै लखि सुषर कपोला । दीठ परै तिल दीन्ह अमोला ॥

ईँगुर जान कपोलन गाना । उत सुरग तिन्ह भँवर भुलाना ॥

सिहर सुहावन बोल अनूपा । जाय रूप लखि जाय सुरूपा ॥

रचा चतुर विधि सुषर चितेरा । परी बूँद खसि केरिन हेरा ॥

कँवल कपोल मोहाने , तिन सोहै तिल त्याग ।

जम अलिन्द अरविद पर , आन कीन्ह बिसगम ॥

अघर सुधा घर बरनि न जाई । भये अनूठि वै जूँडन पाई ॥

अँविरित सग देवतन कर जूँठा । वह से अघर पुहप अनूठा ॥  
 जानि न परहिँ अघर उत खीने । नित भाखैँ वै मधुर नवीने ॥  
 सुनत बचन वै अघर सोहाए । ऊख पिथूख बन्ख सुखाए ॥  
 अघर सजीवन मूर सुहावा । सुधा पिडाक बिरचि बनावा ॥  
 अघर खोल जव वह मुसकाई । खान सजीवन की खुलि जाई ॥  
 जव मुसकाय सखिन्ह से गारी । भरहिँ फूल औ होहिँ अंजोरी ॥  
 अरुन मूदू औ अमिय सुधारा । रहत अघर पिथूख अधारा ॥  
 जो वह अघर मधुर मुसकाई । तो मिरतक कहँ देत जियाई ॥

अघर सुधाधर मधुर उत , कीन्ह सुरँग सुख भाग ।

जेहिते बोले औ हिये , सदा सजीवन पाग ॥

चिबुक सो ताहि का बरनै कोई । सिद्धि सदन महँ कूप सो होई ॥  
 देखत कूप होय बिकरारा । बूड़ै मरै जिऐ इक बारा ॥  
 प्यारे बदन सिद्ध करतारा । तहाँ कूप महँ चिबुक अपारा ॥  
 चहै दिष्टि मुख देखै लागै । पड़े कूप महँ जाय से धाकै ॥  
 भँवरन पडै डीठि वह जाई । टक टक रहे सो थाह न पाई ॥  
 चिबुक गाड़ उत सुढौल सँवारा । मज्जहिँ जग मानुस बिसतारा ॥  
 वह सुभलक जेहि उपमा पाहीँ । बूड़हिँ तड़पहिँ चित तेहि माहीँ ॥  
 परे जबहिँ हूँबहिँ उत्तराहीँ । पार घाट तेहि पावत नाहीँ ॥  
 गाड़ अनूप बार बिसतारा । चमकै सुभग से दई सँवारा ॥

चिबुक सुहावन सुदर , गाड़ अनूप अपार ।

को तिन महँ बूड़हिँ तरहिँ , कतहुँ न पावे पार ॥

गिँव अनूप बरनै का कोई । देखत पाप जाय तेहि धोई ॥  
 गीँव सुहावन सुभग अनूपा । जातरूप डरि जाइ सुरूपा ॥  
 कूदन चाक चढाय बनाए । देहि अदेहिन गार सों सुहाए ॥  
 चमकै अरुन सुहावन गोजेँ । कनक खोट जेहि लखि जीजेँ ॥  
 बिसुकरमै उत सुदर साजा । गीवा देखि हिये महँ लाजा ॥  
 लखि सुगीँव थिर रहै न ज्ञाना । सँचे डार रचा सज्ञाना ॥  
 चंपक कली उर बसै अनूपा । कहँ भूखन जो गिँव रस रूपा ॥  
 समै अग बिधि आप सँवारे । सभ ऊपर वह गीँव निवारे ॥  
 कठ अमोल गोल उत सोहा । मुनि गँधरव रिपि ता लखि मोहा ॥

गीव उठाने गरब तें , पडै कूप अभिमान ।

रंभा सिध औ उरबसी , रमा मनोज लजान ॥

उर चमकै जस उदित जुन्हाई । तिन्ह उरोज दुइ मुरति सुहाई ॥  
 कोमल कुच बन्धौ धरनीमा । बरन लरै फल रग महेसा ॥  
 नारगी से उरज कठोरा । कुल्ल उपमा तेहि जाय न जोरा ॥

उर कुंदन पानी जम डारा । दुह मूरति महँ आप उतारा ॥  
 दोउ लाल कै मूरति साजा । देखि सो लाल रग वह लाजा ॥  
 कुंदन वागन क्यागि बनाई । दुह अँविरित फल तहाँ सोहाई ॥  
 केवल कोविटहि उरज सोहाई । चख अलिद रस लीन्ह लुभाई ॥  
 मुरत मनोज देखि कै हारा । निज अँवधाय सो रख्यौ नगारा ।  
 धुँधची सम तेहि रग नेहावा । तहाँ स्यामता उन छुवि पावा ॥  
 तहाँ हार औ मोहन माला । होय प्रान हाल वेहाला ॥  
 कुच कठोर देखत हरै । सुर नारी एक नार ।

काम कला पूरन तहाँ, कीन्ह आप वैपार ॥

छतिय अनूप दुह लहै संवारा । पान फूल कै रहै अधारा ॥  
 रोमावलि रेखा तिन्ह सोहै । नैनन्ह देखि देखि ताहि मन मोहै ॥  
 अँविरित कुंड सो नाम सोहाई । रहै नागिनी मुख लपटाई ॥  
 देखि गरुड वह चक्रित भई । नागिनि ठहकि तहाँ रहि गई ॥  
 अँविरित कुंड नाभिमुख पूरा । रहि पाछे मुख फेरि न मोरा ॥  
 छतिय निहारि सखिन्ह ललचाही । सुर नर मुनि केउ देखा नाही ॥  
 जो देखे वह छतिय सोहावा । पूरन काम सो आन सतावा ॥  
 ता पर पीठि अनूप संवारा । होय मलीन दीठि कै मारा ॥  
 कामल विमल पेट निरमाया । रोमावलि बेनी कै छाया ॥

रोमावलि बेनी बिरह, सोहै छत्र अनूप ।

गात सोहावन उत विमल, छाया अतुल सरूप ॥

का बरनै भुज सोभा कोई । रचा चित्र महँ चित्रित सोई ॥  
 भुज ते कर अँगुरिन लहि सारा । चढ़ा उतार सु चित्रित धारा ॥  
 पुहुप छत्र वह दड सोहावा । काम चितेरै चाक फिरावा ॥  
 भुज भूखन कर भूखन सोहै । अँगुरिन मुदरि लखि मन मोहै ॥  
 दोउ कर सोहै ललित कलाई भले देख अचछ पाय अछाई ॥  
 वह सावक चदन कै साखा । लपटे रहै करै अभिलाषा ॥  
 कर भुज ते उत सुदर साजा । रोम रोम छुवि सिस्ट बिराजा ॥  
 भुज भूखन नौ रतन सोहावा । कर पहुँचीन जरत छुवि पावा ॥  
 चित्त हरा लखि पावन रूपा । धनि पावन कर रूप अनूपा ॥

इदु बुद्ध अरु मेहदी, रतनक जनु तेहि वान ।

तेहि ईगुर छुवि देखि कै, रहै मोहि मन मान ॥

पीठहिँ तेहि कर गोल बेयारी । ता पर परी जो चोटी कारी ॥  
 मूंगे की चौकी छुवि देई । तिन बैठे नागिन छुवि देई ॥  
 पीठ के तन को सकै निहारी । डँसै डीठ महँ नागिन कारी ॥  
 वह सो पीठि जेहि तजै न डीठी । देखा करै सदा वह डीठी ॥



देखत रहै पीठि चख हारी । पाछु परे रह डीठ न पारी ॥  
 सुदर पीठि कनक रंग धारा । बिसुकरमै जस सौँचै ढारा ॥  
 पीठि देखि मन चक्रित होई । कुसल छेम लखे का कोई ॥  
 दुअ दस पीठि अपूरव देखा । सोहै बुद्ध कनक कई रेखा ॥  
 यो रेखा लखि शान हराई । कदलि रंख के पटतर लाई ॥

पीठि दीठि देखत सदा , होय हिए विकरार ।

नागिन बेनी तिन्ह वसी , डँसी पीठि एक वार ॥

निसेक लक बरनी नहिँ जाई । डीठि भार कत सकै उठाई ॥  
 रहै मखी अचरज कै माही । कोउ कह आह कोउ कह नाही ॥  
 वार चाह कटि कोमल बेनी । देखि न सकै सो डीठि बिहूनी ॥  
 नारिन सग जहाँ पग धारा । लचि लचि जाय वार कै भारा ॥  
 चलत नारि मन सग करेई । दुगची लचि धनु दिया डराई ॥  
 कनक तार अस लक सोहाई । कोंप दीठि सो रहै - डराई ॥  
 धन चरित्र वह सुधर सँवारा । सहै नारि सभ तिन कै भारा ॥  
 सभ तन देखै नैन मोहाए । अग सग लखि तेहि डर खाए ॥  
 कटी भाग छवि देह अपारा । मोहहिँ सुर मुन तेहि भुकारा ॥

निरगुन सुरगुन पाव जस , तस कटि परै न देखि ।

अवर अग देखै नयन , भागहिँ लक बिसेख ॥

जघ तत का करौ बखाना । केवल अमोल सुभग सुर ताना ॥  
 भारी जघ तत सोहावा । पिँडुरी जहाँ अधिक सुख पावा ॥  
 मूँगा की यह जघ सुहाई । तस पिँडुरी अस चाँक सुहाई ॥  
 का बरनै ताकै सुकुमारी । सभ तन सौँह तासु अधिकारी ॥  
 औ पिँडुरी सोहै उत गोरी । नैनन भार होय मति धोरी ॥  
 पिँडुरी जघ लखि रहै न ज्ञाना । लखि तँत जघ तजहिँ सब प्राना ॥  
 जैस तत तस जघ सोहाए । तस पिँडुरी अस चाक फिराए ॥  
 चाक चढाय सँवारयो ताही । होय अधीर नैन लखि जाही ॥  
 तिन्ह पायल पैजनी सोहाई । धुँधरू बिछिया बुद्धि हेराई ॥

जघ सोहावन देखि कै , सत्त धरम भजि जाहिँ ।

पिँडुरी निरखत पाप दुख , हरै पला छिन माहिँ ॥

नख अमोल कल्लु बरनि न जाही । केवल चरन लखि सपुट गहही ॥  
 जस अरबिंद सुरंग सुहावा । तस वह चरन अनूप बनावा ॥  
 देखि कमल होय रग बिहीना । वह सुचरन सुख रंग रस लीना ॥  
 चरन बरन तेहि जाहिँ सोहाए । देखत पाप सोभाग डेराए ॥  
 औ अँगुरिय तेहि सुंदर आनी । मेहँदी ईशुर ही के पानी ॥  
 यक नूपुर बिछिया उत सोहै । कोकिल मुनत सयद वह मोहै ॥

रूपी चरन सब सोभा साधा । देखत चित्त रहे तेहि हाथा ।  
उत कोमल ऐंड़ीय सोहाई ; देखि महाउर हिए लजाई ॥  
जब तबनी भइ राजकुमारी । काम अनग अग सचारी ॥

उत ऐंड़ी मुकुमार तेहि , अँधिरित लाल लगाय ।

धरत पाँव वह बाल के , वासुकि देखि लजाय ॥

सखिन्ह जो चाँहें पाँव पखारा । चक्रिन जान रग लखि सारा ॥  
रूप अधिक तैं हिए उछाहा । भूखन रचि तिन गेधरव लाहा ॥  
निस दिन सखिन्ह सग फुलवारी । करै कुलाहल कोट घमारी ॥  
मदन प्रवेश हिए महँ कीन्हा । पैम सुरग अग महँ कीन्हा ॥  
देख सरूप सखिन्ह ललचाहीं । पवन वास तिन्ह पावत नाही ॥  
घाइ खिलाई सखिय सहेली । तेहि के सग करहि सुख कैली ॥  
साज सिँगार औ अमरन जोरा । रूप गुमान न काहुन जोरा ॥  
मता पिता के प्रान अघारी । समय सोच नहिँ जानै नारी ॥  
और रोग तेहि तैं मुरभाहीं । गात तत उन्नत अधिकारी ॥  
भय बालापन वारी , सदा रूप अधिकाय ।  
मात पिता बहि तरुनि लखि , लागै हियै लजाय ॥

## स्वप्न खंड

एक रात जो करै सोहावन । प्रेम स्वरूप विरह उपजावन ॥  
 प्रेम भरी रजनी उँजियारी । सखिन्ह साथ सोवै सो नारी ॥  
 आधि रात लहि जागि कुमारी । प्रेम कै बात सुनत सुखकारी ॥  
 आई नौद तमसि अलसानी । सोइ गईं सब सखी सवानी ॥  
 सोवा पहरू औ केतवारा । सोवा तो उत घट वजन्हारा ॥  
 सोवै सुखी दुखी नर नारी । सोवै खग मृग खेत करारी ॥  
 सब सोवा केउ जागत नाहीं । जागत एक प्रेम जग माहीं ॥  
 सोवै लागि तेहि समय जुलेखा । यूयुफ कहँ सपने महँ देखा ॥  
 मीठी नौद सवै जग सोवा । प्रेम बीज हिय जा महँ गोवा ॥  
 भौन सरूप तहँ आय गय , देखि रहै टक लाय ।

लीन्ह प्रान तिन्ह काडि कै , रूप अनूप दिखाय ॥

देखत नारि विमोहित भई । निरख रूप वाउर होइ गई ॥  
 नैन बान ते बेधा हिया । वात न आउ मौन भइ तीया ॥  
 छिन एक ठाढ रहा रँगराता । पुन मुसकाय कीन्ह अस बाता ॥  
 हम तुम्ह का चाहा चित लाई । तुम्ह हिये ते जिन देहु भुलाई ॥  
 कहि यह बात चहा उर लावा । जागि परी कुछ दिष्टि न आवा ॥  
 जागत कै चकचोहट लागा । जस पछी कर ते उड़ भागा ॥  
 हिरदै लागि प्रेम की गोँसी । भयो सुज्ञान हानि तन नासी ॥  
 सोवत सुख जागत दुख पावा । रोम रोम तन विरह अकुलावा ॥  
 मूरत एक सुदिष्ट दिखाई । हिए माहि जस गई समाई ॥

प्रेम फंद अरुभाने , गई ज्ञान मति भूल ॥

सँवर रूप अकुलाय मनु , उठै हिये महँ सुल ॥

उठि बैठी मुख सँवरत सोई । नई लगन कहि सकै न कोई ॥  
 जत्र सँवरै मुख तव बिलखाई । लै सुलाज तँ रोय न जाई ॥  
 विरह बान बेधा एक वारा । रोम रोम व्याकुल तेहि छारा ॥  
 चिनगी विरह आगि कै लागी । सुलगै लाग हिए महँ आगी ॥  
 सखिन्ह देखि धन बदन मलीना । मन व्याकुल तन सुघ बुध हीना ॥  
 पूँछै कत तुम्ह चित उदासा । कवन सोच तुम हिरदै वासा ॥  
 तुम्ह सब कर जग प्रान अधारा । काहै लाग भई निकरारा ॥  
 सम सुख तुम्हहि विधाता दीन्हों । मन मलीन केहि कारन कीन्हों ॥  
 पान न खाहु न सूँघहु फूला । अभरन अवर सिँगारहु भूला ॥

दिन भर मौन किये रहै , भूख प्यास गये भूल ।  
 पान न खाय न रहि सकै , कोंट भए सब फूल ॥  
 भूखन रतन उतारि जो डारा । दुख दायक भये सबहिँ सिँ गारा ॥  
 मन महँ सोच करैँ मुरझाई । लैगा प्राण स्वरूप दिखाई ॥  
 नाउँ ठाउँ कछु जानत नाहीं । कहों सो खोज कलँ जग माहीं ॥  
 नियरे ठाढि रहै वह मूर्ति । जेहि विन तन मन प्राण विसुरत ॥  
 रूप दिखाय सो चेटक लावा । मधुर वचन कहि अधिक लुभावा ॥  
 सेज परै जागै फिरि सेवै । लखै न रूप उठै फिर रोवै ॥  
 ना वहि मूरत ना वहि ठाळें । कौन हत्यो वह का नहिँ नाळें ॥  
 छूटै आँसु चलै जस मोतो । कहै के अय मनभावन जोती ॥  
 कहाँ गयो वह रूप दिखाई । नट नाटक चाटक अस लाई ॥

तोहि संपति वहि दह किये , जिन्ह कौन्हौँ तोहि भूप ।

एक बार फिरि आवहु , आनि दिखावहु रूप ॥

ज्ञान हेराय तो मूरत हेरानी । लागत आगि न बरसै पानी ॥  
 जातवेद होय सेज जराई । जानि वेध सब वेद भुलाई ॥  
 पावक भर से पवन जो लागे । रोम रोम लै सरागन दागे ॥  
 खिन उठ सेज परै विकरारा । खिन उठ कै बैठे विसेभारा ॥  
 खिन तन डहै से अगिन उदामा । खिन बरसै चख ऊदक भरना ॥  
 खिन सो उठै विरह कै ज्वाला । खिन मुख सँवरत होय वेहाला ॥  
 कहै कि ए बैरी दुख देवा । का मै कौन्ह चूक अस खेवा ॥  
 खिन रोवै खिन नैन छिपावै । खिन सोवै पै नींद न आवै ॥  
 विकल सरीर भयौ जस पारा । विरह अगिन ते सुठि विकरारा ॥

खिन चख बरसै अगिन जल , करत न बनै पुकार ।

कल न परै पल ना लगै , सदै दुकूल न भार ॥

यहि विधि निसि बीतै दिन आवै । सखिन्ह देख चख नीर छिपावै ॥  
 अधिक विकल होय प्राण गँवावै । रोवत बनै न कहत सोहावै ॥  
 बैठहि मौन साध बैरागी । द्विये सँभार विरह कै आगी ॥  
 उठ घाईँ सभ सखी सहेली । करत सदा जस कूकत बेली ॥  
 देखा आप जो प्राण पियारी । सखिन्ह होंय अधिकौ विकरारी ॥  
 निस दिन खोज करै सभ कोई । कँवल मेद का जानै कोई ॥  
 घाईँ लखा पेम कै पीरा । चरचा देखि मलीन सरीरा ॥  
 जव सु एकंत भई तव काहा । केहि विधि अंजुज सपुट गहा ॥

कहौ मेद घनि आपन जो कुछ विरह नियोग ॥

करौँ उपाय सो रोग कै , लै मेरळें तेहि जोग ॥

मैं तोहि का केहि चाह से पाला । दिन दिन देखि सो होहुँ बेहाला ॥  
 बालापन तोहि हिपें चढाये । फिरौं चहुँ दिखि तोरे फिराये ॥  
 पोख्यों सो तन छीर अधारा । प्रान तें अधिक सो प्यार तुम्हारा ॥  
 नित छाती पर तोहिं सेलावा । नैन श्रोत मोहि चैन न आवा ॥  
 तोर सो दुःख हरयो मोर चैना । कैसे दुखी लखौं निज नैना ॥  
 सुनि यह बात चरन सिर लावा । आपन अरथ सो बरनि सुनावा ॥  
 तुम माता तें अधिक पियारी । तोहि छुट अवर न हित् हमारी ॥  
 औ तोहिं सम कोउ नाहि सयानी । तोहिं सब वेद भेद जग जानी ॥  
 पै दुख मोर कठिन है धाई । जेहि दुख कर कोउ नाहि सहाई ॥

कहा हौं मोह्यौं अछरी, कहु मानुख केहि मान ।

जेहि कै नित मोहि आस है, कत दुख सहे परान ॥

कह्यो लाज ते कहा न जाई, जो न कहीं कत प्रान रहाई ॥  
 प्रान जात का भेद छिपाऊँ । कहीं बिथा जो औषध पाऊँ ॥  
 धाय कहा तुह प्रान अधारा । तोरे लाग तजौ घर बारा ।  
 सौं देखौं तोहि चित्त उदासा । कहाँ मोहि अब रहे हुलासा ॥  
 सो जानहु हम गुन अधिकारी । कस न कहहु तुम भेद उचारी ॥  
 जानहु प्रेम कीन्ह तन रेखा । काहुन कहँ तुम नैनन देखा ॥  
 तेहि कर करौं सो ओखष खोजू । हरौं सकल दुख डारौं रोजू ॥  
 कहा जुलेखा सुन मोर बाता । मोर हिया कुठाउँ सुराता ॥  
 सपने महँ वह रूप बिसेखा । जो कबहुँ ना सुना न देखा ॥  
 करौ जतन अब धाय, न तो मरौं जिव खोय ।

कहा भेद मै तुम्ह ते, सुने न दूजा कोय ॥

तेहि कर बिरह बान मोरे लागा । लागत रोम रोम तन जागा ॥  
 चहुँ प्रान तो करहु उपाऊ । हौं परिय जेहि पंख न पाऊ ॥  
 मोहि बारे बिधि हिये सँवारा । लाजन न मरौं न जाय उचारा ॥  
 जो निलज्ज होय प्रान लुटावँहु । जन परिजन महँ लाज गँवावँहु ॥  
 धाई सुना प्रेम कै बाता । उपजयो रोम रोम दुख गाता ॥  
 कहा बिरह पद कठिन अपारा । जेहि के प्रेम वार नहि पारा ॥  
 भये सपने लखि प्रान उदासा । पूछि न लिह्यो नाउँ औ वासा ॥  
 नाउँ ठाउँ जेहि कर कुछ नाहीं । को जानै कछु उन जग माहीं ॥  
 कै दुहुँ सरग लोक कर कोई । दैगा दुख दिखाय मुख सोई ॥  
 कै दुहुँ कछु चाटक देखरावा । भूँठ सँच कोउ जान न पावा ॥

काह करौ कत जाउँ चलि, कासों कहीं दुख रोय ।

बिना नाउँ ओ ठाँउ कर, का जाने को होय ॥

सुनि यह बात सो भई अधीरा । बाढै अधिक प्रेम कै पीरा ॥

भई अधीरज औ अज्ञाना । कहा कि कौन अहै सुलताना ॥  
 अहै सो मोर जीव लेनहारा । देउँ प्रान तो वहि हत्यारा ॥  
 आई सखी घाय चहुँ ओरा । लिये भोग औ कनक कटोरा ॥  
 बैठी रहै मौन की नाई । सखिन्ह खवावहिँ भोग बरियाई ॥  
 वह जिय अवर भोग कै जोगू । विरह बिधा औ प्रेम वियोगू ॥  
 भूला खेल औ भोग विलासा । भूला सुख औ खेल हुलामा ॥  
 भूला वेद औ कथा कहानी । प्रेम के पथ बँधहु अरुभानी ॥  
 भूला अभरन राग सुहागा । सखिय भई दारुन बिछनागा ॥

भूला खेल कोलाहल, सुख संत गय लूट ।

प्रेम फद अरुभाने, अवर फद सव दूट ॥

चार जाम दिन यहि बिधि खोई । बोलत बात सिखिहिँ मुख जोई ॥  
 निस कों सेज बिछावै रोगी । धाइ पढ़ै पट ओढ वियोगी ॥  
 चलैँ आँसु जस भलभल सेजा । रोय दुभावै तपत करेजा ॥  
 सखिन्ह पाँव जो चापैँ वैसे । वेधहि बान सुदारुन ऐसे ॥  
 कहैँ कथा जो सखिय सयानी । चित्त वियोग को सुनै कहानी ॥  
 फूल सो आन बिछावन सेजा । दहकै देह ओ तपै करेजा ॥  
 चदन आनि बदन महँ लावैँ । लागि आगि तन दुगुन दुखावैँ ॥  
 भवन भाकस अस धर खाये । अभरन तनु जस काल डँसाये ॥  
 रोम रोम जरै दुख दीन्हों । भा तन फाँस बरन वह नेहों ॥  
 होय बूथाकुल विलखाय, पल न लगे बेदाल ।

तज धीरज चख मूँदि कै, बिनवै दीनदयाल ॥

बूढ़हि देहु थाह भँभभारा । बिछुडे तोहिँ मिलावन हारा ॥  
 कहाँ मुरत औ ताकर वासा । कवन हतो जिन कीन्ह उदासा ॥  
 का तेहि नाँव डॉव तेहि कीन्हों । कलपौँ नाथ जाऊ मैं ताही ॥  
 कहाँ रूप उपज्यौ करतारा । कहाँ सो अहै जीव लेनहारा ॥  
 पियुखन कै अस बचन बटावा । लैगा प्रान सो बोल सोहावा ॥  
 केस सीस वै कहाँ बनाये । कवन जाल तिन्ह प्रान फँसाये ॥  
 यहि बिधि रोवत जावत आसा । सब निसि जात भरत उम्राँसा ॥  
 निसि नीते यह दग्ध अपारा । विरह बिहाय होय भिनुसारा ॥  
 कहाँ नैन औ रसभ कपोला । कहाँ सो अधर सुधाधर बेला ॥  
 मरै जियै लाजन डरै, करै न विरह उधार ।

जेहि पर परै सो जानै, लगन कै अगिन अपार ॥

दिन भर सखिन्ह सग मुख जावै । निसि एकत होय भल भल रोवै ॥  
 भीजे सेज ओ पाट बिछावन । संवरै हिये रूप मन भावन ॥  
 नींद भूख सगरी परिहरै । सोय रहै नित मोती भरै ॥

छुट रोदन औपदहि अपारा । और न कुछ तेहि नीद अहारा ॥  
 बिरह बिथा हिय अदर राखै । लाज खोय न काहू तें भाखै ॥  
 यहि बिधि दिन बीतै निस आवै । रात दिवस धन रोय गँवावे ॥  
 देखै सखी कँवल कुम्हिलानी । पै कछु भेद परै नहि जानी ॥  
 पूछे भेद कहै कछु नाही । बैठी रहै भवन कै माहीं ॥  
 कहाँ रैन वह चैन कै होई । जो फिर दरस दिखावै कोई ॥  
 दिन भर रहै सो बद महँ , सूर जरावत दीन्ह ।  
 दिन तें पीर बढ्यो सखि , निसि तें बड़ै सनेह ।  
 बीता बरख हरख तन त्यागा । रह्यो अकेल बिरह बैरागा ॥  
 भए अस दुखित छूटिगा भोगू । जोगउ ते साधा सुठ जोगू ॥  
 चरचै बिरह सो सखी सयानी । जेहि के मरम परै नहि जानी ॥  
 माता देख भई बिन प्राना । कौन तुसार कँवल कुँभिलाना ॥  
 लीन्ह बुलाय हिये महँ लाई । लाय हिये महँ धीर बँधाई ॥  
 माता भेद सखिन्ह से पूँछे । का वै कहै भेद सो पूँछे ॥  
 डरहिं सखिय तेहि देखि सुभावा । रहा निकट दुख कठिन नियावा ॥  
 निसि दिन जरै बिरह कै जारे । उतपत प्रेम भये सुख कारे ॥  
 देखि सुता जननी अकुलानी । आरत करै आप सुग्धानी ॥  
 चढी माय कैलास पर , भोग दई से हाय ।  
 सेवा करै अनंक बिधि , राखै निसि दिन साथ ॥  
 केटि जतन कै हारी सोई । एक दिवस बिधि आन सँजोई ॥  
 मूँघ चहै हिय परगट केरा । खोलन चह हिय केर अहेरा ॥  
 सोवै तन जागै वह जीऊ । हिये नैनन ते देखै पीऊ ॥  
 जेहि बिधि आदि परघट भो सोई । आवा फेर ना जानै कोई ॥  
 घाय नारि पोंव लै परी । हाथ जोरि आगे भइ खरी ॥  
 कहा कि प्रीतम लेहु न प्राना । देहु बिछोह किहेउ तन हाना ॥  
 तोरे दरस परस कै आसा । रह्यो आस घट पजर साँसा ॥  
 तुम अस कत भुलायो मोहीं । मैं नित जरैथौ सपन लखि तोही ॥  
 निस दिन सीस चढायौ खेहा । भसम बिरह तोहि अबुज देहा ॥  
 तुम अस निटुर बिछोही , बहुरि न लीन्ह्यो चाह ।  
 सुयौ सो बिरह बिछोह तें , अब कछु करहु निवाह ॥  
 कहा कि अस मोहि उपज्यो सोगू । तुम्ह तें अधिक सो बिरह बियोगू ॥  
 तुम पर कौन बिथा अस बीती । हौं जस सहौं सो प्रेम पिरीती ॥  
 तोरै बिरह भयो अज्ञाना । छुँड्यो देस ओ नगर अपाना ॥  
 तोरै लाग भयो परदेसी । मिला न कोई प्रेम सँदेसी ॥  
 सो तुम मोहिं भुलावहु नाही । राख्यौ प्रीत सदा हिय माहीं ॥

सदा मोहिं तुम नियर विसेखो । दूजे पुरुख और जनि देखे ॥  
जो चाहो हम दरसन राता । दूजे ते जिन बेलहु बाता ॥  
जय सँवरो तब हौं तुम्ह पासा । हम तुम्ह आस रहौं तोरे आसा ॥  
होय विलव सोच जनि मान्यहु । प्रेम न कतहुँ अबिरथा जानहु ॥

मोहिं भूल्यहु जिन प्यारी , औ सँवरहु दिन रैन ।

करो सदा बैराग चित , तब पावहु सुख चैन ॥

कहि यह बात चहा उर लावा । जागि परी कुछ दिष्टि न आवा ॥  
वहै सु सेज वहै सोउनारी । अधिक भई ब्याकुल बेकरारी ॥  
उठि बैठी औ लागी देखै । देखै सभै न ताहि विसेखै ॥  
कहा कि अरे प्रानपत मोरे । बँधये प्रेम फाँस मै तोरे ॥  
कब देखहि भरि नैन अघाई । केहि दिन हिय की प्यास बुझाई ॥  
कब वह धडी सो पल फेरि आवै । जेहि दिन दरस परम उन पावै ॥  
मै बाउर कछु सुध न कीन्हौ । नाऊँ ओ ठाऊँ पूँछु नहि लीन्हौ ।  
कहि ते कह्यौ सो आपन हारा । पूँछु न लिहयौँ सो अरथ अपारा ॥

प्रेम आय हिय में बसा , बसा सो आठों अग ।

दिन दिन वह बिरहिन दहै , कौन सु चरनै सग ॥

दिन भर रहै मौन की नाई । रैन जाग और रोय बिहाई ॥  
परसन भयो जो सपने माहीं । नाऊँ ठाऊँ कुछ जान्योँ नाहीं ॥  
अब की बेर फेर तोहि पाऊँ । बरनि सजल पग साँकर नाऊँ ॥  
राखौ नैन घालि बिलँभाई । मूदौँ पलक देहुँ नहिँ जाई ॥  
आवत लख्योँ न गोपित देखा । भयो मोर बाउर कै लेखा ॥  
कहँ बिधिना अस करै सुभागा । मिलौँ कनक जस काँटि सुहागा ॥  
तोर जोति मोर हिये समानी । दूसर और कहा मै जानी ॥  
पिउ आप मै पापिन छूँछी । नाँउ ठाँउ कछु लेहु न पूँछी ॥  
जब लहि आवागवन करेहुँ । तब लहि अधिक बिरह दुख देहुँ ॥

यह बिधि बीती रैन सभ , भयो चराचर रोर ।

घाई आइ निकट उठि , और सखिन चहुँ ओर ॥

तब घाई ते कहा उधारी । सपने दरस फेर चख चारी ॥  
कहा कि दरस भयो परकासा । पूँछि न लेहुँ नाउँ औ बासा ॥  
रखै लाग चित अबिरम जोगू । भये मोहित लखि बिरह बियोगू ॥  
चित बैराग औ हिये उदासा । रही लूटि होय नाउँ कै आसा ॥  
वहि के हिये सो बिरह बियोगू । जानहिँ लोग भयो कुछ रोगू ॥  
औषद देहिँ पिलावहिँ मूरी । औ सुख चैन दीन्ह तिन दूरी ॥  
माता देखि भई बैरागी । तन मन उठै कोख कै आगी ॥  
दुहिता रोग सुना सुलताना । औ सब नगर देस कुल जाना ॥



भयो प्रगट सभ जगत महँ, दुहिता रोग विराग ।  
 बेल अंकुरे हिये महँ, वाढ़ि सरग व्हँ लाग ॥  
 भइ वाउर तन मुष बुष त्यागी । चाहा जाय सु घर से भागी ॥  
 पातसाह तब वैद बुचाये । होय व्याकुल नाड़िका दिखाये ॥  
 औषध भोले भाँति कै कीन्हा । काढ़ा औ चूरन रस दीन्हा ॥  
 तेहि ते अधिक विधा तेहि वाढ़े । भागे वैदन कहि दिन गाढ़े ॥  
 प्रेम पार ते भई अघीरा । होय व्याकुल तन फारे चीरा ॥  
 उठि उठि चलै छाँड़ घर बारा । तन पर लागि चढावै छाया ॥  
 पातसाह तब लाज लजावा । दुहिता पग वैरी लै आवा ॥  
 बेरी परी न मानै नारी । निमि दिन सखी रहँ रखबारी ॥  
 कहै कि ए मन मोहन प्यारे । पग साँकर देखौ अनियारे ॥  
 मोरे मन सँवगी परी, तन सँकरी केहि मान ।  
 निज नैनन देखौ निरख, यह तन मन कै हान ॥  
 एक दिन पहर धौराहर सोये । सँवर सँवर मुख व्याकुल होये ॥  
 सँवरै वही स्वरूप अमोला । दुख ते नैन जल परलै खोला  
 कहा कि ऐ मोरे प्रान अघारा । भल दिये दरस विछोहन मार ॥  
 कहि के सपय अय प्रीनम प्राना । जिन्ह तोहि दीन्ह रूप औ न्याना ॥  
 नौउ ठाँउ अब देहु वताई । एक बार फिर दरस दिखाई ॥  
 कै किरपा औ सहसन दाया । निज दासी पर फिर कर माया ॥  
 तोरे निरह मरौँ अब रोई । सोऊँ सेज रक्त जल बोई ॥  
 सखी सहेली न जिऊँ सोहाई । मात पिता कुल आन गँबाई ॥  
 छाँड्यो भोग भुगत तोरे नेहोँ । छाँड़ि सिँगार चढायो खेहाँ ॥  
 छाँड्यो सब सुख दुख सखो, किछो जोग तेहि लाग ।  
 एक बार फिर आवहु, आनि दुःभावहु अगि ॥  
 एक रैन फिर आन तुलानी । आये समुख नौँद अलसानी ॥  
 तीसर सपन फेर वै देखा । वहै रूप जो आद विसेखा ॥  
 जानहु आप फेर अस बोला । अमीकुँड अघरन तँ खोला ॥  
 सै तोहि लाग तज्यो घर बारा । पर्यो कूप महँ मोहि निचारा ॥  
 मोर तोर प्रीत आदि लिखि राखा । करहु सो अंत भोग अभिलाखा ॥  
 तब दुख हटै होय सुख सारा । जब पाऊँ मैं दरस दुम्हारा ॥  
 यह सुन नारि मई तब ठाड़ी । अरुभी बेल प्रेम की गादी ॥  
 अब की वेर जाय नहिँ देहँ । जब लहि नाउँ पूँछ नहिँ लेहँ ॥  
 अब लहि यहि निब निकसिन गयऊ । जो फिर दरसन प्राप्त भयऊ ॥  
 नाउँ ठाउँ बतलावहु, पठऊँ जहाँ सँदेस ।  
 होय जोगिन वैरागिन, चलि आवहुँ वहि देस ॥

तब मुसकाह कदा सुन प्यारी । मिस्र देस महँ वास हमारी ॥  
 मिस्र साह कर सचिव सोहावा । आवहु वहँ तब होय मेरावा ॥  
 सचिऊ नाम जगत नित सोहै । और नाम बिरला कोउ कहै ॥  
 मैं अपने बस महँ हौं नाहीँ । आवहु वेगि मिस्र कै माहीं ॥  
 कछु दिन सही बिरह दुख दाहू । विन दुख प्रेम न प्रापत काहू ॥  
 जो दुख तैं नहिँ ह्यै उदासा । अत होय सुख भोग विलास ॥  
 जस चाही तुम मों कहँ प्यारी । तस चाहो तोहि अनत कुँवारी ॥  
 सपने महँ सुनि भई हुनासा । जागि परी कोउ आस न पासा ॥  
 रोय उठी गह्वर अकुलानी । नाउँ ठाउँ सुनि कै बिलगानी ॥  
 जिऊँ तो जाउँ मिस्र कहँ , मरूँ तो मारग माहँ ।  
 छार होहूँ उडि जाउँ अत्र , जहाँ बसै मोर नाहँ ॥

×

×

×

## जुलेखा बिरह खंड

सदा जुलेखा रोदन करै । यूसुफ रूप हिए महेँ धरै ॥  
 रूप दिखाय कत छल कीन्हौ । बिरह बियोग जोग दुख दीन्हौ ॥  
 भूठ बात कहि मोहन बाता । काहे कियो सो छल कै बाता ॥  
 मैं तोर बचन सॉच परमाना । लाज गँवाय मिसिर कहँ आना ॥  
 जो तेहि हते जरजँ साधा । जरतिउँ बैठि तऊ दुख बाधा ॥  
 रहत सत्त मोर यह संसारा । अब का करौँ कठिन दुख डारा ॥  
 मिटै रोग आवै हम पासा । सत्त धरम कर होइ बिनासा ॥  
 हौँ आपत पत राखहु लाजू । प्रान गए जीवन केहि काजू ॥  
 खायो कुल कै लाज सुहावनि । भयो निलज जग ठीठ कहावनि ॥  
 लाज धरम सब छाँड़ि कै, आयो मिसिर के देस ।

चहौ प्रान पत मोर जो, करहु बेगि परबेस ॥  
 जेहि कारन मैं लाज गँवावा । सो न भयो सब हत्यो छलावा ॥  
 रोगिनि भई रहौँ कब ताईँ । एक दिन मरौँ रोय हिय माहीँ ॥  
 तोर रूप मैं सपने देखा । भयो मोर अब तिह कर लेखा ॥  
 हेरै गयो हुमाय जो कोई । उलू मिला जो सरबस खोई ॥  
 पानी हेरै गयो पियासा । रेती देखि सो भयो तरासा ॥  
 कोइ बोहित चडि चाहत पारा । बोहित फट्यौ जाइ मँभुधारा ॥  
 महा जात भा व्याकुल प्राना । आगे आनि काठ उतराना ॥  
 भयो काठ वह प्रान अधारा । बूड़त बहत सो ताहि सँभारा ॥  
 जब वह काठ नियर भा आई । काल सरूप भयो दुख दाई ॥  
 करम हमार है पातर, को अब करै सहाय ।

गहिर अहै मँभुधार महेँ, परेउ काल बस आय ॥  
 यूसुफ मूरत दिष्टे उरैलै । धरै ध्यान निज आगे देखै ॥  
 करै बिलाप कहे दुख सारा । का मोहि बिरह अग्नि महेँ जारा ॥  
 देहु दरस औ आस पुरावहु । कबहुँ न मिसिर नगर कहँ आवहु ॥  
 करै मोर दुख परसन पाऊँ । निसि बासर दुख रोय गँवाऊँ ॥  
 जो मोहि आसा देत न दाता । करत्यौँ वहै दिवस अपघाता ॥  
 जेहि दिन दरस न तोर बिसेखा । सूर के ठाऊँ राहु मैं देखा ॥  
 काहे क अब लहि जरत्यौँ जारे । भरत्यौँ वही दिवस बिन मारे ॥  
 एक सपन दूजे सरग के बानी । किहेउ न तेहि असा जिवहानी ॥  
 निसि दिन तोहि भरोस जिव राखौ । बार बार बिनती यह भाखौ ॥

जेहि विधि सपन देख्वावहु, लायहु चित सो चित्त ।  
 तेहि विधि आनि जिआवहु, मरौ तोहि विन निच ॥  
 कबहुँ कहै पवन तें रोई । करै बिलाप अधीरज होई ॥  
 मारुत सदा करहु परबेसा । फिरहु राति दिन देस विदेसा ॥  
 कवन ठालें जहँ तुम नहिँ जाहु । काटहु मोर विरह अधिकाहु ॥  
 जाहु जहाँ वह पीतम प्यारा । कहहु जाय दुख दुखद अपारा ॥  
 कहौ कि सपन माहँ गहि बोंहों । दिहेउ मुलाइ फेरि कस नाहों ॥  
 दै घोका मोहिँ भिसिर बोलायहु । तुम अजहुँ लगि लाल न आयहु ॥  
 मैं जोऊँ नित बाट तुम्हारी । रहौँ बंद महेँ विरह के मारी ॥  
 केहि कारन अस बाचा कीन्ह्यौ । देस छुड़ायो सुधि नहिँ लीन्ह्यौ ॥  
 नैहर तब्यौँ न पायों तोही । तेहि पर धरम करम करमोई ॥  
 धृक जीवन पिउ प्राण विन, धृक विन धरम परान ।  
 दुअ जग करिआ होय मुख, होय सत्त कै हान ॥

×

×

×

×

## षड ऋतु खंड

रितु बसत वन आदिन फूला । जोगी जती देखि रँग भूला ॥  
 पूरन काम कमान चढ़ावा । बिरही हिये बान अरस लावा ॥  
 फूले फूल सिखी गुजारहि । लागी आगि अनार के डारहि ॥  
 कुसुम केतकी मालति बासा । भूले भेंवर फिरहि चहुँ पासा ॥  
 मैं का करूँ कहौं अब जाऊँ । मो कहँ नाहि जगत महँ ठाऊँ ॥  
 देखू फूल तो कीन्ह अँजोरा । लागी आगि जैरे चहुँ ओरा ॥  
 तुन फूले औ अँब फुलाने । कचना करौं दिस बास बसाने ॥  
 फेरी त्यागि भिरिग दुख दाहे । कानन भाँवर सदा सुनाए ॥  
 पीतम भूल गए सुख पाई । निरमोही कहँ दया न आई ॥

यह रितु चित कैसे रहे, सहे बिरह कै पीर ।  
 पूहुप देखि बसत रितु, कैसेहु धरै न धीर ॥

### कवित्त

भागो सोच वियोग बँजार समै, बिन काम कुलाहल चाखहि ।  
 चाखे जोगी जती अनुराग, सौं भेंवर पतिंग समै रस पावहि ॥  
 पाखे पेम सुरग में दीन्ह, सनेह भरित ऋतु लाज जो लागहि ।  
 लागहि देखू दवान चहुँदिसि, कौन दिसा होह बिरहिनि भागहि ॥

### सोरठा

हरे हरे ऋतुराज, बनि आवैं लोहित भए ।  
 आवे कौने काज, कत न पूछे बात मोहि ॥  
 ग्रीषम ऋतु उत परहि अँगारा । घेरि अगिनि बिरहिन कहँ जारा ॥  
 यह ऋतु महँ सब जाय सुखानी । बिरह बेल अजहँ न लहानी ॥  
 ग्रीषम तेज बिरह के आगे । मोरे हिए दाँउ अरस लागे ॥  
 मदिल छाया उसीर सोहावा । रवन भवन आवन मन भावा ॥  
 उमडि धुमडि घन चढै अकासा । सजोगिन मन मुदित हुलासा ॥  
 बरै लाग पावस कर डेरा । फिर धिर (धर) कामक मठ घेरा ॥  
 तम तन मैन जरावै जीऊ । काह करै निरमोही पीऊ ॥  
 फल अँबिरित बौरै चहुँ ओरा । हम कहँ बिरह हलाहल घोरा ॥  
 निठुर कत नहि पूँछुहि बाता । का हिये लगे फल अँबिरित राता ॥  
 नीर घटा उमडी घटा, घटा मोर चख नीर ।  
 नैना घट समझहि सदा, घट घट ढेर सरीर ॥

कवित्त

सूखि समुद्र गए रवितेज, सूखि गए सरिता जल धारी ॥  
सूखि गए पुहुमी पति मंदिल, सूखि गए जल मेघ सुखारी ॥  
सूखहि कृप तडाग लता द्रुम, बेलि बली बन औ फुलवारी ॥  
सूखहि 'निमार' अबुनल सूखहि, नाहिन ये अखियान दुखारी ॥

सोरठा

सूखि भए बेचैन, ग्रीषम ऋतुद्रुम बेलि बन ।  
एकन सूखे नैन, नित तरसहि बसहि सखी ॥  
ऋतु पावस घन घोर विराजे । घोर घमड घटा चढ़ि गाजे ॥  
धन गरजै दामिनि लौंकाही । नारि कत के गोद छिपाही ॥  
ज्यो ज्यो चमक गरज अधिकई । त्यो त्यो नाह नारि उर लाई ॥  
हम केहि के गिउ लावै बाही । पावस समय देहि बलनाही ॥  
खग भृग कवि औ मानुष सारा । माजि सदन सुख करहि अपारा ॥  
घर हमार सब भरिगा पानी । उत राजा हम बहि उतिरानी ॥  
जिन के छिन पिउ तजहि सुनाही । सुखी नारि पावस ऋतु माही ॥  
करम हमार भयो दुख दाई । का प्रीतम कहै आस लगाई ॥  
दोस हमार जो अबगुन कीन्हो । निरमोही का मन चित दीन्हो ॥  
पावस घन अधियार महँ, कैसे बचिहे प्रान ।  
होय रैन बज्जर कै, जो जागे सो जान ॥

कवित्त

बोलहिं मोर बियोग भरे, कोकिल कून दिया निज बोलहिं ।  
भूलहिं स्याम बिना घन स्याम, घमड ते मेघ चहुँ दिस भूलहिं ॥  
बोलहिं आसन जोगी जती के, 'निसार' महारस धूँघट खोलहिं ।  
खोलहिं मेघ बियोगिन को दुख, हूबहिं चित जो पिया भग कूलहिं ॥

सोरठा

दादुर मोर अँदोर, एक ओर घन घोर उत ।  
सती पवन भ्रुकभोर, सूने मँदिल न जाइ रहि ॥  
सारद । समै रैनि उँजियारी । हँसि हँसि पिय हिय लागहिं नारी ॥  
देखि बियोगिन कचन जोरी । सारद लाय दीन्ह जस होरी ॥  
भा परकास अगस्त दिखरावा । सरिता सागर नीर सुखावा ॥  
सरद चोँदनी निरमल देखा । भा हमार बाउर कर लेखा ॥  
सब निसि बीती गिनत तराई । सुख सोवहिं जिन के घर साई ॥  
सेज अकैल सोभ तन जारी । जम घायल कहै चोँदनि मारी ॥  
सारद समय पिउ चाहन सेजा । धुक जीवन हिय फटै कलेजा ॥  
सचिऊ के साजहि सुख साजा । वरन चोँदनी निसि उपराजा ॥

सेत बादला सेत किनारी। हीरा मोति चंद घन सारी ॥  
 समै सेज होय दुख अधिकाए। सेत बहुत सो घन कहँ भाए ॥  
 सेत भभूत रमाय मुख, कर जोगिन कै तंत।  
 धूनी लाजं जाय तहँ, जहँ निरमोही कत ॥

कवित्त

हिव सो जरे विरहानल तें, दिन प्रीत रखै वह आगि जराए।  
 घायल प्रेम के बान मोहीं, करि है विन प्रीति सरूप लखाए ॥  
 घायल और जगे न जिए, सभ लोग सहँ सन जोत दिखाए।  
 काहे ते प्रान तजो सजनी, नित रात करे सँ समुख धाएँ ॥

सोरठा

लगे प्रेम के बान, जरै विरह की अगिनि सो।  
 केहि बिधि तजै परान, सरद चादनी के चुनी ॥  
 अब हेमत परघट्टयो पाला। हिम तन उठहि विरह कै ब्वाला ॥  
 आवत जात न दिन निर माई। रैन पहाड़ परै पुनि आई ॥  
 भए जुरावन समै संजोगिन। औ कुफनू भय जरै वियोगिन ॥  
 बदन जुरावा सभ नर नारी। बिछुरे प्रान जाय दुखारी ॥  
 यक यक पछी दुहँ के होए। मिलि कै उठहि उठेरे सोए ॥  
 कुफनु पछि सम यह रिनु नाही। नित तन विरह अगिनि निकसाही ॥  
 अपने मुख तें पावक छारा। अपने अगिन होय जरि छारा ॥  
 होय चकई निसि जागि कितावे। जस बूड़त महँ थाह न पावे ॥  
 बाढा विरह रैन जस बाढ़ै। अरुके पेम फाँस हिय गाढ़े ॥  
 निसि हेवत पहाड़ भय, विन पिउ कटै न रैन।  
 जागि विहाऊँ रैन दिन, जाइ करै बंचेन ॥

कवित्त

छाय गयो सब सेत 'निसार', लगे खग खग विर सरसों।  
 कैसे कटे यह रैन पहाड़ सों, बँचे जो हिया हिया सरसों ॥  
 देखिए कौन बसंत समय जब, घाँक सती से बसे सरसों।  
 हेवत गए अपने विन सगहिँ, अब ओं खिन फूलि गई सरसों ॥

सोरठा

हेवत ऋतु उत गाढ, विरह जनावे आन तन।  
 घटा दिवस निसि बाढ़, जागे विरह विहाय तन ॥  
 लाग सिस्तिर ऋतु चित बैरागी। पवन उदास भए अब लागी ॥  
 लाग बसन सो लाग सुहावे। सिरी पंचमी चाह जनावे ॥  
 राग हिएँ अँग कीन्ह अलसाहा। नर नारी हिय उपजे थाहा ॥  
 भए हरख डफ बाजन लागे। कामिनि काम आय तन जागे ॥

चहुँ दिसि उड़ै गुलाल अनीरा । केहि विधि धरें सुहियरें धीरा ॥  
 पुरव जनम कर पाप कमावा । जो यह समय विरह दुख पावा ॥  
 पहिरिहिं सखिहिं वसती वागा । परगट भयो प्रेम अनुरागा ॥  
 खेलहिं फाग जो सँवरि गोरी । हम तन लाय लीन्ह जस होरी ॥  
 बौरें आँच वास महकाने । फूले कुसुम चाह अधिकाने ॥  
 तिय से तैमे अउर भए , बौरें आँच लतान ।  
 मै बौरी दौरी फिरौ , सुनि कोयल की तान ॥

सवैया

लाग तुषार परै चहुँ आँर , सखी तेहि अतुज देह डहे को ।  
 पिउ चिन रैन दुहेली बिहाय कंसे अकेली हूँ दुःख सहेको ॥  
 आवे जाड जनावे तुषार , दिए विरहानल जुआव भए को ।  
 बौरीसभै दौरफिरे ललिता सखि , बौरी लता फिर कैसे रहे को ॥

सोरठा

चहुँ दिस बेल निसान , हिऐँ आन जागा मदन ।  
 केहि विधि रहे परान , विरह बान बेघे सदा ॥

×

×

×

×



## यूसुफ जुलेखा मिलन खंड

यूसुफ भयो मिसिर कर भूषा, न्याव दान नित करै अनूषा ॥  
 एक दिन हिये कीन्ह अस ज्ञाना । मो कहँ दई कीन्ह सुलताना ॥  
 विन मत्री जो होय महीषा । जैसे सदन होय विन दीषा ॥  
 पै कोइ ऐस दिष्ट नहिँ आवे । जाह सचिव कै कोरे चढावे ॥  
 जबरहल तेहि अवसर आवे । सचिव कुरी कहँ अरथ जनाये ॥  
 भोर मँदिर तें बाहर आवहु । पहले मिले सो सचिव बनावहु ॥  
 यूसुफ भोर जो बाहर आवा । लकडी लिये जो मुख देखरावा ॥  
 उत दुरबल ओ नृप बल हीना । महा सुखी औ जीरन दोना ॥  
 तब मन महँ निज कीन्ह विचारा । कत उठावे यह जग कर भारा ॥  
 भये सोच महँ डाह तवाँई । जवरैल तब आइ सुनाई ॥  
 कौन सोच हिरदैं करो, औ मन होहु अधीर ।

सचिव करहु यह पुरख कहँ, दुरबल दीन्ह सरी ॥

इन तुम्ह ते बहु कीन्ह भलाई । दई चहे तोहि उरिन कराई ॥  
 यूसुफ कहा बहुत गत कीन्हा । दियो अरथ मैं ताह न चीन्हा ॥  
 कहा कि है बालक यह सोई । ताकर मरम न जानै कोई ॥  
 मिसिर सचिव तोहि चहा सँघारा । दै साखी तोर प्रान उचारा ॥  
 ते मानुष कर बालक अहा । जिन मुख बचन न्याव को कहा ॥  
 सो बालक यह दुरबल दीन्हा । जहाँ नाहि ओ रूप बिहीना ॥  
 सचिव जान कर चाई आगर । सो यह होय बुद्धि कर सागर ॥  
 तब यूसुफ तेहि हिये लगावा । ओ ता कहँ इम्माम भेजावा ॥  
 करि असनान पन्हावा जेरा । तास बादला जेत अँजेरा ॥  
 कँलगी ओ नवरतन पेन्हावा । ताह सचिव कै केरि चढावा ॥

अलख निरजन न्याव कर, एकहि एक विचार ।

काहू कै सेवा नृ-फल, करै न तनिक 'निसार' ॥

अब बरनौ वह बिरह वियोगिन । यूसुफ लाय भई जो जोगिन ॥  
 चालिस बरस जोग जिन्ह कीन्हा । दरब भँडार खोय सभ दीन्हा ॥  
 जेहि दिन नाँव लिये कोउ आए । तेहि दिन खजन भोग कराए ॥  
 जेहि नाँव सुनै नहि नारी । रोय रोय काटै निस सारी ॥  
 कुछ न रहा तब जोग कमाई । दरब अरथ सभ दीन्ह लुटाई ॥  
 रोवत नैन भये अँधियारे । रोम रोम तन बिरहिन जारे ॥  
 जब लहि नैन हुते वह केरे । तब लहि दरस प्रीतमहि हेरी ॥

गये नयन भइ रक भिखारी । विरह स्वरूप भई वह नारी ॥  
 कूबर निकसि पीठ महँ आवा । वक्र अंग भा स्रघ सोहावा ॥  
 लै लकुटी हेरत फिरै, नित यूसुफ कै वाट ।  
 जो कोई नाँव सुनावे, भुईं महँ धरे लिलाट ॥  
 बालक भूँटि सुनावहिँ आई । यूसुफ नौठ सुनत बौराई ॥  
 कहै कि निकसी आज सवारी । धाई फिरै होत बलिहारी ॥  
 जब लहि हत्यौ दरब ओ दाना । दीन्ह नाँव सुनि कौटि समाना ॥  
 यूसुफ काज सवहिँ कुछ दीन्हा । कुछ न रहा तब काहु न चीन्हा ॥  
 तब सब लोग सो वाउर कहै । विपत परे कौउ सग न रहै ॥  
 पावहिँ अरथ दरब पहिरावा । खाहिँ भोग लै नाम सोहावा ॥  
 जन न रहा कुछ सभ अलगाना । हत्यौ नेत्र सभ भये बेगाना ॥  
 जेहि तें कहै बात पर नारी । सो रिस खाय देह तेहि गारी ॥  
 लगुटी लिये गली गली, फिरै मंत्रि के आस ।  
 सुनत सवारी मंत्रि कै, धाइ फिरै चहुँ पास ॥  
 गई निकसि सभ दासी चेरो । अपने यक प्रीतम कहँ हेरी ॥  
 सेवक दासी रहा न कोई । विपत पड़े कोई साथ न होई ।  
 रहै बहुन महँ अकसर दुखी । होय अदरार रहै निक मुखी ॥  
 जो कुछ रहा सो सबहै गँवावा । पिया प्रेम विन अवर न भावा ॥  
 हरयो भोग सुख नींद विलासा । हरयो चैन औ हरयो हुनासा ॥  
 जोवन हरयो रूप हरि गयो । विरघ स्वरूप समै तन भयो ॥  
 भयो अंग सबह डील समाना । पै न गयो तेहि प्रेम को बाना ॥  
 भये तेज तन पौरुख हारा । नैनन मेटि गयो उँजियारा ॥  
 नास कीन विधि, सब गयो, खोये सुख अरु चैन ।  
 जोवन रूप न थिर रहा, रहा विरह तन मैन ॥  
 एक दिन एक नारि पहुँ जाई । रोवे लागि सँवरि सुख दाई ॥  
 तेहिके चरन सीस लै आवा । आवा पुनि सभ भेल देखावा ॥  
 यूसुफ नबी कै मोहि सवारी । देहु दिखाय होहुँ बलिहारी ॥  
 सँवर नार पाछिल दिन सोई । लाखन दरब लीन्ह सब कोई ॥  
 उठै मया भइ तेहि के सगा । जो दीपक सँग भई पतिंगा ॥  
 चहुँ दिसि फिरै सग लै नारी । अकस्मात मिलि गई सवारी ॥  
 उठै धूम तिल ऊपर भयऊ । चहुँदिस अरघ अरघ होय गयऊ ॥  
 लै सो पाट पर ताहि बैठावा । कहा चेत अब यूसुफ आवा ॥  
 ओ यूसुफ ते कहा पुकारी । बैठे पाट जुलेखा नारी ॥  
 नाम जुलेखा नार मुख, पडा जो यूसुफ कान ।  
 मया मोह जब उपजै, हियेँ प्रेम कर मान ॥

देखा विरिध भई वह बाला । ना वह रूप न रग न हाला ॥  
 कटा एक करै महुँ सोहै । पूछें लोग कि यूसुफ को है ? ॥  
 नैन नाह जो देखै नारी । पौरख नाह जो होय बलिहारी ॥  
 लगुटी लिये वाट पर ठाढ़ी । बक्र पथ मँह चित्ता गाढी ॥  
 रोवत टाऊ टाढ जो कंारी । जोधन रतन लीन्ह क्योँ छोरी ॥  
 हर गये जेत नैन से पानी । माँस भुरान नसैं अरुभानी ॥  
 अबुज रग हरिद रँग भयऊ । रती माँस सम भूरा भयऊ ॥  
 जो देखै सो निकट न जाये । देखि विरिध मुख जाय हेराये ॥  
 जो सवार आये तेहि पासा । कहे न आव मत्र कै बासा ॥  
 सन्ह सवार के पाछे , यूसुफ नबी जो आया ।  
 कहा भये हैं यूसुफ । जिन मोहि ऐस बनाय ॥  
 लखि यूसुफ मन भयो दुखारी । कौन हाल तुम्ह कीन्हों नारी ॥  
 औ कैसे मोहि छीन्यहु बाला । नैन अघ औ हाल बेहाला ॥  
 सन्ह सवार आये तुम्ह पासा । काहू देखि न किह्यो हुलासा ॥  
 कहा नारि सुन सुन प्रेम पियारे । चालिस बरस बिरह दुख जारे ॥  
 जब तुरग हम सौँह चलावा । चारिव घरी सो हियेँ चढ़ावा ॥  
 तुम्ह दौड़ाय तुरी लै आये । हम ऊपर खुर खद कराये ॥  
 चालिस बरस बिरह कै आगी । मोरे हिये रैन दिन जागी ॥  
 कटिन बिरह को ताह सभारे । छिन मँह अगिन जगत कह जारे ॥  
 जो यह अगिन समुद्र मँह डारै । सोख समुद्र मघवानल जारै ॥  
 डारैँ अगिन समीर पर , तो अजन होय जाय ।  
 धन सो हिया अग्नि मूरख , जेहि यह आगि समाय ॥  
 जस सो अगिन महुँ रहै समुद्र । औ समुद्र महुँ बसै जलधर ॥  
 तस होकेँ यह समुद्र माहोँ । जीवन मोर अगिन के माहोँ ॥  
 जो यह अगिन न हिय महुँ होती । जस घट महुँ वह पूरन जोती ॥  
 तो कत जाँवन हेत हमारा । बिरह अगिन मोर प्राण अघारा ॥  
 निस दिन अगिन हिये सुलगावै । हिय पसीज चख आँसू आवै ॥  
 बडवानल तम प्राण हमारा । जिन यह अगिन प्रेम सभारा ॥  
 चित डौँडी बुधि फेरी लावै । मन दूनौ कै भीड उठावै ॥  
 वह सो अगिन कर अहै पसीना । धरहिँ नैन ते तेज बिहीना ॥  
 बिरह बुद्धि दोउ करहिँ लराई । जस पारा लखि अगिन हेराई ॥  
 बसै समुद्र अगिन महुँ , ताको जीवन सोय ।  
 छिन बिछुड़ैँ तन लागे , पुन सो निजीवन होय ॥  
 यूसुफ कहा कि बात अपारा । हियेँ अगिन को राखै पारा ॥  
 राखि न सकै आगि यह कोई । दग्धै तनु जरि छार सो होई ॥

तुम्ह महेँ हाल रहा कछु नाहीं । एक सो भूठ रहा तन माहीं ॥  
 भूठ प्रेम कर का फल पावै । भूठ बात कहि धरम नसावै ॥  
 कहा नारि सोचहु मन माहीं । जग महेँ अगिन कहाँ है नाहीं ॥  
 अगिन धुष जेहि और न छोंग । पूरन वहै अगिन चहुँ ओरा ॥  
 देखहु अगिन बीच कै छारा । सूरज अगिन जगत सन्ह जारा ॥  
 अगिन भार जरत होय लोका । गरज गरज महेँ देख भभूका ॥  
 मधवानल वहि अगिन समानी । अगिन अगस्त सोखावत पानी ॥

आगिन सरग रवि समि , चन्दन धन नखत निहार ।

कन मानुख वहि अगिन ते , रहा न लोह 'निसार' ॥

अगिन तरुन नित लावत दाऊँ । अगिन विरिछु महेँ । वहिँ ठाऊँ ॥  
 अगिन विपत ते करै प्रकासा । भूमि अगिन चढि जात अकासा ॥  
 सब महेँ अगिन परघट परचँड़ा । गूदर बोंस सरहर सरकण्डा ॥  
 जो नाहीं आगे दुख देखहु । काह माँह वह अगिन विसेखहु ॥  
 कहा कि तुम सन्ह पढ़ा औ जाना । प्रेम अगिन तेहि हियेँ समाना ॥  
 सुन यह बात जुलेखा रोवै । परघट अगिन हिये जो गोवै ॥  
 तोरे हाथ कुछ यूसुफ आहै । कहा कि जाकहेँ ताजिना कहै ॥  
 कहा कि मोह देहु पकराई । विरह अगिन तव देहुँ दिखाई ॥  
 फुदन लीन्ह कोड कर हाथोँ । लै लायो ताकहेँ हिय साथोँ ॥  
 फुदन जरा तजियाना जारा, दस्ता जरै जो लाग ।  
 डार दीन्ह तब यूसुफ , देखि विरह कै आग ॥

कहा जुलेखा सुन नर नाहा । राख्यो अगिन जो हिरदैँ मोहा ॥  
 जबहीं बुध मानुख उपराजा । चार तत्त कर पजर साजा ॥  
 यहै अगिन जो आद सँवारा । आद जोत वह अगिन सँचारा ॥  
 तेहि छुट दूत होय समि सूरु । केउ न सकेहु रखि प्रेम अँकूरु ॥  
 चक्रमक तेँ जस पथरी भारै । उठा भभूका हियेँ परचारै ॥  
 आद पिता कहेँ अगिन सो दीन्हा । जेहि ते सभ नर परगत कीन्हा ॥  
 सन्ह तेहि सकेउ न आग सँभारी । पेमै हियेँ रखयो पर चारी ॥  
 सो पावक मै हिये निचोवा । चालिस बरस बीज जस गोवा ॥  
 तेहि सो आग कै एक चिंगारी । जगनायक यक्र सकेहु सँभारी ॥  
 पूरन चहुँदिस अगिन बिसाला । खाल माँहचदिह अगिन कै ज्वाला ॥

देख अरवस्था नारि कै , औ हिरदैँ कर आग ।

समै लोग अचरज करहिँ , प्रेम हिये महेँ जाग ॥

धन यह नार आग जिन बोई । विरह बीज जस हियेँ निचोई ॥  
 अहै अगिन वह प्रेम कै थाती । दीपक माँह जरै जस बाती ॥  
 धनि वह हिया अगिन जिन राखा । धनि वह नारि प्रेम रस चाखा ॥

पीठि ओ पेट सरापन लागा । अबहुन मिटेहु विरह बैरागा ॥  
 ज्यो ज्यो विरघ होय सरीरा । लाजन बढै ओ होय अधीरा ॥  
 यह मन कवहुँ मरे न माया । जब वहि पड़े न तन पर भारा ॥  
 मन मारै सोई बड़ साई । घाय निचार पड़े तेहि पाई ॥  
 भयो अँग सन्ह ढील समाना । निकसन तेहि ते प्रेम को वाना ॥  
 नैनन रूपन देखहुँ, कानन सोई न बात ।

केहि कारन पछिता करौं, भयो रैन परभात ॥

धन सवत औ शब्द सुख साजा । विनु पौरख सभ कौने काजा ॥  
 अब तन नैन गये सन्ह खोई । तवहुँ न दरस परायत होई ॥  
 तो कहँ देखि आय कहँ रोवा । मेरे लिखत सबै तुम खोवा ॥  
 कहां रूप वह जोवन जोरा । कहां नैन जस समुंद हिलोरा ॥  
 कहां अघर सुरंग अमोला । कहां मदन वह शिहर कमोला ॥  
 कहां कंठ वह कोकिल बोली । कहँ कठोर गुजराती चोली ॥  
 कहां लंक जो बारम्बारा । लचि लचि जायँ वार कै भारा ॥  
 कहां चरन वह कँवल सोभावा । कहां अँग वह सुष सोहावा ॥  
 कहा कपोतहि जोवन वाला । सदा जो सौतिन कै तन साला ॥  
 कहा सरवर कहँ हसँ, वह मोती जुन जुन खाय ।

लाग चुनै अब कोकर भूरे में मरि जाय ॥

का भा तोर सरूप सोहावा । चाँद सुरज जेहि देखि लजावा ॥  
 कहा कि रूप तुम्हें सन्ह दीन्हा । तोरे विरह अगिन हर लीन्हा ॥  
 कहा कि ते जो कीन्ह निठुराई । मैं जोवन ओ जोर वाई ॥  
 कहा कि वह जीवन औ जोरा । जाकै सोई न काहुन जोरा ॥  
 कहा कि नैन कटाक्ष सोहाये । कहा गये कोऊ हिये न लाये ॥  
 कहा कि रोय रोय मैं खोवा । गये नैन तोर विरह बिछोहा ॥  
 कहां गये वह अमिरित बानी । जेहि ते भये आग ओ पानी ॥  
 तोरे प्रेम समै हरि लीन्हा । समै बात मैं तौहि कहँ दीन्हा ॥  
 कहां गये लाल जवाहर मोती । लोह तेहि भूलक सो रत्न कै जोती ॥  
 सुनेउँ नाँउ तोर मैं, दीन्हौं समै छुटाय ।

सभ कुछ गयो न कुछ रहा, रहा प्रेम चित छाग्य ॥

कहां गये वह दासी चेरी । रूपवंत जो काहुन हेरी ॥  
 तास बादला रग हरीरा । असावरी कर करै को चीरा ॥  
 कहा कि दूक दूक करि डारा । तोरे विरह बसन सब फारा ॥  
 अब तन पर कामरी दूका । हियेँ फिरावहि विरह मभुका ॥  
 तेहि कमरी पर देखी सोहै । प्रेमै लोग देखि तेहि मोहै ॥  
 कहां गयो वह गरब तुम्हारा । जेहि ते न काहुक ओर निहारा ॥

दरन गरन औ जोवन जोरा । मन्ह यह अहे हरा मन तोरा ॥  
 नैन अधीन औ रग नियावा । गरुडै कोऊ त्रैन खावा ॥  
 तोरे प्रेम सभै कुछ खोवा । एक प्रेम निज हिरदै गोवा ॥  
 तोरे विरह हरयो सभै , नैन नैन गुन ज्ञान ।

सब कुछ गयो न रहा कुछ , रहा एक तोर दगान ॥

लागै कहै रोय पर नारी । चालीस वरस रांत कै सारी ॥  
 निस दिन अगिन सेा हियेँ निचोई । सुलगत रहै न चापा कोई ॥  
 यहि सो अगिन कै तेहि कर साना । थाँभहि निकरयो जगत सुलताना ॥  
 तुम्ह सुलतान करो सुख भोगू । का जानहु दुख विरह आ सोगू ॥  
 चालिस वरस अगिन पर चाप । छुट तोर विरह और सव्ह जारा ॥  
 जो कुछ दुःख सहयो दिन राती । का कोऊ सहे वज्र केँ छाती ॥  
 कागद सात अकास बनावै । सात समुद्र भियानी लावै ॥  
 लिखनी विरिछ होय जग सेरे । तीन लोक सव्ह होहि लिखेरे ॥  
 चारिज जग नीतहिं तेहि माहीं । दुख हमार लिखि जाय मो नाहीं ॥  
 चारह मास वियोग दुख , यूसुफ सेा भयो हमार ।

चालीस वरस बन जार , तेहि सभ दुखद अपार ॥

चालीस वरस जो आग निजोई । चारह मास कहूँ दुख रोई ॥  
 यरु यक दिन जुग होय बीता । कहँ लौं कहीं अहे सुनीता ॥  
 दिन यक दुख जो सुनहु हमारा । तुम्हो राज जुग जुग अधिकारा ॥  
 तोहिं बुध कीन्ह छत्र पुत भारी । सुनहु दुःख जो अहे दुखारी ॥  
 जा कहँ दई वडा कर देई । सेा दुखिया दुख कहा करेई ॥  
 कबहुँ मोर कहा न माना । व्याह न भयो गवन नियराना ॥  
 कबहुँ दिष्ट न मो तन फेरे । भयो अध तब देखहुँ हेरे ॥  
 भयऊँ विरिध अत्र मरत सँघाती । सुनहुँ विरह दुख हुलसै छाती ॥  
 जो दुख सुनहुँ करो तुम दाया । मानहु दीन्ह अनेकन माया ॥

मै तुम तें मोंगहु यहै , सुनहु विधा दुख मोर ।

होय मीच सुख सेा मरौँ , रिभौँ सेा अबगुन तोर ॥

चैत मास तपि गया विछोये । तब ते रकत आँसु मै रोये ॥  
 सव्ह जग होय बसत धमारी । मो कहँ विरह आगि ते जारी ॥  
 बन उनये हरियर होय फूला । केतक भिरंग तबस्ता फूला ॥  
 भँवर भुलान फिरै चहुँ ओरा । कुहकै कोकिल चातक मोरा ॥  
 पिव कर नाउ पपीहा लेई । विरह हियेँ अधिकों दुख देई ॥  
 सीतल पवन अग कहँ भावे । विरहिन केँ तन आगि लगावै ॥  
 रित बसत सोहै सखी , काह लगै बिन पथ ।

जग तरूर फूलै फलै , विरहिन वेल उदत ॥

## कवित्त

चैत तरुवर फूल फूले भँवर सव्ह भूले फिरें ।  
 पवन सीतल तन सेराने कवित के प्रानन करैं ॥  
 रित अनूप लखि स्याम सुँदिल सुख सज्जा करैं ।  
 आँसु की सरिता बढै, निदुर बिरहिन बूड़ै मरैं ॥  
 बारहु माम सोहावन आवा । रित बसत सजोगिन भावा ॥  
 तन बसाय औ हिया भिगाये । भूले भवर पवन महकाये ॥  
 कुन छौँह बन लाग सोहावा । सीतल पवन हिये कहँ भावा ॥  
 उपजै सुभग समै अनुरागा । कामी आय काम तन जागा ॥  
 चितै सती तन गंधरय छावा । रित बसत सब के मन भावा ॥  
 तैसे आग लाग मन माहीं । हरीं कहँ भाग अब जाहीं ॥  
 अब अवगुन महँ भरे अंगारा । बिरहिन हिया सरागन जारा ॥  
 फूले फूल सुरग कचनारन । लागे आग अनार के डारन ॥  
 कर माया मै बसी चहुँ आरा । बोलहिं काकिल चातक भोरा ॥  
 सुख सोहाग के समय नहिं, लोग कहँ रवराज ।  
 हमहि बसत दुख दइ यह, सर पजर सम साज ॥

## कवित्त

मास माघो सनेह सोहावन, जगत सुख छायेो समै ।  
 बिटप फूलत फलत तरुवर, अब सौँ बौरन भये ॥  
 बहुन सीतल छौँह सुदर, सुख संयोगिन कै रहे ।  
 कौन हरियर करै पिउ बिन, बेल बिरही से डहे ॥

## सोरठा

सीतल छौँह गँभीर, अग सोहाय सोकालिनी ।  
 सुख ओ भोग सरीर, सदा उसीर सोहाय अब ॥  
 लाग चैन अब तपै करेजा । कामी काम करे सुख सेजा ॥  
 फल पाके अभिरित रस पाके । काम आय कामिन तन जागे ॥  
 रैन घटी दिन बहुत बढावा । बिरहिन आग अग लै लावा ॥  
 कठिन धाम तन जरैं हमार । भूखन मदिल ओ सपर सँवारा ॥  
 सीखी लै गुलान डरवावहिं । ओ कुमकुम कहि अग लगावहिं ॥  
 रोव रोवँ औ सुख अधिकाये । बिसै करत अग सुख पाये ॥  
 बात कहत निसि जाय बिहाई । दिन कहँ भोग भगत अधिकाई ॥  
 चैत मास बिरहिन कहै जारा । दीन्हा आग लाय ससारा ॥  
 बरखा हिंदु अब तपै करेजा । करेज भयो रगरेज क रजा ॥  
 ग्रीषम रितु अगिन बैठ, देँदहि सीतल छौँह ।  
 ऐसे समय बियोगिन, भाग सोख दस जाँह ॥

कवित्त

जेठ ग्रीपम विपम आगम पान भोग विना करै ।  
 'निनार' वियोगी छौंह तपिहै अग कै सीतल करे ॥  
 भुवन सीतल पवन आवै रोवै रोवै मै चित धरै ।  
 गुपुत परघट एक पिव विन विरहिनै निसि दिन जरै ॥

सोरठा

जेठ जरावे देह, नेह माहँ मरै सखा ।  
 चहुँ दिस उठै सनेह विरहिन कै दारुन समै ॥  
 लाग असाढ सो गाढ़ जनाई । धन गरजै दामिन चमकाई ॥  
 उमड़ धमड धन घोर विराजै । काम विमाल नवो खंड वाजै ॥  
 कूँधत मोह चकूँधत जीऊ । केहि के कठ लगै विन पीऊ ॥  
 पँछिय पतिंग सवहि घर साजा । जगत काम कर वाजन वाजा ॥  
 मोर कुटी के छुवै पीऊ । केहि विधि दय देइ मोहि जीऊ ॥  
 दादुर मोर जो करहि अंदोरा । नार कथ लिन तजहि न कोरा ॥  
 विछुडे मुये सो दुआँ दुखारी । विनल जरा भा सभ नर नारी ॥  
 कोकिल कूक लूक हिय लावे । कुकनू सम भभूक रचावै ॥  
 कैसे कटै सो यह रिनु भारी । विन पिव धमड घोर अंधियारी ॥  
 मास असाढ सोहावे, पिव भावे निज सेज ।  
 देख घटा औ दामिनी, काँपै मोर करेज ॥

कवित्त

रितु असाढ धन घेर आयो, लाग चमकै दामिनी ।  
 रितु सोहावन देख मन, महँ हरख बैठ भाभिनी ॥  
 रितु धमड सो मेघ धाये, दिवँस भई जस जाभिनी ।  
 रैन दिन कसना करै, घर में अकेले सामिनी ॥

सोरठा

बीतो जात असाढ, कत भूल सुख महँ रहे ।  
 विरहिन यह दिन गाढ, पिव विन कहु कैसे कटै ॥  
 आयो सखी सोहावन सावन । भावन रैन विना मन भावन ॥  
 घर घर कामिन साज हिंडोला । देख समै सप्युर चित डोला ॥  
 जागी जती के आसन छूटा । साध संत के मका टूटा ॥  
 काहु के चित रहा थिर नाहीं । हरषित चित यहै रित माहीं ॥  
 भवन वियोगिनि काटै खाई । देखि देखि यह समै सोहाई ॥  
 परहि जो आँसु भूमि पर टूटी । रोग चली जस वीर बहूटी ॥  
 जुगनू चमक चमक देखराहीं । वरसे अगिन जो भावन माहीं ॥  
 सावन मास सोहावन बीना । तन तन काम अपरबल बीना ॥



सावन मन भावन नहीं, जीवन बिरथा जाय ।  
काल न आवे यह समै, कैसे रैन बिहाय ॥

कवित्त

भा सावन रिंतु सोहावन भावन मन भावे नाहीं ।  
काम कला पावा सखी छिन यक कल्पावे नाह ॥  
वैस बीती जात सजनी सेज सुख पावा नहीं ।  
जाहु सावन बहुर आवन कत घर आवहि नहीं ॥  
भादौ भुवन बेहावन भये । देखत घटा प्रान हरि गयो ॥  
दिन ओ रैन जाय नहिं जानी । उनई घटा रहे भरि पानी ॥  
जल थल पूर सो नीर अपारा । होय गये एक नदी ओ नारा ॥  
जल परवाह जगत भा बाढा । बिरही बिरह परा दुख गाढा ॥  
घन गरजत लरजत तन मोरा । दाभिन दमक चहै पिव कोरा ॥  
गरजै कूँध लखि मरि मरि जाई । बिना कत को लेइ जियाई ॥  
ऐसे समय सो नारि अकेली । निठुर कत जिन दुख परहेली ॥  
घन अकेलि औ भादौ राती । धन सो अहै बजर कै छाती ॥  
घन भादौ कै मास सँवारा । तासो नार ओ पुरुष सँचारा ॥  
भादौ रैन बिहावन केहि विधि रहौ अकेली ।  
धृक जीवन तेहि नार का जेहि सामी परहेली ॥

कवित्त

मास भादौ रैन कारी देख कर दूभर भई ।  
कत बिन सखि सेज सोई नीद नैनन से गई ॥  
मन हमार निपट व्याकुल स्याम बिन सब दुख हिये ।  
बिरह सरिता उमड़ि आई कौस क बचिये दई ॥

सोरठा

भादौ केहि रँग भीर, धरै धीर केहि विधि हिया ।  
बाढै बिरह-क पीर, कथ न पूछै बात मोहिं ॥  
लाग कुआर सरद रिंतु आए । घटा जुनीर सब अग सुखाए ॥  
जई तहँ पथी तुरी पलाना । पीय प्रान बाहर बेहराना ॥  
जो कहु छाथ रहे बजारा । सो फिर कै परदेस सिघारा ॥  
हम पछी तेहि सोच हमारै । ऐसे समय सो दीन्ह बेसारे ॥  
रहे नगर महँ लाल हमार । नैनन मोह कोट पहारा ॥  
जो निरदई करे नहिं दाया । का भा निकट रहे निरमाया ॥  
सहस कोस तेहि पाछे आवे । माया मोह हिया उपजावे ॥  
रहे मंदिर महेँ करे न दाया । सहस कोस ता कहुँ निरमाया ॥  
मास कुआर घटा जल सारा । भय परकास मिटेहु अँधियारा ॥

सारद समय सुहावन , मन भावन नहिं पास ।  
भय सूरत लखावनी , जो हिय नहीं हुलास ॥

छंद

कुआर मास अत्र लाग सुदर, चाँदनी निरमल भई ।  
सरद रग बेभाल सोहित, सरद आवत निरभई ॥  
जल अग सब सत्र सोन लीन्हो, नींद नैनन तो गई ।  
चख वियोगिन के नहिं सुखै अवर जल सोखै दई ॥

सोरठा

यह रिठु सोख्यो नीर, जब अगस्त ऊदित भयो ।  
नयनन भयो अघार रिठु, रात दिवस पूरन रह्यो ॥  
कातिक मास महा उँजियारी । सजोगिन सुख समय पियारी ॥  
देख चाँदनी करे हुलासा । जिनके कत रहै नित वामा ॥  
चहुँदिस होहि हरप अनुरागा । कामिन काम एक महँ लागा ॥  
यह रिठ महँ सोँहै उँजियारी । कैसे जिये वियोगिन नारी ॥  
पिय कै लगन हिये अधिकारई । गगन नखत सखि रैन बेहाई ॥  
सभै लगन सजोग समाना । काटे खाय न जाय बखाना ॥  
विरहिन विरह अगिन से जारी । चद् चाँदनी डारै मारी ॥  
घायल विरह वियोगिन बाला । निरख चाँदनी होय बेहाला ॥  
सरद समय बहु दुख अधिकारी । विरहिन प्रान जुआ जस हारी ॥  
मोही निदित जगावा , पिय मोही के लाग ।  
कहँ मोहन अस पावा , भिटै हिये कै आग ॥

छंद

मास कातिक सुठ सहेला, चाँदनी लखि चित है ।  
देख कै यह रिठु सुदर, नार कथ पिव परहरै ॥  
दुआो दिस विरख फूले, देख कै विरहिन चरै ।  
सरद रिठु की चाँदनी मे, विरह के मारे मरै ॥

सोरठा

कातिक बेहावन घन बैठ , भोग रजनी बैठ ।  
विरहिन वदन मलीन भय , देख रगै सखी ॥  
अगहन दिवस घटा निस बाढै । विरहिन बेल तुसारन डाढै ॥  
जाइ आन तन मोँह समाना । घर घर असन बसन अधिकाना ॥  
साजहिँ सौर सपेती नारी । हरियर सब मसियत रतनारी ॥  
भयो चार ते प्रीतम प्यारी । जेहि तन ते नहिँ होय निनारी ॥  
पवन उदास बहै अत्र लागी । हम कुकनू सम आरहिँ आगी ।  
भाँति भाँति कै बसन सोहाये । संयोगिन प्रीतम संग धाये ॥

सरसो फूल रही चहुँ ओरा । लाग तुसार परै निति मोरा ॥  
 वाढ़ै रैन बढ़ा सँग भोगू । लागे केल करे सब लोगू ॥  
 विरहिन भई रैन बहु भारी । जगत जाय सो विरह दुखारी ॥  
 अगहन माम सोहावन, भा दूभर विन कय ।  
 सेज अनेले रैन महँ, मिलै न आवत कंत ॥

छंद

मास अगहन जाइ व्यापै, देह लागै थर थरे ।  
 कत विना दूभर भये दहि, रैन होय करवट परे ॥  
 निठुर कंत नहि वात पूँछे, मान अगहन हर हरे ।  
 सुख सोहागिन तेज सोहै, एक दम विरहिन जरे ॥

सोरठा

हेवँत रिठ् अन्नग, जाइ कंगवे देह कहँ ।  
 मोहि प्रीतम की चाह, वात न पूँछे निठुर वह ॥

पूस जाइ अधिको तन लागी । घर घर नारि पुष्प अनुरागा ॥  
 वाढ़ै रैन तन काम समाना । घटा दिवस सुख साज हेराना ॥  
 लाग परे जग माँह तुसार । कँवल बदन हम विरहिन जरा ॥  
 अंतुज बदन भयो जर कारा । प्रगट जाइ नै कौपहि दारा ॥  
 छिन विरही जिनके तेहि सामे । उनका यह रिठ कथ विसरामे ॥  
 हम का करहिं जाहिं कव भागी । चहुँदिस जारी विरह की आगी ॥  
 रैन पहाड़ न जाय बेहाई । कौप-कौप तन उठै भुराई ॥  
 हे रे निठुर नाह दुख दाता । कयहँ न पूँछा हम दुख वाता ॥  
 निठुर नाह नहि दाया आवै । हमहिं जाइ दिन रात सतावै ॥  
 पूस मास दिन घन अन्न, आवै जाय न बार ।  
 विरहिन निस दारुन भये, हाय के परे निहार ॥

छंद

पूस मास भये निस दिन, रैन जग सम होय गये ।  
 तन तुसार सम कँवल के जर, छार विरहिन के भये ॥  
 कंत तोहिं विन सेज सूनी, रैन दूभर निरमई ।  
 ऐस रिठ में लाल विन, कसे जिवें ललिता दई ॥

सोरठा

पूस भयो दिन छोट, रैन बेहाय न कंत विन ।  
 विरहिन लाग न खोट, निठुर कंत पूँछे नहीं ॥  
 मास मास सोहै सुख साजा । तिल तिल दिन बाढ़ा दुख भाजा ॥  
 जेहि दिन पवन नीच अधिकाये । तेहि दिन देहि तुसार कराये ॥  
 कैसे बीते मास सोहावा । निठुर नाह नहिं दरस देखावा ॥

सिरी पचमी बौर सोहाये । माली बौर देखाये आये ॥  
रग बसत सो लाग सोहावा । बिरह बियोगिन दुख अघिकावा ॥  
यह सो मास बिन कत वेहावै । प्रेम काज अब हिया जरावै ॥  
दारुन बिरह जरावे देहाँ । सून बसत बिन उपजै नेहाँ ॥  
अब कैसे यह दिवस वेहाऊँ । बिना पीउ रँग बसत गवाऊँ ॥  
घावै काम कमान चढाये । बिरहिन हिया बोझ सिर लाये ॥

माघ बिछोहैं कत जेहि , धृक कामिन तन सोय ।  
ऐसे रितु अकसर रहे, कैसे जीवन होय ॥

छंद

माघ थिर थिर देह कोपे, निस अकेले सोय ॥  
नाँद नैनन मे न आवे, सँवर प्रीतम रोय ॥  
बैस सुंदर जातपिव बिन, आँसु से मुख धोय ।  
कत बिन बिरहिन तपै तन, प्रान वर तेहि खोय ॥

सोरठा

मोहन आये नाहि, कवन छाँह हम ( कहेँ ) करै ।  
कठिन समै अवगाह, कैसे कै धोरज रहै ॥  
फागुन मास कौन्ह परगामा । घर घर उपज्यो रग डुलासा ॥  
बाजे डफ मृदग सोहाये । काम आय निज रूप देखाये ॥  
लागे पवन बहे हरिहरा । तरुवर पात समै खसि परा ॥  
निस बिरहिन पुन भा पतभारा । रोम रोम तन बिरहिन जारा ॥  
सजोगिन सब खेलहि होरी । रग गुलाल सो भर भर भोरी ॥  
डारहि रग सोरग हँ कारहि । दुख दारिद कहँ मार निसारहि ॥  
जिवँ जिवँ पवन तेज अघिकाई । बिरहिन हिये न रंग समाई ॥  
धृक जीवन जेहि कत नियासा । मरे बियोगिन दरस के आसा ॥  
यह रित मा भा सुख परगासू । बिरहिन जेर बिरह दुख बासू ॥  
फागुन समे सोहावने, मन भावन नहिं सेज ।  
रन तुरग अरग कहि, बिरहिन जरै करेज ॥

छंद

मास फागुन सुठ सहेला, आन सुख परघट भयो ।  
काम पूरन जगत छावा, सोग दुख जग से गयो ॥  
यह समै पिव बिन सखी, यह देह बिरहिन के तयो ।  
दुख पुराये रह गयो यह, मास सभ सत कुछ गयो ॥

सोरठा

खेलहि लाल सु फाग , केसर कीर उड़ावहीं ।  
जरहि बियोगिन भाग , फागुन सुख न पावहीं ॥

एक बरिस दुख बरन सुनावा । यहि बिधि चालिस बरिस बितावा ॥  
 सदा बसत ओ पावस आवे । मोहिं कहँ उठि बिरह जरावे ॥  
 निस दिन लाग रहै जस होरी । दिये जराथ बिरह तन कोरी ॥  
 वहै रैन वह दिन नित आवे । मास मास रिनु अवर दिखावे ॥  
 मोहिं कहँ सदा गिरीषम रहा । बिरहानल दुख जाय न कहा ॥  
 चालिस बरस बिरह अधिकाना । नित उठ हिये लाग जस बाना ॥  
 दिन दिन बिरह तेज अधिकारै । चालीस बरस सो रोय गँवाई ॥  
 वहै भोर सँभहिं सो आवै । निस दिन बिरहिन हिये जरावै ॥  
 तुम प्रीतम कुछु कीन्ह न दाया । अस तुम्ह भूल गयो निरमाथा ॥  
 प्रीतम बिरथा जाय जग , मैं सो जर्यौ जेहि लाग ।  
 तुम्हरे मन उपज्यो नहीं , धिरिग मोर बैराग ॥  
 कहा जुलेखा प्रेम कहानी । नैने भरे जस पावस पानी ॥  
 रोय रोय सभ बरन सुनावा । सुन यूसुफ मन उठ्यो छोहावा ॥  
 सेवक सष कै मँदिल पठावा । आय अहेर खेल लहरावा ॥  
 आयो मदिर सेज पर गथऊ । हिये जुलेखा सो रत भयऊ ॥  
 कहा बोलाय चहो का नारी । सो अब देऊ जो होहुँ सुखारी ॥  
 जो मॉगहु सो देऊँ मँगाई । सेन रूप नग बसन सोहाई ॥  
 कहा जुलेखा एक न चाहौ । धन लक्ष्मी सभ भार बहावौ ॥  
 मँदिर गाँव मोरे नाग सोहाये । जो मागै तेहि देऊँ मँगाये ॥  
 लेउ गाँव आँ मँदिल सोहावा । चेरी दास लेउ चित भावा ॥  
 महा सिद्ध कै सुत कहलावहु । औ तुम्ह सिद्ध सदा सुख पावहु ॥  
 कीन्हौ बहुत तपस्या जांगू । अलख तृसा तुम कीन्ह न भोगू ॥  
 मॉगहु तुम्ह करतार तैं , देहिं नैन कर जोत ।  
 जेहि ते देखहुँ तोर मुख , चहाँ न हीरा मोत ॥  
 तब याकूब यूसुफ तैं कहा । जो कुछु अरथ भेद सब रहा ॥  
 सुना जुलेखा नवी कर नाऊँ । परे जाय याकूब के पारुँ ॥  
 महा सिद्ध औ पर उपकारी । सुनहु कान दै बिथा हमारी ॥  
 जेहि का अग बिरह दुख भेजे । सो दुखिया दुख दीन्ह पसीजे ॥  
 तुम्ह जस जरयो सो बिरह कै आगी । तेहि तैं अधिक जरयो वहि आगी ॥  
 तुम्ह समुब्ध्या मोरे दुख कै पीरा । पुत्र बिरह तुम डह्यो सरीरा ॥  
 वह निरदई न जाने प्रेमा । जानहि सो जेहि धरम ओ नेमा ॥  
 तुम्ह सभ कुछु तेहि पंथ न पावहु । कस तेहि तैं तुम प्रेम छिपावहु ॥  
 चालीस बरस जरायो देहौ । वहि के हिये न उपज्यो नेहौ ॥  
 तुम्ह अब न्याव हमार करेऊ । निरदाई सुन कहँ सुख देऊ ॥  
 सबहि गरथ तेहि देहु सिखाई । प्रेम के अच्छर न देहु पढ़ाई ॥

जेहि ते जानहि प्रेम वै, बेग पढावहु सोय ।  
 देहु असीस उठाय कर, नैन जोत जेहि होय ॥  
 अब कुछ और न चाहूँ नाथा । रहौँ सदा चेरी के साथ ॥  
 पाऊँ नैन दरस जो देखहुँ । जब लागि जिवों सरूप विसेखहुँ ॥  
 कियौँ जनम भर मूरत पूजा । तेहि छुट अवर न जान्योँ दूजा ॥  
 अब तेहि पर कीन्होँ अनखानी । फोरथोँ सीस रोय बिलखानी ॥  
 यूसुफ अलख सो अहै सोहावा । जेहि सेवक से भूप बनावा ॥  
 मैं सो जन्म भर सीस नवावा । तुहँ दर दर मोहि भीख मँगवा ॥  
 तुहँ मोर अलख किये यहि हाला । दर दर मँगहु भीख बेहाला ॥  
 जब मोर आस पुराई नाहीं । भयो क्रोध मोरे हिय माहीं ॥  
 तब रिसाय मैं मूरत फोरा । टूक टूक फँकयोँ चहुँ ओरा ॥  
 यूसुफ अलख तें अब मन लायो । औ मूरत ते हाथ उठायो ॥  
 वह दाता करतार जिन्ह, सभ यूसुफ कहँ दीन्ह ।  
 तेहि सो अलख आनद कहँ, ग्यान ध्यान मैं कीन्ह ॥  
 तब याकूब सो हाथ उठावा । तेहि अवसर जबरैल सोहावा ॥  
 कहा जुलेखा कहँ लै जाहीं । कहो सखिन हम्माम कराहीं ॥  
 नार अनेक सघ कै दीन्हा । तब बरसस हम्माम सो कीन्हा ॥  
 मजन ओ अस्नान करावा । ई गुर अंग चदन तन भावा ॥  
 जब अस्नान कीन्ह वह नारी । चौदह बरस-क भई कुमारी ॥  
 आह रूप जस हत्यो सुहावा । तेहि तें अधिक रूप छुबि पावा ॥  
 चौदह बरस क भई कुमारी । नैन कटात् तेज अधिकारी ॥  
 लाय सखी यक आरसि दीन्हा । देखत रूप सो अचरज कीन्हा ॥  
 घन करता हरता सुखदाई । तुहँ सभ दीन्ह सो कहत नियाई ॥  
 प्रेमी प्रेम न निरफल गयऊ । कस सो निरास जुलेखा भयऊ ॥  
 मैं तो तोहि न जान्यो, जनम अकारथ खोइ ।  
 धन्य गरीब नेवाज तुहँ, को अस दूसर होय ॥  
 ई गुर अंग मजन असनाना । हरिहर मानख सुघर सुजाना ॥  
 लागे षट्-दश होय सिंगारा । चोटी गूँघ सो मोंग सँवारा ॥  
 तेल फुलेल लाय के साजा । पाटी पार मोंग उपराजा ॥  
 बार बार गूँघे गज मोती । सेदुर दीन्ह सुरज कै जोती ॥  
 गुल गेसुन कपोलन लावा । दै अजन खजनै बढ़ावा ॥  
 मेंहदी कर पग सोहाग सँवारा । बीर बहूटी कै रग धारा ॥  
 दाँतन स्याम सो मसी जमाए । चमक सोभाग सो बरन न जाए ॥  
 मुख तेंबोल गह्यो अपने पाना । अतर लागाय कीन्ह अरगाना ॥  
 फूल सो लाय पेन्हावे जोडा । पुहुप माल तन सोहि कैरा ॥

आयसु रहा सिंगार के, बारह अभरन लाय ।  
 दीन्ह नार कुमार कहँ, सभ अभरन पहिराय ॥  
 बारह अभरन साज बनावा । सहस फूल औ मडन भावा ॥  
 बेसर औ कनफूल सोहावा । करन भूखन सन्हन पहिनावा ॥  
 कठा भूखन सोहँ जेहि ताई । गर भूखन उर पास सोहाई ॥  
 कठ माल बाजूवँद साजा । कर भूखन सो पहुँची विराजा ॥  
 अँगुरी मुँदरी उत छुबि देहीं । नेवल बढ गुन ज्ञान हरेहीं ॥  
 साज सिंगार सखी सन्ह मोहँ । रूप अपछुरा तासे सोहँ ॥  
 धन वह अलख रूप जिन दीन्हा । भर के बार कुमार सो कीन्हा ॥  
 लाय सेज पैठारहिं केरी । मिले न तीन भुवन महँ जोरी ॥  
 उर केसर फिर अधिक सोहाए । मगल बूँद सो रग बनाए ॥  
 बैठी सेज सुनार, भूखन साज सिंगार ।

अब नख सिख का बरनौं, सभ सुदर सुघर निसार ॥  
 अब माये गूँधे गज मोती । राह केत मनो चंद कै जोती ॥  
 दुआँ दस घन बाद जस छावा । मध्य कौंध चमकै देखरावा ॥  
 दामिन अस वह माँग सोहाये । केस घमड घटा जस छाये ॥  
 जस जमुना कै नदी अपारा । माँग बाँध जस सुघर संवारा ॥  
 सेत बढ जस माँग सोहाए । विरहिन नैन परे तेहि पाए ॥  
 जो न होत अस माँग अनूपा । डूबत नैन स्वरूप सरूपा ॥  
 चमकै माँग माँग कै बानी । सँदुर रक्त रग तहँ सानी ।  
 पहले कहँ माँग के रेखा । जमुना बीच सरसुती देखा ॥  
 खरग धार वह माँग सोहाए । सँदुर तहाँ रक्त रंग लाए ॥  
 माँग सोहावन सुख भरे, भाग अधिक तहँ दीन्ह ।

राह केत दुआँ दस तहाँ, रव-कि किरन अस कीन्ह ॥  
 केस सीस का करौं बखाना । नागिन देख सो ताह लजाना ॥  
 मुख पर परै जो होय बेकरारा । तपा सदा करै ससारा ॥  
 कोऊ कहै अहै तुम राजा । सोहै तहाँ जीत चंद राजा ॥  
 कोऊ कहै सो दई सोहावा । ... .. ॥  
 कोऊ कहै स्याम अति मोहा । पुहुप परान आय तहँ सोहा ॥  
 पुहुप छत्र महँ मग मद तारा । खींचे चतुर चित्र तहँ मारा ॥  
 केस सीस मानो निसि कारी । सोहँ परत काल उजियारी ॥  
 सो प्रभात पर भयो दिखाये । स्याम लाय नित हाथ छिपाये ॥

बेनी गूष लिलाट तें, मनो नागिन मन लीन्ह ।  
 भूंगा चौकी पीठ पर, तहाँ छौँड तेहि दीन्ह ॥  
 अब लिलाट बरनौं सुख कारी । रव, ससि, निसि औ उँजियारी ॥

केसर खार .

... ।

...

तब जबरैहल कहा तेहि बाता । रूप नैन तेहि दीन्ह विधाता ॥  
देखहु जाय जुलेखा सोई । प्रेम न सकत अबिरथा होई ॥  
को अस पुरुष प्रेम करेई । सुफल प्रेम पग दिन दुख हरई ॥  
दूसर जनम जुलेखा लीन्हा । सो दयाल अब तुमको दीन्हा ॥  
तुम पूरख वह नार तुम्हारी । दूजै वार सो दई सँवारी ॥  
जेहि तें रहै सो मुरत हुलासा । रहहु जुलेखा के नित पासा ॥  
वह के सुख दयाल सुख मानै । दुखी भये परभू दुख मानै ॥  
वह अज्ञा तज किछो न काजू । वह समान यह जगत न राजू ॥  
ना अस रूप न प्रेम न ज्ञाना । दई दीन्ह सव्ह ताह सुजाना ॥

सुन यूसुफ सिर नाइ के , कीन्ह व्याह कै चार ।

बाजै लाग जो नौवत , नाच गौड़ भकार ॥

जो कुछु हेत व्याह कै चारा । सो सव्ह कीन्ह राग रँग सारा ॥  
सुफल घरी मा व्याह सोहावा । दुखिया दान दरब बहुपावा ॥  
आन्यो भोग छुतीसे जाती । भये किनआँ के लोग बराती ॥  
तब याकूब निकाह पढावा । देख जुलेखा बहु सुख पावा ॥  
बाढ़ा प्रेम धन नार सोहागिन । धन्य अलख जिन कीन्ह सोहागिन ॥  
सेज सँवार सो रग सोहाए । दुलहिन व्याह दुलह पहँ आये ॥  
यूसुफ देख हिए हुलसाना । धन वह अलख दीन्ह जिन दाना ॥  
जस मैं रूप आदि निरमाया । तेहि तेँ जीवन रूप सोहावा ॥  
रहस नार कहँ कँठ लगावा । जनम जनम दुख बिरह नसावा ॥

प्रेम जुलेखा कहँ मिढ्यो , यूसुफ कहँ दुख दाह ।

भई जुलेखा भगत अब , यूसुफ कहँ दुख दाह ॥

दिन दुइ चार कीन्ह रस भोगू । लागी करै जुलेखा जोगू ॥  
मैं बिरथा यह जनम गँवावा । प्रेम बिपत मानुख सो लावा ॥  
काहे न प्रेम अलख ते लाऊँ । जेहि तें मोख मुगत पुन पाऊँ ॥  
का मानुख मानुख का चाहै । चाहै अलख मुगत कर लाहै ॥  
निस दिन लाग तपस्या करै । जब जोगिन ते प्रीत छवि धरै ॥  
अलख काज छुट अवर न काजू । यूसुफ देख बाढ़ उर लाजू ॥  
निस बासर जप तप कै माहीं । एको छिन प्रभु बिसरै नाहीं ॥  
यूसुफ प्रेम हिये ते भागा । अलख पेम आठौ अँग जागा ॥  
कुछ यूसुफ कै चिंता नाहीं । कबहूँ न सोच करै मन माहीं ॥

निसि दिन वह तप जप करै , सँवरै अलख सुजान ।

जेहि की दाया तें मिला , अब रूप बैस गुन ग्यान ॥

यूसुफ नबी सो रहे अधीरा । बाढ़ै हिये प्रेम कै पीरा ॥



जब लहि दरम देह नहि नारी । तब लहि यूसुफ़ रहें दुखारी ॥  
 वह निस दिन राखै तेहि प्रीती । भई जुलेखा आन सो रीती ॥  
 कहै कि सँवरो वह करतारा । अत काल जो लावै वारा ॥  
 मैं मानुख का प्रीत हमारी । जोवन रूप रहै दिन चारी ॥  
 बहुर न यहि जोवन नहि रूपा । सँवरहु पुरुख अकाल अनूपा ॥  
 यूसुफ़ नबी करें मनुहारी । होय न सुचित जुलेखा नारी ॥  
 कहा जुलेखा मोहिं न सतावहु । जाय सो ध्यान अलख महँ लावहु ॥  
 मैं जोवन अरु रूप उतगा । देख लीन्ह कुल्ल रहे न सगा ॥

जाय फूल कुँभिलाय, जब रहै रग न वास ।

तेहिं ते सँवरहु एक वह, जेहि के दुओ जग आस ॥

यूसुफ़ कहा सुनो अब प्यारी । जतन नाह नित रहौं दुखारी ॥  
 विन देखे मोहिं कल न परई । टारन विरह कठिन दुख धरई ॥  
 दया करे औ दरसन देहु । मोहिं दुखित जिन रार करेहु ॥  
 प्रान तें अधिक तुम्हें मैं जानहु । रूप तुम्हार हिये महँ आनहु ॥  
 निम दिन रहे मो ध्यान तुम्हारा । मन अधीन जस व्याकुल पारा ॥  
 जस तुम्ह विरह अगिन ते जारा । तस अब करहु भोग सुख सारा ॥  
 मोहिं दुखिन जिन राख्यो प्यारी । छाया मोख दुख देहु निनारी ॥  
 दर्ई यदावा हम तुम प्रीती । राखहु दया प्रेम की रीती ॥  
 दर्ई देह यह रूप सोहावा । मोहिं कारन तुम्ह फिर कै पावा ॥  
 मोहिं तें होहु न निटुर अब, हिये लखहु अब और ।

कहै जुलेखा नाम सुनहु, दास तुम मोर ॥

एक दिन बहुत कहा नहि माना । कहा जान मोहिं दास समाना ॥  
 जस आगे तुम्ह राखव प्रीती । राखहु दया हिये तें रीती ॥  
 अब सो अलख कर दीन्ह सँजोगू । देहु मिठाय विछोह वियोगू ॥  
 जस दुख सवहि करै अब प्यारी । जाय मुलाय विरह हूख भारी ॥  
 चालीस बरस कीन्ह तप जोगू । रात दिवस तुम छोह वियोगू ॥  
 करहु सेज सुख भोग विलासा । निस दिन होय सो दुख कै पासा ॥  
 केत विनति कै यूसुफ़ हारा । चाहा हाथ गले माँ डारा ॥  
 कहा जुलेखा मोहिं ना भावै । अलख ध्यान छुट आन न भावै ॥  
 मोहिं के एक अलख कै आसा । विरथा यह सुख भोग विलासा ॥  
 दिना पाँच का रूप सिँगारा । होइह अत देह तेहि छारा ॥

जोवन रूप सिँगार सब, सँध जाय तेहि खोय ॥

काहें न सँवर सो अलख कहै, जानो मुवत कब होय ॥

अब मोहिं का सुख भोग न भावै । मृत्यु भये कुल्ल काज न आवै ॥  
 यहि जग मा छुट जीवन थोरा । अब जिन करहु खोज तुम मोरा ॥

निसि दिन तेहु अलख कर नाऊँ । जेहि तें मिलै सरग मी ठाऊँ ॥  
 मैं अब निजु जान्यो तेहि साईं । जिन सब्ह दीन मोहि बरियाई ॥  
 सो साईं तज अबर न भावे । बिरथा सुकज भोग चित लावै ॥  
 यूसुफ नबी बहुत समुभावा । एक जुलेखा कान न लावा ॥  
 तब बरवस उठि हाथ चलावा । भागि जुलेखा यूसुफ घावा ॥  
 दामन फार रहा तेहि हाथी । गडे भाग वह दार के हाथी ॥  
 घन चरित्र वह अलख देखावा । यह कर नरा ने वह कर पावा ॥

एक दिन हत्यो जुलेखा । फारा यूसुफ पाट ।

अब यूसुफ के हाथ ते, घन कर दामन फाट ॥

यह बिधि रहे जुलेखा भारी, यूसुफ लगन रहे नित लागी ॥  
 निसि दिन रहे नार से धाना । नार हिये उपच्यो अब जाना ॥  
 राज काज कुल्य ताहि न भावे । निन चित हित बनिना ते लावै ॥  
 बरवस करै नारि से भोगू । आवै ताह जाय ओ जोगू ॥  
 यूसुफ कहै भयो तोहि काहा का भा तोर प्रीत ओ चाहा ॥  
 कहा सुनो मारि मच बाता । तब सो मोर मन तोहँ सो राता ॥  
 मूरत तोर हिये महँ आन्यो । छुट तोर प्रीत आन नहिँ जान्यो ॥  
 तब सो अलख कहँ जान्हो नहिँ । मूरत तोर रहे हिय माही ॥  
 अब सो अलख हिये तर वासा । तेहि कर ध्यान हिये पर कासा ॥

एक हिये दुई प्रेम अब, कैसे कहे समाय ।

जग सामी कै प्रीत अब, रहे हिये महँ छाय ॥

बरवस करै भोग सुख सारा । सुत तिन दिये तेहि करतारा ॥  
 पाँच पूत दुई दुहिता भयो । जब तप करै प्रान पर छत्रो ॥  
 दुहिता सुत सामी नहिँ भावै । नित उठ चित्त अलख ते लावै ॥  
 घाई केर रहे सुत वारा । औ प्रतिपाल करै करतारा ॥  
 करै जुलेखा निमि दिन जोगू । भावै ना तेहि सुख औ भोगू ॥  
 घन करता कहँ खेल सोडावा । करै सोय जो वह मन भावा ॥  
 कबहुँ पुरुष कहँ नारि कै चेता । कबहुँ नार कहँ पुरुष कै मीता ॥  
 वहिक पास यह मन नित आवै । जेहि ... .. सोहावै ॥

वारह बंधु के वस पुन, भये बहुत अघिकार ।

करै राज सुख भोग सब, बड़ै बहुत परिवार ॥

भये याकूब सुखी मन माहाँ । निसि दिन करै पुत्र पर छाहाँ ॥  
 सब सुख देख कुटिल परिवारा । तब लहिँ आय पुन काल हमारा ॥  
 बिरथा तेज नबी जत्र भयो । सेवा का यूसुफ चलि गयो ॥  
 समै पुत्र का पास बोलावा । कीन्ह बहुत उपदेस सोहावा ॥  
 औ यूसुफ कहै सब परिवारा । सो तब आप सिबलोक सिघारा ॥

जब याकूब देह तजि दीन्हा । तब यूसुफ बहु रोदन कीन्हा ॥  
 औ रोवें सगरो परिवारा । बारह पुत्र ! ... सारा ॥  
 रोवें सभै सुतन की नारी । औ रोवें दुहिता पुन सारी ॥  
 दुहित पुत्र कै बंस सोहाये । रोय रोय सिर छार चढाये ॥  
 भा अँदोर सभ नगर महँ, रोवें नर औ नार ।  
 ऐसे पुरुष सो चलि बसे, को दूसर संसार ॥  
 रोई बहुत जुलैखत नारी । सँवर मुरत तज भई दुखारी ॥  
 यूसुफ पिता अन्हवावा । औ पुत्रन सभ साज बनावा ॥  
 चलै साज कै पिता जनाजा । दुख बाजन घर-घर महँ बाजा ॥  
 मिसिर नगर महँ परै अँदोरा । नारिन करै रोट चहुँ ओरा ॥  
 औ यूसुफ का भा दुख भारी । रोवें बहुत सो छोंड़ डफारी ॥  
 छाड़ सो लोग कुटुंब परिवारा । होय अकेल अब पिता सिधारा ॥  
 बहुत बस कुछ काज न आए । अकसर पिता सो सरग सिधाए ॥  
 सुत बिन बहु पुत्र ओ नारी । सब्ह तजि गयो गयो पैयारी ॥  
 कोऊ न सँध जाय तेहि गैला । गयो अकेल छाड़ सब्ह खेला ॥  
 छिन बिछुरे दुख होई । छिन-छिन राख सकै नहि कोई ॥  
 ... ... ... सभ साथ ।  
 ... ... राख न सकै कोऊ हाथ ॥  
 गयो समूल छाड़ कै नाऊँ, रहा सूख सब्ह ठावे ठाऊँ ॥  
 यूसुफ नबी साज सब साजा । स्थाम देस लै गये जनाजा ॥  
 अयस नाम याकूब कै भाई । एक संग बिधि जनम गँवाई ॥  
 तेहि दिन अयस मरे तेहि देसा । ओ याकूब पहुँच परवेसा ॥  
 एकै संग वै दूर्नो भाई । रहै सोय दुओ खुमार समाई ॥  
 एकै सग जनम वै लीन्हा । एकै सग प्रान तजि दीन्हा ॥  
 एकै सग रहै यक पासा । एकै संग गये कैलासा ॥  
 जगत धन्ध सब छाड़ कै, गय अकेल निज धाम ।  
 लोग कुटुंब परिवार सब्ह, कोऊ न आयो काम ॥  
 दोउ पिता कै गत पत कीन्हा । मुरत अमोल छार रख दीन्हा ॥  
 खावा भोग ओ भूल अँदेसा । धधा लाग करै सब देसा ॥  
 फूल चढाय फिरे सभ लोगू । लागे खाय अन्न ओ भोगू ॥  
 महा सिद्ध जग रहै न कोई । दूसर कौन अमर जग होई ॥  
 यूसुफ नबी बहुत दुख माना । वेद भेद को करे बखाना ॥  
 अब न पिता देखन जग माँहीं । कवन करै हमहि अब छाँहीं ॥  
 कहि तँ दुख सुख बरन सुनाऊँ । केहि तँ अपरम मरम सो पाऊँ ॥  
 कवन करै हम कौ उपदेसा । कवन सुनाइह अलख सँदेसा ॥

काटिय गाढ सो कवन हमारी । कूट बचन बरनै को भारी ॥  
 गाढ परे केहि सँवरव, कूट साँच उपदेस ।  
 अब ना पिता को देखियत, गये सो कौने देस ॥  
 तब जबरैल सरग तें आए । यूसुफ कहँ सुठ बचन सुनाए ॥  
 करहु पिता कर अब सतोखा । जेहि तें होय दुओ जग मोखा ॥  
 पैठो तुम सो पिता के ठाऊँ । सँवरहु सदा अलख कर नाऊँ ॥  
 औ सुख देहु करहु सुख सारा । पूजै तुम्हें समै संसारा ॥  
 तुम का नवी अलख अब कीन्हा । बुद्धि सुद्धि सभ तुम कौ दीन्हा ॥  
 तब यूसुफ सभ नगर बोलावा । अलख सँदेस सो बरन सुनावा ॥  
 सभ जग आय सो सीस नवावा । औ सुख भयो मत्र सभ पावा ॥  
 तुम सो अहो याकूब के ठाऊँ । हम आघार सो राउर नाऊँ ॥  
 जस वे वेद भेद बतलावहिँ । हिन्दु तुरुक कहँ राउर नाऊँ ॥  
 सभ जग सीस नवावा, दीन्ह नवी कहँ हाय ।  
 दीन्हा सभ सुख पूजा, अवर भये सब साथ ॥  
 भयो विरिध बालक घट्यो हारा । घट्यो चाह और घट्यो परहारा ॥  
 रूप रँग बल बुध सुख खाँगा । यूसुफ मीच देव तन्ह माँगा ॥  
 उपज्यो क्रोध औ काम हेराना । कामिन देख सो नैन लजाना ॥  
 रह्यो न रूप सो सभ जग चाहा । रह्यो न बल जेहि करब बेसाहा ॥  
 रह्यो न केश भँवर अस कारी । रह्यो न दसन दाडिँवें जेहि हारी ॥  
 रह्यो न सरवन सुरत अमोला । रह्यो न सुदर स्वभाव कपोला ॥  
 रह्यो न द्रग मृग खजन भजन । रह्यो न बानी कोकिल गजन ॥  
 नार पुरुष नहिँ आदर करहीं । नारि विरिध कर नाउँ सो घरहीं ॥  
 जेहि के ओर चाहे चख हेरा । देख विरिध सो अब मुख फेरा ॥  
 रहे न हाथ पावँ कै सोभा । जेहि का देख समै जग लोभा ॥  
 रह्यो न रग रूप वह, जेहि चाहे संसार ।  
 कँवल बदन कुँभिलात, नित मनसग तब गा हार ॥  
 जो मन चाहत रँग सोहागा । सो सब .. .. ॥  
 जो मन चाहत उड़न खटोला । लागे ... नहि ... डोला ॥  
 हँस अमोल जो सरवन सोहा । जा कहँ देख सती जग मोहा ॥  
 बिन पानी अब हँस पियासा । लखि सरवर मन भयो उदासा ॥  
 कहाँ गये वे दिवस सोहाये । रूप रग दिन दिन अधिकारये ॥  
 अब दिन दिन वह रोब घटाहीं । बल बुध जाह सो जात हेराई ॥  
 रहे न सुदर मुरत न मानी, ठौर ठौर रह गये निशानी ॥  
 गये नैन भूला सुख चाहू । भयो भोर उठ गयो बटाऊ ॥  
 मोती लर जस चमक बतीसी । सो सँग छाड़ भयो परदेसी ॥

रूप भाव नहीं रह गये , डार कंठ ले हाथ ।

भूल बात सब चल बसे , गये भाड़ कै हाथ ॥

हँस हँस भूल भुम्म खसि परैं । देख सकामिन रोदन करै ॥  
फूले फूल भये पत झारा । यहै हाल अब होय हमारा ॥  
तब लहि मोर बात नहीं मानै । जब पत झार होय तब जानै ॥  
औ दयाल तुई सबह कुछ दीन्हा । सब दाता सोई मोहि कीन्हा ॥  
दीन्ह जनम मोर नबी के वारा । नबी के सुन नहि मार अघारा ॥  
वहै रूप सबह जग उपराहीं । वहै . ... जग माहीं ॥  
भाइन मोहि कूप महँ डारा । नबी कृपा कर मोहिँ निसारा ॥  
बहु देस सब गाहक मोरा । वंद डार तुम कीन्ह बहोरा ॥  
भये राज वाढा सभ भोगू । मात पिता कीन्हे संयोभू ॥  
भाई लोग सभ भये अघीना । पिता मिलाय सभै दुख दीन्हा ॥  
दीन्हा नार जगत उमराहीं । दीन्हा सुख सतति जग माहीं ॥

सभ कुछ दीन्ह दयाल तोहि, कछु हींछा अब नाँह ।

करो कूच अब जगत सँ , करो सो महि पर छौँह ॥

यहि जग मा जस कीन्हे दाया । वह जग करो अभय निधि माया ॥  
मुनि रिखि सिद्ध रहै जेहि ठाऊँ । तहँ मोर अलख कहावहु नाऊँ ॥  
अब मोहिँ अवर न इच्छा मोहे । यही जगत मन व्याकुल होये ॥  
अब तहँ चळूँ जहाँ कै आसा । रहौँ सदा जेहि मँदिल उदासा ॥  
अब यह जग मोहिँ तनिक न भावै । चलौँ अत जहँ सब कोउ जावे ॥  
अब दिन दिन अबगुन अधिकारिँ । गयो रूप जेहि जगत लुभाई ॥  
अब जीवन से भला सो मरना । रस धावन ... .. ॥  
तेहि तँ वेग उठावहु मोहीं । देखहु पिता जो कियो विछोही ॥

भोर आय नियराया , लेउँ न रैन बसेर ॥

ज ... .. , चलना तहाँ सबेर ॥

पुन दस बरस जो यूसुफ जिया । सत्त सोभाव जगत महँ किया ॥  
घरम नीति सँ कीन्ह सो काजू । दीन्ह सुघार दुखी कर काजू ॥  
दरब दान दुखिया कौ दीन्हा । नीत छौँह परजा पर कीन्हा ॥  
घरम नीत औ न्याव करेहीं । वेद भेद सन्ह कौ सुख देहीं ॥  
पुत्र सयान हिये सुख माहीं । मात पिता के सर परछाहीं ॥  
वेद भेद सब सुख निरमावा । बधु बस कहँ वेद पठावा ॥  
यूसुफ नबी कौ अमर न वारा । जेहि घर मा मूँसै अबतारा ॥  
ता कौ अलख नबी अस पावा । आद गरथ तुरत भेजावा ॥  
दीन्हा अलख बस अधिकारा । वारह कुटी बैठ ससारा ॥

बारह पुत्र के बस वै, इसराईल कहाहिं ॥

मिसिर नगर, लौ बसा अधिकाहि ॥

पातसाह सब के सुत आवा । सो फिरोज़ जग मॉह कहावा ॥  
 इबन अमी सुत कै सुत मूसा । डार दीन्ह जग जान मँजुसा ॥  
 सो पुन कथा अहै विस्तारा । कहौ कथा यूसुफ कर सारा ॥  
 दसमे बरस आय जम राजू । यूसुफ नबी प्रान कै काजू ॥  
 कहा अलख जो आशा कीन्हा । चहौ प्रान तोर मैं लोन्हा ॥  
 यूसुफ कहा जो आशा होई । तो सम लेउँ सीस पर सोई ॥  
 देख लौउ मैं दरस जुलेखा । तब हम करहु जो अबगुन लेखा ॥  
 तब जमराज कहा यह बाता । आशा नाह लखा मुख राता ॥  
 अब तुम तजो प्रेम वहि केरा । करहु प्रेम जो करहि निवेरा ॥  
 बहुत भौँति विनती कै हारा । पाव न जुलेखा रूप निहारा ॥  
 यूसुफ चाहा बहुत मन, लखै जुलेखा रूप ।

पै जमराज न माना, अज्ञा अलख अनूप ।

जब लहि आय जुलेखा पासा । तब लहि फूल गयो तजि वासा ॥  
 आय नार जो पीव के तीरा । दखै परा सो सून शरीरा ॥  
 पुन निहार यूसुफ कहँ देखा । रख्यो न रूप रंग न रेखा ॥  
 मूँदे नयन खुलै अब नाहीं, बैन हरे मुख वोलात नाहीं ॥  
 हाथ पाँव मुख सरवन नासा । सब ते हरत गए जस बासा ॥  
 सून सरीर परा विन जीऊ । ठहक मार देखहि मुख पीऊ ॥  
 घँसक अहै हिय मॉह समाना । गयो छाड़ जस देहँ सँ प्राना ॥  
 सुरभ रहै नार बस फिरै । .. ... ॥

नार देख पिउ कर तन सूना । बिना प्रान सभ पिड बिहूना ॥

कौन हस सरवर हत्यो, केहि दिस गयो हेराय ।

जेहि पुन सून सरीर मै, काहु न कहा सोहाय ॥

परी जुलेखा होय विन जीऊ । बहुर न देखा आयन पीऊ ॥  
 तब नहलाय साज सभ कीन्हा । लै गये सौँप घर कहँ दीन्हा ॥  
 छार मिलाय सो छार उडावा । थाती सौँप लोक फिर आवा ॥  
 जो जाकर तेहि सौँपा सोई । साथी सग रहा नहिँ कोई ॥  
 तीन दिवस दुख रह्यो अपारा । रहीं जुलेखा अतिहिँ वेकरारा ॥  
 पिब गवनब कछु जानत नाहीं । रहै सोनार सूख पट माहीं ॥  
 तिसरे दिवस मोर होय गयो । तब पुन चेत जुलेखा भयो ॥  
 देखा खोल नैन चहुँ ओरा । कहा कि आज भयो कस मोरा ॥  
 पिउ जागत सब मोहि जगावै । आज सखी कहुँ दिस न आवै ॥  
 अब मैं आज मोर कै जागी । अयो पीऊ कस अकसर भागी ॥

पिठ कर मुख नहिं देखहु आजू । मोहि तज अजहूँ करत न काजू ॥

जब लागि रहौ सेज पर , कत न छोड़हि मोह ।

अब राज त्याज कहाँ गयो , लाल सो मोहिं बिछोह ॥

कहा सखी उन सरग सिधारे । हम काँ बिरह आग महँ जारे ॥

सुन यह बात सो खाई पछारा । फिर फिर सीस भुम्म पर मारा ॥

जहाँ सो पीठ होय निहि चिता । तहँ लै चलो जहाँ मोर मिता ॥

चलै सखी सँग व्याकुल नारी । जहाँ कथ सोवै सो नारी ॥

तेहि के ठहर जाय सिर नावा । परथम केस तोर छितरावा ॥

छितराइस मोतिन कै हारा । जूडा दूक दूक कर डारा ॥

बार खसोट तुरंतहि डारा । अमरन तोर बहु सह सिगाया ॥

चूरी फेर सीसन तब फेरा । भाार मिलाय दीन्ह वह चूरा ॥

परै ढेर पर भाार उड़ावहिं । निपत-विपत मुख बैन सुनावै ॥

नैन काढ दोउ लिहिस , दीन्हेसि ढेर पर डार ।

जेहि नैनन पिउ तोहि लखौ , देखौ काह निहार ॥

कहा कंत तुम कहँवा गयऊ । नैन बैन मुख सून सब भयऊ ॥

गात गुलाब देख मुरभाई । सो तन भाार लीन्ह अब खाई ॥

जेहि मुख बोलत अभिरित बानी । अमृत बोल वे कहाँ हेरानी ॥

नित मो प्रीतम करत जो दाया । कस अब लाल भयो निर्माया ॥

मैं पापी तुम्ह सँग न लागी । अहाँ करम की सदा अभागी ॥

मोहिं छाड़ कत कत सिधारे । नैन ओट न करत ब्यारे ॥

जब जमराज प्रान तोर लीन्हा । निठुर लाल मोहि खबरन दीन्हा ॥

मैं जम तें अस करत निहोरा । लिह्यो लाल सँग प्रान सो मोरा ॥

एकहु छिन न मोहिं विसारेहु । चलत बार मोहिं कसन पुकारहु ॥

नैन ओट कहुँ होत रहु , मोहिं ते आशा लेहु ।

एसै कंत विदेस कहँ . मोर न खोज करेहु ॥

चालिस बरस जो जोग कमावा । तब प्रीतम हम तुम कौ पावा ॥

दरब अरथ सब देहु लुटाई । जोवन रूप अनूप गँवाई ॥

कीन्ह दया तब अलख गोसाईं । दीन्हा रूप सोय सुख माहीं ॥

तब महिमा मैं तोर न जानी । निसि-दिन रहथो हिये अभिमानी ॥

सो अब कंत कहाँ तोहिं पाओ । चरन लाय सिर तोहि मनाओ ॥

तुम्ह नित करो मोर मनुहारी । मैं न करौं कुछ कान तुम्हारी ॥

का अब करहुँ मनाऊँ कैसे । बिनती करहुँ कीन्ह तुम्ह जैसे ॥

तुम्ह साईं मैं चेरी मोरी । का अब करहुँ अहाँ मति थोरी ॥

नित सिर पर राख्यो तोर चरना । का अब करहुँ दई कर करना ॥

सात बरस बँद राख्यो, लायो देख न मोहि ।  
 औगुन मोर छिपायो, कह्यो न तुम कछु मोहि ॥  
 सात बरस राख्यो बंद माहीं । मन महुँ रोस कियो कुछ नाहीं ॥  
 चलत बार तोर रूप न देख्यो । वचन न सुन्यो न वचन वितेख्यो ॥  
 सो लालन तजि रहे अभागी । गई लाल मैं सोय न जागी ॥  
 जब तोहि का बाहर बहिराए । बैरिन नींद कहाँ ते आए ॥  
 देख्यो जाग मंदिर तोर सूना । नगर कोट घर भयो विहूना ॥  
 आयो फूल छाँड़ फुलवारी । कौटा रह्यो वाग महुँ भारी ॥  
 गयो कत से वेग सुभागा । पाछे रहयो कलक से लागगा ॥  
 दिह्यो उत्तर मोहि कत सोहाई । फाटै शुम्भ अब जाऊँ समाई ॥  
 यह कलक अब दिह्यो मिटाई । उठ कै लाल लिह्यो सँग लाई ॥

ऐसो रतन मिला जग, छार समान्यो आय ।

धुक जीवन जो लाल बिन, जग माँ जियत रहाय ॥

यह घर बार से देस तुम्हारा । भयो सून सब जग अधियारा ॥  
 कवन बताहहि भेद करम था । भूलै कवन देखाहहि पथा ॥  
 को तुम बिन यह भार उठाई । नेम घरम दिन-दिन अधिकाई ॥  
 अब तुम अस जग उपजा नाहीं । कौन से करै दुखी परछाहीं ॥  
 तुम्ह समान जग फेरि न आई । को अस रूप ज्ञान बुध पाई ॥  
 भरम नींद रह्यो पिउ सोई । नार से उच चेत न काई ॥  
 तुम निहचित भयो पिव जाई । सोच हमार तज्यो सुख दाई ।  
 समै लोग हैं यह ससारा । तुम्ह बिन कोऊ न अहै हमारा ॥  
 केहि-क देख मन हुलसै पीऊ । तृखा बुभाय पियासै जीऊ ॥

वह बसत वह पावस, वहै फूल फल सोय ।

सब अपने रिनु देखव, तुम्हें न देखै काय ॥

वहै मंदिर औ सरवर तीरा । करहिं धमार सदा वह तीरा ॥  
 वहै फूल फूले चहुँ ओरा । वह चातक रँग खजन मोरा ॥  
 वहै पावन जो फिर फिर आवै । वहै दिवस वह रैन दिखावै ॥  
 एक न तुम जेहि बिन ससारा । होयगा तीन भवन अधियारा ॥  
 वह तरुवर वह पात सहावन । भावन एक बिना मन भावन ॥  
 एक दिन हयो से भाग सोहावा । जेहिं दिन तोहि कहँ नायक लैआवा ॥  
 भये धूम सम भिसिर के देसा । उठ धावा सम रँग नरेसा ॥  
 बैठ्यो नील करै असनाना । नर-नरेस सब्ह देख लोभाना ॥

यक दिन आज से देख्यो, से मुख छार छिपान ।

का भा रूप अनूप वह, जेहि संसार लुभान ॥

सपने देख बिमोह्यो तोहीं । उपजा विरह तेज लखि तोहीं ॥



आयो मिसिर कथ तोहिं लागी । कह्यो कि का गुन कीन्ह अभागी ॥  
 प्रेम हमार सँच विधि कीन्हा । पाहन स्वरूप सो हम काँ दीन्हा ॥  
 जब प्रीतम हम सँ मुख मोरा । जीवन भयो दरस लाखि तोरा ॥  
 चालीस बरम जोग में कीन्हा । सुन कै नाँव सबै कुल्य दीन्हा ॥  
 जब तोर नाउँ सुनावै केई । पावे लाख देखँ जो होई ॥  
 बीस बरस रह्यो दरम अधारा । बीस बरस सुन नाम सँभारा ॥  
 अब तोर दरम हरा भुव माहीं । नाऊँ तुम्हार सुनव अब नाहीं ॥  
 देखहुँ दरस सुनहुँ नहिं नाऊँ । केहि के अधार रह्यो यह टाऊँ ॥

ना पिउ बोल सुनावहु, न अब दरसन देहु ।

करहु दया पति राखहु, यह जीवन आपन लेहु ॥

अब पत रहै जो जाय पराना । वृक जिव तुम बिन पुन छिन माना ॥  
 जिवन भला जब लहि पिउ होई । बिना पीव धृक जीवन सोई ॥  
 पिव बिन सून समै मसारा । सुख सपत सभ पिव बिन जारा ।  
 बिन पिव केई सँवाती नाही । केहि विधि रहे प्रान घट माँही ॥  
 जरै जाय सुख संपत माजा । बिना पीउ आवै नहिं काजा ॥  
 पिव लै सँग जो होय भिखारी । बिन पिउ सुख सपत बलिहारी ॥  
 पिव के सँग ... .. बिना पीव सुख बिलसै नाहीं ॥  
 वृम बिन कत जगत अधियारा । भयो उजार समै संसारा ॥  
 निटुर प्रान जो अब लहि रह्यो । पाहन हिया निटुर दुख सख्यो ॥

खाय पट्टार जो छार पर, करै आह एक बार ।

पछी प्रान सो उड़ गयो, रहे छार महँ छार ॥

यूसुफ निकट राख तेहि दीन्हा । बिरहिन प्रेम समापत कीन्हा ॥  
 धन बह सता प्रेम चितलावा । आद अत लहि प्रेम लगावा ॥  
 जब लहि जियै प्रेम रस चाखै । पिव सँग गये प्रान पुन राखै ॥  
 जो कुल्य अहै जो जीवन माहीं । मरै प्रात निटुर कुल्य नाहीं ॥  
 रिखि मुनि सिद्ध तपा ओ जोगी । प्रेम पुरुष ओ बिरह बियोगी ॥  
 पढित कवी और सजाना । मीर अमीर राव सुलताना ॥  
 रूपवत गुनवत सोहाई । तेजवत बलवत बनाई ॥  
 ऐसे लोग रहै ना पाये । केहि कारन यह जग माँ आयै ॥  
 सब आए यहि जगत महँ, कीन्ह सो गुन बिस्तार ।  
 कौउ रहे पुनि आवा, खाय लीन्ह यह छार ॥

## उपसंहार

उन लोगन कहै सँवर 'निगारा' । उठा रोय मनमहँ एकबारा ॥  
जब ते जनम लीन्ह जग माहीं । छुट दुख और सो देख्यो नाहीं ॥  
जब लहि जिऊँ पिऊँ दुख नीरा । माथहि दीन्ह सो दुख कै पीरा ॥  
अवर दुःख मैं सब कुछ सहा । भयो एक दुख बाउर महा ॥  
पुत्र अनूप दई मोहि दीन्हा । रूप अनूप बुध आगिर कीन्हा ॥  
बाइस बरस रहा जग माहीं । छुट विद्या उन जान्यो नाहीं ॥  
नाम लतीफ अनूप सोहावा । सब गुन ज्ञान दई अधिकावा ॥  
बात भुलात नहि पुत्र सोहावा । सायर सुधर सो ग्रंथ बनावा ॥

बाइस बरस के बयस महँ , छाड़ दीन्ह उन देह ।

भुरत अनूप गुलाब से , जाय मिले पुन खेह ॥

तब मैं भयऊँ सो बाउर भेसा । करे सदा अपकाल अँदेसा ॥  
सब्ह औषध कीन्हा उपचारा । बिनति किह्योँ सो बारम बारा ॥  
जब तँ लतीफ कर मरम बिसेख्यो । तब सपत अचिरथा देख्यो ॥  
तब मैं कहा पुत्र से रोई । किरत सोहाय नहीं अब कोई ॥  
मोहि का जान पड़ा जग माहीं । कैइ ठाकुर ओ सूरत नाहीं ॥  
तब उन कहा कहै का ताता । हमका देख होय यह चाता ॥  
अहै सो सत्त एक करतारा । वह कर खेल सो अहै अपारा ॥  
तुमको देख होव अब ताता । दइ सुखिया कहँ देख बिधाता ॥  
जो कुछ ... .. मारा । सो पुन अहै को मेटन हारा ॥

जेहि दुखते अकुलाव तुम , करहु पिता संतोष ।

बड़े लोग सब दुख सहै , होय मुगत गत देख ॥

जेहि लहि नबी भये जग माहीं । छुट दुख और सो देखा नाहीं ॥  
काहुँ कहै कवि लास निसारे । रोवत आद बीन कै सारे ॥  
काहुँ बाँध अगिन महँ डारा । काहुँ अँध कीन्ह अँधियारा ॥  
काहुँ कहँ आरसी चीरा । काहुँ कहँ सर तज्यो सरीरा ॥  
काहुँ मीन के मुख महँ डारा । काहुँ कूप डार निसारा ॥  
जेहि के लाग रज्यो ससारा । तेहि का दुख वार न पारा ॥  
ओ श्याम दुख सन्द जगजानी । जब लग वै सो दुख निभानी ॥  
जहिँ लहि भये सिद्ध अवतारा । सब का दुख दीन्होँ करतारा ॥  
कोऊ न यह जग दुख तँ बोँचा । सहै अँच सो कुदन सँचा ॥

रामचंद्र जो दुख सह्यो । सो जान्यो सब कोइ ॥  
 मानुष देह धर सभ , दुख तैं व्याकुल होइ ॥  
 तेहि ते दुखित होइह जिन ताता । करहु न अब रोय अपघाता ॥  
 सत साधु कहैं वह दुख दई । कनक जराइ खरा कर लई ॥  
 अब तुम करहु मोर सतोखा । देहु असीस जो पाऊं मोखा ॥  
 यह जग मा सुठ जीवन थोरा । अन काल सुठ होइय मोरा ॥  
 कोउ दिन दस आगे कोउ पाछे । है नित काल सो काछे-काछे ॥  
 उन लोगन कै मेट न होना । होने हुए, सो हुए न होना ॥  
 देखउ यह जग को गत ताता । दई जनम भग मरन विधाता ॥  
 जे कोइ जनम लीन्ह जगमाहीं । सो जान्यो एक दिन है नाहीं ॥  
 जनम साथ यह मरन है , मरन साथ गत मोख ।  
 हिये बोल न गौंठहु ; करहु पिता सतोख ॥  
 कहि यह बात जियन मुख मोरा । गयो प्रान तजि प्रान सो मोरा ॥  
 सब सँवरहुँ वह लाल अमोला । हिया फाट मुख आव न बेला ॥  
 जस याकूब सो पुत्र बिछोहा । रखीं प्रान सो निठुर बिछोहा ॥  
 तस यह प्रान निठुर अब रहे । यूसुफ विरह नेह निर्दहै ॥  
 यूसुफ सभ कहैं पुत्र सोहावा । कहैं अस पुत्र सो जगमा आवा ॥  
 निसि दिन करै तपस्या जोगू । जब तप करै चहै सुख भोगू ॥  
 जाय जोग महँ रैन बहाई । तफन बस महँ विरिष सोहाई ॥  
 कई ग्रथ अनूप बनावा । जिन देखा चख नीर बहावा ॥  
 सँवर रूप गुन ज्ञान सोहावा । रात-दिवस जल चख बरसावा ॥  
 हिया बजर का भयो हमारा । को लै गयो सो लाल हमारा ॥  
 गयो लाल केहि देस कहैं , जेहि कै मिलै न खोज ।  
 होय सोइ निहिचिन्त , सो देह हमें दुख रोज ।  
 सचै गये हौं रहा अकेला । पहिले पढहि मोह पर हेला ॥  
 तेहि पाछे मोहि छाड़ सिधारा । .. ... ॥  
 यह जग छाड़ सोई निहचिता । गये पैठ और सागर मीता ॥  
 जब सँवरौं वह समै सोहाये । छाती फाट बेहर न जाई ॥  
 कहाँ गये औ कहाँ ते आये । जान न परे भेद निरभाये ॥  
 सँवर सँवर वै लोग सुजाना । रोवे निस दिन होय अज्ञाना ॥  
 अपने मीत्र सँवर सुख पायहु । होय बोध मनका समुभावा ॥  
 वै सभ गये तुम्हीं यह देसा । केहि दिन कर अब करहुँ अँदेसा ॥  
 तुम का अत वहै नहि जाना । तेहि का कौन सोच पछिताना ॥  
 जेहि पथ सिधारें , समै बटाऊ लोग ॥  
 चलहु सुचित जेहि मारग , और न जोग न भोग ॥

रोय रोय यह विरह बखानी । कोऊ न रहा जग रहै कहानी ॥  
 यह जग ते मन रहै उदासा । सँवरो जहाँ सदा कर नासा ॥  
 देखि जगत कर कूकत हाला । होय सदा मन हाल बेहाला ॥  
 जान न परें भेद अवगाहों । जग जीवन उपष्यो भुव काहाँ ॥  
 देहु दयाल मोरहिँ कर मोखू । दरद मोर अब अवगुन दोखू ॥  
 पैठ प्रेम कै अवर कोई । दिहेन असीस मोहिँ मन होई ॥  
 हम न रहे अनकर रह जाई । सँवर हियो लोग हिये सुख पाई ॥  
 सात दिवस महँ कथा सोहाई । कीन्ह समापत दीन्ह बनाई ॥  
 सभ लोकन कहैं लाऊँ सीसा । लावहु दोख न देहु असीसा ॥  
 गुन आखर ... , ... ..जहाज ।  
 जनम .. ... , ... ..साज ॥